CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भारतीय कृषि विज्ञान

[चार खण्ड सम्पूर्ण]

लेखकः—

चन्द्रनाथ मिश्र, बी० ए०

रचयिता—वैज्ञानिक पशुपालन व चिकित्सा

भू० पू० सम्पादकः—'नया संघर्ष' एवं साप्ताहिक 'जागृति'

अध्यक्ष—'नव जीवन कृषि फार्म', मजाँव, उन्नाव (उ० प्र०)

तथा

जीवनलाल जैन, बी० एस सी० (कृषि) गोल्डमेडिलिस्ट

एम० ए० (अर्थशास्त्र), एल-एल० बी०,

लेखकः—लैण्ड रिक्लेमेशन इन यूनाइटेड प्राविंसेज

प्रोप्राइटर, नेशनल लैण्ड रिक्लेमेशन फार्म घूरामऊ (उन्नाव)

प्रकाशक

श्री प्रभाकर साहित्यालोक
रानीकटरा-लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तृतीय संस्करण १९६३ ई०

मूल्य ७ रु० ५० न० पै०

कम्पोज़—
वर्णमाला टाइप फाउण्ड्री,
पानीकटरा, लखनऊ।

मुद्रक—
अधिकार प्रेस,
लखनऊ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
विषय प्रवेश	११
प्रथम खंड—बुनियादी बातें	१३
भूमि—भूमि की उत्पत्ति, भूमि से पौधों को प्राप्त होने वाले खनिज अंश, भूमि की किस्में—बलुई मिट्टी, बलुई दुमट, मटियार-दुमट, काली भूमि, कंकरीली, ऊसर, मरु, सिल्ट। भूमि की पहिचान। ...	१३
भूमि की तैयारी—पानी का निकास, जुताई। ...	२६
खाद—खाद की किस्में—नत्रजन संबंधी खाद, फास्फोरस सम्बन्धी खाद, पोटाश सम्बन्धी खाद। गोबर की खाद, भेंड़-बकरी की लेंड़ी की खाद, मूत्र की खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद—सनई और ढेंचा, दलहन की फसलें, रबी में हरी खाद। मिट्टी की खाद, खली की खाद, अमोनियम सल्फेट, सुपर फास्फेट, बेसिक स्लाग, नाइट्रेट आफ पोटाश और म्यूरियट आफ पोटाश। ...	२६
सिंचाई—कुँआ, नलकूप, नदी और नहर, तालाब-झील, चरस या पुर, रहट, बल्देव बाल्टी, मायादास बाल्टी, बुलन्दशहरी बाल्टी, बेड़ी, ढेंकली, चेनपंप, सिंचाई का परिमाण, सिंचाई की रीतियाँ। ...	४२
बीज और पौधा—बीज के भाग, बीज में उपस्थित वस्तुएँ, बीज का उगना, पौधों की आवश्यकतायें, पौधे के अवयव, जड़, जड़ के काम, तना, पत्ती, फूल, बीज। ...	५१
फसल के शत्रु—घास-फूस, कटीला-पेको, कीड़े-मकोड़े, गंधी, सूँड़ी, पयरिल्ला, माहू-चेपा, सुन्दरभुंगा, टिड्डी, तितली, मक्खी, गुजिया, लसी फफूँदी, गेरुई, सूखा, बड़े जीव-जन्तु आदि। ...	५८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उन्नत बीज और उसकी सुरक्षा—बीज की शुद्धता, बीज का चुनाव, बीजों को भली भाँति रखना। ... ७७

औजार—हल, मिट्टी पलटने वाले हल्के हल, मेस्टन हल, वाट्स हल, प्रजा हल। लोहे के भारी हल—विक्ट्रीहल, पंजाब हल, पत्थर-तोड़ हल, अन्य हल, गुरुदत्त हल, गूजर हल। हैरोलीवर हैरो, कमानीदार हैरो, मदरासी हैरो, तिकोनिया हैरो। कल्टीवेटर—कानपुर कल्टीवेटर, मैकार्मिक कल्टीवेटर। अकोलाहो, हैन्डहो, करहा, डिबलर। मशीन—चारा काटने की कल, ओल्पाडथ्रेशर, बिनोवर, सीडड्रिल, ट्रैक्टर, औजारों के सम्बन्ध में सावधानियाँ। ... ८२

जलवायु-फसलें—ताप, वायु, स्थायी हवायें, वेरियल हवायें, मौसमी हवायें, वर्षा, मानसून, ऋतुयें, फसलें—रबी, खरीफ, जायद, मिलवाँ, फसल-चक्र, गन्ना-गेहूँ-जौ तथा तरकारियों का फसल-चक्र। ९७

द्वितीय खण्ड—अन्न, तिलहन, चारा ... १०६

रबी की फसलें		१०६	**खरीफ की फसलें जारी**		
गेहूँ	...	१०६	बाजरा	...	१४२
जौ	...	११३	साँवाँ	...	१४४
चना	...	११७	मेड़वा	...	१४५
मटर	...	१२०	कोदौ	...	१४६
सरसों-लाही	...	१२२	काकुन	...	१४७
राई	...	१२४	अरहर	...	१४८
अलसी	...	१२४	मूंग	...	१५०
मसूर	...	१२५	लोबिया	...	१५३
तम्बाकू	...	१२६	उरद	...	१५४
खरीफ की फसलें		१३७	सोयाबीन	...	१५५
मक्का	...	१३७	मूंगफली	...	१५६
ज्वार	...	१४०	तिल	...	१५८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धान—कुँवारी, कार्तिकी या माध्यम, जेठी, अगहनी या जड़हन ... १६०
गहरे पानी में धान की खेती १६७
जापानी ढंग से धान की खेती १६९
गन्ना ... १७३
कपास ... १८१
चेना ... १८३
चारे की फसलें ... १८४
ग्वार ... १८४
जई, मेथी ... १८५
मोठ, रिजका या लूसर्न ... १८६
नेपियर या हाथी घास, गायना घास ... १८८
बरसीम ... १८६
सहयोगी कृषि और चकबंदी १६०
सरकारी सुविधायें ... १६६
खेती-बारी की जंत्री ... २०२

तृतीय खण्ड—शाक-सब्जी और मसाला २०७
शाक-सब्जी की खेती का महत्त्व—विटामिन २०७
बुनियादी बातें २११
रबी, खरीफ, जायद की तरकारियाँ २११
नरसरी—स्थान, भूमि, बीज और बुवाई, सिंचाई और देखरेख, नरसरी से पौधे उखाड़ना। पौधे लगाने से पूर्व खेत की तैयारी, पाले से बचाव। २१२
भूमि में बैठने वाली तरकारियाँ
आलू ... २१६
प्याज ... २२३
लहसुन ... २२८
मूली ... २३०
गाजर ... २३३
शलजम ... २३६
चुकन्दर ... २३८
अरवी (घुइयाँ) और बंडा ... २३९
हल्दी ... २४२
अदरख ... २४४
शकरकंद ... २४६
जमीकन्द ... २५०
पत्र-पुष्प जातीय तरकारियाँ
बैंगन ... २५१
टमाटर ... २५४
मिर्च ... २५८
भिंडी ... २६१

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लताओं में फलने वाली तरकारियाँ

परवल ... २६४
सेम ... २६६
लौकी ... २६८
तरोई ... २७०
करेला ... २७२
सीताफल ... २७४
चचेंडा ... २७५
खीरा ... २७६
खरबूजा ... २७९
ककड़ी ... २८०
तरबूज ... २८२

पत्र-पुष्प जातीय तरकारियाँ

गोभी—बंदगोभी, फूल-गोभी, गाँठ-गोभी ... २८३
सलाद ... २९२
पालक ... २९३
कुलफा, मरसा, चौराई ... २९४
धनिया ... २९५
पुदीना ... २९६
मेथी ... २९७
सोया ... २९८
जीरा ... २९९
अजवाइन ... २९९
कलौंजी ... ३००

पेड़ पौधों में होने वाली तरकारियाँ

पपीता ... ३०१
केला व नींबू ... ३०१
कटहल ... ३०१
शाक सब्जी की जंत्री ... ३०१

चतुर्थ खण्ड उद्यान—फल, फूल, मेवा ... ३०४

विषय प्रवेश ३०४

जलवायु ३०६

औजार—कुल्हाड़ी, डिब्लर, घास काटनेवाली मशीन, गेंता, कंगी, फ्रूट पिकर, सिकेटियर, आरी, ब्राञ्चकटर, प्रनिंगशियर्स, हजारा, हैण्डहो, बडिंगनाइफ, ग्राफ्टिंगनाइफ, कल्टीवेटर (मैकर्मिक, कानपुरी), स्प्रेयर, डस्टर । ३०७

पौधे तैयार करना—बीज द्वारा बीज बोने का ढंग, पौधे के किसी हिस्से द्वारा (पुत्तियाँ, कलम, दाबा) व उसकी विधियाँ, कलमी पौधे, कृत्रिम रूप से पौधे तैयार करना, एकवृत्तीय कृत्रिम कलमें, द्विवृत्तीय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कृत्रिम कलमें, चश्मा, चश्मा बाँधने की विधियाँ, भेंटकलम (इनार्चिंग, टंगग्राफ्टिंग व उसकी विधियाँ)। ३१०

फलदार पौधे लगाना—स्थान का चुनाव (भूमि, सिंचाई, स्थिति, भूमि की तैयारी, जातियों का चुनाव, पौधों के बीच का अन्तर), पौधा लगाने के ढंग (वर्गाकार, आयताकार, त्रिभुजाकार, आदि) बाग की रक्षा, आँधी से बचाव, पौधों की खरीद, गड्ढे तैयार करना। ३३६

आदर्श नरसरी उपकरण—कुआँ (रहट चरसा) खाद के गड्ढे औजार। ३४५

बगीचे की देख-रेख—सिचाई की मात्रा, सिंचाई का ढंग, जुताई, निराई, गुड़ाई, पाला-धूप, दीमक से बचाव, छँटाई, ३५०

पुराने बगीचों का सुधार ३५८

फलों को तोड़ना और उनकी बिक्री ३५६

अमरूद	३६३	खैर (कत्था), खुबानी, जरदालू	४०८
अनन्नास	३६६	गूलर	४०६
आम	३७३	गुलाबजामुन	४१०
अनार	३७६	जामुन, तेंदू	४११
अंजीर	३८२	नारियल	४१२
अखरोट	३८५	नासपाती	४१४
आलूचा (आलूबुखारा)	३८६	निंबुजातीय फल; नारंगी (नारंगी, संतरा, माल्टा, मुसम्मी)	४१५
आलू शफतालू	३८८		
अंगूर	३६०	नींबू	४२२
आँवला	३६५	चकोतरा, अमृतफल, पिश्ता	४२४
इमली	३६६	पनियाला	४२५
करौंदा, कटहल	३६७	पपीता	४२६
कमरख	४००	फालसा	४२६
कैथा, केला	४०१	बड़हल	४३०
काजू	४०५	बादाम	४३१
खिन्नी, खजूर, ताड़ खजूर	४०६	बेर	४३२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बिही, बेल ४२८, ४३२
महुआ, ब्लैक बेरी ४३६
लीची ४३७
लुकाट ४३९
शहतूत ४४१
शरीफा ४४३
स्ट्राबेरी ४४४
सपोटा ४४७
सेब ४४८
बाग लगाने में सरकारी सुविधाएँ ४५१
फलों की खेती की जंत्री ४५४

पुष्पबाटिका—प्राकृतिक, कृत्रिम (मुख्यद्वार, हरियाली, क्यारियों के नक्शे, झाड़ियाँ, सजावट, आवश्यक बातें)। ४५८

ऊँचे पेड़—बरगद, पीपल, सुरंगी, मौलसिरी, युकिलप्टस, शीशम, गुलमोहर, अशोक, कदम, नागचम्पा, सुल्तानाचम्पा, रुद्राक्ष, गोरखइमली, चन्दन, अमलतास, फुलई, बबूल, हिमचम्पा, स्वर्णचम्पा, भांति-भांति के विलायती पौधे, चिल्ला, सागौन, बहेड़ा, कचनार। ४६२

सुन्दर पौधे व झाड़ियाँ—गुलशब्बो, कामता, कालीमुसली, थूहड़ गुलाबाँस, छत्रोला, नीलकाँटा, रात की रानी, कनेर (पीला, सफेद, लाल), चाँदनी, सदाबहार, नीली चमेली, रुक्मिनी, हेमेलिया, गधराज, गुल-मेंहदी, छुईमुई, गुड़हल, कामिनी, हंसराज। ४६५

गर्मी के फूल—केतकी, अमतुल, गंधराज, रेलिया, गुलअनार, कमल, कुमुद। ४६८

गर्मी व बरसात के फूल—बेला, जुगनू, सावनी। ४६९

बरसात के फूल—केवड़ा, सुदर्शन, चीता, भुइँचम्पा, इलायची, दुलालचम्पा, कटहरीचम्पा, चुंदरी। ४६९

जाड़े के फूल—सलविया, हरसिंगार, जंगली चम्पा, बसंती, झुमका, गुलखैरा, गेंदा। ... ४७०

गुलाब ... ४७१

लताएँ—चाबुकछड़ी, चाँदबेल, मालती, लालचमेली, मधुमालती, चमेली, कुन्द, जुही, जाही, मोगरा, मदनबान, रेवती, मोतिया। ४७२

मौसमी फूल ४७४

——:※:——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुछ विद्वानों के मत से:--

मैंने अपने शिष्य श्री चन्द्रनाथ मिश्र बी० ए० की पुस्तक 'भारतीय कृषि विज्ञान' के चारो खण्ड आद्योपान्त पढ़े। प्रत्येक खण्ड में शास्त्रीय एवं व्यावहारिक नियमों के निरूपण के साथ ही तद्विषयक कोई चीज छूटने नहीं पाई है। कृषि सम्बन्धी अनेक पदार्थों का वर्णन, जो प्रायः लेखक वर्ग छोड़ दिया करते हैं, विशद रूप से एकत्र है। पुस्तक कृषि-छात्रों और किसानों के लिये अत्यंत उपयोगी है। निस्संदेह हिन्दी में यह एक अपूर्व पुस्तक है।

टी. एन. श्रीवास्तव

प्रिंसिपल, त्रिपाठी कृषि कालेज, उन्नाव

UNITED STATES OF AMERICA
Technical Cooperation Mission to India

September 8, 1954

To whom it may concern

The ideas incorporated in the book on Crop Production by Sri Chandra Nath Misra are very good. Books of this type are needed for distribution among cultivators and agricultural students for references.

There is a definite need for such inexpensive, simply worded, well illustrated books on agricultural production.

Sincerely,
Sd. R. H. Kaven
(Ex.) Advisor to U. P. Government
Planning Department.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्री चन्द्रनाथ मिश्र, बी०ए० विशारद ने कृषिशास्त्र की अनेक पुस्तकों का अवगाहन कर और स्वयं ग्रामीण क्षेत्र में रह कर कृषिकार्य का पूर्ण अनुभव करने के उपरान्त यह **भारतीय कृषि विज्ञान** नामक ग्रन्थ(चार खण्डों में)प्रकाशक के आग्रह पर लिखा है। पुस्तक अत्यन्त सरल भाषा में लिखी गई है और उसमें प्रत्येक विषय की उपयोगी बातों को स्पष्ट रूप से समझाया गया है। यह पुस्तक पाठ्य क्रम में कृषि विषय लेने वाले विद्यार्थियों और कृषि कार्य में लगे हुये किसानों तथा सामूहिक योजना के अनुसार कृषि-फार्म से जीविका अर्जन करने वाले व्यक्तियों को अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगी। मैं समझता हूँ कि इससे विद्यार्थियों और कृषि के धन्धे में लगे हुये व्यक्तियों का लाभ होगा। पुस्तक पठनीय है। पुस्तक में घाघ और भड्डुरी की कृषि सम्बन्धी उक्तियों का भी निरूपण हुआ है। इससे पुस्तक की रोचकता और भी बढ़ गई है। अवश्य ही इसके द्वारा कृषि सम्बन्धी व्यवसायियों का लाभ होगा।

मैं चाहता हूँ कि इसका अधिकाधिक प्रचार हो।

विश्वम्भर दयालु त्रिपाठी
एम० ए०, एल-एल-बी, एम० पी०
मेम्बर, एक्जिक्यूटिव कौंसिल
आगरा यूनिवर्सिटी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विषय प्रवेश

किसी भी देश को समृद्धिशाली बनाने के लिये धन की आवश्यकता होती है। धन वह है जो मनुष्य के भोजन, वस्त्र, निवास, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं यातायात आदि की आवश्यकताओं की पूर्ति करे। इसकी उत्पत्ति के चार स्थान हैं :—

(१) पशु, (२) भूमि, (३) कारखाने एवं (४) खदान। यह चारो ही प्रायः भूमि पर निर्भर हैं। और भूमि को समृद्धिशाली बनाने के दो ही प्रमुख साधन हैं:—(१) पशुओं की नस्ल में सुधार और (२) उन्नत कृषि के द्वारा पैदावार बढ़ाना।

खेतों की पैदावार बढ़ाने के लिये, किसान का परिश्रम, अच्छी भूमि, समुचित खाद, आवश्यकतानुसार सिंचाई, उन्नत बीज, बीमारियों से कृषि की रक्षा तथा नवीन खोजों का प्रयोग होना अत्यन्त आवश्यक है।

यह बात सर्वमान्य है कि विज्ञान के प्रयोग के बिना किसी भी देश की उन्नति संभव नहीं है। कृषि की उन्नति के लिये आवश्यक है, कि नई-नई खोजों के परिणाम किसान तक पहुँचें, जिससे कि उनका प्रयोग कर वे कृषि की दशा को सुधार सकें।

खेद की बात है कि हमारे देश का आज-कल का पढ़ा-लिखा नौजवान खेती के महत्त्व को न समझ कर, जीविकोपार्जन के हेतु, शहर की ओर चल पड़ता है। यही कारण है कि कुछ शिक्षा के प्रसार होने पर भी ग्राम्य-क्षेत्र उसी भाँति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अशिक्षित बना है। यह बात माननीय है कि जिस कृषि-प्रधान देश की अत्यधिक जन-संख्या गाँवों में बसी है, उसमें शिक्षित नवयुवकों को खेती में आना ही पड़ेगा, अन्यथा स्थिति में कोई सुधार असंभव है। 'भारतीय सुधार १८९३ की रिपोर्ट' में डा० वायलर ने कृषि सुधार के लिये कृषि-शिक्षा को बहुत महत्त्व दिया है। हमारी सरकार भी कृषि शिक्षा पर पूरा बल दे रही है।

हमारे देश में तो आदि काल से ही कृषि को सर्वप्रथम स्थान दिया गया है। 'उत्तम खेती, मध्यम बान; निकृष्ट चाकरी, भीख निदान' की कहावत से सभी परिचित हैं। आज आवश्यक है कि हम पुनः कृषि के महत्त्व को समझ कर उसमें जुट पड़ें और पैदावार बढ़ाकर राष्ट्र की खाद्य समस्या को हल करने में अपना योगदान दें।

खेद का विषय है कि हिन्दी को राष्ट्र-भाषा का गौरव मिल जाने पर भी उसमें उक्त विषय की उत्तम पुस्तकों का नितांत अभाव है। प्रस्तुत पुस्तक में कृषि सम्बन्धी नवीन खोजों एवं यंत्रों आदि के समावेश के साथ साथ पुराने किसान घाघ की कहावतों तथा निजी व अन्य बड़े बड़े किसानों के अनुभव से लाभ उठा कर, अध्ययन और व्यावहारिकता का सामञ्जस्य रखने का यत्न है। किसान भाइयों एवं छात्रों के लिये यह सामान्य प्रयास महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी सिद्ध होगा, ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है।

चन्द्रनाथ मिश्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भारतीय कृषि विज्ञान

प्रथम खण्ड

बुनियादी बातें

भूमि

उपज का भूमि के उपजाऊपन से सीधा और गहरा संबंध है। भूमि में पौधों की भिन्न-भिन्न खूराकें पाई जाती हैं, जिनको उनकी जड़ें प्राप्त करती हैं। अतः फसलों के उगने पर उसकी भौतिक तथा रासायनिक बनावट का प्रभाव पड़ता है। भूमि की बनावट और गुणों में काफी अन्तर पाया जाता है, इस लिए उत्तम फसल पैदा करने के लिए भूमि की व्यवस्था और प्रबंध भिन्न २ प्रकार से करने की आवश्यकता होती है। मिट्टी भिन्न २ नाप के खनिज पदार्थों के कणों और कई अवस्थाओं के सड़े हुये वानस्पतिक पदार्थों के अंशों के मिलने से बनती है, इसी कारण भूमि के गुणों में अन्तर हो जाता है। कोई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि ऐसी होती है कि उसमें पौधों के पोषक तत्वों की मात्रा अधिक होने से बहुत उपजाऊ होती है और किसी में पोषक तत्व कम होने से एक मामूली फसल ही हो सकती है। भूमि की रासायनिक बनावट को खाद डाल कर, जुताई करके तथा पानी का निकास ठीक कर बदला जा सकता है। इसकी भौतिक दशा को जुताई से, पानी का निकास ठीक कर, सड़ी हुई खाद व पत्तियाँ डालने से अथवा दूसरी मिट्टी मिलाने से जैसे मटियार में बालू डाल कर सुधार सकते हैं।

भूमि की उत्पत्ति—

मिट्टी उन छोटे २ कणों के मिश्रण से बनी है जो कभी बड़ी २ चट्टानों के रूप में थे। इस प्रकार मिट्टी में भी उन्हीं चट्टानों के गुणों की विभिन्नता के अनुसार ही गुण पाये जाते हैं। यह कार्य प्रकृति द्वारा संपादित होता है। मनुष्य इसे नहीं कर सकता। चट्टानों के स्तरों पर गरमी, गीलापन और वायु के योग से एक रासायनिक क्रिया होती है। साथ ही अन्य अनेक कारणों से चट्टानें टूट जातीं और धीरे २ मिट्टी का रूप धारण कर लेती हैं। इस प्रकार भूमि निम्नलिखित वस्तुओं द्वारा निर्मित होती रहती है:—

(१) पानी (२) वायु (३) सर्दी-गर्मी (४) वनस्पति व जड़ें (५) ज्वालामुखी व भूचाल (६) पशु व कीटाणु। इनमें पहली तीन मुख्य हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पानी—पानी में भीगने से चट्टानें मुलायम पड़ जाती हैं। पानी बरसने से उसमें हवा की कार्बनडाई आक्साइड गैस (CO_2) का मेल हो जाता है। जब यह मिश्रित पानी चट्टानों पर पड़ता है तो उसकी ऊपरी सतह को मुलायम कर देता है जिससे चट्टान के ऊपर के कण पृथक हो जाते हैं। ऊँची चट्टानों पर बर्फ जमती है जिसके जमने और पिघलने से उसका आकार छोटा बड़ा होता रहता है। इसके कारण चट्टानों में दरारें पड़ जाती हैं। जल प्रपातों में पड़कर टूटने से, तेज बहने वाली नदियों के प्रवाह में बहकर और आपस में टकराकर भी यह चट्टानें कणों में परिवर्तित हो जाती हैं।

वायु—वायु मिट्टी के इन कणों को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाती है। प्रबल झंझावातों में इसके साथ छोटे-छोटे कंकड़-पत्थर व काठ आदि के टुकड़े भी उड़ते हैं और दूसरों से टकराते हैं। इस प्रकार इनसे भी कुछ कण अवश्य बन जाते हैं। हवा में आक्सीजन विद्यमान रहने से चट्टानों पर इसके असर से मुर्चा लग जाता है। परिणामस्वरूप ऊपरी तह कुछ समय में चट्टान से अलग हो जाती है।

सर्दी-गर्मी—संसार की अन्य वस्तुओं के समान चट्टानें भी सर्दी पाकर सिकुड़ जाती हैं और गर्मी पाकर पुनः बढ़ जाती हैं। इन पर यह प्रभाव भिन्न २ ऋतुओं के बदलने के साथ होता है। इसी घटती-बढ़ती एवं परिवर्तन के परिणामस्वरूप वे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कमजोर होकर टूट जाती हैं और क्रमशः प्रकृति की चक्की में पिसकर कणों में परिवर्तित हो जाती हैं।

वनस्पति व जड़ें—छोटे-बड़े सभी प्रकार के पौदे भी मिट्टी की बनावट में सहायक होते हैं। वे अपने उगने योग्य मिट्टी मिल जाने पर उग आते हैं। इनकी जड़ें जमीन के भीतर इधर-उधर फैलने का प्रयास करती हैं। वे इधर-उधर बढ़कर चट्टानों को तोड़ा करती हैं और इस प्रकार अपने बढ़ने का स्थान निकालती रहती हैं। काई आदि जैसे पौदे चट्टान के मुलायम भाग को प्रायः अपनी जड़ों द्वारा तोड़ते रहते हैं।

ज्वालामुखी, भूचाल तथा पशु-पक्षी—इसी प्रकार ज्वालामुखी भूचाल और पशु तथा कीटाणु भी इस कार्य में सहायक होते हैं। भूकम्प आदि से भूमि का भाग निकल आता है और कुछ गायब हो जाता है। वनस्पतियाँ तथा वृक्ष आदि उगते और झड़-गल कर भूमि का निर्माण करते हैं। जल और थल के जीव भी मरकर पृथ्वी की भूमि का विस्तार करते हैं।

भूमि से पौदों को प्राप्त होनेवाले खनिज अंश—

अब तक विद्वानों का विचार था कि वनस्पतियों में जीव नहीं होता परन्तु श्री जगदीश चन्द्र बोस ने अपने अनुसंधानों से यह सिद्ध कर दिया है कि पौदों में वे सब चेष्टायें होती हैं, जो मनुष्य और पशुओं में पाई जाती हैं। वे वायु, जल व मिट्टी से अनेक पदार्थों को लेकर अपने शरीर के अनेक भागों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बनाते हैं। पौदा जमीन से नाइट्रोजन, गन्धक, फासफोरस, सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, मैगनीशियम, लोहा, क्लोरीन, आयोडीन और सिलीकन ग्रहण करता है। आक्सीजन व हाइड्रोजन को जल के द्वारा तथा नाइट्रोजन व क्लोरीन भी कुछ साधनों द्वारा वायु से ग्रहण करता है। यह खनिज अंश एक निश्चित् मात्रा में ही रहते हैं अस्तु यह आवश्यक है कि इनकी पूर्ति होती रहे।

भूमि की किस्में—

भारतवर्ष में कई तरह की भूमि पाई जाती है। कृषि-विशारदों ने कणों के आकार व मिट्टी की बनावट के आधार पर इसे निम्नलिखित भागों में बाँटा है:—

(१) बलुई मिट्टी (२) बलुई दोमट (३) मटियार (४) दुमट (५) मटियार दुमट (६) काली भूमि (७) कंकरीली भूमि (८) ऊसर (९) मक (१०) सिल्ट।

(१) बलुई भूमि—इस भूमि के कण बड़े तथा खुरदुरे होते हैं जिनमें लस नहीं होता। इसमें चिकनी मिट्टी बहुत कम होती है। इसमें जुताई व गोड़ाई करने में आसानी रहती है। सर्दी-गर्मी का इस पर तत्काल प्रभाव पड़ता है। यह पानी को शीघ्र ही सोख लेती है। इसमें अन्न आदि की उपज तो नहीं किंतु नादियों के किनारे तरबूज ककड़ी खरबूजा आदि की फसलें उत्पन्न की जाती हैं। इस भूमि को कुछ चिकनी मिट्टी डालकर, गोबर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की सड़ी हुई खाद देकर, चूना मिलाकर खेत में पानी रोककर और जुताई द्वारा खेत को कंदवा कर अन्य वस्तुओं की उपज के योग्य भी बनाया जा सकता है। इसमें ८० प्रतिशत से अधिक रेत पाया जाता है।

(२) बलुई दुमट—इसमें $\frac{3}{4}$ भाग रेत और $\frac{1}{4}$ भाग चिकनी मिट्टी होती है। साधारणतया इसमें ६० से ८० प्रतिशत तक बालू होती है। उपज में यह बलुई मिट्टी से कुछ अच्छी होती है।

(३) मटियार–(Clay Soil) इसमें खाद्य-पदार्थ अधिक मात्रा में होता है। यह देर में गरम और देर में ठंडी होती है। पानी कम और धीरे धीरे सोखती है। पानी धारण करने की शक्ति इसमें अधिक होती है और नमी दीर्घ काल तक रहती है। कणों के बीच संधियाँ न रहने से हवा का प्रवेश कम होता है। इसके कण बारीक होते हैं और भीगने पर लसदार व मुलायम लगते हैं किन्तु सूखी दशा में जुताई-गुड़ाई करना कठिन हो जाता है। इसमें भारी हल चल सकता है। धान, चना आदि इसमें विशेष रूप से होते हैं। अन्य फसलों के लिए यह ठीक नहीं पड़ती। इसमें बालू २० प्रतिशत से कम होती है। साधारणतया इसमें ८०–६० प्रतिशत चिकनी मिट्टी और १०-१२ प्रतिशत रेत होता है।

(४) दुमट–यह भूमि सर्वोत्तम होती है। इसमें मटियार, भूड़ और कंकरीली भूमि के दोष नहीं होते। इसमें खाद्यपदार्थ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का अंश यथायोग्य होता है। यह समान रूप से ठंडी व गर्म होती है और पानी को सोखने व उसे धारण करने की भी सम शक्ति इसमें होती है। इसमें चिकनी मिट्टी का अंश अधिक होता है परन्तु लगातार जुताई और खाद से यह मुलायम व भुरभुरी हो जाती है। इसमें प्रत्येक प्रकार की फसल बोई जा सकती है। इसमें ४० से ६० प्रतिशत बालू होती है।

(५) मटियार दुमट—यह मटियार व दुमट के बीच की किस्म है। इसमें उपर्युक्त भूमि से अधिक उर्वरता और तरी होती है। इसमें फसल देर में तैयार होती है। इसमें ६० से ६१ प्रतिशत तक चिकनी मिट्टी और ३० से ४० प्रतिशत रेत होता है।

(६) काली मिट्टी—इसे बम्बई व मध्यप्रदेश में पाया जाता है। विद्वानों का विचार है कि यह भूमि ज्वालामुखी पहाड़ों के फटने से बनती है। यह चिकनी मिट्टी से बहुत कुछ मिलती जुलती है और उसके बहुत से गुण-अवगुण इसमें भी पाये जाते हैं। अस्तु गुणों में यह मटियार के समान है। साधारणतः यह भूमि उपजाऊ होती है। कपास, गेहूँ, चना आदि की फसलें इसमें अच्छी होती हैं।

(७) कंकरीली भूमि—इसमें कंकड़-पत्थर चिकनी मिट्टी के साथ मिले रहते हैं। यह निकृष्ट भूमि होती है। इसमें खाद्य पदार्थ कम होता है। धरातल के सम न होने के कारण सिंचाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का ठीक प्रबंध नहीं होता। जड़ें भी इसमें ठीक से नहीं बैठ पातीं। २५ प्रतिशत से अधिक कंकड़ होने पर यह खेती के पूर्ण अयोग्य हो जाती है। इसमें केवल घास की चटाई, जंगल उत्पन्न कर लकड़ी और चूना बनाने के लिये कंकड़ निकालने का काम हो सकता है।

(८) ऊसर—इसे रेतीली भूमि (Alkaline Soil) भी कहते हैं। इसमें सोडियम कार्बोनेट, सोडियम सल्फेट तथा सोडियम क्लोराइड नमक विशेष रूप से पाये जाते हैं, जिनके कारण यह भूमि खेती के पूर्ण अयोग्य हो जाती है। यह नमक मिट्टी की ऊपरी सतह में ही होते हैं। अस्तु इसमें गहरी जड़ों वाले तथा नमक चूसने वाले पौधे अधिक हो सकते हैं, जैसे अरहर, नील व ढेंचा आदि। मेड़बंदी कर पानी का प्रबंध होने पर धान तथा रबी में चना-मटर बोया जा सकता है। इसका सुधार कैल्शियम सल्फेट ($CaSO_४$) अर्थात जिप्सम नमक डाल कर वर्षा ऋतु में शीरा डाल कर जुताई कर और दो तीन इंच मोटी बालू की तह डाल कर किया जा सकता है और इसे खेती के योग्य बनाया जा सकता है।

(९) मक—(MUCK) इसमें ५० से ८५ प्रतिशत तक पौदों का सड़ा हुआ अंश रहता है। काला रंग, ज्यादा पानी सोखना, ज्यादा नत्रजन का होना, धातु संबंधी तत्वों की कमी और फसलों का देर में पकना इस भूमि की विशेषतायें हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१०) सिल्ट—नदी के किनारे वाली भूमि (कछार) अथवा भाट जमीन में सिल्ट का अंश ज्यादा होता है। यह बारीक मिट्टी होती है। इसमें सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती है।

जमीन की पहिचान

साधारण ढंग से हमें भूमि की पहिचान करने में कठिनाई होगी जब हमें उपरोक्त विभाजन के अनुसार जमीन पहिचान में न आये तब उसके रंग को देखकर उसे निम्न प्रकार पहिचाना जा सकता है:—

(१) मिट्टी का पीला रंग उसमें फासफोरस व चूने की मिलावट का द्योतक है। यह मिट्टी दुमट मिट्टी होती है इसमें गल्ले की लगभग सभी फसलें होती हैं।

(२) जो मिट्टी सफेदी मायल पीले रंगकी हो उसे बलुई-दूमट समझना चाहिये। इसमें जौ, सरसों, उर्द, राई आदि होती हैं।

(३) काली मिट्टी होना अधिकतर मटियार भूमि की विशेषता है। इसमें सभी प्रकार की फसलें उत्पन्न की जा सकती हैं।

(४) लाल रंग की मिट्टी में लोहे के अंश की अधिकता के साथ २ पोटास व अमोनिया की भी मिलावट होती है। इसमें तम्बाकू व कपास की खेती होती है।

—)❀(—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि की तैयारी

भूमि की तैयारी प्रत्येक फसल के लिए अत्यावश्यक है। भूमि को ठीक तौर से तैयार न करने पर फसल कमजोर हो जाती है। इसके लिए सर्वप्रथम पानी के निकास का ध्यान रखना पड़ता है। इसके अतिरिक्त जुताई, गुड़ाई, पाटा देना तथा यदा-कदा बेलन का भी प्रयोग करना पड़ता है। खेत की निराई तथा उसे चौरस बनाने का भी ध्यान रखना चाहिये।

पानी का निकास—पानी भरा रहने से उसमें फसल अच्छी नहीं होती, अतः पानी का निकास सबसे पहला काम है। भूमि में पानी भरा रहने से हवा का प्रवेश मिट्टी में नहीं होता। हवा जमीन के खाद्य पदार्थों को जड़ों द्वारा ग्रहण करने योग्य बनाती है और पानी भरा रहने से जड़ें इस लाभ से वंचित रह जाती हैं। दूसरे जमीन को गर्मी की बहुत जरूरत होती है। पानी भरा रहने पर सूर्य की सारी धूप उस पानी को भाप बनाकर उड़ाने में खर्च हो जाती है और परिणाम स्वरूप पौधे मिट्टी से गर्मी नहीं पाते। इसके साथ ही खेत का बिना सड़ा कूड़ा गर्मी की कमी के कारण सड़ नहीं पाता। तीसरा कारण यह है कि पानी भरा रहने से पौधों की जड़ें सड़ जाती हैं। इन सब दोषों को दूर करने के लिए जमीन में खुली नालियाँ बनाकर अथवा पत्थर या मिट्टी के नल लगाकर पानी के निकास की व्यवस्था करनी चाहिये।

जुताई—जुताई का अर्थ मिट्टी को इस प्रकार खोदना व तैयार करना है कि उसकी ऊपरी तह नीचे और नीचे की दबी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुई मिट्टी ऊपर आ जाय। खेत की गहरी जुताई फसल को उत्तम बनाती है। यह कहावत प्रसिद्ध है कि "बीज पड़े फल अच्छा देत, जितना गहरा जोते खेत।" खूब गहरी जुताई करने से जड़ें आसानी से फैलती हैं। घाघ ने कहा है कि "हर लगा पाताल, तो टूट गया काल।" इससे भूमि में अधिक नमी रहती है और जड़ें मिट्टी में अच्छी तरह फैल कर अपना खाद्य पदार्थ अधिक प्राप्त कर सकती हैं। ऊपरी परत की खाद को पौधे शीघ्र ही हजम कर जाते हैं परन्तु नीचे के परत (Sub Soil) के कुछ तत्व बहुत दिनों तक खाद का काम देते रहते हैं। उत्तम किस्म की भूमि के लिए भी गहरी जुताई लाभदायक है। इसके बिना दो तीन वर्ष में ही ऊपरी परत के खाद्य पदार्थ समाप्त हो जाते हैं और पौधे को आवश्यक तत्व नहीं प्राप्त होते। जुताई होने पर भूमि पानी अधिक सोखती है और खेत की मिट्टी कम काटती है। मटियार भूमि की भौतिक दशा के सुधार के साथ ही साथ पौदों की खुराक भी बढ़ जाती है। गहरी जुताई से भूमि में छिपे हुए कीड़े-मकोड़े नष्ट हो जाते हैं और फँगस आदि की बीमारियाँ नहीं होतीं तथा भूमि का सब खर-पतवार सड़ जाता है। बुवाई के समय किसान को कम परिश्रम करना पड़ता है और उसका खेत बोने के लिये शीघ्र ही तैयार हो जाता है। इस प्रकार गहरी जुताई भूमि की दशा सुधारने, पानी, बीज और खाद चारो के कार्य में सहायक होती है और कमी की पूर्ति करती है।

गहरी जुताई के लिए कानपुर का मिट्टी पलटने वाला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
हल सबसे अच्छा माना गया है। इसका मूल्य भी ८-१० रुपया है और गहरी जुताई के लिये अत्यन्त उपयोगी होता है। इस हल की ५-७ बार की जुताई देशी हल की १५-२० बार की जुताई के बराबर होती है। जुताई कूँड़ से कूँड़ मिलाकर करनी चाहिये जिसमें एक कूँड़ से दूसरे कूँड़ के बीच कोई भूमि न छूटने पावे। बरसात के महीनों में ही मिट्टी पलटने वाले हल के प्रयोग से रबी की फसल को बहुत लाभ होता है। १५ सितम्बर के बाद जब नमी रोकने की आवश्यकता होती है तो मिट्टी पलटने वाले हल कदापि प्रयोग में न लाना चाहिये। उस समय देशी हल या कलटीवेटर से खेत की जुताई करनी चाहिये ताकि नीचे की नमी ऊपर आकर नष्ट न हो जाय।

गहरी जुताई के लिये यह ध्यान रखना चाहिये कि हमेशा से उथली जोती गई भूमि की गहरी जुताई एकदम न करना चाहिये, अन्यथा इससे निचले परत की मिट्टी ऊपर आ जाती है जो कम उपजाऊ होती है। ऐसी भूमि में हर साल १ इंच जुताई बढ़ाते जाना चाहिये।

खेतों की जुताई के समय के सम्बन्ध में अनुभव से यह जाना गया है कि गर्मी में खेत को जोतकर छोड़ देना अच्छा होता है। वर्षा समाप्त होने पर जुताई शीघ्र से शीघ्र प्रारंभ कर देनी चाहिये किन्तु इसे सदैव ध्यान रखना चाहिये कि भूमि गीली न हो क्योंकि इससे विशेषकर भारी मिट्टी कड़ी पड़ जाती है, खेतों में ढेले पड़ जाते हैं और फिर उसे ठीक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दशा में लाना कठिन हो जाता है। मिट्टी मुट्ठी में दबाने से यदि चूर-चूर हो जाय तो समझना चाहिये कि खेत जुताई के योग्य है। असाढ़ में पानी गिरने के बाद खेत की जुताई अधिक लाभप्रद होती है। कहावत प्रसिद्ध है कि:—

'जो बाँहै असाढ़ इकबार, ता घर उपजै अन्न अपार'

प्रत्येक फसल के लिए अलग २ जुताई की आवश्यकता होती है। गेहूँ आदि के लिये खेत की जुताई अधिक करनी पड़ती है परंतु खरीफ की फसल में ३-४ बार की जुताई ही पर्याप्त होती है। इसलिए किस फसल में कितनी बार जुताई होनी चाहिये इसका विवरण प्रत्येक फसल के साथ दिया जायगा।

गुड़ाई-जुताई के बाद जमीन नर्म व भुरभुरी करने के लिए गुड़ाई की आवश्यकता होती है। कुछ फसलें जैसे गन्ना और मक्का की गुड़ाई किसान पहले से ही करते चले आये हैं परंतु प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि किसी भी फसल में गुड़ाई द्वारा लाभ पहुँचाया जा सकता है।

पाटा या बेलन—खेत के ढेलों को तोड़ने व खेत को सम करने के लिये पाटा अथवा बेलन का प्रयोग होता है। भूमि की जुताई के बाद बेलन करना चाहिये। भारी भूमि में विशेषकर ढेले तोड़ने में और हल्की भूमि को दबाने के लिए इनका प्रयोग होता है। खेत में सर्दी हो तो उसे कम करने के लिये खेत की पर्याप्त जुताई करने के बाद उसे यूँ ही छोड़ देना चाहिये।

——)❀(——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाद

किसानों में यह एक प्रचलित विचार है कि निकालने से कुँए का पानी कम नहीं होता और इसी तरह खेत की उपजाऊ मिट्टी का भी यही हाल होता है। परंतु प्रत्येक अनुभवी किसान जानता है कि प्रतिवर्ष खेत से सफल उगाने से पैदावार घट जाती है। इस कमी को फसलों के उलट फेर से, कुछ दाल वाली फसलों को बोने से, कुछ सूर्य के प्रकाश और वायु-मंडल से, कुछ जुताई गुड़ाई से, कुछ फसल के पत्ते, डंठल जड़ आदि जो खेत में रह जाते हैं उनसे, पूरा नहीं किया जा सकता। जो किसान खेत में खाद नहीं डालता उसके घर में दरिद्रता का वास होता है। घाघ की कहावत प्रसिद्ध है:—'खेते पाँसा जो न किसाना, वहि के घरे दरिद्र समाना'। अच्छी खेती करने के संबंध में घाघ का कहना है कि—'खेती करै खाद से भरै, तौ सौ मन कोठिला मा भरै'। खेत की उर्वरा शक्ति को कायम रखने के लिये चार चीजों की आवश्यकता होती है:—

(१) भूमि में पोषण पदार्थों का होना—पौधों के पोषण के लिये आक्सीजन, हाइड्रोजन, कार्बन, नाइट्रोजन, मैगनीशियम, सल्फर जिंक तथा कुछ अन्य तत्वों की आवश्यकता होती है। इनमें से आक्सीजन व कार्बन पौधे हवा से लेते हैं और शेष भूमि तथा पानी से।

(२) भूमि की बनावट का सही हालत में होना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(३) भूमि में पानी रोकने की ताकत होना ।

(४) जीवांश का होना ।

इसके लिए बहुत जमाने से किसान गोबर की खाद और राख का प्रयोग करते आये हैं । परंतु पौधों के लिए असली भोजन की खोज में तरह २ की रासायनिक चीजों का प्रयोग करने से भिन्न-भिन्न गुणों वाली तरह तरह की खादें तैयार की जाने लगी हैं । पौधों के उपरोक्त पोषक तत्वों में से नत्रजन, फासफोरस व पोटाश को छोड़कर शेष सभी पोषक तत्व हमारी भूमि में प्रर्याप्त मात्रा में प्राप्त हैं ।

खाद की किस्में:—

पौधों की आवश्यकतानुसार खाद मुखयतः तीन क़िस्मों में बाँटी जा सकती है:—

(१) नत्रजन संबंधी खाद—नत्रजन से पौधे के अंग-प्रत्यंग बनते हैं । इस खाद में इसकी अधिकता होती है । गोबर, घोड़े, बकरी और भेड़ के मल-मूत्र, सड़े पत्तों की खाद, हरी खाद, खली, आदमी का मल-मूत्र, नाइट्रेट आफ सोडा, अमोनियम सल्फेट, कैल्शियम स्पिनामाइड आदि नाइट्रोजन-युक्त खादें हैं ।

(२) फासफोरस संबंधी खाद—जमीन में फासफोरस होने से पौदे की जड़ें अधिक फैलती हैं, वे शीघ्र बढ़ते हैं, अन्न शीघ्र पकता है और घासें कम पैदा होती हैं । इसके अतिरिक्त अन्न भी अधिक स्वादिष्ट उत्पन्न होता है। फासफोरस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सबसे अधिक हड्डियों में होता है। हड्डी का चूरा, हड्डी का कोयला, सुपरफासफोरस और मछली की खाद, यह सब फासफोरस-युक्त खादें हैं।

(३) पोटाश संबंधी खाद—पोटाश खेत में घास को फैलने या पनपने नहीं देता। यह पौदे के रेशे २ में उसके द्वारा ग्रहण किये गए खाद्य और रस को पहुँचाता है। पोटाश की सबसे अधिक मात्रा राख में होती है। राख और सल्फेट आफ पोटाश, पोटाश-युक्त खादें हैं।

ऊपर के वर्गीकरण से यह न समझ लेना चाहिए कि भिन्न २ वर्गों में दिये गये पदार्थों में, उस-उस वर्ग के तत्व के सिवा दूसरे तत्व होते ही नहीं। इसमें दूसरे तत्व भी होते हैं किन्तु अल्प परिमाण में। उदाहरणार्थ हड्डी फासफोरस-युक्त खाद में दी गई है किन्तु उसमें नत्रजन भी विद्यमान रहता है। इसी प्रकार गोबर में जिसे फासफोरस-युक्त खाद बताया गया है, २७ मन में १३ पौंड पोटाश होती है।

उत्तम या पूर्ण खाद उसे कहते हैं जिसमें नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश, तीनो उपयुक्त मात्रा में हों, इसलिये उपरोक्त तीनो किस्मों से थोड़ा २ मिलाकर खाद तैयार करनी चाहिए। मिट्टी में इनमें से किसी एक की विशेष कमी होने पर उसकी मात्रा अधिक कर देनी चाहिए। इन तीनों की कमी के लक्षण नीचे दिये जाते हैं जिनसे उनकी कमी की पहिचान की जा सकती है:—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नत्रजन—(१) तेजाब अधिक हो, (२) मिट्टी रेतीली हो, (३) रंग भूसला हो,(४) नमी अधिक हो,(५) फासफोरस कम हो,(६) धरती बहुत सूखी और,(७) खेत में पौदों के टुकड़े बिना गले हुये मौजूद होने पर नत्रजन की कमी का पता लगता है।

नत्रजन की अधिकता होने पर मिट्टी काली होती है।

फासफोरस—(१) धरती भारी हो, चिकनी मिट्टी या रेत अधिक हो। (२) पौदों की भोजन योग्य अवस्था में नाइट्रोजन बहुत अधिक पाया जाय तो समझना चाहिए कि फासफोरस की कमी है।

पोटाश—इसकी कमी होने पर भूमि में चूना पत्थर अधिक हो जाते हैं। कंकरीली भूमि में इसी की कमी होती है।

अन्य तत्वों की कमी—(१) मिट्टी नमकीन हो तो लोहा और मैग्नेशिया की कमी होती है, (२) रिहाली मिट्टी हो तो गंधक की कमी समझना चाहिए, (३) मैग्नेशिया अधिक हो तो लोहे की कमी होगी, (४) मिट्टी में खट्टापन (तेजाब) हो तो चूने क ी कमी होगी।

हमें इनमें से प्रत्येक की कमी को दूर करना चाहिये। पौदों के संबंध में प्रारंभिक बातों को समझ लेने के बाद अब हमें विचार करना है कि गाँवों में उपलब्ध साधनों द्वारा हम खाद की कमी को कैसे पूरा कर सकते हैं। यहाँ पर हम उसी क वर्णन करेंगे।

गोबर की खाद—भारतवर्ष के सभी प्रान्तों में गोबर की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाँस काम में लाई जाती है। गोबर की खाद सर्वश्रेष्ठ एवं पूर्ण खाद होती है। यह पौधे की खूराक भूमि में पहुँचाने के सिवा बलुही भूमि को मटियार बनाती है और मटियार भूमि को भुरभुरी करती है और जो भूमि जल्द सूखती है उसमें नमी को रोकती है। घाघ ने भी गोबर की खाद का महत्व इस प्रकार बताया है—'जेकर खेत परा नहिं गोबर, वहि किसान का जानेव दूबर' अर्थात् खेत में गोबर न डालने वाला किसान गरीब रहता है।

किसानों में गोबर की पाँस तैयार करने की प्रचलित रीति इतनी बुरी है कि खाद के उपयोगी तत्व ही नष्ट हो जाते हैं। बहुत से लोग कच्चा गोबर ही खेत में पहुँचा देते हैं। यह दीमक की एक श्रेष्ठ खूराक होती है। अतः बिना सड़ा हुआ गोबर खेत में डालने से केवल उसके तत्व ही नष्ट नहीं होते वरन खेत में दीमक भी पैदा हो जाती है। इसके अतिरिक्त उसमें रहने वाले खर-पतवार के बीज भी बिना सड़े हुये खेत में पहुँच जाते हैं, जिससे खेत में घास बढ़ जाती है। गाँव में अधिकतर इसके ढेर लगा देते हैं जिन्हें घूर कहते हैं। बरसात में पौधे की खूराक का बहुत बड़ा हिस्सा पानी के साथ बह जाता है। दूसरी हानि धूप पड़ने से, एमोनियम क्लोराइड के उड़ जाने से होती है और इस प्रकार केवल सीठी बच रहती है जो पौधे के लिये बिलकुल बेकार होती है। इसलिये खाद को गढ़ों में भर कर इस प्रकार ढक देना चाहिये कि उसके पोषक तत्व नष्ट न हों।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोबर की खाद के गढ़े—यह पानी पीने के कुओं से दूर ऐसी जगह होने चाहिये जहाँ वर्षा का पानी न इकट्ठा हो। गढ़े की गहराई ३ से ४ फीट तक होनी चाहिये। गढ़ा ६ फीट चौड़ा और ८ फीट लम्बा अथवा ८ फीट चौड़ा और १२ फीट लम्बा हो तो अच्छा है। किसान को अपनी आवश्यकतानुसार इनमें से किसी एक को चुन लेना चाहिये। इस प्रकार के गढ़ों में खाद ठीक से सड़ भी जायगी और उसके सूखने का भय भी न रहेगा। गढ़े के भर जाने पर उसे ६ इंच ऊँची मिट्टी से ढक देना चाहिये जिससे कि उससे उड़ने वाले पदार्थ इसमें सोख जाँय। गढ़े की खाद ६-१० माह के बाद खेत में डालने योग्य हो जाती है। धूप हवा व पानी से इसकी रक्षा के लिये गढ़ों को पेड़ की छाया के नीचे बनाना चाहिये। सुविधा के लिये तीन चार गड्ढे होने चाहिये, जिससे जब अंतिम भर जाय तब पहला खाली हो जाय।

भेंड़-बकरी की लेंड़ी की खाद:—भेंड़-बकरी की लेंड़ी की खाद में अन्य पशुओं के गोबर की खाद से अधिक पोषक तत्व पाये जाते हैं। इसका चूरा बना कर खाद के तौर पर गला कर काम में लाना चाहिये।

मूत्र की खाद:—गोबर की अपेक्षा मूत्र में खाद्य तत्व अधिक होते हैं, किन्तु भारतीय किसान अज्ञान-वश इसका प्रयोग नहीं करते। मूत्र की खाद तैयार करने के तीन उपाय हैं, जो नीचे दिये जा रहे हैं:—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१) पशु-शाला में पशुओं के नीचे ६ इंच मोटी घास की तह बिछा दें। इससे पशुओं को गरम बिछौना मिल जायेगा और मूत्र भी उनमें सोख जायगा। जाड़े में यह ढंग अधिक उपयोगी है। इसे मूत्र से अच्छी तरह सनजाने के बाद खाद के ढेरों में सड़ने के लिये डाल देना चाहिये। यह एक उत्तम खाद होगी।

(२) पशु-शाला की भूमि को ६ इंच गहरा खोदकर महीने में एक बार २॥ इंच की भुरभुरी मिट्टी की तह डाल दी जावे। इस प्रकार एक माह में एक तह मूत्र सोखेगी। तीन माह में यह तीन तहें पड़ जायेंगी। इसके पश्चात् यह ८ इंच मिट्टी एकदम उठाली जावे और नई तह डाल दी जावे। इस प्रयोग को अक्टूबर से मई तक काम में लाना चाहिये। इस खाद को सीधे खेत में या खाद के गढ़ों में पहुँचा देना चाहिये।

(३) किसान को अपने ही खेत से (यदि हो सके तो) मिट्टी लेकर ४ इंच मोटी तह पशु-शाला में बिछा देना चाहिये। जानवरों के नीचे की मिट्टी जब मूत्र से अच्छी तरह तर हो जाय तब उसे उस जगह से हटा कर उस स्थान पर दूसरे हिस्से की सूखी मिट्टी डाल देनी चाहिये। लगभग २ महीने में सारी मिट्टी तर हो जायगी। २ महीने के बाद या तो इसे खेत में पहुँचा देना चाहिये या खाद के गढ़े में डाल देना चाहिये और इसके स्थान पर दूसरी ४ इंच मोटी तह डाल देनी चाहिये।

उपरोक्त उपायों में से प्रत्येक के लिये यह आवश्यक है कि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पशु-शाला ऊपर से खुली हुई न हो। बरसात के आरंभ में ही आवश्यकता भर सूखी मिट्टी इकट्ठी कर लेनी चाहिये।

कम्पोस्ट खाद

इसे बागों की पत्तियों, घर का कूड़ा व करकट व राख, पौधों की जड़ें, तालाबों की घास, धान की भूसी व बेकार भूसा, लकड़ी का बुरादा, गन्ने के अगौरे और जानवरों का मल-मूत्र आदि गाँव में पाई जाने वाली वस्तुओं से बनाया जा सकता है। कड़ी चीजों को पशुओं द्वारा कुचलवा कर मुलायम बना लेना चाहिये। यह खाद बनाने से किसान को दो लाभ हैं। एक तो जितने गोबर से वह एक गाड़ी खाद बनायेगा उतने में ही तीन गाड़ी खाद बन सकेगी।

कम्पोस्ट बनाने की विधि—इसके बनाने के गढ़े साधारणतः ८ फीट लम्बे, ६ फीट चौड़े और एक सिरे पर ३ और दूसरे पर ३॥ फीट गहरे होने चाहिये। इन गढ़ों को लंबाई के ५-५ फुट के टुकड़ों में भरना चाहिये। गड्ढे में पहिले पत्तियों, फूस व खर-पतवार की ६ इंच की एक तह लगाई जानी चाहिये और फिर एक पतली तह राख, मिट्टी या चूने की देनी चाहिये। खर-पतवार को यदि वह नम नहीं है तो पानी छोड़कर नम करते रहना चाहिये, पहली तह लग जाने के बाद फिर ६ इंच खर-पतवार और २ इंच पुरानी खाद और मिट्टी, राख या चूने की तह लगाना चाहिये। जब तक तहों की ऊँचाई ५ फुट न हो जाय, इसी प्रकार तह लगाते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहना चाहिये। प्रारंभ में तो यह गड्ढे की ऊँचाई से २ फुट ऊँचा हो जायगा, परंतु बाद में सड़ने के बाद दब कर ३ फुट से अधिक नहीं रहेगा। इसमें हवा के प्रवेश की बड़ी आवश्यकता होती है, इसलिये इसे अधिक कुचला न जाना चाहिये और ४ इंच व्यास के दो बाँस के टुकड़े कचरा भरते समय गढ़े के बीच खड़े कर दिये जायँ और भर जाने पर निकाल लिये जायँ। इस प्रकार उनके स्थान पर दो छेद बन जायँगे और वायु भीतर जाती रहेगी। तह लग जाने के बाद दो बार ३ सप्ताह के अन्तर से ढेर को फावड़े से काट २ कर ऊपर से नीचे को पलट देना चाहिये। इस पलटाई में कचरा पूरी तरह मिल जाना चाहिये। जहाँ नमी अधिक हो वहाँ सूखे हिस्से से कचरा या थोड़ी सी धूल मिला देनी चाहिये। दूसरी पलटाई के १० सप्ताह बाद यह खेत में डालने योग्य हो जाती है। इन गढ़ों की लम्बाई चौड़ाई आवश्यकतानुसार बढ़ाई जा सकती है पर गहराई ३-३॥ फीट से अधिक न होनी चाहिये। बरसात के दिनों में कम्पोस्ट के गढ़े किसी ऊँचे स्थान पर बनाना चाहिये। जब बरसात का पहला पानी जोर से बरस जाय तब गढ़े की खाद को फावड़े से पलट देना चाहिये जिससे सूखा और नम भाग एक में मिल जाय। ऐसा एक महीने के अन्तर से तीन बार करना चाहिये।

जिन फसलों को दूसरी फसलों को उगाने के अभिप्राय से भूमि की दशा सुधारने के लिये बोते हैं, उन्हें हरी खाद की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फसलें कहते हैं। हरी खाद के लिये दालदार किस्म की फसलें बोयी जाती हैं क्योंकि उनकी जड़ों में नाइट्रोजन इकट्ठा होता है। इनके द्वारा खेत में वानस्पतिक अंश के साथ-साथ इसकी मात्रा भी बढ़ती है। यहाँ हरी खाद की कुछ फसलें दी जाती हैं:—

सनई और ढेंचा—इसे पानी की अधिक आवश्यकता होती है। इसे मई के दूसरे सप्ताह में और पानी की कमी वाले स्थानों में बरसात के साथ बोना चाहिये। सनई की बुवाई घनी अर्थात् १ मन बीज प्रति एकड़ और ढेंचा २० सेर प्रति एकड़ के हिसाब से बोना चाहिये। जिन खेतों में पानी लगता हो उनमें ढेंचा बोना चाहिये।

इसके बढ़ने में डेढ़ दो महीने से अधिक समय नहीं लगता। बढ़ चुकने पर जुलाई के अन्तिम सप्ताह में उस पर पाटा चला कर मेस्टन हल से जुताई कर पलट देना चाहिये और खेत को महीने भर यों ही छोड़ देना चाहिये। यदि इस बीच पानी न बरसे तो एक सिंचाई कर देना आवश्यक है ताकि सनई खेत में सड़ जाय। परन्तु स्मरण रहे कि अधिक पानी इसके लिये हानिकारक होता है। प्रयोग करके देखा गया है कि सनई की हरी खाद के प्रयोग से गेहूँ की उपज में ४० से ५० प्रतिशत तक वृद्धि हुई है। आलू, गन्ना और गेहूँ आदि बोने के लिए अधिकतर सनई की हरी खाद का प्रयोग होता है। धान की फसल में मई के प्रारंभ से पलेवा देकर सनई बोई जाती है

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और बेड़ लगाने के १०-१२ दिन पूर्व उसकी जुताई कर दी जाती है।

दलहन की फसल—इधर कृषिशास्त्रियों ने मूँग टाइप १ का आविष्कार किया है। यदि वर्षा के प्रारंभ में ही आधे जून के लगभग यह बोयी जाय तो अगस्त के अंतिम सप्ताह तक दाने तोड़कर यह खेत में जोत देने लायक हो जाती है। बोने में यह एक एकड़ में लगभग १॥) की लगती है और खाद के साथ साथ ८-१० मन मूँग भी मिल जाती है। लोबिया टाइप १ भी ऐसी ही एक शीघ्र पकने वाली फसल है और उसका भी प्रयोग इसी प्रकार किया जा सकता है। पानी लगने वाले खेतों में इन्हें न बोना चाहिये। इससे खरीफ की एक फसल भी मिल जाती है और खेत को खाद भी।

रबी में हरी खाद—रबी में हरी खाद के लिये बरसीम का प्रयोग करना चाहिये। इसमें सर्वाधिक नाइट्रोजन एकत्रित करने की शक्ति होती है बरसीम की खेती बहुधा पशुओं के चारे और बीज लिये की जाती है परंतु यदि उसका उपयोग न भी हो तो भी खाद के लिये यह अत्यंत उपयोगी है। यह काटते रहने पर भी बढ़ती है और दो-तीन कटाई हरा चारा लेने के बाद भी बची हुई खाद का काम करती है।

मिट्टी की खाद—ताल की खाद पानी में पैदा होनेवाले खर-पतवार से बनती है। प्रत्येक वर्ष ताल में होनेवाला खर-पतवार सड़कर उसकी तह में बैठ जाता है। इस प्रकार सड़ा हुआ कई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्षों का वानस्पतिक पदार्थ एकत्रित होकर कम्पोस्ट की एक तह की शकल में ताल की पेंद में बैठ जाता है। इसमें नाइट्रोजन की अत्यधिक मात्रा होती है। बरसात के पूर्व एक एकड़ में ५०–६० गाड़ी डालना चाहिये। यह मिट्टी की खाद विशेष कर बलुए खेत के लिये लाभप्रद सिद्ध हुई है।

खली की खाद—खली की खाद फसल पर अपना प्रभाव बहुत शीघ्र दिखलाती है। इसे भली भाँति घुलने के लिये नमी की अधिक आवश्यकता होती है। इसलिये इन्हें सिंचाई अथवा वर्षा वाले क्षेत्रों में ही काम में लाना चाहिये। खली की खाद महँगी होती है इसलिये गोबर के साथ मिलाकर खेत में देना चाहिये। एक एकड़ में ४ से ६ मन खली पर्याप्त होती है।

एक ५इंच×५ इंच×४ इंच के गड़हे में खली को कूट कर भर दें, फिर पानी डालकर खूब मिला दें और भली भाँति ढक दें। जेठ के प्रारंभ में ही इसे ढक कर बरसात भर ढके रखना चाहिये। आश्विन के आरंभ में इसे निकाल कर छाया में अच्छी तरह सुखा लें तथा सुरक्षित स्थान पर ढाँपकर रख दें। नीम की खली उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के साथ ही साथ दीमक का भी नाश करती है। मूँगफली, सरसों, कुसुम, अलसी, तिल, रामतिली और नारियल की खलियाँ जानवरों के खिलाने में काम आती हैं। रेंडी, नीम, करंज और महुआ की खली इस काम में नहीं आती अस्तु इनका प्रयोग करना चाहिये।

मनुष्य के मल की खाद—चीन व जापान में इसका प्रयोग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अधिक होता है। यहाँ के कुछ धार्मिक विचारों के लोग अज्ञान-वश इसे पसंद नहीं करते। सर डेनियल हाल के हिसाब से एक व्यक्ति के एक साल के मल-मूत्र में लगभग १२पौंड नाइट्रोजन होती है जो लगभग दो गाड़ी गोबर की खाद के बराबर होती है। एक गाड़ी गोबर खेत में पड़कर १६ रुपया मूल्य से अधिक की उपज बढ़ाता है। इस प्रकार एक व्यक्ति के मल से एक वर्ष में ३२ रुपया से ऊपर की उपज बढ़ाई जा सकती है। इसके प्रयोग करने के कुछ तरीके नीचे दिये जाते हैं।

जब टट्टी जाय तो साथ में एक खुरपी लेते जाय और मल को वहीं गाड़ दे। दूसरा ढंग यह है कि खेत के एक भाग में ६ इंच गहरी नालियाँ खोद दी जायँ। आड़ के लिये उसके चारो ओर टट्टी लगा दे। इन नालियों में बिना छुये हुये ही पैखाना मिट्टी डाल कर दबाया जा सकता है। एक नाली बंद होने पर दूसरी खोद ली जाय और टट्टी वहाँ रखदी जायँ। इस प्रकार खेत का एक बड़ा भाग उपजाऊ बनाया जा सकता है।

हड्डी की खाद—भारत के किसान धार्मिक अंधविश्वास के कारण हड्डियों का प्रयोग नहीं करते। इसके बिना हमारे देश की उर्वरा शक्ति बहुत क्षीण हो गई है। इसमें बहुत सी फासफोरस व नाइट्रोजन होती है। नाइट्रोजन की कमी तो हरी खाद व गोबर आदि की खाद से पूरी हो जाती है परंतु फासफोरस देने वाली खाद अधिकतर हड्डी से ही बनाई जाती है। इसे खेत में डालने के निम्न तरीके हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१) मशीन से पीसा हुआ हड्डी का चूरा खेत में डाला जाय। ऐसी खाद हमें बाजार में मिल सकती है किंतु इसके दाम अधिक होते हैं।

(२) हड्डी जलाकर और उसे चूने के समान पीस कर खेत में चूरा डाला जाय। हड्डी को जलाने से उसका नाइ-ट्रोजन निकल जाता है इसलिये अधजली हड्डी का ही चूरा काम में लाना चाहिये। हिसाब लगा कर देखा गया है कि मिल की खाद बाजार में ८) या ९) फी मन मिलती है किंतु इस ढंग से बनाने में २)-२॥) मन पड़ती है।

(३) डेढ़ मन तेजाब ३ मन पानी में धीरे २ डाला जाय। इसके बाद ३ मन हड्डियाँ उसमें डाल दी जाँय। इन्हें किसी लकड़ी से चलाते रहना चाहिये। साबुत हड्डी ७ सप्ताह में और चूरा करने पर ४ सप्ताह में मिल जायेंगी और उनकी लेई सी बन जायगी। इसमें ८ गुनी मिट्टी मिला देनी चाहिये। इस प्रकार ३० मन खाद तैयार हो जायगी जिसका खर्च ३५) से अधिक नहीं होगा।

दलहन की फसलों पर हड्डी की खाद का अच्छा प्रभाव पड़ता है। इसे देने से फसलों की पैदावार के साथ ही साथ भूमि की उर्वरा शक्ति भी बढ़ती है।

रासायनिक खाद—उपर्युक्त खादों के प्रयोग से पौदे बड़े पुष्ट और फलदायी होते हैं और साथ ही जमीन से जो तत्व निकल आते हैं उनकी भी पूर्ति होती है। किंतु रासायनिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाद पौधों को केवल बढ़ाने में ही सहायता करती है। इतना ही नहीं इसके अधिक प्रयोग से भूमि को हानि भी है। अतएव जहाँ उपर्युक्त खादें प्राप्त न हो सकें वहाँ इसका व्यवहार करना चाहिये। कुछ प्रमुख रासायनिक खादों का यहाँ वर्णन किया जाता है:—

सोडियम नाइट्रेट (Nitrate of Soda)—यह एक प्रकार के सफेद नमक (शोरा के पत्थर) से बनती है। इससे पौधों की जड़ें शीघ्र बढ़ती हैं और जमीन के भीतर चली जाती हैं जिससे पौधे पुष्ट होते हैं। इससे पत्ते, फल, फूल, धड़ सभी अधिक बढ़ते हैं। इसका असर अत्यन्त शीघ्र होता है। इसके प्रयोग से कीड़े नहीं लगते और बीमारियाँ नहीं होतीं। इसमें १६ प्रतिशत शुद्ध नाइट्रोजन होता है। १ मन सोडा नाइट्रेट में २॥ गाड़ी के बराबर नाइट्रोजन होता है। इस खाद को कुछ दिनों के अन्तर से देना चाहिये। पौधों के बढ़ जाने के पश्चात् इस खाद को डालकर सिंचाई कर देनी चाहिये, जिससे वह पानी में घुल जाय और पौधे जड़ों द्वारा उसे प्राप्त कर सकें। सोडा नाइट्रेट को मटियार व ऊसर के आसपास वाली भूमियों में कभी न डालना चाहिये।

अमोनियम सल्फेट (Sulphate of Ammonia)—इसमें अमोनिया और गंधक के तेजाब के तत्व रहते हैं। नाइट्रोजन-तत्व के लिये नाइट्रेट आफ सोडा के बाद यही उत्तम खाद है। इसका प्रभाव सोडा नाइट्रेट के समान शीघ्र नहीं होता किन्तु

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह अधिक देर तक ठहरती है। इसे मटियार भूमि में और ऊसर के आसपास के खेतों में भी काम में लाना चाहिये। धान के खेतों में यह विशेष रूप से लाभकारी होता है। इसमें २०·६ प्र.श. नाइट्रोजन होता है अर्थात् १ मन अमोनियम सल्फेट में करीब ३ गाड़ी गोबर की खाद के बराबर प्रभाव रहता है। प्रयोग करके देखा गया है कि १॥ मन प्रति एकड़ में इसका प्रयोग करने से पैदावार लगभग ४ मन प्रति एकड़ बढ़ जाती है।

सुपर फास्फेट(Super Phosphate)—इसमें १५ प्रतिशत फास्फोरिक एसिड होता है। इसे पानी में मिलाकर पौधों की जड़ों में देना चाहिये।

बेसिक स्लाग(Basic Slag)—इसमें फासफोरिक एसिड, चूना, लोहा और मैग्नीशिया रहता है। चूने की कमी होने पर इसका प्रयोग करना चाहिये।

नाइट्रेट आफ पोटाश और म्युरियट आफ पोटाश इन्हें भी पानी में घोल बनाकर प्रयोग में लाया जाता है। इनमें ४५ प्रतिशत के लगभग पोटाश होती है। उसकी कमी होने पर इसका प्रयोग करना चाहिये।

मुख्य फसलों में कितनी खाद आमतौर से दी जानी चाहिये इसका विवरण हम प्रत्येक फसल के साथ देते चलेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सिंचाई

हमारे देश में सिंचाई के अनेक साधन काम में लाये जाते हैं। वर्षा के अभाव में तालाब, बाँध, नदी-नार, कुआँ आदि से भी सिंचाई की जाती है। इनसे पानी निकालने के लिये ढेकुली, रहट, चरस आदि अनेक साधन काम में लाये जाते हैं। अब हम इनके संबंध में संक्षेप में वर्णन करेंगे।

कुआँ

कुएँ दो प्रकार के होते हैं—(१) चुआनवाले और (२) सोतेवाले। चुआनवाले कुओं से पानी रस-रस कर थोड़ा-थोड़ा आता है। इससे इकट्ठा होने पर ही पानी मिल सकता है, पर सोतेवाले से खूब पानी मिलता है।

यदि कहीं ४०-५० फीट गहरे कुएँ हों, तो जहाँ तक अच्छे सोते मिलें, वहाँ तक नल डलवा देना या बोरिंग करा लेना चाहिए। इससे पानी अधिक मात्रा में मिलता है।

नल-कूप

नल-कूप (Tube Well)—भूमि की अधिक गहरी तहों से पानी लेने के लिये नल-कूप का निर्माण किया जाता है। भूमि की निचली तहों में सभी जगह समान मात्रा में जल का प्रभाव नहीं होता, इसलिये विशेष क्षेत्रों में ही इनका प्रयोग होता है। ३६ से ५०० फीट की गहराई तक बनने वाले इस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुयें से लगभग ३०,००० गैलन पानी प्रति घण्टा प्राप्त हो सकता है। नलकूप से ५-६ सौ एकड़ भूमि की सिंचाई आसानी से हो सकती है। इससे पानी निकालने के लिये पानी एंजिन, बिजली या मोटर का इस्तेमाल होता है। इस सम्बंध में टेकनिकल सहयोग के हेतु इंजीनियर कृषि विभाग से संपर्क करना चाहिये।

चरस या पुर—यह एक चमड़े का बड़ा सा थैला होता है जो एक मोटे रस्से में बाँध, गरारी से कुयें में डालकर, बैलों द्वारा खींचा जाता है। इसका आकार बहुत कुछ बैलों की शक्ति पर निर्भर करता है। हमारे प्रदेश में चरस या पुर का प्रयोग अधिक होता है। इसमें समय और व्यय, दोनो अधिक लगते हैं।

यह दो प्रकार का होता है—(१) कीली, और (२) लागौरी।

कीली में दो जोड़ बैल लगते हैं, जो बारी-बारी से चरसा खींचते हैं, और लागौरी में एक जोड़ बैल लगता है। यदि कुआँ ३० फीट गहरा हो, तो कीली $\frac{3}{8}$ एकड़ १ घंटे में ७० पुर=१७५० गैलन पानी देकर सींचता है, और लागौरी से एक जोड़ी बैल $\frac{3}{4}$ एकड़ प्रति घंटा ५० पुर=१२५० गैलन पानी के हिसाब से एक दिन में साधारणतः सिंचाई करता है। दोनो में तीन-तीन आदमियों की आवश्यकता होती है। दो जोड़ी से पुर खींचने से काम अधिक होता है और बैलों को परिश्रम भी कम करना पड़ता है। पुर ५०-६० फीट से अधिक पर काम नहीं देता। कुआँ जितना कम गहरा होगा, उतना ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पानी अधिक निकलेगा। ७ से ९ बालिश्त तक के चरस अधिक प्रयोग में लाये जाते हैं। सात बालिश्त वाले में ३२ गैलन और ९ बालिश्त वाले में ४५ गैलन पानी आता है। जहाँ तक हो सके, अधिक पानी वाले रहट यंत्र आदि लगवाने चाहिए। पूर्वी जिलों में कहीं-कहीं चार-पाँच मनुष्य मिलकर चरसा खींचते हैं, इसे घुर्रा कहते हैं। अब इसका रिवाज कम हो गया है। चरसा का मूल्य १०)-१२) है।

रहँट—यह एक अत्यंत उपयोगी यंत्र है। इसके मुख्य ६ भाग होते हैं—

(१) बड़ा लोहे का पहिया जो कुएँ पर लगा रहता है। इस पर बाल्टियों की माला घूमती है। इसे दाँतेदार पहिए घुमाते हैं।

(२) दो दाँतेदार पहिए होते हैं, जिनमें एक पहिया खड़ा और एक तिरछा लगा रहता है। तिरछा पहिया खड़े पहिए से बड़ा होता है। इस पर लाठ रखी रहती है।

(३) लाठ—लकड़ी की होती है। इसमें बैल जुतते और पहियों को चलाते हैं। लाठ १८ फीट से अधिक लम्बी नहीं होती।

(४) बाल्टियाँ—लोहे की पत्तियों से बँधी रहती हैं, और इनकी एक प्रकार की माला सी बन जाती है। ये बड़े पहिए के ऊपर घूमती हैं।

(५) यह खड़े हुए दाँतेदार पहिए पर लगी होती है। इसकी सहायता से कुएँ के ऊपरवाला बड़ा पहिया चलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह लाठ भूमि से रगड़ खाती है, इसलिये हल्का चलाने के लिये पीतल के बेअरिंग लगाते हैं।

(६) लकड़ी का ढाँचा—जो पृथ्वी में मजबूती से गड़ा रहता है। इसमें दाँतेदार पहिए और दोनो लाठें लगी रहती हैं।

यह २५-३० फीट से अधिक गहराई पर काम नहीं देता। प्राय: एक रहट दो चरसे के बराबर पानी देता है। रहट के लिये ऊँटों का प्रयोग अच्छा है, और व्यय भी कम बैठता है। ऊँट के लिये १३-१४ सेर पानी वाली और बैलों के लिये ५-७ सेर पानी वाली बाल्टियाँ होनी चाहिए। इनमें अण्डी का तेल डालते रहना चाहिये।

बलदेव-बाल्टी—इसे बलदेव मिस्त्री ने बनाया है। इसमें रस्सों से गरारी पर चलने वाली परनाले के आकार की दो बाल्टियाँ लगी होती हैं। यह इस प्रकार लगी होती हैं कि जब एक बाल्टी पानी भर कर ऊपर आती है तब दूसरी पानी भरने नीचे जाती है। ४-६ फीट की गहराई से पानी निकालने में इसका अच्छा उपयोग होता है। नहर आदि के समीप पानी खींचने में इसका उपयोग सर्वोत्तम है। इससे १ दिन में एक जोड़ी बैलों एवं एक व्यक्ति द्वारा १॥ एकड़ भूमि सींची जा सकती है।

मायादास-बाल्टी—इसका आविष्कार प्रमुख कृषिशास्त्री प्रिंसिपल मायादास ने किया था। इस यंत्र में दो पहिए होते हैं। यह बाल्टी ६० फीट गहराई तक काम देती है। परंतु १२-१५ फीट पर अच्छा काम देती है। यह दो प्रकार की होती है। पहली बाल्टियों की एक मालावाली और दूसरी दोहरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मालावाली। यह बहुत कुछ रहट के ही समान होती है।

बुलन्दशहरी बाल्टी—यह बलदेव बाल्टी के समान होती है और १२-१५ फीट गहरे से पानी निकालती है।

नहर

नहर की सिंचाई से जहाँ कम साधनों में अधिक क्षेत्रफल में खेती हो सकती है। मूल्यवान व उन्नत फसलें बोई जा सकती हैं, अधिक क्षेत्रफल पर दो फसली खेती हो सकती है और प्रति एकड़ उपज की लागत कम हो जाती है वहीं इससे हानियाँ भी हैं। इसकी सिंचाई से प्रायः पानी का निकास खराब हो जाता है और भूमि में ऊसर का अंश भी पैदा हो जाता है। नहर के पानी के साथ घास फूस के बीज भी खेत में पहुँच जाते हैं किन्तु लाभों को देखते हुये हानियाँ नगण्य हैं।

तालाब झील आदि

नहर और कुओं के अतिरिक्त तालाबों, झीलों एवं झरनों आदि से भी हमारे यहाँ बहुत सिंचाई होती है। झरनों का प्रयोग पहाड़ी क्षेत्रों में सिंचाई के लिये नालियों के द्वारा होता है। झील और तालाबों से सिंचाई के लिये सब से प्रचलित साधन बेड़ी का है। साधन होने पर पम्प द्वारा तालाबों और झीलों का पानी यदि निकाला जा सके तो व्यय, समय और श्रम तीनो ही दृष्टियों से लाभप्रद रहता है। तालाबों में बराबर मिट्टी भरती रहती है अतएव सामूहिक श्रमदान द्वारा किसानों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को उन्हें गहरा करते रहना चाहिये और पानी रोकने के लिये यदि आवश्यक हो तो बाँध बनाना चाहिये।

बेड़ी—इसे परोहा या दुगला भी कहते हैं। यह चमड़े, लकड़ी या बाँस की बनी छिछली डलिया-सी होती है। इसमें एक साथ दो आदमी लगते हैं। २ फीट ऊँचा पानी उठाने में सुगमता से १ एकड़ रोजाना भर सकते हैं। इसका उपयोग नहरों और तालाबों के गूलों से पानी उठाने में अधिक होता है।

ढेंकली—१५ फीट गहरे तक काम देती है। एक-दो आदमी दिन भर में १ एकड़ भूमि भर सकते हैं। थोड़ी भूमि में खेती के लिये यह ठीक रहती है।

चेन-पंप—४ से ७ फीट तक पानी उठाने में उत्तम है। १० फीट से अधिक गहरे में ठीक काम नहीं देता। तालाब आदि में चेन-पंप से पानी उठाया जाता है। इसमें ४ भाग होते हैं—(१) लोहे का नल, (२) गद्देदार जंजीरें, (३) पहिया और हैंडिल, (४) लकड़ी की बनी चौड़ी नली। पहिए और नल पर जंजीर होती है, और जंजीर में गोल-गोल गद्दे लगे होते हैं। गद्दों पर गोल चमड़ा रहता है। दोहरा चेन-पंप भी होता है। एंजिन या बिजली द्वारा भी सिंचाई की जाती है। इसके लिये पानी का अच्छा प्रबंध होना चाहिए। सेंट्रीफ्युगल-पंप अत्यंत लाभदायक यंत्र है। यदि अधिक पानी लेना हो, तो प्रयोग किया जाय। यह भी एंजिन या बिजली से चलता है। बिजली का मोटर भी इस काम में आता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सिंचाई का परिमाण

अधिक पानी देने से भूमि खराब हो जाती है। अस्तु अधिक पानी सोखनेवाली भूमि में भी ज्यादा पानी न देना चाहिये। अधिक पानी देने से फसल और खेत दोनों को नुकसान पहुँचता है। फसल की जड़ें पानी से कमजोर पड़ जाती हैं, भूमि का उर्वरापन धीरे-धीरे समाप्त हो जाता और रेह जम जाता है।

पौदों को कितने पानी की आवश्यकता होती है, इसका कोई खास नियम नहीं है। यह निम्नलिखित बातों पर निर्भर है—

(१) भूमि की भिन्नता, (२) भूमि की स्थिति, (३) फसल की भिन्नता, (४) फसल की अवस्था, (५) ऋतु की भिन्नता, (६) खाद की उपस्थिति और (७) कृषि-पद्धति।

(१) पानी की सबसे अधिक आवश्यकता भूड़ में पड़ती है। मटियार में सबसे कम पानी चाहिये, और दुमट में मध्यम पानी की आवश्यकता होती है।

(२) सूखी भूमि हो, तो परेह करके बोई जाती है, और सिंचाई में क्रमशः पानी कम होता जाता है। पहली सिंचाई की अपेक्षा दूसरी में पानी कम लगता है, और दूसरी बार से तीसरी बार में पानी कम दिया जाता है।

(३) फसलों के विचार से भी पानी की कमी-बेशी होती रहती है। गन्ने में सबसे अधिक पानी देना पड़ता है उससे कम आलू को, और उससे भी कम गेहूँ को।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(४) छोटे पौदों को अधिक पानी चाहिये। बढ़ जाने पर उतने पानी की आवश्यकता नहीं होती।

(५) गर्मी की फसल को अधिक पानी देना पड़ता है, जाड़े की खेती को मध्यम और बरसात की पैदावार में कम पानी की जरूरत होती है।

(६) खादवाली भूमि में अधिक और बिना खादवाली में कम पानी की आवश्यकता होती है।

(७) गहरी जोत में कम और उथली जोत में अधिक पानी देना चाहिये।

सिंचाई की रीतियाँ

सिंचाई के विभिन्न साधनों पर संक्षेप में प्रकाश डालने के बाद सिंचाई की रीतियों के संबंध में भी कुछ जिक्र कर देना अनावश्यक न होगा। सिंचाई (१) प्रवाह द्वारा, (२) नालियों के माध्यम से अथवा (३) छिड़काव द्वारा की जाती है।

प्रवाह की सींच—प्रवाह द्वारा सिंचाई दो प्रकार से होती है। एक उन खेतों में होती है जिनमें क्यारियाँ नहीं होतीं, जैसे धान की फसल, घास के मैदान और बुवाई के पूर्व तैयार किये जाने वाले खेत। बहुत हल्के ढाल वाले खेतों के ऊपरी भाग में बरहा बनाकर खेतों को मेड़ों द्वारा बाँट देते हैं। ऐसा कर देने पर पानी के बहाव पर नियंत्रण हो जाता है और सिंचाई आवश्यकता से अधिक नहीं होने पाती। प्रवाह द्वारा सिंचाई करने की दूसरी रीति यह है कि पूरे खेत में क्यारियाँ और बरहे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बना दिये जाते हैं। क्यारियाँ बना देने से पानी की बचत होती है। पानी सारे खेत में समान गहराई से जाता है। बरहों और क्यारियों की नाप पानी के बहाव की चाल और मात्रा पर निर्भर करती है। नहर से कटवाँ सिंचाई करने पर २०फीट×१२फीट अथवा १२ फीट×१५फीट की क्यारियाँ बनाई जाती हैं। पर ढेकुली आदि से सिंचाई करने पर १० फीट×१२ या १२ फीट × १५ फीट की क्यारियाँ बनती हैं। खेत में ढलान अधिक होने पर क्यारियों का आकार कुछ और छोटा हो जाता है।

नाली की सींच—गन्ना, आलू, लहसुन, चुकन्दर और शकरकन्द आदि प्रायः हरी रहने वाली फसलों की सिंचाई नालियों द्वारा की जाती है। इस ढंग से पानी पर नियंत्रण तो रहता ही है, साथ ही मिट्टी में चार तत्वों को बढ़ने में एक रुकावट भी होती है। खेत के ऊपरी सतह की मिट्टी कड़ी नहीं होने पाती। इसमें नालियों की दूरी इस प्रकार रखनी चाहिए जिससे मेंड़ें और उनकी सतह भली भाँति तर हो जाँय।

छिड़काव की सींच—तरकारियों और फूलों की बेड़ों और छोटी छोटी क्यारियों की सिंचाई फौवारों द्वारा की जाती है। इससे पौध-क्षेत्र में जड़ों पर पानी के बहाव का हानिकारक असर नहीं पड़ता और प्राकृतिक वर्षा के जल के समान पौधों को जल मिलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज और पौधा

अच्छी पैदावार बीज पर ही निर्भर है। जैसा पौदा बोया जायगा, वैसा ही पौदा उगेगा। यहाँ पर बीज के संबंध में कुछ साधारण बातें जान लेना आवश्यक है। अधिकतर किसान इस बात से अनभिज्ञ हैं कि पौधे भी जीवधारी होते हैं और बहुत-सी बातों में यह पशुओं से मिलते जुलते हैं। प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बसु ने यह सिद्ध कर दिया है कि सब प्राणियों के समान पौधों को भी चोट लगती है, हमारी तरह उनका भी विकास भोजन के ही द्वारा होता है, वे सन्तान स्थिर रखते हैं और समय पाकर उनका विनाश भी होता है। भेद केवल इतना है कि वे चल नहीं सकते और न बातें कर सकते हैं। पशुओं के समान ही इनमें भी नर और मादा होते हैं किन्तु पशुओं में केचुआ आदि दो चार जीवों को छोड़कर यह अलग २ होते हैं। परन्तु पौधे अधिकतर ऐसे होते हैं जिसमें नर और मादा एक ही पेड़ में होते हैं। पपीता और परवल आदि इसके प्रतिवाद हैं। अधिकतर फूल में नर और मादा दोनों किस्म के हिस्से मौजूद होते हैं और रस चूसने वाली मक्खियों द्वारा या वायु के प्रवह के कारण नर व मादा भाग एक ही में मिल जाते हैं तब फल पैदा होता है। इस प्रकार दो जाति के पौधे के नर व मादा को आपस में मिला देने से यह किया जा सकता है कि एक तीसरी जाति का बीज उत्पन्न किया जावे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज के भाग—प्रत्येक बीज के तीन भाग होते हैं—(१) छिलका (२) खाद्य पदार्थ और (३) अंकुर। बीज के अन्दर पौधे का लघु आकार छिपा होता है,जिसपर उसकी रक्षार्थ प्रकृति ने एक आवरण छिल्का बना दिया है। इसमें पौधे का उस समय तक का भोजन निहित रहता है जब तक कि वह पृथ्वी व वायु से अपना भोजन प्राप्त करने में समर्थ न हो जाय।

बीज में उपस्थित वस्तुयें—बीज में निम्न पदार्थ होते हैं जो मनुष्यों व पशुओं के खाने और प्रारंभिक जीवन में काम करतेहैं:—

(१) प्रोटीन्स (२)स्टार्च (३) तेल (४)सैल्युलोस। आक्सीजन गैस, गर्मी व पानी का प्रभाव पड़ने पर यह घुलती नहीं हैं और तब पौधा इन्हें प्राप्त करता है। घुलने पर इनकी दशा शकर के समान हो जाती है और तब पौधा इन्हें प्राप्त करता है।

बीज उगने के लिये तीन आवश्यक बातों की विशेष आवश्यकता होती है:-(१) नमी अर्थात् जल (२)वायु (३) गर्मी; प्रथम से बीज फूल जाता है और दूसरे से उसे जीवन प्राप्त होता है। हमारे समान पौध भी साँस लेते हैं। अंतिम से वह बढ़ता है और अपना भोजन प्राप्त करता है। इन तीनों में से किसी की अधिकता अथवा कमी होने पर बीज नहीं उगता है।

बीज का उगना—प्रत्येक अच्छा व ताजा बीज अपने उगने के आवश्यक तत्व प्राप्त कर उगता है। बीज में एक सूक्ष्म छिद्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होता है जिसे हम "बीज छिद्र" कह सकते हैं,से आवश्यक तत्व प्राप्त होने पर जड़ें निकलती हैं। दो दाल वाले पौधों में प्रथम एक ही जड़ निकलती है जो आगे बढ़कर मूसला जड़ बन जाती है। एक दाल वाले बीजों में दो तीन जड़ें निकलती हैं जिनको झकड़ा जड़ कहते हैं। जड़ के कुछ बढ़ चुकने पर छिद्र के पास से अंकुर निकलता है। दो दाल वाले पौधों का अंकुर दालों सहित भूमि के ऊपर आता है और जब तक जड़ें खूराक पहुँचाने योग्य नहीं होतीं, पौदा इन्हीं दालों से संचित खाद्य पदार्थ लेता रहता है। इसके बाद दालें स्वयं गिर जाती हैं। अंखुवा आगे चलकर तना, पत्तियाँ, फूल व फल पैदा करता है।

पौदों की आवश्यकतायें—हम भूमि के प्रकरण में भूमि से पौदों को प्राप्त होने वाले पदार्थों का वर्णन कर चुके हैं। इनमें कुछ जलकर उड़ने वाले तत्व होते हैं। इनमें आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन और कार्बन के तत्वों का मिश्रण होता है, जो पौधे के सूखने पर स्वतः हवा में मिल जाते हैं। इसको पोटाश और फासफोरस इन दो खनिज अंशों की विशेष आवश्यकता होती है। इनके अतिरिक्त क्रमशः चूना, लोहा, सिलीका, मैग्नीशिया तथा गन्धक की भी आवश्यकता पड़ती है।

आक्सीजन गैस पौधे पानी में घुलने पर प्राप्त करते हैं, क्योंकि शुद्ध पानी आक्सीजन और हाइड्रोजन के मेल से बनता है। नाइट्रोजन फलीदार पौधों को उनकी जड़ों में काम करने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वाले बैक्टीरियों द्वारा प्राप्त होता है जो कि भूमि के अन्दर पौधों की जड़ों में हवा से इसे प्राप्त कर इकट्ठा करते रहते हैं। जिन पौधों में बैक्टीरिया काम नहीं करते उनको खार और अमोनिया के रूप में नाइट्रोजन प्राप्त होती है, जो कि नाइट्रोजन और हाईड्रोजन के मेल से तैयार होती है।

पोटाश का अंश पौधे में अधिक मात्रा में रहता है। राख व पोटाश में इसका अधिक अंश प्राप्त होता है। फासफोरस हड्डियों में अधिक पाया जाता है। सोडा खारी मिट्टी तथा रेतीली भूमि में अधिक पाया जाता है। सिलीका पत्थर के चमकदार कणों और बालू के कणों में अधिक पाया जाता है। लोहे का अंश मटियार भूमि में अधिक होता है इसी के कारण पौधों का रंग हरा रहता है। गन्धक का अंश मूली, सरसों व प्याज में अधिक प्राप्त होता है। हर प्रकार के अंशों में इसका अंश पाया जाता है, कुछ में अधिक और कुछ में कम।

पौदे के अवयव—प्रत्येक पौधे के पांच भाग होते हैं—(१) जड़ (२) तना (३) पत्ती (४) फूल (५) फल।

जड़—यह कई प्रकार की होती है, पर इसको मूसला व झकड़ा दो ही भागों में बाँटा जा सकता है। चना व अरहर आदि की जड़ें मूसला होती हैं जो कि जमीन के अन्दर सीधी जाती और एक ही मोटे रूप में रहती हैं। ज्वार, बाजरा, गेहूँ आदि की जड़ें झकड़ा जड़ें होती हैं जो जमीन के आस पास छितरी हुई दशा में फैलती हैं। जड़ों के कई काम होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जड़ के काम—जड़ें ही पौधे को भूमि पर स्थिर रखती हैं। इनसे ही पौधे भूमि से अपना भोजन प्राप्त करते हैं और इनमें ही पौधे का भोजन इकट्ठा होता है। यदि जमीन का घोल पौधे के रस से गाढ़ा हुआ तो वह पौधे के रस को स्वयं खींच लेता है। रेतीली भूमि में ऐसा ही गाढ़ा घोल पाया जाता है। इसी कारण उसमें पौधे नहीं उगते। जड़ों के छोटे-छोटे रेशे होते हैं जो मूल तन्तु कहलाते हैं। यही भूमि से पौधे का भोजन प्राप्त करते हैं। जड़ के ऊपर एक ढक्कन सा होता है जो उसके कोमल भाग की रक्षा करता है।

तना—तने कई प्रकार के होते हैं:—(१) अरहर, आम आदि सीधे बढ़ने वाले; (२) घास आदि जमीन पर रेंगने वाले; (३) मटर, सेम आदि जिनके खड़े रहने में किसी सहारे की की आवश्यकता होती है, (४) आलू, अदरक आदि भूमिक तने कहलाते हैं। तने के कई काम हैं:—

(१) जड़ों द्वारा भूमि से प्राप्त पोषक तत्व पत्तों व शाखों तक पहुँचता है और पत्तियों द्वारा हवा से प्राप्त भोजन जड़ों आदि में पहुँचता है।

(२) पत्तों को हवा में इस प्रकार सँभाले रखता है कि वह अधिक से अधिक हवा और रोशनी ले सकें।

(३) आलू व गन्ने आदि के तने बीज के भी काम आते हैं।

पत्ती—यह पौधे का आवश्यक अंग है। एक दाल वाले

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौधे की पत्ती में समानान्तर और दो दाल वाले पौधे में जालीदार नसें होती हैं, जोकि उन्हें सीधा ताने रखती हैं। पत्तियों के मुख्य कार्य निम्न हैं:—(१)यह सूर्य के प्रकाश में जड़ों द्वारा प्राप्त भोजन को पचाती हैं। (२) पत्तियों में अनेक छोटे-छोटे छिद्र होते हैं जिनसे कि पौधे साँस लेते हैं और कार्बनडाइ आक्साइड गैस प्राप्त कर आक्सीजन छोड़ते हैं। (३) जड़ों द्वारा खींचे गए पानी में जो बढ़ जाता है उसे पत्तियाँ अपने छिद्रों द्वारा भाप के रूप में बाहर निकाल देती हैं।

फूल—फूल से ही बीज बनता है, इसलिये उनका अधिक मात्रा में लगना आवश्यक है। इसलिये फूल पौधे का सबसे महत्वपूर्ण भाग है। प्रत्येक फूल के ४ हिस्से होते हैं—

(१) पंखुड़ी (२) खोल-पत्ती (३) पराग-केसर (४) गर्भ-केसर। पंखुड़ी फूल का सबसे सुन्दर भाग है। वह चमकदार और खोल पत्ती के ऊपर रहता है। इसके द्वारा फूल के आवश्यक अंगों की रक्षा होती है। खोल-पत्ती फूल में पंखुड़ी के नीचे रहती है। यह प्रायः हरी होती है। यह खोल-पत्ती कली की अवस्था में फूल की रक्षा करती है। पराग-केसर फूल का नर भाग होता है। इसके दो भाग होते हैं:—(१)पराग कोष और(२) डंठल। डंठल पराग कोष को ऊपर उठाये रहतेहैं जिनके अन्दर असंख्य पराग के दाने तैयार होते हैं। यह पराग तितलियों, वायु, मधुमक्खियों व अन्य कीड़ों द्वारा एक फूल से दूसरे फूल तक पहुँच जाता है। कुछ फूल अपने ही पराग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केसर से गर्भित होते हैं। कुछ फूलों में केवल गर्भ केसर ही होता है। ऐसे फूल अपनी ही जाति वाले अन्य फूलों के पराग से गर्भित होते हैं, जिसे परकीय गर्भाधान कहते हैं। गर्भ केसर फूल का मादा भाग है। किसी फूल में एक और किसी में बहुत से गर्भ केसर होते हैं। इसमें सबसे ऊपर का एक लसदार छत्र जिसे योनिछत्र कहते हैं, होता है। कोई छत्र रोयेंदार होता है और कोई घुण्डीदार। इसके अतिरिक्त बीच में एक नली होती है जिसे गर्भनली कहते हैं। सब से निचले भाग को गर्भाशय या बीजदानी कहते हैं।

गर्भनली पोली होती है जिसमें पराग केसर गिरकर गर्भ बनता है और नली के नीचे बीजकोष अथवा गर्भाशय होता है। बीज इसी स्थान पर आकर बनता या पकता है।

बीज—प्रकृति ने बीज के ऊपर उसकी रक्षार्थ एक झिल्ली बनाई है। इसमें दो दालें होती हैं। किसी २ में एक ही होती है। दाल के भीतर एक पतली वस्तु होती है। इसी पतली वस्तु में एक नुकीला और एक लिपटा भाग होता है। बीज की शक्ति इन्हीं दोनो में निहित है। जब पौधे में अंकुर फूटता है तब नुकीला भाग जड़ बन जाता है और चपटा भाग जमीन से ऊपर आकर पौधा बन जाता है।

—❀—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फसल के शत्रु

फसल को खर पतवार, कीड़ों मकोड़ों, फंगस गेरूई जैसे रोगों एवं चूहों आदि के द्वारा बड़ा नुकसान पहुँचता है। प्रत्येक किसान को फसल के इन शत्रुओं का समूल विनाश करने के लिये निरंतर प्रयत्नशील रहना चाहिये अन्यथा उसकी उपज मारी जाती है।

घास-फूस—घास-फूस उन पौधों को कहते हैं जो ऐसे स्थान पर उग आते हैं जहाँ उन्हें उगना न चाहिये। फसल के वे पौधे जो दूसरी फ़सल के साथ उग आते हैं वे भी घास-फूस की श्रेणी में आते हैं, जैसे गेहूँ की फसल में जौ के पौधे। फसल के साथ उगनेवाली घास-फूस फसल के पोषक तत्वों (खाद्य एवं जल आदि) में हिस्सा बटा लेती है, और वायु एवं प्रकाश को रोकती है। खेत का बहुत बड़ा भाग घेरने के साथ ही इनके माध्यम से फैल कर फफूँदी और कीड़े फसल को हानि पहुँचाते हैं। फसल तैयार होने पर उसमें घास-फूस के बीज मिल जाते हैं और फलस्वरूप बाजार में मूल्य कम मिलता है। यह घास-फूस, वायु, अशुद्ध बीज, खाद और घरेलू पशु एवं मनुष्यों द्वारा फैलते हैं।

रोक-थाम—घास-फूस की रोक थाम के लिये सबसे अच्छा ढंग यह है कि बोने के लिये शुद्ध बीज ही काम में लाया जाय जिसमें खर-पतवार के बीजों की मिलावट न हो। फसल की कटाई करने के बाद ही खर-पतवार को खेत से निकाल देना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहिये और उन खर-पतवारों को जला देना चाहिये जिनमें कि फल आ गये हों। ट्रैक्टर और मिट्टी पलटनेवाले हल से जुताई करने से भी अनेक खर पतवार नष्ट हो जाते हैं। फसल के साथ उग आने पर खुरपी अथवा हैरो से उनकी निराई कर देनी चाहिये। विदेशों में घास-फूस के विनाश के लिये अनेक रासायनिक प्रयोग चल रहे हैं किन्तु हमारे देश में इनका इस्तेमाल अभी बहुत सीमित है। भारत में १ एकड़ जलकुम्भी पर आधा पौंड मेथाक्सोन(Methoxone)का छिड़काव लाभकर है।

बारहमासी घासें—कुश अथवा कांस एक गहरी जड़ और हल्की तथा भारी मिट्टी में उगनेवाली घास है। इसका उपयोग छप्पर बनाने, घरेलू डलिया बनाने, तथा बांधों और नहरों पर लगा कर भूमि का कटाव रोकने में होता है। ६ फीट से भी अधिक गहरी जड़ वाली इस घास का विनाश ट्रैक्टर की गहरी जुताई से किया जा सकता है। मोथा एक दूसरी बारहमासी घास होती है। यह गांठ और बीज से उत्पन्न होती है और इसका विनाश करना बहुत कठिन होता है। मोथाग्रसित खेत की गहरी जुताई वर्षारम्भ में ही कर देनी चाहिये और फूल आने के पहले ही पौधा काट देना चाहिये। हरी सनई की फसल को खेत में उलटने और २-३ ऋतुओं में इसी प्रकार करते रहने पर मोथा नष्ट हो जाता है। दूब नामक घास सभी जगह पाई जाती है। इसे नष्ट करने के लिये मिट्टी पलटने वाले हल से बहुत हल्की जुताई करनी चाहिये और उखड़ी हुई घास को जला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देना चाहिये। हिरनखुरी नामक एक बारहमासी लता फसल के पौधों को लपेट लेती है। इसके बीज विषाक्त होते हैं और पशुओं को हानि पहुँचाते हैं। इसके भी विनाश के लिये गहरी जुताई और बार-बार निराई-गुड़ाई करनी चाहिये। राजस्थान के कुछ भागों और उत्तरप्रदेश के अलीगढ़ ,एटा, मथुरा और आगरा जिलों में होने वाली बायसुरी नामक गर्मी में अधिक बढ़नेवाली बारहमासी घास का विनाश करना अत्यंत दुष्कर है। गहरी जुताई और निरन्तर निराई गुड़ाई-द्वारा इसकी बाढ़ को रोका जा सकता है। पथरचटा, जंगली गोभी, विषखपरा, लटजीरा, गोखरू, बड़ी और छोटी दुधी, जंगली जूट ,सेंजी और झरबेरी आदि बारहमासी घासें भी फसल को बहुत हानि पहुँचाती हैं। इन्हें निराई-गुड़ाई के द्वारा नष्ट कर देना चाहिये।

रबी की फसल के साथ प्याजी, बथुआ, अंकारा और चिटकनेवाली मटरी पैदा होती है। इनके पौधों को उगने पर फौरन निराई द्वारा या उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिये।

कंटीला और पेको—कंटीला और पेको अत्यंत हानिकारक खर-पतवार है। कंटीला एक कांटेदार पत्तियों व चमकीले पीले फूल वाला पौधा होता है जिसके बीज सरसों से मिलते-जुलते हैं। कुछ मुनाफाखोर व्यापारी सरसों के बीज के साथ इसके बीज को पिरवा कर, उसे सरसों का तेल कह कर बेंचते हैं। इसको खाने से 'बेरी-बेरी' का रोग हो जाता है। इसके पौधे को फूल आने से पूर्व ही काट देना चाहिये। पेको नामक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाराश्रयी पौधा, गाजर, तम्बाकू, बंदगोभी, और सरसों से भोजन प्राप्त कर उन्हें हानि पहुँचाता है। इसे भी निराई के द्वारा और हाथ से उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिये।

कीड़े मकोड़े—कीड़े, मकोड़ों की विभिन्न जातियों में अधिकांश, हमारी फसल, खाद्य भंडार और वृक्षों को हानि पहुँचाते हैं। इनका प्रजनन बड़ी तीव्र गति से होता है। इन्हें नष्ट करने और प्रजनन-वृद्धि को रोकने के लिये (१) यांत्रिक उपाय,(२) कृषि संबंधी उपचारों और (३) कीटनाशक विषों का सहारा लिया जाता है। यांत्रिक प्रयोग द्वारा छोटे-क्षेत्र फल में कीड़ों को चुनकर, हाथ या थैलेवाले जालों द्वारा उन्हें पकड़ कर तथा प्रकाश जाल को लगाकर उनको समाप्त किया जा सकता है। जिस पेड़ या पौधे में कीड़े ने घर कर लिया हो उसके रोगीभाग को अलग कर नष्ट कर देना चाहिये।

कृषि सम्बन्धी उपचार—खेतों के आस-पास उगनेवाली घास फूस में अनेक कीड़ों का प्रजनन और पोषण होता है। कपास की पत्ती लपेटने वाली गिड़ार, जंगली भिंडी, लटजीरे और कंगनी में भी पाई जाती है। ज्वार में लगने वाली सूंडी के समान ही अन्य कीड़े भी डंठल, तने और ठूंठों में प्रसुप्त अवस्था में रहते हैं और फसल के हरियाने पर उसे हानि पहुँचाते हैं, अतएव फसल के बचे भाग डंठल आदि को जला देना चाहिए। गर्मी की जुताई कर देने से खरपतवार तो नष्ट हो जाता ही है और भूमि के निचले परत में छिपे कीड़े भी ऊपर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आकर धूप में मर जाते हैं या तीतर, कटफोड़वा आदि पक्षियों का भोजन बन जाते हैं। ठीक समय पर फसल की बुवाई करने, ठीक ढंग से खाद और पानी देने, उलट फेर कर फसल बोने से भी कीड़ों का विनाश होता है।

कीट नाशक बिष और उनका प्रयोग—कीट नाशक औषधियों को प्रायः घोल या बुकनी (पाउडर) के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इसके लिए मशीनों एवं अन्य उपकरणों की भी आवश्यकता पड़ती है। छोटे पैमाने पर खेती करनेवाले बाल्टी या टब में घोल तैयार कर पम्प या पिचकारी की सहायता से उसका छिड़काव कर सकते हैं। फार्मों में छिड़काव के लिये एक मशीन आती है जिसमें तीन चौथाई भाग में घोल भर दिया जाता है और फिर पंप से हवा भर दी जाती है। इस मशीन की टोंटी खोलने पर उसमें लगी नली से फौवारे के रूप में घोल निकलने लगता है। यह मशीन कम समय और मेहनत में अधिक छिड़काव करती है[१]।

पाउडर के छिड़काव के लिये भी अब मशीनों का उपयोग

---

(१) हाइड्रोलक्स और पेट्रियोज इंजन की शक्ति से घोल छिड़कने वाली मशीने हैं। इन्हें प्राप्त करने के लिये क्रमशः यू० पी० कामशल कार्पोरेशन अशोक मार्ग लखनऊ और न्यू इण्डिया कार्पोरेशन, होमजी स्ट्रीट, गुल मेंशन बम्बई से संपर्क स्थापित करें। इसी प्रकार मारुती, सेपरलाट, मिस्टो लेडीबुड केलीमिक्स नं० २ आदि घोल छिड़कने की अन्य मशीनें एक औसत किसान के लिये बड़ी उपयोगी हैं। यह बिना इंजन की सहायता के काम देती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होने लगा है। यह पंखे या धौंकनी से युक्त होती हैं जो पात्र में भरी हुई बुकनी को उड़ा कर नली द्वारा बाहर फेंकती हैं। पाउडर उड़ने की मात्रा नियत करने के लिये भी इसमें पुर्जे लगे होते हैं[२]। पाउडर छिड़कने के लिये ओरियेन्ट रोटेरी डस्टर नामक मशीन से ३-४ एकड़ खेत में छिड़काव किया जा सकता है।

अब यहाँ पर फसलों और फलदार वृक्षों को हानि पहुँचाने वाले कुछ प्रमुख कीड़ों पर प्रकाश डालना असंगत न होगा।

गंधी—यह हरे व भूरे रंग का कीड़ा धान की फसल को बहुत हानि पहुँचाता है। इसका प्रकोप मध्य अगस्त से आधे अक्तूबर तक रहता है। कड़ी सर्दी और गर्मी में इसका प्रकोप बहुत कम हो जाता है। इसीलिये शीघ्र या देर से पकनेवाली फसलें प्रायः गंधी की हानि से बच जाती हैं। इसके अंडे गोल काली राई के समान होते हैं। जिन पत्तियों पर यह दिखाई पड़े उन्हें तोड़ कर जला देना चाहिये और गंधी के कीड़ों को हाथ के जाल से पकड़ कर मार डालना चाहिये। फसल पर ५ प्रतिशत बेन्जीन हैक्सा क्लोराइड पाउडर ८-१० सेर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़क देना चाहिये।

धान की सूंडी—यह कीड़ा धान की फसल में पौधों

---

(२) इंजनयुक्त पाउडर छिड़कनेवाली मशीनों में टारनीडो मारविल आदि प्रमुख हैं। सामान्य मशीनों में 'ओरियेंट रोटेरी डस्टर', शेनीन और चैम्पियन १०३ हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के तने में छेद करके हानि पहुँचाता है। फसल सूख जाती है। फसल कटने पर यह ठूंठों में ही छिपा रहता है। इसके लिये सब से उत्तम ढंग यही है कि धान के ठूँठों को इकट्ठा कर जला दिया जाय।

खरीफ के टिड्डे—यह बरसात में जुलाई से सितम्बर तक फसल को बहुत नुकसान पहुंचाते हैं और मक्का धान गन्ना आदि की पत्तियों को कुतर कर खा जाते हैं। गर्मी और जाड़े में गहरी जुताई करने पर इनके अंडे नष्ट हो जाते हैं। फसल के कीड़ों को नष्ट करने के लिये ५ प्रतिशत वाला बेन्जीन हेक्साक्लोराइड पाउडर १२ से १५ सेर प्रति एकड़ के औसत से खेत में छिड़कना चाहिये।

गन्ने की सूँडी—गन्ने को हानि पहुंचाने वाली सूँडी तीन प्रकार की होती है। पहली प्रकार की सूँडी भूसे के रंग की होती है और जड़ों को हानि पहुंचाती है। तने की सूँड़ी भूरे रंग की होती है और उसकी पीठ पर लम्बी धारियाँ होती हैं। तीसरे प्रकार की सूँड़ी अगौरे(गन्ने के अग्रिम भाग) को ग्रसित करती है और गन्ने के ऊपर शाखा में फूटने लगती है। इसका रंग दूधिया होता है। सूँड़ी का प्रकोप गर्मी और बरसात में होता है और गन्ने की बाढ़ मारी जात , । तने और जड़ की सूँड़ी लग जाने पर बरसात में तेज हवा के मौसम में गन्ना खेत में गिर जाता है। इसकी रोक थाम के लिए गन्ने का खेत काटते ही अवशेष जड़ों और ठूंठों को जलाकर नष्ट कर देना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहिए। खड़ी फसल के सूँड़ी ग्रसित पौधोंको खेतसे उखाड़ कर अलग कर देना चाहिए। अगौरे की सूंड़ी में अंडों के गुच्छे बीन बीन कर नष्ट कर देना चाहिये। जड़ की सूँडी का प्रकोप अधिक होने पर गन्ने की जड़ों पर मिट्टी चढ़ाना लाभकर होता है।

मक्का व ज्वार की सूंड़ी—यह दो प्रकार की होती है। पहली भूरे रंग की धारियोंदार और दूसरी हल्के गुलाबी रंग की। यह सूँड़ी तने में छेद करती है और इसका प्रकोप मई से अक्टूबर तक रहता है। रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट करने और फसल काटने के बाद ठूंठों को जला देने के अतिरिक्त, इसका आक्रमण प्रारंभ होने पर ५ प्रतिशत डी. डी. टी. के पाउडर का छिड़काव कर देना चाहिए।

चने का गदलिहा व सूंड़ी—गदलिहा मटर, चना, आलू, पोस्ता व गोभी आदि के नन्हें पौधों को काट देता है और पत्तियों को खा जाता है। यह मटमैले रंग की होती है और मिट्टी में घोंघा बनाती है जिससे धुयें के रंग की तितली निकलती है। चने की सूंड़ी का रंग हरा होता है। यह बूट के हरे दाने को खा जाती है। यह भी मिट्टी में घोंघा बनाती है जिससे पंखों पर काले धब्बों वाली भूरे रंग की तितली निकलती है। खेत में १० प्रतिशत डी० डी० टी० का चूर्ण मिलाने से गदलिहे की रोकथाम हो जाती है। चने की सूँड़ी का आक्रमण होने पर ५ प्रतिशत डी० डी० टी० का घोल छिड़कना चाहिये।

आलू की सूंड़ी—पीले और गुलाबी रंगवाली यह सूड़ी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोदामों में रखे हुये आलू को गर्मी और बरसात की ऋतु में बहुत हानि पहुँचाती है। यह आलू में छेद कर अंखुओं को काट देती है और प्रायः इसके साथ ही आलू में फफूँदी भी लग जाती है। इसके लिये सब से उत्तम ढंग यह है कि बिना कटा हुआ आलू एक इंच मोटी सूखी बालू की तह पर बिछा कर गोदाम में रखना चाहिये। शीत भन्डार(Cold Storage) में आलू रखने से भी सूँड़ी और फफूँदी नहीं लगने पाती। गोदाम के सड़े आलू बीन कर उन्हें कहीं गहरे गाड़ देना चहिये। बीज के लिये रखे आलू पर १-२ छटाँक ५ प्रतिशत की डी०डी०टी०का चूर्ण प्रति मन के औसत से आलू रखते समय छिड़क देना चाहिये।

आम के तने और छाल की सूँड़ी—आम के तने व शाखों में छेद करने वाली सूँड़ी पीले रंग की होती है और उसके पैर नहीं होते। यह पेड़ के तने और शाखों में एक इंच चौड़ा टेढ़ा मेढ़ा छेद बनाती है और उनमें घोंघे की अवस्था पार कर कीड़े के रूप में परिवर्तित हो जाती है। इसके शरीर पर अनेक सफेद चित्तियाँ होती हैं और सिर में दो सींग जैसे भाग होते हैं।

छाल खाने वाली सूँड़ी भूरे मटमैले रंग की होती है। यह छाल के नीचे की कच्ची लकड़ी को काट देती है जिससे पेड़ की बाढ़ और फसल मार जाती है। इसका आक्रमण आम अमरूद, लुकाट, अनार आदि पर विशेष रूप से होता है। कीड़ों द्वारा निर्मित छेदों का बुरादा निकाल कर उनमें मिट्टी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का तेल या कार्बन-डाइ-सल्फाइट और क्लोरोफार्म का मिश्रण बराबर मात्रा में तैयार कर फुरेरी से भर देना चाहिये और फिर छिद्र के मुँह को रुई या मिट्टी लेस कर बंद कर देना चाहिये। छाल की सूंड़ी लगने पर उसके जाल को भली भाँति खुरच कर जला देना चाहिये और फिर ०.३ प्रतिशत का डी. डी. टी. घोल का छिड़काव करना चापिये।

गन्ने का पायरिल्ला—यह गन्ने की पत्तियों का रस चूस लेता है और फसल की बाढ़ मारी जाती है। साथ ही गन्ने के सर में गुड़ और शकर का परता कम पड़ता है। इसके पंख हल्के भूरे रंग के होते हैं। इसकी मादा गन्ने की पत्तियों पर छोटे २ गोल अन्डे गुच्छों में देकर उन्हें रुई के समान पदार्थ से ढक लेती हैं। यह अप्रैल से जून और सितम्बर से नवम्बर तक गन्ने की फसल को हानि पहुंचाती है। गन्ने की उन पत्तियों को जिन पर पायरिल्ला के अन्डे हों, तोड़कर जला देना चाहिए और कीड़ों को हाथ के जाल की सहायता से पकड़कर मार डालना चाहिए। फसल पर कीड़ों के विनाश के लिए बेन्जीन हैक्सा क्लोराइड का ०.२५ प्रतिशत का घोल या ५ प्रतिशत का पाउडर छिड़कना चाहिये।

सरसों का माहू या चेपा—यह कीड़ा छोटे आकार का और हरे रंग का होता है। माहू का आक्रमण जनवरी से लेकर अप्रैल तक होता है। यह लाही,सरसों, मूली,शलजम और गोभी की फसल को हानि पहुँचाता है। पौदों की पत्तियाँ सिकुड़कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऐंठ जाती हैं। पैदावार कम हो जाती है। सरसों की बुवाई शीघ्र करने और शीघ्र पकने वाली जातियाँ बोने से फसल को माहू के आक्रमण से बचाया जा सकता है। रोगी फसल पर तम्बाकू और साबुन का घोल छिड़कना चाहिये। ढाई मन पानी, १सेर सस्ता कपड़ा धोने वाला साबुन, एक सेर सस्ता बिना कुटा रस्सावाला तम्बाकू लेकर पहले १० सेर पानी में तम्बाकू को चौबीस घण्टे भिगो कर उसका अर्क निकाल लें। फिर उसमें साबुन मिला कर छान लें और शेष भाग पानी मिला कर पतला कर लें। मक्का,गेहूँ, जौ,सेम बैंगन में भी अलग२ जातियों की माहू लगती है। इसे भी इसी प्रकार नष्ट कर दें।

सुन्दर भृंगा—यह एक मटर के दाने के बराबर काले रंग का कीड़ा होता है जिसकी पीठ पर पीली लाल चित्तियाँ होती हैं। यह भी सरसों, लाही, मूली, गोभी को हानि पहुँचाता है। इसके आक्रमण का समय फरवरी से मई तक होता है। पत्तियों और पौधों का रस चूस कर यह उन्हें निर्बल बना देता है। ३ या ४ प्रतिशत बिरोजे के साबुन का घोल या ५ प्रतिशत बी० एच० सी० का पाउडर छिड़कने से इसकी रोकथाम होती है।

लौकी व कद्दू का लाल कीड़ा—लाल रंग का यह कीड़ा लौकी, ककड़ी, खरबूजा, टिंडा और तरोई की बेल को अप्रैल से सितंबर तक बड़ी हानि पहुँचाता है। कभी २ इसके बच्चे लौकी व खरबूजे की जड़ों व तने में छेद कर देते हैं। कीड़े लग जाने पर ५ प्रतिशत डी० डी० टी० का चूर्ण या पायरोडस्ट का इस्तेमाल करना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टिड्डी—टिड्डियाँ किसानों की महान् शत्रु हैं। उन्हें हर समय हर स्थान पर और हर प्रकार से मारने का प्रयत्न करना चाहिये। यह अपने अंडे जमीन में देती हैं। अंडों के टूटने पर उनमें से फुदकने वाले फाके निकलते हैं। फाके हरी पत्तियों को खाकर बढ़ने लगते हैं और इस रूप में पाँच अवस्थायें पार करते हैं। फिर उड़ने वाली गुलाबी रंग की टिड्डियाँ निकल आती हैं। धीरे-धीरे गुलाबी टिड्डी भूरे और पीले रंग की हो जाती हैं। टिड्डियाँ बहुधा दिन में उड़ती और रात को कहीं बसेरा लेती हैं। दूसरे दिन सुबह धूप निकलने के बाद फिर पड़ जाती हैं। इस प्रकार इनके दल भ्रमण करते रहते हैं।

टिड्डियों को मारने में शाम से सुबह तक अधिक सफलता मिलती है। दिन में धूप में निकलने पर टिड्डियाँ जल्दी किसी को अपने पास नहीं आने देतीं। टिड्डियों को मारना अत्यन्त आवश्यक है। उन्हें केवल ढोल या थाली पीट कर भगाने से अधिक लाभ नहीं होता। इसलिये टिड्डियों को अरहर के झांखर आदि से कुचलकर मार डालना चाहिये।

टिड्डियों या उनके फुदकने वाले फांकों के ऊपर अथवा उनके रास्तों में जहरीला चारा छिड़क कर उन्हें मारा जा सकता है। टिड्डियों के ऊपर साबुन और मिट्टी के तेल का घोल, किसी हजारा, पिचकारी, अथवा घोल छिड़कने वाली मशीन से छिड़क कर उन्हें मारा जा सकता है। जब झाड़ियों या वृक्षों पर बैठें तो उन्हें बाँस की मशालों से जला दें या पेड़ों के नीचे आग जला दें ताकि धुयें और गरमी से टिड्डियाँ गिरकर मर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
जायें। बैठी या ठहरी हुई टिड्डियों पर जहरीली धूल फेंककर उन्हें नष्ट किया जा सकता है। टिड्डियाँ जहरीले चारे या जहरीली धूल से दो या तीन दिन में मरती है। कृषि रक्षा सेवा विभाग स्वयं इनके विनाश के हेतु प्रयत्नशील रहता है।

टिड्डियों के बारे में तहसील कृषि-रक्षा या कृषि विभाग के कर्मचारियों को तुरन्त सूचित करें।

नीबू की तितली—यह नीबू की पत्तियों को खा जाती है। यह पत्तों पर गोल व चिकने अण्डे देती हैं। बड़े होने पर यह हरे-भूरे रंग की हो जाती हैं। मार्च से नवम्बर तक यह अधिक हानि पहुँचाती हैं। ५ प्रतिशत बी० एच० सी० का चूर्ण छिड़कना चाहिये। सूंडियों को नीबू के पत्तों पर हाथ चुनकर मार डालना चाहिये।

नीबू का तिला—गर्मी व बसंत में पौधों को हानि पहुंचाने वाला यह कीड़ा पौधे की कलियों, टहनियों आदि के रस को चूस कर फलों को कमजोर बना देता है। रोगी पेड़ों पर तम्बाकू और साबुन का घोल छिड़कने से लाभ होता है।

फलों की मक्खी—यह अनेक जातियों की होती है। सफेद रंग के छोटे बच्चे (गिडार) फल के गूदे को खा जाते हैं जिससे उनकी आकृति खराब हो जाती है, वे छोटे रह जाते हैं या सड़ कर पुलपुले हो जाते हैं। आम, अमरूद, खरबूजे व करेला लौकी आदि तरकारियों को एक दूसरे प्रकार की मक्खी इसी प्रकार हानि पहुँचाती है। कीड़े-ग्रस्त फलों को अलग कर नष्ट कर देना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आम की गुजिया—यह आम, कटहल, लीची, अमरूद आदि के बौरों को हानि पहुँचाती है। फल कम व अपेक्षाकृत छोटे हो जाते हैं। आम की गुजिया का आक्रमण जनवरी से अप्रैल के मध्य होता है। इसके लिये पेड़ के तने पर १ छटाँक विरोजा व १ छटाँक रेड़ी का तेल पंद्रह मिनट उबाल कर तैयार करें। इस लेप को ६ इंच चौड़ी बादामी कागज की पट्टी पर चुपड़कर तने में बाँध देना चाहिये। दिसम्बर से लेकर फरवरी तक दो तीन बार ऐसा करना चाहिये।

आम की लसी—यह आम के बौरों व फलों का रस चूसती है। यह कीड़ा जामुन और लीची पर भी लगता है। यह बसंत ऋतु में अण्डे देती है। आम के पेड़ों पर ०.२५ प्रतिशत डी० डी० टी० वृक्ष के आकार को देख कर ३ से ६ गैलन प्रति वृक्ष के अनुपात से छिड़कना चाहिये। इसे पैर से छिड़कने वाली मशीन द्वारा छिड़का जा सकता है।

फ़सलों के रोग

अन्न, तरकारी आदि की फसलों और फलों के वृक्षों को अनेक प्रकार के रोग ग्रसित कर लेते हैं। यह विभिन्न रोग फफूँदी, कीटाणु और वाइरस के द्वारा उत्पन्न होते हैं। हम यहाँ इन पर प्रकाश डालेंगे।

फफूँदी—फफूँदी एक परोपजीवी निम्न कोटि का छोटा पौधा होता है और अन्य पौधों से अपना खाद्य ग्रहण करता है। फफूँदी के रोग बीज, कलम, जल, वायु, मिट्टी एवं रस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चूसने वाले कीटाणुओं द्वारा फैलते हैं। फफूँदी द्वारा ग्रसित पौधों का उपचार तो कठिन है किन्तु दूसरे पौधों को इसके द्वारा ग्रसित होने से बचाया जा सकता है। फफूँदी से ग्रसित पौधों या उनके रोग-ग्रस्त अंगों को अलग कर उन्हें जला देना चाहिये। स्वस्थ पौधों के कटे हुये भाग पर चौबटिया लेप के समान कोई कीटाणुनाशक लेप लगा दें ताकि फफूँदी के बीजाणुओं का उनमें प्रवेश न हो सके। फसल चक्र के अनुसार फसलों को अदल-बदल कर बोने से भी मिट्टी में पलने वाले बीजाणुओं का बड़ा विनाश होता है। 'जलवायु और फसलें' शीर्षक अध्याय में 'फसल चक्र' के अन्तर्गत इस पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। खेत में जल के निकास का उत्तम प्रबन्ध होना अपेक्षित है क्योंकि अधिक नमी से फफूँदी के रोग बहुत बढ़ते हैं। काफी मात्रा में खाद और उचित ढंग से जुताई गुड़ाई और निराई करके और नीरोग बीज, कलम और पौध का प्रयोग कर बहुत कुछ इन रोगों से लड़ा जा सकता है। अंतिम साधन रोगनाशक औषधियों का उपयोग है। खेत में सामान्य नमी होने पर भी यदि बिना किसी अन्य विशेष कारण के पेड़, पत्ते या उसके अन्य अंश पीले, दगीले या काले हो जायँ और सिकुड़ कर ऐंठनें या सूखने लगें तो समझ लेना चाहिये कि फसल किसी फफूँदी-प्रधान रोग द्वारा ग्रसित है।

गेरवी (Rust)—इसे रतवा या हरदा भी कहते हैं। यह गेहूँ, जौ और जई को विशेष रूप से होता है। जनवरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

से मार्च के मध्य तक इसका प्रकोप अधिक होता है। पौधों पर धुवें के तथा गेरुये रंग की धारियाँ या चित्तियाँ पड़ जाती हैं। महावट होने पर यह रोग और जोर मारता है। गेरुई भी कई प्रकार की होती है। जैसे गेहूं की फसल में तीन प्रकार की गेरुई लगती है। इससे बचने के लिये फसल की बुवाई शीघ्र और शीघ्र पकने वाली उन्नतिशील जातियां बोनी चाहिये। गंधक पाउडर तथा डाइथेन छिड़कने से गेरुई के रोग की बड़ी रोक-थाम होती है।

कण्डुवा (Smutes)—इस रोग द्वारा ग्रसित पौधे की बालों में दाने के स्थान पर काला चूरा सा भरा रहता है। यही रोग के कीटाणु हैं। यह रोग बाजरा, ज्वार, गेहूं, जौ और जई को विशेष रूप से ग्रसित करता है। जिन बालों में ऐसा काला चूर्ण भरा हो उन्हें थैले से ढक कर काट दें और बाद में अलग ले जाकर जला दें। साथ ही निरोधक जाति का बीज बोयें और रोगी खेत का बीज प्रयोग में न लायें। बोने से पूर्व बीज को अग्रोसन जी० एन० या अन्य किसी पारद रसायन से शोध लें। १ मन गेहूँ के बीज में एक छटाक, और जौ,ज्वार, जई आदि में आध पाव अग्रोसन जी० एन० मिलाना पर्याप्त है।

गन्ने में कण्डुवा रोग लगने पर रोगी पौधे में काले रंग की एक छड़ी सी निकलती है। इसे भी ऊपर बताये गये ढंग से अलग कर फूंक दें और दूसरी विधियों का प्रयोग करें।

सेहूँ रोग (Ear Cokale)—यह अधिकतर गेहूँ में लगता है। इसके लगने पर पौधों की बाढ़ मारी जाती है। पत्तियाँ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऐंठ जाती हैं, पौधे पतले हो जाते हैं और बालियों की जगह गोली जैसी बन जाती है। इससे बचने के लिये बीज ऐसे स्थान का लें जहाँ यह रोग न हो क्योंकि यह रोग एक प्रकार के कीट द्वारा फैलता है। २० प्रतिशत नमक के पानी में डुबाने पर रोगी बीज ऊपर उतरा आते हैं। उन्हें निकाल कर अच्छा बीज सुखा कर बोयें।

काना रोग (गन्ने का) (Red Root)—इसके लक्षण सितम्बर अक्तूबर में प्रकट होते हैं। प्रभावित गन्ने के पौधों की पत्तियाँ सूखने लग जाती हैं और गूदे में स्थान २ पर काले धब्बे आ जाते हैं। साथ ही उसमें सफेद धारियाँ पड़ जाती हैं और गन्ने की उत्पत्ति कम होती है। शकर का परता भी कम हो जाता है। इससे बचने के लिये निरोधक जातियाँ बोयें और रोग से प्रभावित खेत का बिसार न लें। जिस खेत में यह रोग लग जाय उसमें तीन वर्ष तक गन्ना की फसल न बोयें।

सूखा रोग (Wilt)—यह अरहर, कपास और गन्ने की फसलों में लगता है। यह रोग निचान के खेतों में अधिक होता है और इससे ग्रसित पौधा सूख जाता है। रोगी पौधे को उखाड़ कर फेंक देना चाहिये। यदि कपास और अरहर में यह रोग लग जाय तो तीन वर्ष तक इन्हें उस खेत में न बोवें।

जौ की धारीदार बीमारी(Stripe desease)—इस रोग में जौ की पत्तियों में लम्बी धारियाँ पड़ जाती हैं। रोगी खेत का बीज कभी काम में न लावें और अग्रोसन जी० एन० से बीज को शोध कर बोवें।

इयर क्लाइट और धब्बे का रोग—इनके लगने से जड़ें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सड़ने लगती हैं। पत्तियों पर दाग पड़ जाते हैं तथा पौधे समय के पूर्व ही सूखने लग जाते हैं। यह रोग सितम्बर से अक्तूबर के मध्य लगते हैं। बीज को सेरेसन या अग्रोसन जी० एन० द्वारा बोने के एक सप्ताह पूर्व शोध लेना चाहिये।

आम व नीबू का सूखा—यह सूखा रोग नीबू और आम में होता है। टहनियाँ सूखजाती हैं और सूखे व हरे भाग के ठीक मध्य में गांठ पड़ जाती है। सूखी टहनियाँ छाँट देनी चाहिये और उन पर पेरानाम्स का०.३ प्र.श.का घोल छिड़कना चाहिये। कटे भाग पर चौबटिया * लेप लगादें।

आलू झुलसने का रोग—आलू की पत्तियां सूखी और मुरझाई सी दिखती हैं और उनपर भूरे रंग के दाग पड़ जाते हैं। सर्द मौसम में तो तने और पत्तियों में सड़न प्रारम्भ हो जाती है। आलू छोटे बैठते हैं और फसल मारी जाती है। रोग लगने से पहले १ सेर बिना बुझा चूना और १०० सेर पानी तथा १ सेर तूतिया का घोल (बोर्डो घोल) अथवा २० सेर जल और ५ तोला पेरानाम्स मिलाकर पैरानाम्स का घोल १००गैलन प्रति एकड़ के औसत से एक या दो बार छिड़क दें।

मेजैक (Mosaic)—यह आलू टिमाटर और बैंगन में अधिक लगता है। पत्तियाँ ऐंठ कर छोटी पड़ जाती हैं। उनका रंग फीका हो जाता है तथा फल छोटे और कमोर होते हैं। रोगी पौधों को नष्ट कर देने और स्वस्थ बीज का का प्रयोग करने से इस रोग की रोकथाम होती है।

* चौबटिया लेप कापर कार्बोनेट, रेडलेट और अलसी का तेल क्रमशः ४, ४ और ५ भाग मिलाकर तैयार किया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

झूलारोग (Lichens)--पहाड़ों पर नासपाती, आड़, सेब आदि के वृक्षों में यह रोग लगता है। पेड़ों के तने व डालों पर काई जैसी लग जाती है। जाड़े की ऋतु में १·५ प्र० श० कास्टिक सोडे का घोल छिड़कने से लाभ होता है।

नीबू का कोढ़ (Citrus canker)—इससे नीबू की टहनी, पत्ती और फल सभी पर पीले कटे-पिटे निशान हो जाते हैं। तीव्र प्रकोप होने पर फल फट जाते हैं, छोटे तथा कम होते हैं और उनमें रस भी कम पड़ता है। फरवरी के महीने में पेड़ों की कटाई करके नीचे गिरी शाखों व पत्तियों को एक साथ जलादें और फरवरी, अप्रैल, जुलाई और अगस्त के महीनों में बोर्डो या पैरानाम्स का घोल ३-४ बार छिड़क दें।

बड़े जीव-जन्तु

बन्दर, नीलगाय, साही, जंगली सुअर, तोते और चूहे आदि अनेक बड़े जीव जन्तु ऐसे हैं जो खेती को बड़ी हानि पहुँचाते हैं। बन्दर और नीलगायों को मारना धार्मिक दृष्टि से गलत माना जाता है। राय है कि फसल के शत्रु मानव-जाति के शत्रु हैं अतएव उनको मारना पाप नहीं है। चूहा इसमें सबसे अधिक फसल और बीज को नष्ट करता है। इसके लिये जिंक फासफाइड, बेरियम कार्बोनेट या बारफेरीन नामक किसी विष को मिलाकर विषैला चारा तैयार करलें और चूहों के हर बिल में १ या २ तोला चारा डाल दें। दूसरा ढंग यह है कि विषैली धूनी द्वारा इनका विनाश करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उन्नत बीज और उसकी सुरक्षा

पिछले अध्याय में हम बीज, उसके अवयव, उसमें होने वाले तत्व, बीज के उगने के लिये आवश्यक तत्व, उसका उगना तथा पौधे के रूप में उसके विकास के संबंध में जान चुकेहैं। अब उन्नत बीज, उसका चुनाव एवं सुरक्षा आदि के सम्बंध में कुछ साधारण बातें जान लेना आवश्यक है।

उन्नतिशील बीज वही कहा जा सकता है जो उस किस्म की समस्त जातियों में सबसे अधिक उपजाऊ प्रमाणित हो। राजकीय कृषि विभाग देश व विदेश से अनेक किस्मों के बीजों को मँगाकर उन्हें बोकर परीक्षण द्वारा उन्नतिशील बीज का पता लगाता है। परीक्षण के द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि जुताई व खाद आदि के बराबर होने पर भी उन्नतिशील बीज बोने पर ड्योढ़ी व दूनी तक उपज होती है। अतः उन्नतिशील बीज ही बोना चाहिये। हम प्रत्येक फसल के साथ उसमें उन्नतिशील बीज का भी उल्लेख करते चलेंगे। जहाँ तक हो सरकारी बीज-गोदाम से ही बीज प्राप्त करें। किन्तु सरकारी बीज-बैंकों में भी आवश्यकता भर बीज नहीं रहता, इसलिये एक बार बीज लाकर आगे के लिये भी सुरक्षित रखना चाहिये। इसके लिये उसकी शुद्धता एवं सुरक्षा जरूरी है।

बीज की शुद्धता—बीज बोने वाले खेत का भली-भाँति निरीक्षण कर लेना चाहिये और उसमें किसी किस्म के अन्य बीजों के पौधे न होने चाहिये। यदि ऐसे पौधे बाद में उगें तो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खेत काटने से पूर्व उन्हें उखाड़ फेंकना चाहिये । इनकी कटाई मड़ाई व खलिहान बिलकुल अलग होना चाहिये । इस भांति कार्य करने पर बीमारी, कीड़े व मिलावट आदि की आशंका न रहेगी और बीज शुद्ध बना रहेगा ।

बीज का चुनाव—यदि बीज को अपने ही खेतों की फसल से चुनना है तो हमें नीरोग व जोरदार पौधे चुनना चाहिये । दाने भरे हुये, चमकदार व बड़े होने चाहिये । इस प्रकार कम-जोर व छोटे दाने अलग कर सूप की सहायता से बड़े-बड़े दाने अलग कर लिये जायँ । बीज खरीदते समय या अपने ही खेत से चुनते समय हमें सबसे अधिक ध्यान रखना चाहिये कि उसमें मिलावट न हो । मिलावट की दृष्टि से इन्हें तीन कोटियों में बाँटा जा सकता है:—

(१)उत्तम कोटि जिसमें ९५ प्र.श.बीज मूल जाति के हों।

(२)मध्यम कोटि जिसमें मूल जाति के बीज ८५ प्रतिशत से कम न हों ।

(३)निम्न कोटि जिसमें मूल जाति के बीज मध्यमकोटि से कम हों । इस प्रकार हमें उत्तम कोटि का बीज ही बोना चाहिये । हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि बीज सड़ा, कीड़ा लगा व दुर्गंधयुक्त न हो और उसमें धूल कंकड़ आदि न हों । बोने वाले बीज भारी व तन्दुरुस्त होने चाहिये, अतएव हमें उसे देख लेना चाहिये कि उनका जमाव ९० प्रतिशत से कम न हो । इसे जानने के लिए एक पानी से भरे गिलास में १ छटाँक के लगभग बीज डाल दें और जितने बीज बैठ जाँय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उन्हीं से तन्दुरुस्त बीजों की प्रतिशत संख्या ज्ञात हो जायगी। इसी प्रकार १ भाग गोवर की खाद तथा ३ भाग मिट्टी मिलाकर किसी चीज में रखकर उसमें १०० दाने के लगभग बोयें। अंकुर निकल आने पर उनकी जड़ें धोकर गिन लें और प्रतिशत संख्या जान लें।

खरीदते समय यह भी पता लगा लेना चाहिये कि वह इसी प्रदेश का है या बाहरी बीज है। बाहरी होने पर उसकी फसल कैसी आई थी और वह कितना उगने की शक्ति रखता है, इसे भी जान लेना चाहिये।

बीजों में उगने की शक्ति एक निश्चित समय तक ही रहती है। गेहूँ, जौ, जई, मक्का का दो वर्ष और सरसों मटर आदि का चार साल से अधिक पुराना बीज न बोना चाहिये।

बीजों को भली भाँति रखना—बीज की कटाई मड़ाई और सफाई इस प्रकार करने के बाद कि उसमें अन्य किसी भी प्रकार के बीजों की मिलावट न हो उसे सुखा लेना चाहिये, इससे नमी होने पर बीज खराब नहीं होगा। मड़ाई के समय भीगा हुआ बीज बोने के लिये अयोग्य होता है।

इसके पश्चात इसे गोदाम या बखारी में पहुंचा देना चाहिये। बीज रखने के पूर्व गोदाम की मरम्मत करा लेनी चाहिये। वर्षा का पानी उसमें न पहुँचना चाहिये और जमीन में चूहों आदि के बिल भी बन्द करा देने चाहिये। गोदाम ऐसे स्थान पर होना चाहिये जिससे उसमें नमी न पहुँच सके।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोदाम को नीचे लिखी विधियों में से किसी एक का प्रयोग कर कीटाणुओं से रहित कर देना चाहिये।

(१) नीम की पत्ती जलाकर धुवाँ करे और एक दिन बंद रखे।

(२) गैमेक्सीन की बत्तियाँ, जो धुआँ करती हैं प्रति घनफुट पर एक बत्ती के हिसाब से जलायें और एक दिन बंद रखें।

(३) ७ सेर प्रति हजार घनफुट के हिसाब से लकड़ी का कोयला जलाकर बंद कर दें।

इसके साथ ही दीवालों के चारों ओर चार फीट ऊँचा तारकोल लगा दें। गोदाम के फर्श पर काठ के तख्ते या चटाइयाँ बिछा देनी चाहिये। रबी की फसल में फर्श पर ३ फीट भूसे की तह बिछा देनी चाहिये जिससे भूमि की नमी आदि का असर न पड़े। भूसा सूखा और नया होना चाहिये।

बीज रखने वाले बोरों को भी कीटाणुओं से रहित होना चाहिये। उन्हें उबलते पानी में छोड़कर और बाद में धूप में अच्छी तरह सुखाले अथवा गैमेक्सीन प्रति २ घन फुट आयतन पर एक औंस के हिसाब से छिड़क कर किसी ढक्कनदार संदूक में ४८ घंटे बंद रहने दे। इस प्रकार उनके कीटाणु मर जायँगे।

खरीफ के बीजों को गोदाम में रखने का समय नवम्बर से जुलाई तक है। खरीफ में कम मात्रा में रखने वाले बीज जैसे मूँग, उर्द आदि को राख में मिलाकर मिट्टी के या अन्य किसी बर्तन में रख कर ऊपर से अच्छी तरह बंद कर देना चाहिये। मक्का ज्वार और बाजरा के भुट्टे रस्सी में बाँधकर टाँग देना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

या पीपे, मटके या काठलियों में भर देना चाहिये। इन्हें बोरियों में भी रखा जा सकता है। कीड़ों से रक्षा के लिये दो गोली प्रतिमन के हिसाब से नेपथलीन की गोलियाँ या २० मन बीज पर १ छटांक के हिसाब से गैमक्सीन स्पेशल एफ० एस० बुकनी मिलाकर बीज भर कर मुंह बंद कर देना चाहिये। बोरों को रखने के बाद पुनः गेमक्सीन स्पेशल एफ० एस० ५ औंस प्रति १०० वर्ग फीट के हिसाब से छिड़क देनी चाहिये। बोरियों व दीवालों के मध्य १॥ फीट के लगभग अंतर होना चाहिये।

धान का बीज ठीक से उगे इसके लिये उसे आधे मार्च में ३ दिन तक सुखा लेना चाहिये।

रबी में बीज जून महीने से सितंबर तक गोदाम में रखे जाते हैं। मई के अन्त में या जून के पहले-पहले सप्ताह में बीज भर कर गोदाम को बंद कर देना चाहिये जिससे वर्षा का असर नमी आदि के रूप से बीज पर न पड़े। इसमें भी बोरों में भरने से पूर्व ऊपर लिखी रीति से कीड़ों से रहित कर देना चाहिये और उसी भाँति उनकी सिलाई कर देनी चाहिये।

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि बोरों व दीवारों के मध्य लगभग १॥ फीट का अंतर होना चाहिये और इसमें भूसा भर दिया जाना चाहिये। सब से ऊपर पुनः २॥–३ फुट भूसे की तह लगाकर गैमक्सीन की बत्तियों का धुआँ कर दें। इस प्रकार बीज सुरक्षित रहेगा और उसको कीड़ों मकोड़ों तथा सर्दी आदि से सुरक्षित रखा जा सकेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

औजार

वर्तमान काल में कृषि की उन्नति नवीन आविष्कृत यंत्रों पर ही निर्भर है। खेती के लिये नये २ यंत्रों का आविष्कार हुआ है जिनकी सहायता से योरोप व अमेरिका में चौगुनी से दसगुनी तक उपज बढ़ी है। हमारे देश में भी लायलपुर, कानपुर और पूसा की कृषिशालाओं में इन यंत्रों की उपयोगिता की जाँच की गई। इसमें कई प्रकार के यंत्र साधारण किसानों के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुये हैं। यहाँ इन्हीं के संबंध में बताया जायगा।

हल—हल खेती के लिये सबसे उपयोगी यंत्र है, जिसका प्रयोग अनादि काल से होता रहा है। भिन्न २ कामों के लिए भिन्न२ हल काम में लाये जाते हैं। कुछ का वर्णन नीचे दिया है।

मिट्टी पलटने वाले हलके हल—आजकल अनेक कारखानों ने इनका निर्माण कर इनके भिन्न २ नाम रख दिये हैं। आजकल मेस्टन, वाट, प्रजा और गुर्जर हल अधिक काम में लाये जाते हैं। इन्हें औसत दर्जे की बैल या भैंसों की जोड़ी से खीचा जा सकता है। इनके द्वारा जुताई करने पर भूमि का कोई भी भाग बिना जुता नहीं बचता। यह ५-६ इंच गहरा और ४-५ इंच चौड़ा कूँड़ जोतता है, जब कि देशी हल की कूँड़ की लम्बाई व चौड़ाई केवल ४-५ इंच ही होती है। इससे जोते गये खेतकी घास उखड़कर भूमि में दबकर सड़ जाती है। देशी की अपेक्षा इनसे कम समय में अधिक जुताई भी होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इन हलों के द्वारा गहरी जुताई करने के लिये हरीस को लम्बा कर देना चाहिये और उथली जुताई के लिये हरीस को संकरा कर जोता जाय। दूसरा ढंग यह है कि हरीस व ढाँचे के बीच एक पच्चड़ लगी होती है। इसे हरीस के ऊपर लगा देने से गहरी और नीचे लगा देने से उथली जुताई होती है।

मेस्टन हल—इसका मूल्य कम, वजन हल्का और कार्य उत्तम होता है। इसका कूँड़ ५ इंच तक गहरा और ७ इंच तक चौड़ा होता है। मटियार, बलुई, दुमट सब प्रकार की भूमि में यह काम दे सकता है। मटियार में पहली जुताई हल्की कर दुबारा गहरा जोतना चाहिये। इसका कुल भाग लोहे का ढला होता है। फाल सख्त ढला हुआ तथा पानी दिया हुआ होता है। पूरे हल की लागत ६) होती है। किन्तु स्मरण रहे कि

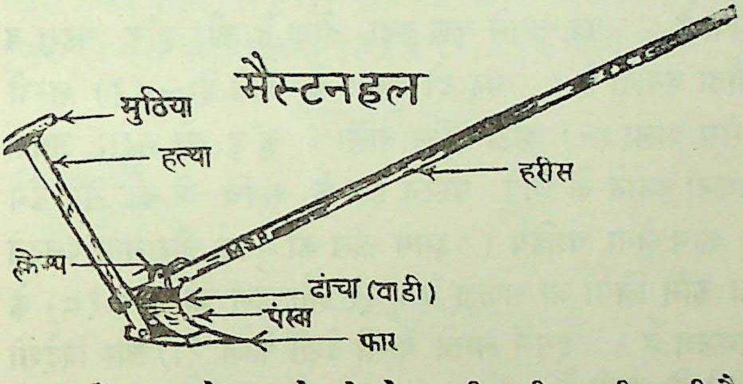

इन हलों का प्रयोग करने से खेत की नमी जाती रहती है। अतएव चतुर किसान को चाहिये कि इसके द्वारा भूमि को तोड़ कर और घास उखाड़ कर देशी हल से मनमानी जुताई करे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बाट्स हल—यह वजन में मेस्टन हल के ही समान हल्का

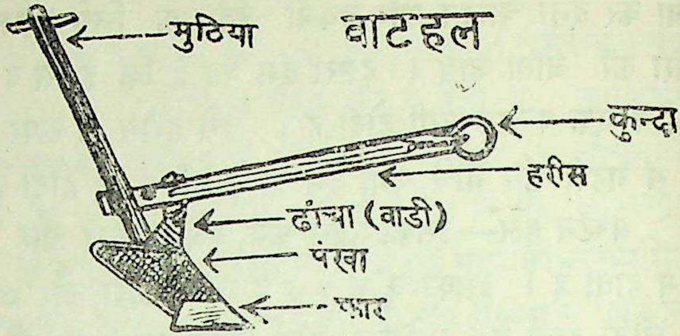

होता है। यह मेस्टन से जुताई अधिक और कूँड़ बड़ा (६-७ इंच) बनाता है। इसमें जुताई करने के लिये मजबूत बैलों की जोड़ी चाहिये। देशी फार वाले हल का मूल्य १६) तथा विदेशी फार वाले हल का मूल्य ३०) के लगभग होता है।

प्रजाहल—यह भी मेस्टन हल के ही समान लोहे का बना होता है। यह उससे कुछ बड़ा होता है और कूँड़ गहरा व चौड़ा बनाता है। यह दो प्रकार के होते हैं:—(१) लम्बी हरीस वाला (२) छोटी हरीस वाला। कूँड़ को गहरा अथवा उथला बनाने के लिये मेस्टन हल के संबंध में कहे गये ढंग से काम लेना चाहिये। इससे ऊँख की जुताई और सनई पलटने का काम लिया जा सकता है। पूरे लौह हल का मूल्य १८) के लगभग है। इसमें लगने वाली देशी फाल १।) और विदेशी २॥) में आती है।

लोहे के भारी हल—अब नीचे कुछ ऐसे हलों का उल्लेख किया जाता है जो उपरोक्त हलके हलों से काफी बड़े और भारी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होते हैं। अतः इनकी जुताई के लिये एक जोड़ी बैल ४-५ घंटे बाद बदल दिये जाने चाहिये।

इनका प्रयोग रबी की फसल कटने के बाद खेतों की जुताई हरी खाद को पलटने, गन्ने के बोने के लिये नालियाँ बनाने के लिये किया जा सकता है। नमी कम होने पर सिंचाई कर खेत की जुताई करनी चाहिये। इनके प्रयोग से खर पतवार मर जाता है और भूमि की जल सोखने की शक्ति बढ़ जाती है।

विक्टरी हल—यह काम में पंजाब हल से अच्छा होता है और मजबूती में भी उससे अधिक है। भूमि में उत्पन्न हुये बड़े बड़े ढेलों को तोड़ने के लिये एक चाकू भी इस हल में लगा होता है। यह ८ से १० इंच चौड़ी तथा ६ से ८ इंच तक गहरी जुताई करता है; इसका पूरा भाग लोहे का बना होता है। इसमें भी एक पहिया लगा होता है। इसमें पतले सरिये का

विक्टरी हल

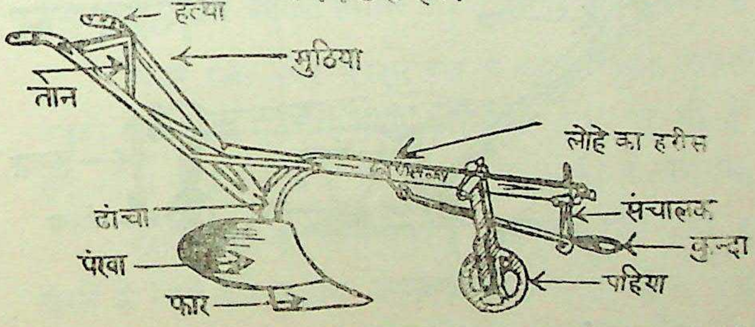

एक कुण्डा लगा रहता है जिसमें एक छल्ला होता है। इस छल्ले जंजीर या मजबूत रस्सी बाँध कर बैलों को चलाते हैं। हरीस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के किनारे पर एक चौकोर सरिये का टुकड़ा फँसा हुआ रहता है जिसे संचालक के नाम से पुकारते हैं। गहरी जुताई करने के लिये जंजीर की लम्बाई कम कर देनी चाहिये और उथली करने के लिये नीची। संचालक जिस स्थान पर बंधा रहता है उसके दोनों ओर कुछ खाली जगह होती है। कूँड़ चौड़ा करने के लिये इसे बायें खिसकाना चाहिये और अगर दाहिने ओर कर दिया जाय तो कूँड़ की चौड़ाई कम होगी। इसका मूल्य ८०) है।

पंजाब हल—इसमें तीन चार पुरजों को छोड़कर शेष सब भाग मेस्टन हल के ही समान होते हैं। इसमें एक पहिया लगा रहता है और बैलों के बाँधने के लिये हरीस के किनारे एक कुण्डा रहता है। इसमें एक हुक लगी रहती है। गहरी और उथली जुताई के लिये विक्ट्री हल की ही रीतियाँ काम

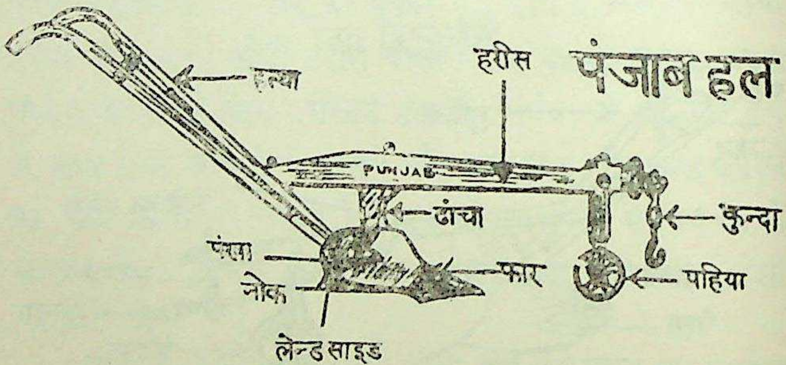

में लानी चाहिये। इसमें दो मुठिया लगी रहती हैं जिन्हें एक व्यक्ति साध सकता है और एक लड़का बैलों को खेद सकता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। इसका मूल्य ७५) है। भारी जमीन में काम लेने से हरीस टूटने का डर रहता है।

पत्थर-तोड़ हल—यह सूखी कँकरीली पथरीली एवं ऊसर भूमि को तोड़ने में बड़ा ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। पंजाब हल से ही कुछ मिलता जुलता है इसका कूँड़ ६ इंच तक गहरा और इतना ही चौड़ा होता है। बाग आदि कटवाने के बाद इससे जुताई करने में बड़ी किफायत रहती है। इसका मू० ८०) है।

अन्य हल—कुछ ऐसे हलों का भी आविष्कार हुआ है जो देशी हलों का उन्नत रूप कहे जा सकते हैं। यह कम मूल्य वाले और मजबूत होते हैं। मामूली बैलों से भी इन्हें चलाया जा सकता है। उनमें से मुख्य यह हैं:—

गुरुदत्त हल—इससे ५-६ इंच गहरा कूँड़ बनता है। इससे गहराई समान रहती है और घास पतवार एक ओर हो जाते हैं। बीज बोने में भी बड़ा उपयोगी है। इसका मूल्य ३॥) है।

गूजर हल—यह मेस्टन हल से बहुत मिलता जुलता है। इसका वजन तथा खिंचाव सबसे कम होता है। यह भी ३ इंच तक गहरा कूँड़ बनाता है। इसका मूल्य ६) के लगभग है।

हैरो—खेत की घास पतवार उखाड़ने और उसे इकट्ठा करने के लिये हैरो अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है। अधिक गीली भूमि में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। इससे भूमि अधिक पानी सोखती है। खड़ी फसलों में इसे चलाने से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खेत पोला हो जाता है और पौधों को कोई हानि नहीं पहुँचती। कुछ मुख्य हैरो निम्न हैं:—

लीवर हैरो—इसके लौह निर्मित ढाँचे में ३० खूटियाँ लगी होती हैं। इनमें एक दूसरे के मध्य २-३ इंच का अन्तर रहता है। इसमें एक लीवर होता है जिसकी सहायता से काँटों को आगे पीछे और खड़ा कर सकते हैं। पपड़ी तोड़ने के लिये काँटों को या तो पीछे कर देना चाहिये या सीधा। घास निकालने के लिये पहले पाटा देना चाहिये। जब ढेले फूट जाँय और घास अलग हो जाय तो हैरो चला दें। इस समय कीलों का नुकीला भाग बैलों की ओर झुका हुआ हो। जब एक सिरे से दूसरे सिरे पर पहुँच जायँ तो इकट्ठा हुई घास को गिराने के लिये इसे कुछ ऊपर उठा देना चाहिये। इसकी कीलें ३-४ इंच गहराई तक जाती हैं। एक जोड़ी बैलों से एक दिन में २-३ एकड़ भूमि की घास उखाड़ी जा सकती है। इसका मूल्य ९०) है।

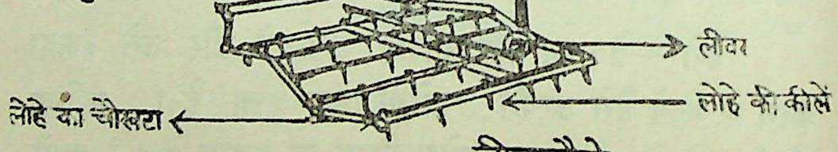

लीवरहैरो

कमानीदार हैरो—देशी हल की अपेक्षा यह पाँच गुना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काम अधिक करता है। यह अति वृष्टि अथवा देर में वृष्टि होने पर खेत तैयार करने में बहुत काम देता है। कमानीदार हैरो दो प्रकार का होता है:—(१) ५ कमानी वाला, और (२) ७ कमानी वाला। इसका ढाँचा ऐंगिल आइरन का होता है, इसमें दो या तीन ऐंगिल आइरन की पत्ती लगी होती हैं। इसमें लोहे की पत्ती की कमानी लगा दी जाती है। इसमें एक लीवर लगा रहता है जिससे कि इन कमानियों को गहरा और उथला किया जा सकता है। लीवर को अपनी तरफ खींचने पर गहरा हो जायगा और बिलकुल आगे कर देने पर काँटे खेत में बिलकुल नहीं लगेंगे। रबी की फसलों की तैयारी, ढेले फोड़ने, खर पतवार उखाड़ने और खाद मिलाने में यह बहुत उपयोगी है। प्रत्येक कमानी का मूल्य ८) और पूरे हैरो का मूल्य ६०) है।

पांच कमानीदार हैरो

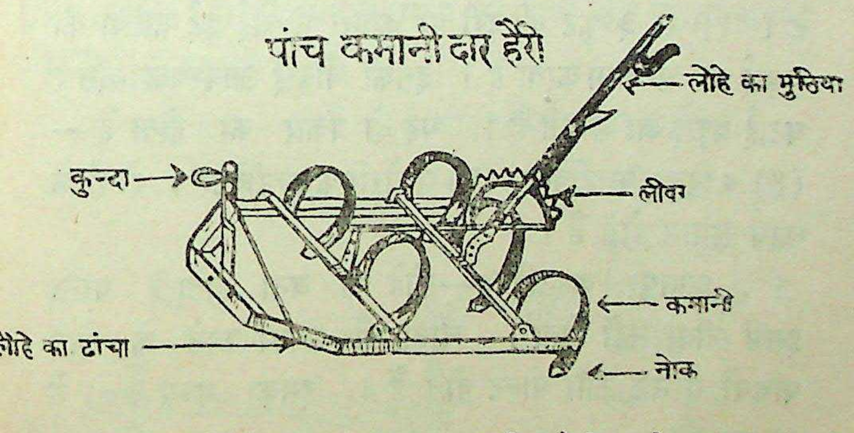

मदरासी हैरो—इसमें तीन लाइन के चौकोर फ्रेम में कीले

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गड़े होते हैं। इसमें कम या अधिक चौड़ा करने के लिये एक कल लगी होती है। इन्हें अधिक चौड़ा करने पर घास जमा होती है और कम चौड़ा करने पर पपड़ी टूटती है।

तिकोनिया हैरो—इसका भी निर्माण लीवर हैरो के ढंग पर हुआ है परन्तु इसमें काँटों को घटाने बढ़ाने की व्यवस्था नहीं है। इसका ऊपरी ढाँचा एक त्रिभुजाकार लकड़ी का बना होता है। तीनों ओर खूँटियाँ लगी होती हैं। इसे १५)-२०) की लागत से गाँव में बढ़ई से बनवाया जा सकता है। एक कोने में एक कुँडा लगा होता है जिसमें जंजीर लगाकर बैलों से खिंचवाते हैं।

कल्टीवेटर—उपयोगिता में यह हैरो से अधिक होता है। इससे देशी हल की जुताई का काम ले सकते हैं। यह ३-४ इंच गहरी जुताई करता है। खाद मिलाने में भी यह उपयोगी है। १॥ से ३ फुट की दूरी पर कतारों में बोई हुई फसलों की गुड़ाई का भी काम करता है। इसकी चौड़ाई आवश्यकतानुसार घटाई बढ़ाई जा सकती है। यह दो प्रकार का होता है—(१) कानपुर कल्टीवेटर, (२) मेकोरमिक कल्टीवेटर। दोनों के कार्य समान होते हैं।

कानपुर कल्टीवेटर—लोहे का बना होता है परन्तु इसमें लीवर नहीं होता। चौड़ा और सँकरा करने के लिये पत्तियों में नट और बोल्ट होते हैं। इसका मूल्य ७०) के लगभग है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मैकोर्मिक कल्टीवेटर

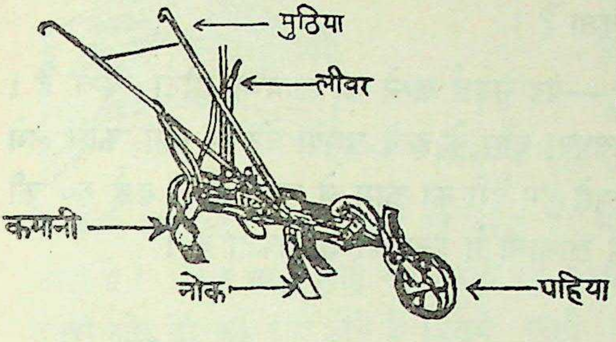

मैकोर्मिक कल्टीवेटर-- यह भी लोहे का बना होता है जिसमें ५-७ कमानियाँ होती हैं और फाल लगे होते हैं। अग्रभाग में एक पहिया होता है। पकड़ने के लिये एक सरिये से परस्पर जुड़ी हुई दो मुठिया होती हैं। पीछे की ओर एक लीवर बना होता है। काँटों को चौड़ा करने के लिये लीवर को अपनी ओर तथा कम करने के लिये बैलों की तरफ कर देते हैं। गहरा करने के निमित्त पहिये को ऊपर और उथला करने के लिये नीचा कर देते हैं।

अकोलाहो—इसमें हरिस और हत्था लकड़ी का होता है।

अकोला हो

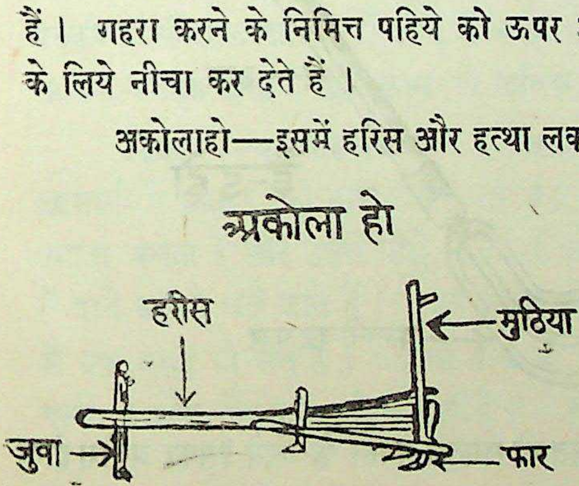

पीछे की ओर ड़गुाई करने के लिये तनी में तिकोने फल लगे होते हैं। १५) की लागत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

से उसे गाँव का बढ़ई आसानी से बना सकता है। इसे गहरा व उथला करने के लिये फाल को ऊपर और नीचे खिसका कर किया जा सकता है।

हैंडहो—यह गुड़ाई करने का अत्यन्त छोटा यन्त्र है। एक लकड़ी अथवा बाँस के हत्थे अथवा बेंट में तीन फाल लगे होते हैं। इससे हम हैरो का काम ले सकते हैं। ढाई रु० की लागत से इसे आसानी से बनवाया जा सकता है।

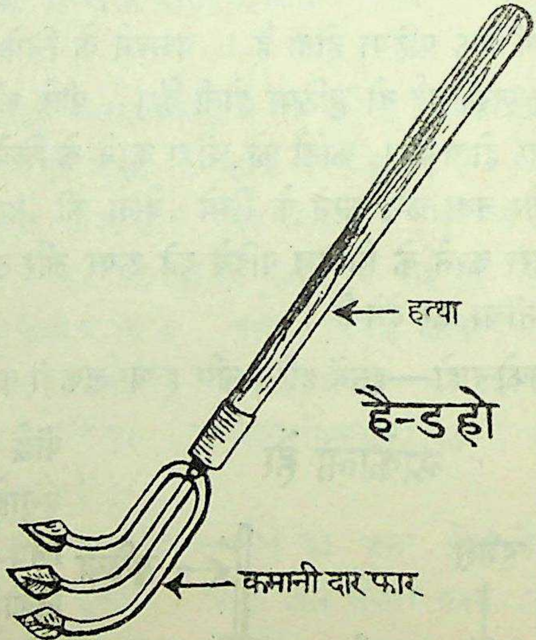

हैन्डहो

करहा—खेत को समतल बनाने के लिये इसका प्रयोग होता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करहा

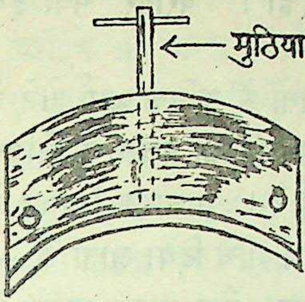

है। इसके जरिये ऊँची जगह की मिट्टी को नीची जगह गिरा देते हैं। एक आदमी और एक जोड़ी बैल इसे आसानी से चला सकते हैं। यह लोहे की चादर को मोड़कर बनाया जाता है। एक तरफ लोहे या लकड़ी का हत्था होता है और दूसरी ओर दो कड़े लगे होते हैं जिनमें रस्सी बाँध कर यह खींचा जाता है। इसका मूल्य लगभग ३५) है।

उपरोक्त यंत्रों के अतिरिक्त फावड़ा, कुदाली, कुदरा, हँसिया, खुरपी, पाटा आदि का भी प्रयोग कृषि में होता है। सभी किसान इनके प्रयोग से भिज्ञ हैं। उन्नत खेतों के लिये इनकी उन्नतिशील आकृतियाँ काम में लाई जानी चाहिये जो अधिक मजबूत होती हैं और काम भी अधिक करती हैं।

डिबलर—यह एक नया यन्त्र है जिसमें एक आदमी बड़ी आसानी से झुरमुट की तरह ठप्पे मार कर २६-२७ सूराख बनाता चलता है और उसके पीछे २ या ३ आदमी इन सूराखों में दाने डालते चले जाते हैं। इस प्रकार ७ आदमी एक दिन में एक एकड़ बो लेते हैं। इससे बीज भी ६ सेर प्रति एकड़ पड़ता है और पैदावार अधिक होती है। इस पद्धति से बुवाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि खेत में नमी हो और पाँस पर्याप्त हो। प्रत्येक बीज शुद्ध हो। बराबर सवा इंच की गहराई पर पड़े।

मशीन—बड़े २ फार्मों और खेतों में अधिक कार्य होने के कारण अधिक श्रम लगता है। इस श्रम की बचत के निमित्त अनेक छोटी बड़ी मशीनें तैयार की गई हैं। साधारण किसान के लिये उपयोगी कुछ मशीनों का विवरण नीचे दिया जाता है:—

चारा काटने की कल—यह हाथ, बैल अथवा मशीन से चलाई जाती है। साधारण किसान के लिये हाथ चलाने वाली मशीन अधिक उपयोगी है। इसमें लोहे के चार पाये होते हैं जिन्हें जमीन में अथवा किसी लकड़ी की पलरों से

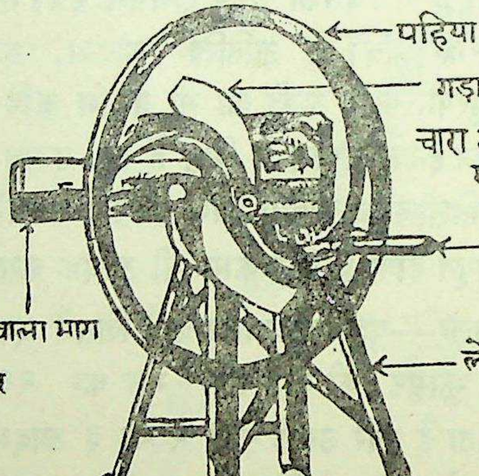

चारा काटने की मशीन

गाड़ देते हैं। इसमें एक पहिया लगा होता है जिसमें दो गड़ासे लगे होते हैं जो नट और बोल्ट से कसे रहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पहिये को घुमाने के लिये एक हैंडिल लगा होता है। महीन चारा काटने के लिये पहिये में लगे बोल्ट को कस देना चाहिये और मोटा काटने के लिये ढीला। किसी २ मशीन को हल्का चलाने के लिये बालबियरिंग लगा देते हैं। इसमें दो आदमी पहिया चलाने और एक कत्री या चरी लगाने में लगता है। इससे १ घंटे में १० मन हरा तथा ५ मन सूखा चारा कटता है। देशी मशीन का मूल्य १००) और विलायती का २००) के लगभग है।

रीपर—अधिक खेती होने पर कटाई के समय अधिक आदमियों की आवश्यकता होती है। एक दिन में सात एकड़ गेहूँ की फसल काटती है। इसका मूल्य ३००) है।

ओल्पाड फ्रेशर—इससे मड़नी का काम लिया जाता है। लाँक की आठ दस हाथ की गोलाई में फैलाकर इसे चलाया जाता है। इसमें यह ध्यान रखना चाहिये कि बालियाँ भीतर

ओल्पाड थ्रेशर

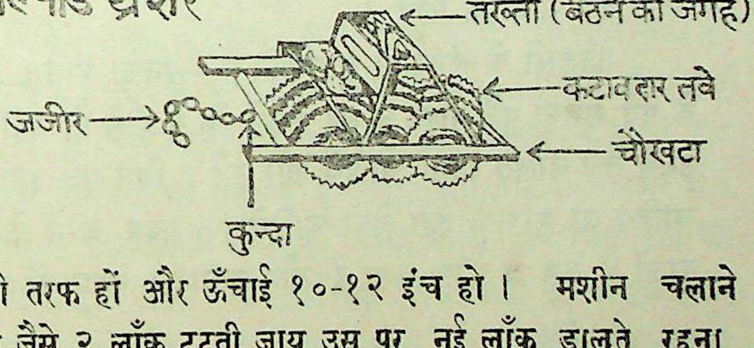

की तरफ हों और ऊँचाई १०-१२ इंच हो। मशीन चलाने पर जैसे २ लाँक टूटती जाय उस पर नई लाँक डालते रहना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
चाहिये या उसे उलटते पलटते रहना चाहिये। इसमें लकड़ी के एक चौकठे में तीन धुरों पर ६-७ कटावदार तवे होते हैं। चौकठ पर बैठने के लिये २ तख्ते और आगे लोहे का कड़ा लगा होता है। इसमें रस्सी डालकर बैल जोते जाते हैं। इससे एक जोड़ी बैलों से तीन दिन में उतना ही काम होता है जितना दो जोड़ी ५ दिन में करेंगे। इसका मूल्य ४०) है।

विनोवर—हवा न चलने पर भूसे से अनाज अलग करने के काम आती है। इसे चलाने में २ आदमी लगते हैं। इससे १ घंटे में २० मन अनाज साफ किया जाता है।

सीड-ड्रिल—रीपर के समान ही इसका भी मूल्य अधिक है जिससे साधारण किसान नहीं खरीद सकता। इससे बीज समान गहराई में एक समान बोया जाता है। इसका मूल्य ३५०) के लगभग है।

इनके अतिरिक्त ट्रैक्टर आदि अन्य मशीनें भी खेती के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं। किन्तु इनका उपयोग केवल बड़े फार्मों के लिए है।

औजारों के संबंध में सावधानियाँ—इनका प्रयोग करने के पूर्व समस्त पुर्जे बोल्ट व नट देखलें कि वे ढीले तो नहीं हैं। उनमें तेल डालते रहना चाहिये और टूटे व घिसे पुर्जे हटा देने चाहिये या मरम्मत करा लेनी चाहिये। काम करने के बाद पुरजों में तेल व ग्रीस लगा दें और छायादार स्थान में रखें।

———

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जलवायु और फसलें

संसार में जीवन के सभी अंगों पर जलवायु का बड़ा प्रभाव पड़ता है। वायु की जो दशा (Condition Of Atmosphere) किसी स्थान पर अधिक रहती है, उसे उस स्थान का जलवायु कहते हैं। वायु की बदलने वाली दशा को मौसम (Weather) कहते हैं। भूमि पर ऋतुओं का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। जलवायु के प्रभाव से ही वनस्पतियाँ उगती हैं। इन पर जलवायु का प्रभाव ताप, जल, प्रकाश और वायु के द्वारा पड़ता है और मिट्टी का प्रभाव उसमें मिले हुए नमकों के द्वारा पड़ता है। किसान के लिए इनका भी ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है।

जलवायु के विवरण में तीन बातें मुख्य हैं:—

(१) ताप, (२) वायु, (३) वर्षा

ताप—यह हमें सूर्य की किरणों तथा पृथ्वी के भीतरी भाग से प्राप्त होती हैं। किरणें वायुमण्डल को भेद कर पृथ्वी पर पड़ती हैं और उसे गरम करके पृथ्वी से लगी वायु को भी गरम कर देती हैं। जल की अपेक्षा पृथ्वी बहुत जल्द गरम और ठंडी हो जाती है। ताप से वनस्पतियों की जातियों का निश्चय होता है।

वायु—जलवायु में पवन का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। ताप तथा वर्षा का विवरण मुख्यतः इसी बात पर निर्भर है। वायु से वनस्पतियों का सांस लेना, उनमें उपस्थित जल का पत्तियों द्वारा बाहर निकालना तथा उसकी जड़ों का मजबूत होना प्रधान बातें हैं। गर्मी में गरम पाकर वायु फैलती है और उसका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भार कम पड़ जाता है। जाड़े में सरदी पाकर सिकुड़ने से भारी पड़ जाती है। इसलिए वायु दबाव के स्थान से कम दबाव की ओर चलती है। वायु तीन प्रकार की होती हैं।

(१) स्थानी हवायें—ये वर्ष भर एक ही दिशा की ओर चलती हैं। इन्हें ट्रेड विंड भी कहते हैं।

(२) वेरयेबिल हवायें—ये स्थायी परिवर्तन के कारण चला करती हैं। जैसे कि समुद्री तट पर चलती हैं।

(३) मौसमी हवायें—यह ऋतुओं के परिवर्तन के कारण चलती हैं तथा बड़ी प्रभावशाली होती हैं, जैसे मानसून। भारत में वर्षा इसी के द्वारा होती है।

वर्षा—प्रत्येक प्रकार की वायु में थोड़ी बहुत भाप अवश्य रहती है। यह समुद्र या जल के दूसरे भागों से सूर्य-ताप के द्वारा उठती है। यह भाप एक नियत मात्रा तक ही वायु में रह सकती है और इसे नियत करने वाला वायु का ताप ही होता है। जिस वायु में एक नियत मात्रा तक की भाप आ जाती है वह 'भाप-भरी वायु' कहलाती है। भाप भरी वायु के आगे जो भाप बचती है वह बादल बन जाती है और जल, बरफ या ओलों के रूप में बरस कर समाप्त हो जाती है। इसके निम्न कारण हैं:—

(१) मार्ग में किसी ऊँचे पहाड़ के आ जाने से, (२) वायु या साइक्लोन में पड़ जाने से। पाला, कोहरा और ओस भी भाप के रूपान्तर हैं जो जाड़े में भाप भरी गरम वायु और ठंडी वायु के मिलने या ठंडी जमीन के छूने से बनते हैं। फार्नहाइट टेंपरेचर के ३० डिग्री से नीचे आने पर जलकण जम जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसे पाला कहते हैं। ओस कृषि के लिये लाभदायक है किंतु पाला पत्तियों के खाद्य मिश्रित जल को जमा देता है। पाला गिरने के पूर्व ही खेतों को सींच देना चाहिये या खेतों के चारो ओर धुँआ करना चाहिये। भाप भरी वायु के ताप के बढ़ जाने पर वर्षा नहीं होती। खेती और वर्षा में घनिष्ट संबंध है। खेती के लिये जल की अत्यंत आवश्यकता होती है जो कि वर्षा के द्वारा ही प्राप्त होता है। कभी २ कुसमय वर्षा होने से खेती को हानि भी होती है। इसी प्रकार वर्षा के गिरने के ढंग का भी प्रभाव कृषि पर पड़ता है।

मानसून—हमारे देश में वर्षा मानसून हवाओं पर आधारित है। अरब सागर से उठने वाला मानसून पश्चिमी घाट से टकरा कर बरसता है। यहाँ १०० इंच-वर्षा होती है। फिर सतपुड़ा और विंध्याचल मध्य में हो कर यह आगे बढ़ता है। इन स्थानों में भी २५ इंच के लगभग वर्षा होती है। यही मानसून पंजाब में जाकर अच्छी वर्षा करता है।

दूसरा मानसून बंगाल की खाड़ी से उठता है। उसकी एक शाखा बर्मा के पहाड़ों से रुककर खूब वर्षा करती है और यही आसाम में भी वृष्टि करती है। दूसरी शाखा हिमालय तथा गंगा की घाटी की ओर बढ़ जाती है। यह बंगाल, बिहार, उड़ीसा, उत्तरप्रदेश और मद्रास में अच्छी वर्षा करती है।

मद्रास में उत्तरी पूर्वी मानसून से ही जाड़े में अच्छी वर्षा होती है। मद्रास की खेती पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है। पंजाब व उत्तरप्रदेश में भी जाड़े की ऋतु में वर्षा होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऋतुयें–तीन होती हैं:–(१) जाड़ा, (२) गर्मी, (३) वर्षा। जाड़ा १५ अक्टूबर से १५ फरवरी तक, गर्मी १५ फरवरी से १५ जून तक और वर्षा १५ जून से १५ अक्तूबर तक होती है।

फसलें

उपरोक्त तीन ऋतुओं के विचार से तीन फसलें भी होती हैं जो निम्नानुसार हैं:—

(१) रबी, (२) खरीफ और (३) जायद।

रबी—जाड़े में जो फसलें बढ़ती और फैलती हैं, उन्हें रबी की फसलें कहते हैं। यह शरद ऋतु के आगमन के साथ (आश्विन कार्तिक में) बोई जाती हैं और चैत वैशाख तक पक कर कटने लायक हो जाती हैं। इसमें गेहूँ, जौ, चना, मटर, मसूर, आलू, सरसों आदि होते हैं। इन फसलों को बोते समय कुछ नमी व सर्दी तथा पकते समय शुष्क मौसम चाहिये।

खरीफ—यह फसल वर्षा ऋतु में बढ़ती फैलती व अगहन में कटती है। इसे गर्म व तर जलवायु चाहिए। इसे सावनी भी कहा जाता है। इसमें मक्का, ज्वार, बाजरा, सांवा, मूंगफली, धान, कपास, अरहर, उर्द, मूंग, तिल, अंडी, लौकी भिन्डी, कद्दू, बैंगन आदि फसलें होती हैं। यह फसलें प्रायः मानसून के प्रारंभ होने पर ही बोई जाती हैं परन्तु अगमन बुवाई के लिये लोग पलेवा देकर भी बो देते हैं।

जायद—कहीं कहीं लोग गर्मी में भी ककड़ी खरबूजे की खेती कर लेते हैं। इसे जायद की फसल कहते हैं। सिंचाई के साधन उपलब्ध होने पर ही फरवरी से मई तक ज़ायद की फसलें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उगाई जाती हैं। इस फसल में लौकी, कद्दू, खीरा, ककड़ी, तरबूज, खरबूजा, बैंगन, घुंइयाँ और चेना आदि की फसलें उगाई जाती हैं।

मिलवाँ फसलें

किसान को अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अन्न, तरकारी, तेल, वस्त्र और रस्सी आदि बनाने के हेतु सन के रेशों एवं अन्य पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है, जिनको अपने सीमित कृषि क्षेत्र में उत्पन्न करने के लिए उसे मिलवाँ फसलें बोनी पड़ती हैं मिलवाँ फसलें बोने से मौसम की प्रतिकूलता एवं कीड़ों और रोगों से समूची फसल की हानि होने से बच जाती है। मिलवाँ फसल में एक ही खेत में दो या तीन फसलें मिला कर बोई जाती हैं। जैसे अरहर-ज्वार, कपास-उर्द, गेहूँ-चना और गेहूँ-अलसी आदि। जाड़े की ऋतु में महावट आदि से यदि गेहूँ की फसल सिंचाई के अभाव में मारी भी जाय तो चने के साथ मिलवाँ बोने पर किसान को चने की फसल मिल जाती है। भिन्न २ समयों पर तैयार होने वाली मिलवाँ फसलों को बोने में श्रम की बचत और आय दोनो ही बढ़ जाते हैं। उदाहरण के लिए ज्वार-अरहर मिलवाँ बोने पर ज्वार अक्तूबर-नवम्बर में पक कर तैयार हो जाती है और फिर अरहर मार्च अप्रैल में कटती है। खेत खाली कम रहने पाता है और भूमि का उपयोग भी अच्छा होता है क्योंकि मुसला और झकड़ा जड़ वाली फसलें अपना भोजन भिन्न भिन्न गहराइयों से प्राप्त करती हैं। खेत की तैयारी और खाद वगैरा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक बार ही देनी पड़ती है और फसलें एक से अधिक तैयार होती हैं, इससे किसान के व्यय में बचत होती है।

मिलवाँ फसल बोने में यह ध्यान रखना चाहिए कि भूमि से जल प्राप्त करने में फसलों की आवश्यकता में असमानता हो, जैसे—गेहूँ और चने की मिलवाँ फसल। दूसरे ज्वार और अरहर के समान उथली और गहरी जड़ वाली फसलों को मिलवाँ बोना चाहिए। इसी भांति ऊँची बढ़ने वाली और कम ऊँचाई वाली अथवा अधिक शाखों वाली और कम शाखों वाली फसलों को मिलवाँ बोना अच्छा रहता है। उदाहरण के लिए हम अरहर और मूँगफली तथा गेहूँ और चने की मिलवाँ फसलों को ले सकते हैं। स्मरण रहे कि ऐसी मिलवाँ फसलें कभी न बोयें जो भूमि से अधिक भोज्यतत्व खींचती हों। अलसी चने के समान नकद रुपया देने वाली फसलों को अन्न के साथ बोना किसान के लिये बहुत सुविधाजनक होता है।

हमारे देश में विशेष रूप से प्रचलित और खास तौर से उत्तर प्रदेश में बोई जाने वाली मिलवाँ फसलें निम्न हैं—(१) ज्वार, अरहर, सावाँ, तिल, (२) कपास, अरहर, उर्द, (३) ज्वार, अरहर, उर्द, (४) अरहर मूँगफली (५) गेहूँ चना, (६) मटर जौ, (७) मटर, जौ, सरसों, (८) चना, अलसी, (९) गन्ना, कद्दू लौकी (१०) बैंगन, रेंड़ी, सेम।

फसल चक्र

फसल को अदल बदल कर बोने अर्थात् एक ही खेत में फसलों को इस प्रकार बोना जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति क्षीण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

न हों, इसे फसल-चक्र कहते हैं। उदाहरण के लिये एक ही खेत में पहले साल गेहूँ, दूसरे साल कपास और तीसरे साल गन्ना बोना एक उतम त्रिवर्षीय फसल-चक्र माना जाता है। इससे सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि भूमि की उर्वराशक्ति में अधिक क्षीणता नहीं आती। एक तो भिन्न २ फसलों की जड़ें भूमि की विभिन्न स्तरीय गहराइयों से अपना भोजन प्राप्त करती हैं और दूसरे अलग २ फसलों के पोषक तत्व भी अलग-अलग होते हैं। इस प्रकार भूमि के एक ही स्तर के एक ही प्रकार के पोषक तत्व नहीं समाप्त होने पाते। अदल बदल कर फसलों को बोने से रोगों व कीड़ों के आक्रमण से भी फसलों की रक्षा होती है क्योंकि एक ही या एक कुटुम्ब की फसलें एक ही खेत में बोने से उसके रोग व कीड़े निरंतर पनपते रहते हैं। मूंग के बाद गेहूँ की फसल के समान दाल वाली फसलों के बाद दूसरी फसलें बोने से पैदावार बढ़ती है। आलू और मूंगफली जैसी फसलों की खुदाई के बाद अगली फसल के लिये खेत की तैयारी आसान हो जाती है। अधिक खाद या जल चाहने वाली फसलों के बाद कम खाद और जल चाहने वाली फसलें बोने से प्रति एकड़ व्यय की भी बचत होती है।

विभिन्न क्षेत्रों में फसल-चक्र किसान के उपलब्ध साधनों के अनुसार अलग अलग होता है। जैसे अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में धान-मटर और कम वर्षा वाले क्षेत्रों में कपास-मटर की फसलें हेर फेर कर बोई जाती हैं। सिंचाई के अच्छे साधन होने पर मक्का आलू और तम्बाकू का फसल-चक्र अच्छा रहता है। इसी : कार बलुही मिट्टी में मूंगफली बाजरा, मटियार में धान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चना तथा दोमट में प्रायः सभी प्रकार की फसलें हेर फेर कर बोई जाती हैं। इसी प्रकार किसान अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति, बाजार की माँग एवं पैदावार की निकासी के दृष्टि-कोण से अपनी फसलों को अदल बदल कर बोते हैं।

फसल चक्र और चौमास—भूमि की उर्वरा शक्ति कायम रहे, इसलिये किसान खेत को एक फसल बिलकुल खाली छोड़ देते हैं। इसे चौमास या परती कहते हैं। इस बीच खेत को जोतते रहते हैं जिससे उसकी नमी कायम रहे।

इसलिये फसल-चक्र में किसान को चौमास भी सम्मिलित कर लेना चाहिये। कुछ ऐसी शीघ्र पकने वाली फसलें होती हैं जिन्हें बोने पर भूमि को परती रखने की आवश्यकता नहीं पड़ती। जैसे मूँग नं० १ केवल ६०-६५ दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसे वर्षारंभ में बो कर अगस्त में खेत को भली भाँति जोत दिया जाय। इससे जमीन की उर्वरा शक्ति भी बढ़ेगी और भूमि में वर्षा का जल भी सुरक्षित रहेगा।

कुछ मुख्य फसलों के चक्र—अब हम यहाँ कुछ प्रचलित एवं प्रमुख कृषि विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत फसल चक्र दे रहे हैं जो किसानों को लाभप्रद सिद्ध होंगे:—

गन्ना

(१) पौंडा, मक्का, आलू (द्विवर्षीय चक्र) यह शहरी क्षेत्रों के निकट आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद होता है।

(२) गन्ना, गेहूं, कपास (त्रिवर्षीय चक्र) यह पश्चिमी उत्तर प्रदेश के सिंचित क्षेत्र के हेतु अच्छा रहता है।

(३) गन्ना, गेहूँ, हरी खाद (त्रिवर्षीय चक्र) इसमें अन्य खाद देने की अधिक आवश्यकता नहीं रहती।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(४) गन्ना, गेहूँ, धान (त्रिवर्षीय चक्र) यह उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों के लिये उत्तम है।

गेहूँ

(१) कुयें द्वारा सिंचित क्षेत्रों में दाने के लिये ज्वार और गेहूँ का द्विवर्षीय फसल-चक्र अच्छा रहता है।

(२) उत्तर प्रदेश के मध्य क्षेत्र में ज्वार व अरहर गेहूँ का द्विवर्षीय चक्र बहुत प्रचलित है।

(३) पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कपास गेहूँ और गन्ना का त्रिवर्षीय चक्र प्रचलित है।

(४) पूर्वी उत्तर प्रदेश में धान व अरहर गेहूँ के द्विवर्षीय फसल चक्र बहुत प्रचलित हैं।

जौ

(१) ज्वार व अरहर, बाजरा, जौ (द्विवर्षीय), (२) मक्का, जौ, सनई, अलसी (द्विवर्षीय) (३) यू० पी० के पश्चिमी जिलों के लिये जौ कपास (दो साला) तथा (४) पूर्वी जिलों में सनई (बीज के लिये), जौ (द्विवर्षीय चक्र)।

उन्नत फसल चक्र

(१) मूंग नं० १, गेहूँ (२) मूंग नं० १, आलू, गेहूँ।

तरकारियों का फसल चक्र

(१) करेला या लौकी, विलायती मटर (एक साल) (२) घुइयाँ, मूली, सीताफल (एक साल) (३) मक्का, आलू, भिंडी, गोभी (द्विवर्षीय चक्र), (४) बैंगन या टिमाटर, भिंडी, मेथी (द्विवर्षीय) (५) घुइयाँ, शलजम, भिंडी, गाजर (द्विवर्षीय)।

——*——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्वितीय खण्ड

अन्न, तिलहन, चारा आदि।

रबी की फसलें

वर्ष के अन्त में रबी की फसलों द्वारा अधिक मात्रा में अन्न और चारा उत्पन्न किया जाता है। इन फसलों में गेहूँ, जौ, मटर, चना, सरसों, मसूर, कुसुम ऐसी फसलें हैं, जिनकी खेती से मानव समाज को अन्न और पशुओं को चारा मिलता है।

गेहूँ

हमारे देश में धान के बाद गेहूँ की उपज का ही नम्बर आता है। पंजाब के बट जाने के बाद उत्तर प्रदेश ही इस उपज वाला प्रमुख राज्य बन गया है। वैसे तो गेहूँ प्रत्येक भूमि में उत्पन्न होता है किन्तु गेहूँ की फसल के लिये उपजाऊ साधारण दूमट का समतल खेत चुनना चाहिये। कोई कोई गेहूँ भारी दूमट में भी खूब पनपता है। ज्वार बाजरा अथवा मक्का के खेत में बिना पर्याप्त खाद डाले गेहूँ न बोना चाहिये। खेत में छाया न होनी चाहिये। इसमें सिंचाई और पानी के निकास का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि और तैयारी—गेहूँ के खेत की मिट्टी काफी बारीक और जुती होनी चाहिये, घाघ की कहावत प्रसिद्ध है "मैदे गेहूँ ढेले चना" अर्थात् गेहूँ के खेत की मिट्टी मैदा के समान होने पर और चने के खेत में ढेले रहने पर पैदावार अधिक होती है। अषाढ़ में या वर्षा (सितंबर) के अंत में खेत की दो बार जुताई हो जाना आवश्यक है[1]। पहली मिट्टी पलटने वाले हल से और दूसरी देशी हल या कल्टीवेटर से। अच्छे खेत के लिये ८-६ बार जुताई पर्याप्त है। यूँ अच्छे किसान १५-१६ तक जुताइयाँ करते हैं[2]। नमी कम होने पर पाटा देना न भूलना चाहिये। जुताई के लिये कुँवार-कार्तिक का समय उपयुक्त है। खेत में नमी बनाये रखने के लिये प्रातःकाल ही जुताई करनी चाहिये।

खाद—जल्द पकने वाली दलहन की फसलें (मूग नं० १ व लोबिया नं० १) हरी खाद के लिये विशेष उपयोगी हैं। गेहूं के लिये ५० पौंड नाइट्रोजन की आवश्यकता पड़ती है, जिसकी पूर्ति सनई की हरी खाद से की जा सकती है। इनके अभाव में इसकी पूर्ति १०-१५ गाड़ी कम्पोस्ट या गोबर की खाद से की जा सकती है। इसके भी न होने पर मूँगफली या अंडी की खाद देनी चाहिये। आवश्यकता से अधिक खाद देने पर पौधे गिर जाते हैं[3]।

बीज—जिस क्षेत्र में जो बीज श्रेष्ठ प्रमाणित हुआ हो वहाँ

---

१ गेहूँ भवा काहे, अषाढ़ के दुइ बाँहे—घाघ (बाँहे—जोतना)।
२ गेहूँ भवा काहे, सोलह बाँ हैं-नौ गाँ हैं—घाघ (गाँ हैं—पाटा देना)।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसे बोना चाहिये। उत्तर प्रदेश के भिन्न २ भागों में भिन्न २ जाति का गेहूँ लाभदायक सिद्ध हुआ है। उत्तर प्रदेशीय कृषि विभाग ने अपने परीक्षण के पश्चात् निम्नलिखित तालिका प्रस्तुत की है। किसानों को इसी के अनुसार बीज का चुनाव करना चाहिये।

उत्तर प्रदेश में जिलेवार गेहूँ की समर्थित समुन्नत जातियों की सूची

क्रम-संख्या	जिला	गेहूँ की किस्में सिंचित	असिंचित
१	अलमोड़ा पहाड़ी	एन. पी. ४, पडोवा १	एन. पी. ४, पं. ५६१ पडोवा २
२	गढ़वाल ,,	,, ,,	,, ,,
३	नैनीताल ,,	,, ,,	,, ,,
	नैनीताल (मैदान)	एन. पी. १२५, ए. ओ. ६८	एन.पी.१२५, पं५६१
४	देहरादून	पं.५६१, एन. पी १२५	एन पी. १२५, पं.५६१
५	बिजनौर	पं. ५६१, एन. पी. १६५	,, ,,
६	बरेली	सी. १३, एन. पी. १२५ सी. ४६,	सी. १३, एन. पी. १२५
७	पीलीभीत	पं. ५६१, एन. पी. १२५	एन. पी. १२५ पं. ५६१
८	खीरी	पं. ५६१, एन. पी. १२५	,, ,,
९	बहराइच	एन.पी.५२, एन.पी.१२५	एन.पी. १२५, एन.पी. ५२
१०	गोंडा	,, ,,	,, ,,
११	बस्ती	,, ,,	,, ,,
१२	गोरखपुर	एन.पी. ५२, एन.पी. १२५	एन.पी. १२५, एन.पी.५२
१३	देवरिया	,, ,,	,, ,,
१४	सहारनपुर	पं. ५६१, सी. १३, एन.पी.१६५	सी. ४६, पं. ४०६
१५	मुजफ्फर नगर	पं. ५६१ तथा सी. १३	सी. ४६ तथा पं. ४०६

३ विशेष विवरण के लिये खाद का अध्याय देखें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क्रम-सं.	जिला	गेहूँ की किस्में सिंचित	असिंचित
१६	मेरठ	पं. ५९१ तथा सी. १३	सी. ४६ तथा पं. ४०९
१७	मुरादाबाद	,, ,,	,, ,,
१८	बुलंदशहर	,, ,,	,, ,,
१९	अलीगढ़	,, ,,	,, ,,
२०	बदायूँ	,, ,,	,, ,,
२१	एटा	,, ,,	,, ,,
२२	मैनपुरी	,, ,,	,, ,,
२३	फर्रुखाबाद	,, ,,	,, ,,
२४	मथुरा	,, ,,	,, ,,
२५	आगरा	,, ,,	,, ,,
२६	जालौन	सी. १३	,, तथा बांसी सी. पी.
२७	झांसी	,, पं. ५९१, एन. पी. १२५	,, ,,
२८	हमीरपुर	,, ,,	टी. १०, खपली बांसी सी. पी बाँसी पल्ली ८०८ कठिया
२९	बांदा	पं.५९१ तथा एन.पी. १२५	बांसी सी. पी., बांसीपल्ली ८०८, तथा सी. ४६
३०	मिर्जापुर	एन.पी ५२,सी. १३, पं. ५९१	कठिया, बांसी सी. पी.
३१	शाहजहांपुर	सी. १३, एन. पी. १२५	सी ४६, पं. ६०९
३२	हरदोई	,, पं ५९१, एन पी. १२५	,, ,,
३३	सीतापुर	सी. १३ ,, ,,	,, तथा एन. पी. १२५
३४	लखनऊ	सी.१३पं५११,एन.पी.१२५	सी. ४६ तथा पं. ४०९
३५	बाराबंकी	,, ,, ,,	,, ,,
३६	रायबरेली	सी.१३ पं,५११, एन.पी.१२५	सी. ४६ तथा पं. ४०९
३७	उन्नाव	,, ,, ,,	,, ,,
३८	कानपुर	,, ,, ,,	,, ,,
३९	इटावा	,, ,, ,,	,, ,,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

		गेहूँ की किस्में	
क्रम-सं.	जिला	सिंचित	असिंचित
४०	फतेहपुर	सी.१३ पं.५११, एन.पी.१२५	सी. ४६ तथा पं. ४०६
४१	इलाहाबाद	,, ,, ,,	,, तथा एन पी १२५
४२	प्रतापगढ़	एन.पी. ५२, पं. ६ डी.	पं. ६ डी. ,,
४३	सुल्तानपुर	,, एन. पी. १२५	,,
४४	फैजाबाद	,, ,,	,,
४५	बनारस	,, ,, तथा एन. पी. १२	एन. पी. १२ ,,
४६	जौनपुर	,, ,,	,, ,, तथा एन.पी.५२
४७	गाजीपुर	,, ,,	,, ,, ,,
४८	आजमगढ़	,, ,,	,, ,, ,,
४६	बलिया	,, ,,	,, ,, ,,★

बुवाई—भिन्न२ प्रदेशों के लिये भिन्न२ परिमाण में बीज बोना लाभदायक सिद्ध हुआ है। जहाँ नमी अधिक होगी बीज वहाँ उतना ही अधिक डाला जायगा। साधारणतया प्रति एकड़ ३०सेरसे लेकर ६५ सेर तक गेहूँ का बीज गाँवों में बोया जाता है। प्रायः उत्तर प्रदेश में पूर्व में ५० से ६० सेर, मध्य में ४० से ४५ सेर, पश्चिम में ३५ से ४०सेर प्रति एकड़ तथा पंजाब में ३० से ३५ सेर प्रति एकड़ बोया जाता है। मालवा में प्रति एकड़ ३५ सेर बोया जाता है।

हमारे यहाँ बहुधा किसान, अधिकतर कृषक नारियाँ हल के पीछे बीज बोती चलती हैं। पौधे बिरदे और दूर-दूर न उगें

★ बिहार प्रान्त में पूसा नं. ५२, ८०, ५, ½ अ १५२, ११५, ६८, ४२ और ११३ किस्में अधिक होती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इससे बचने के लिये बीज समान रूप से बोना चाहिये। बुवाई सीधी कतारों में ६ इंच के फासले पर कूँड़ बनाकर करनी चाहिये। सूखी और हल्की भूमि में ३ इंच गहरी और भारी नम भूमि में १½ इंच या २ इंच गहरे बीज डालना चाहिये।

सीडड्रिल से बोने पर दाने का वितरण समान होता है और बीज की भी कुछ बचत होती है किन्तु यह बड़े फार्मों के लिये अधिक उपयोगी है।

डिबलर से बोने पर बीज भी कम लगता है और उपज भी अधिक होती है। इसमें १ दिन में ७-८ व्यक्ति एक एकड़ खेत बो देते हैं। किन्तु इससे बुवाई करते समय बीज की शुद्धता, खेत की नमी व खाद का ध्यान रखना चाहिये। इसमें सवा इंच गहरा बीज बोना चाहिये।*

गेहूं बोने के लिये चित्रा के अन्त में या स्वाती के प्रारंभ का समय अर्थात् अक्टूबर मास का तीसरा या चौथा सप्ताह विशेष रूप से अन्तिम दस दिन सर्वोत्तम हैं। जैसा कि अनुभवी किसान घाघ ने कहा है—

'चित्रा खेती अद्रा धान, न इनके गेरुई न उनके घाम'

इन दिनों में गेहूं बो देने से उसके दाने फरवरी के अन्त तक कुछ कड़े हो जाते हैं। इसी समय गेरुई का जोर होता है अतएव यह पौधे उसके असर से बच जाते हैं।

सिंचाई-निराई—खेत में नमी कम होने पर खेत को तैयार

---

* देखिये यंत्रों वाला अध्याय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करने से पूर्व एक सिंचाई आवश्यक है। सिंचाई में सुविधा रहे और सब जगह बराबर पानी पहुँचे इसके लिये बोने के चौथे-पाँचवें दिन क्यारियाँ बना लेनी चाहिये। बुवाई के २२ दिन पश्चात् जब पौधे ४-५ हो जायें तब पहली सींच आवश्यक है। महीने के अन्त तक इसे हो ही जाना चाहिये। खेत में ओट आने पर निराई अवश्य हो जाय। इसे हम किसी हल्के हेरो से जोत कर भी लाभ पहुँचा सकते हैं। दूसरी सिंचाई उस समय करनी चाहिये जबकि फसल में बालियाँ पूरी तौर से निकल आई हों। अक्टूबर में जो फसल बोई गई हो उसका यह समय जनवरी में पड़ेगा। जाड़ों में यदि वर्षा ठीक हो तो इतना पर्याप्त होगा नहीं तो एक या दो सींच और देनी चाहिये। किंतु यह स्मरण रखना चाहिये कि सिंचाई से तभी तक लाभ होता है जबतक कि दाने कठोर न पड़े हों। दूसरी सिंचाई के बाद यदि पुनः आवश्यकता प्रतीत हो तो खेत की निराई कर देनी चाहिये। पहली सींच के बाद ३०-३५ सेर प्रति एकड़ अमोनियम सल्फेट की खाद दे दो तो उपज में वृद्धि होती है।

रोग—गेहूं में गेरुई की बीमारी हर जगह लगती है। इससे बचने के लिये इस बीमारी से बची हुई उन्नतिशील, शीघ्र पकने वाली जातियाँ बोयें। बुवाई जल्दी ही कर दें। सिंचाई तथा खाद आवश्यकता से अधिक न होनी चाहिये। सुपर-फासफेट व हड्डी का चूरा देने से फसल जल्दी पकती है इसलिए इसका प्रयोग लाभकारी है। इसके अतिरिक्त कंडवा आदि की बीमारी भी लगती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है । इनके द्वारा ग्रसित पौधोंको उखाड़कर बाहर कर देनाचाहिये ।

कटाई तथा मड़ाई—गेहूं के बिल्कुल प जाने पर उसकी कटाई हँसिया या बड़े क्षेत्रों में रीपर से करनी चाहिये । जब बालियों के डंठल को थोड़ा ही झुकाने या मोड़ने से वह पट से टूट जाय तब काटने का उपयुक्त समय समझना चाहिये । यह समय मार्च के मध्य से अप्रैल के आरंभ तक का है ।

आँधी, पानी, आग आदि विपत्तियों से बचने के लिये मड़ाई शीघ्र से शीघ्र करनी चाहिये । लाँक अधिक होने पर ओल्पेड थ्रेशर के प्रयोग से कार्य शीघ्र तथा कम व्यय में आसानी से हो जायगा ।

उपज—दाना २०-३५ मन प्रति एकड़ तथा भूसा लगभग दुगना उत्पन्न होता है । बीज को साफ कर जब वह अच्छी तरह सूख जाय,उसे कोठे या बखारी में ठीक ढंगसे रख देना चाहिये ।

जौ

रबी की फसलों में गेहूं के बाद जौ का पहला नम्बर है । सभी धार्मिक कार्यों में इसका उपयोग सनातन से होता आया है और साधारण जनता के भोजन में इसका अधिक खर्च है । इससे शराब भी बनती है । भारतवर्ष में सर्वत्र इसकी खपत होती है किंतु उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश में इसकी पैदावार अधिक होती है । डाक्टरों और वैद्यों का मत है कि इसकी रोटी गेहूं से अधिक हलकी और सुपाच्य होती है ।

भूमि व तैयारी—यह गेहूँ से कम समय में पकनेवाली फसल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है और प्रायः हर किस्म की भूमि में अच्छी तरह पैदा होती है। इसके लिये खेत समतल, काफी जलोत्सरी तथा सामान्य उपज वाला होना चाहिये। यदि इसे भी सामान्य खेत में या मूँग नं० १ के साथ बोया जाय तो अधिक उपज होती है।

जौ के खेतों की तैयारी की ओर उतना ध्यान नहीं दिया जाता जितना कि करना चाहिये। गेहूं के समान ही खरीफ की फसल के बाद ही इसके खेत की तैयारी ारंभ कर देनी चाहिये। इसके लिये६-७जुताइयां पर्याप्त होती हैं। प्रारंभ में एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से कर देनी चाहिये। यह कुंवार के पूर्व ही होनी चाहिये। खेत में ढेले न रहें इसलिये पाटा देते रहना चाहिये। इस प्रकार बोने के समय खेत की मिट्टी मुलायम और भुरभुरी हो जायगी।

खाद–सर्व साधारण किसान का यह एक प्रचलित विश्वास है कि जौ के लिये खाद का अधिक महत्व नहीं है। यह उनकी भूल है, यद्यपि यह ठीक है कि जौ को गेहूँ से कुछ कम खाद की आवश्यकता है। एक एकड़ में लगभग २० सेर नत्रजन देनेवाली खाद पर्याप्त होती है। इतनी मात्रा हम१००मन गोबर की खाद या १० मन अन्डी अथवा मूंगफली की खाद देकर पूरा कर सकते हैं। २ मन अमोनियम सल्फेट भी इसकी पूर्ति कर सकती है।

बीज—जौ की उन्नत जातियां पहले से कानपुर २५१ व टाइप २१ है। कानपुर १२ व एन० पी० १३भी अच्छी साबित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुई हैं। सी० एन० २६४ बिना छिलके की जाति है जो गेहूं सी दिखाई पड़ती है। उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों में कौन२ सी जाति अनुकूल पड़ती है इसकी तालिका नीचे दी जाती है:—

जौ की समर्थित जातियों की तालिका

जिले	जौ की किस्में
अल्मोड़ा, गढ़वाल, नैनीताल	एन० पी० २१, सी० ८४
देहरादून, बिजनौर	एन० पी० २१, सी० २५१
बरेली	एन० पी० २१, सी० ५०
पीलीभीत, खीरी, बहराइच, गोंडा, बस्ती, गोरखपुर, देवरिया	एन० पी० २१ सी० २५१
सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, मुरादाबाद, बुलंदशहर, अलीगढ़, बदायूं, एटा, मैनपुरी,	सी० २५१
फरुखाबाद, मथुरा, आगरा, जालौन, झाँसी, हमीरपुर, बाँदा, मिर्जापुर,	सी० २५१ तथा सी० ८४
शाहजहांपुर, हरदोई, सीतापुर, लखनऊ, बाराबंकी, रायबरेली, उन्नाव, कानपुर, इटावा, फतेहपुर, इलाहाबाद, प्रतापगढ़, सुल्तानपुर, फ़ैजाबाद, बनारस, जौनपुर, गाजीपुर, आजमगढ़	सी० २५१ एन० पी० २१

बुवाई—खेत के तैयार होने पर चित्रा नक्षत्र के रहते ही अक्टूबर के पिछले पखवारे में इसे बो देना चाहिये। जैसा कि बताया जा चुका है कि जौ एक शीघ्र पकने वाली फसल है इसलिए यदि कारणवश अक्टूबर के अन्त तक न भी बोया जा सके तो कोई हानि नहीं। परन्तु नवम्बर के प्रथम सप्ताह में इसकी बुवाई हो जानी चाहिए। देर होने पर गेरुई का डर रहता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जौ की बुवाई में बीज का प्रयोग उचित मात्रा में करना चाहिए। नमी तथा मौसम की हालत के अनुसार बीज की मात्रा १ मन से लेकर एक मन १० सेर के भीतर बदलती रहती है। औसत एकड़ में १ मन और नमी की अधिकता तथा खराब मौसम होने पर ५० सेर बोना चाहिए।

गेहूँ की बुवाई के समान इसकी भी बुवाई ६ इंच की दूरी पर कूंड़ बनाकर अथवा बड़े खेतों में सीडड्रिल के द्वारा की जानी चाहिए।

सिंचाई निराई आदि—जौ के लिये दो सिंचाइयां पर्याप्त हैं। पहली सिंचाई बोने के लगभग एक माह बाद जब पौधे में कल्ले निकलने लगें और दूसरी जब कि फसल में बालियां पूरी तौर से लग आई हों। खर-पतवार अधिक होने पर पहली सिंचाई के बाद ओठ लगने पर स्पाइक हेरो चला देना चाहिए।

रोग—गेहूँ के समान जौ में भी गिरुई, कंडुवा और स्ट्राइप्स की बीमारियां हो जाती हैं। इनमें पहली से बचने के लिए उन्नतिशील जातियां बोनी चाहिए। कंडुवा के पौधों को बीन कर जला देना चाहिए। स्ट्राइप्स से बचने के लिये बोने से पूर्व ४-५ छटाक एग्रीसीन जी० एफ० २।। मन बीज में मिला दिया जाय।

जौ की फसल मार्च के मध्य या अन्त तक पक जाती है। सूखने पर बालियाँ मीसने पर दाने निकल आवें तब उसे काटना चाहिए। गेहूँ के समान पक जाने पर इसका डंठल झुकाने से टूट जाता है। उसी प्रकार इसकी भी मड़ाई कर सुरक्षित स्थान रख देना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपज--प्रति एकड़ औसत २०-२५ मन दाना और लगभग ४० मन भूसा की उपज संतोषजनक है ।

गेहूँ और जौ के बाद चने की फसल का नम्बर आता है । यह एक ऐसा उत्तम अनाज है कि लोग इसे कई प्रकार से खाते हैं । प्रारम्भ में लोग इसका साग नमक के साथ खाते हैं। इसके साग के खोटने से पौधे भी बढ़ते हैं । फिर बूट काम में आते हैं और पक जाने पर उससे नाना प्रकार के व्यन्जन बनाते हैं । इसकी खेती विशेष रूप से पंजाब और उत्तर प्रदेश में होती है । यह पशुओं के लिये भी पौष्टिक आहार है ।

भूमि और तैयारी--चना दूमट तथा मटियार भूमि में गेहूँ की भांति उत्पन्न होता है । यूँ यह भूड़, कछार की भूमि में भी पैदा किया जा सकता है । इसके लिए बहुत अधिक उपजाऊ भूमि आवश्यक नहीं है । साधारणतया मक्का, ज्वार तथा जल्द पकने वाला धान तथा सांवाँ आदि खरीफ की फसलें काटकर इसे बोया जाता है ।

इसके लिए चार पाँच जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं । चने की पैदावार के लिये ढेलेदार खेत ही उत्तम माना गया है । पुराने किसान घाघ का भी यही कहना है—

"जब सैल खटाखट बाजे, तब चना खूब ही गाजे"

अर्थात् खेत जोतने के समय जुयें के सैल ढेलों के कारण बजते रहें, ऐसा होने पर चने की पैदावार अच्छी होती है ।

खाद—पिछली फसल की बची हुई खाद इसके लिए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर्याप्त होती है। दूसरी बात यह है कि इसकी जड़ों की छोटी-छोटी गाँठों में उत्पन्न होने वाले कीटाणु उनमें नाइट्रोजन ले लेकर इकट्ठा करते हैं। फसल कटने के बाद भी यह उर्वराशक्ति शेष रहती है, अस्तु किसान को खेत जोत देना चाहिये जिससे यह अगली फसल की खाद के काम आये।

बीज—पैदावार में पूसा २५ और पूसा५८ देशी बीज से बहुत अच्छे प्रमाणित हुए हैं। टाइप नं० ८७ सबसे अच्छा माना जाता है। यह ४ मास में पक कर तैयार हो जाता है। देर में बुवाई करने पर भी इसकी पैदावार अच्छी होती है। इसकी अनेक जातियाँ होती हैं—भूरा,काला,पीला और काबुली सफेद।

औसत दर्जे के खेतों में ३०-३५ सेर प्रति एकड़ बीज पड़ता है। खेत में नमी अधिक होने पर १ मन तक डाला जा सकता है।

बुवाई—इसकी हथिया में और चित्रा नक्षत्र के प्रारम्भ में अर्थात् ७ अक्टूबर से १५ अक्टूबर तक होना चाहिए। घाघ की कहावत प्रसिद्ध है:—"चना चित्तरा चौगुना, स्वाती गेहूँ होय" अर्थात् चित्रा में चना और स्वाति नक्षत्र में गेहूँ बोने से अधिक पैदावार होती है। तालाबों तथा कछार भूमि में चना पिछड़कर भी बोया जाता है।

इसके बोने का ढंग यह है कि तैयार खेत में एक फिट की दूरी पर कूँड़ बनाकर बोवाई की जाय। यदि नमी अधिक हो तो पाटा न दिया जाय अन्यथा पाटा दे देना चाहिए। दो हिस्सा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जौ और एक हिस्सा चना मिलाकर भी बोया जा सकता है।

सिंचाई व निराई—खेत में घास हो जाने पर बड़ी२घास निकाल देनी चाहिए। वैसे साधारणतया निराई अथवा गुड़ाई की आवश्यकता नहीं रहती। सिंचाई की भी कम ही आवश्यकता होती है, किन्तु जाड़े में वर्षा न होने पर एक बार सिंचाई कर देनी चाहिए। रेतीली भूमि की सिंचाई के बाद गुड़ाई कर देना लाभदायक सिद्ध हुआ है।

रोग—इसमें हरे रंग की सूंडी जिसे कटवा भी कहते हैं, लग जाती है। इसके लिए १ भाग राख में एक भाग सोडियम फ्लूओसिलीसेट मिलाकर खेत में छिड़क देना चाहिए। फफूंदी और उकठा से बचने के लिए उन्नतिशील जातियाँ बोना चाहिए। फफूंदी के लिए 'जौचनी' (जौ चना मिला बीज) बोना भी लाभदायक है।

पाले से इसे बड़ी हानि होती है। इसलिए पाला गिरने से पूर्व इसकी सिंचाई कर दी जाय अथवा खेत के चारों ओर घास फूस जला कर खूब धुँवा किया जाय।

यह मार्च के अन्त तक पक जाता है। पक जाने पर हँसिया से काटकर खलिहान में लाकर बैलों अथवा ओल्पेड थ्रेशर से इसकी मड़ाई कर ली जाय और बीज साफ कर सुरक्षित स्थान में पहुँचा दिया जाय।

उपज—इसकी औसत पैदावार १५ मन प्रति एकड़ है परन्तु

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अच्छे खेतों में २० मन प्रति एकड़ तक उत्पन्न होता है और लगभग उतना ही भूसा भी होता है।

मटर

मटर की खेती भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में होती है। रबी की फसलों में गेहूं, जौ, चने के बाद इसीका नम्बर आता है। चने के समान इसका भी प्रयोग अनेक प्रकार से किया जाता है। यह परम पौष्टिक है। मटर अन्न के समान खाने के अलावा तरकारी के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। इसकी तरकारी बड़ी स्वादिष्ट होती है।

भूमि व तैयारी—खरीफ की फसलें विशेषकर धान, मक्का और बाजरा काटने के बाद उसी खेत में इसे बोना चाहिए। यह रेतीली और चिकनी मिट्टी को छोड़कर प्रत्येक भूमि में उत्पन्न होता है; दोमट भूमि में इसकी पैदावार विशेष होती है। कमजोर जमीन में इसे अकेला ही बोना चाहिए। अधिक पानी इसे अनुकूल नहीं पड़ता इसलिए नीची भूमि न होनी चाहिए।

यह फलीदार फसल है, इसलिए इसे चने के समान भी बोने से खेत की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है। खाद देने की विशेष आवश्यकता नहीं होती। साधारणतया इसकी चार पाँच जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं। पाटा चला देने से मिट्टी बारीक होकर नम बनी रहती है। विलायती मटर बोने पर जुताई जरा गहरी और अधिक करनी चाहिए। खेत बहुत कमज़ोर न हों तो खाद की विशेष आवश्यकता नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज—मटर दो प्रकार की होती है:—(१) देशी, (२) विलायती। देशी जातियों में टाइप १६३ सर्वोत्तम प्रमाणित हुई है। यह दाल के काम आती है, देर में बोने पर भी समय पर कट जाती है और पैदावार भी अच्छी होती है। विलायती टाइप में १२ और एन० पी० २६ सर्वोत्कृष्ट है। यह दोनों खाने में स्वादिष्ट होती हैं और इनकी छीमी भी बड़ी होती है।

यह एक एकड़ में ४० सेर पड़ती है। जौ के साथ १५ सेर प्रति एकड़ पड़ती है। ५०-६० मन गोबर की खाद प्रति एकड़ काफी है।

बुवाई—उन्नत मटर डेढ़ फीट की दूरी पर खुरपी की सहायता से सीधी लाइनों में बोनी चाहिए। इसे हल के पीछे कूंड़ में अथवा छिटकवां भी बोया जा सकता है विलायती मटर के जिए जहाँ बेल की झाड़ लगाने की सुविधा हो वहां दो लाइनें १॥ फुट और तीसरी २॥ फुट के अन्तर के क्रम से बोकर बीच में अरहर के सूखे पौधे, सरकंडे या नरकुल लगा कर बढ़ने पर, उन पर बेल चढ़ानी चाहिये। बुवाई का समय अक्टूबर नवम्बर के अन्त तक है।

सिंचाई व निराई—मटर में पानी हल्का ही देना चाहिए। जनवरी मास में वर्षा न होने पर एक सिंचाई कर देनी चाहिए, किंतु विलायती उन्नतिशील मटर को दो सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। लाइन से बोने पर हैंडहो का प्रयोग करना उत्तम है। खुरपी से भी निराई की जा सकती है। देशी मटर में केवल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घास उखाड़कर फेंक देनी चाहिए। चने के समान इसे भी पाले से हानि होती है, अस्तु उसी प्रकार इसकी रक्षा करनी चाहिए।

उपज—यह मार्च में पक जाती है। इसे प्रातः ही काटना चाहिए नहीं तो छीमी चटक जाती हैं। प्रति एकड़ १५-२० मन दाना व १०-१५ मन भूसा प्राप्त होता है।

मटर के कीड़े व बीमारियां—मटर का घुन बड़ा हानिकारक होता है। यह फली के अन्दर बीज को खा जाता है। बीज को कार्बन डाई-सल्फाइट का धुवां देकर बोना चाहिये। फंगस की बीमारी होने पर पौधे पीले पड़कर सूख जाते हैं। बोर्डेक्स मिक्सचर का छिड़काव कर तथा फसल को अदल बदलकर बोने से इनसे बचा जा सकता है। अधिक गर्मी होने पर पौधे के पत्तियों तथा अन्य भागों पर एक स्पष्ट सफेद तह दिखाई पड़ती है। पौधों की बाढ़ मारी जाती है और नष्ट होने लगते हैं। आरंभ में गंधक-पाउडर के दो तीन छिड़काव कर इससे बचा जा सकता है।

सरसों और लाही

सरसों—सरसों और लाही की खेती हमारे देश में सर्वत्र होती है। इसकी मांग विदेशों में भी बहुत है। इसकी दो जातियां होती हैं—(१) काली, (२) पीली। पीली में तेल अधिक निकलता है। तेल निकालने पर बची हुई खली पशुओं का अति पौष्टिक आहार है।

भूमि—इन्हें प्रायः गेहूँ, जौ, चना के साथ बोया जाता है। यह हलकी दूमट से लेकर मटियार जमीन तक में होती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
हैं। इनके लिये भूमि गेहूँ के समान ही तैयार करनी चाहिए। वैसे अकेला बोने पर ४-५ जुताइयां पर्याप्त हैं। लाही तराई क्षेत्र में अकेली ही बोई जाती है।

खाद—जिस फसल के साथ यह बोई जाय उसकी डाली हुई खाद ही इसके लिए पर्याप्त है। सरसों की अच्छी पैदावार के लिये खेत में लगभग १ मन चना डालना लाभप्रद है। अकेली फसल बोने पर प्रति एकड़ १०० मन गोबर की खाद काफी है।

बुवाई—अकेली बोयी जाने पर इसका बीज २॥ सेर प्रति एकड़ तथा मिलवां बोई जाने पर १ सेर के लगभग पड़ता है। इसकी बुवाई अधिकतर कूंड़ों में की जाती है। खेत में नमी की अधिकता होने पर छिटकवां बोना चाहिए।

बीज—सरसों नं० ३० पीली सरसों की एक चुनी हुई जाति है। उत्तर प्रदेशीय कृषि विभाग ने कुछ अन्य उन्नति प्राप्त सरसों के बीज प्रचलित किये हैं। उनमें से सरसों कानपुर नं० ११, ३, २, ६, ५ उन्नति प्राप्त जातियां हैं। कानपुर नं० ११ में ३६.२ प्रतिशत तेल निकलता है और पैदावार भी अच्छी होती है।

रोग—सरसों के बीज में माहू रोग लग जाने से पैदावार मारी जाती है। इसके कीड़े सरसों फूलने के समय कई दिन तक बदली के रहने पर अधिक जोर करते हैं। फसल को इससे बचाने के लिए तीन भाग राख और एक भाग गंधक मिला कर खेत में छिड़क देना चाहिए।

यह गेहूँ पकने के लगभग १ महीना पहले ही पक जाती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। इस समय खेत से इसके पौधों को हँसिया की सहायता से निकाल कर एक स्थान पर जमा कर देना चाहिये और मुँगरी या डंडे की सहायता से बीजों को निकाल लेना चाहिए। लाही और दुआँ सरसों की ही जाति के हैं और उसी प्रकार उनकी खेती होती है। दुआँ अकेला ही बोया जाता है।

राई

राई की फसल भी सरसों की तरह बोनी चाहिए। इन दोनों की भूमि, तैयारी, खाद तथा बुवाई आदि समान होती है।

अलसी

इसे कहीं कहीं तीसी भी कहा जाता है। इसका तेल बहुत उपयोगी होता है। रंग वार्निश साबुन बनाने के काम आता है। विदेशों को निर्यात करने की हमारी यह मूल्यवान सामग्री है। इसकी पैदावार मध्य प्रदेश में खूब होती है।

भूमि व तैयारी—यह मटियार या दूमट भूमि में विशेष रूप से होती है। किसान यों ही प्रथानुसार चनों में थोड़ी सी अलसी मिलाकर बो देते हैं, परन्तु इसके खेत की तैयारी गेहूँ के खेत के समान ही करनी चाहिए। मिट्टी में जलग्रहण करने की शक्ति अधिक होनी चाहिए।

बुवाई—फसल के साथ मिलाकर बोने से खेत के किनारे चारों ओर और बीच में ५-६ गज के अन्तर से बोते हैं। इसके बोने का समय ३० सितम्बर से १५ अक्टूबर तक का है। एक एकड़ में ७ से १० सेर तक बीज पड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज—अलसी नं० ११५० की पैदावार १५ से १७ मन प्रति एकड़ है। इसमें तेल भी ३८·८ प्रतिशत होता है। टाइप ४७७ छोटे बीज वाली जाति है। यह पूर्वी उत्तर प्रदेश में बोई जाती है। इसकी पैदावार १२ से २२ मन प्रति एकड़ होती है और इसमें तेल भी ४० प्रतिशत पाया जाता है।

सिंचाई आदि—जाड़े में वर्षा समय पर न होने पर एक सींच अवश्य कर देनी चाहिए। पैदावार बढ़ाने के लिये एक निराई तथा एक गुड़ाई लाभप्रद है। खाद साधारण गोबर की काफी है।

उपज—सूखने पर विशेषकर पछुवा हवा चलने पर इसकी बालियाँ गिर पड़ती हैं इसलिए मार्च के महीने में फसल के पूरी तरह सूखने से पूर्व ही कटाई आवश्यक है। पैदावार १२-१५ मन प्रति एकड़ तथा तेल ४०-४० प्रतिशत होता है।

इसमें गेरुई और उकठा से बचने के लिए उन्नतिशील जातियाँ बोनी चाहिए।

मसूर

चलतू दालों में मसूर ही एक ऐसी दाल है जो कि रबी की फसलों के साथ बोई जाती है। वैसे तो चना और मटर की भी दाल बनाते हैं।

इसका खेत भी गेहूँ आदि के समान होना चाहिए। ५-६ जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं। खाद मटर के समान देनी चाहिए। बुवाई दिवाली पर होती है। इसे प्रायः छिटकवाँ बोया जाता है, पाटा चलाकर ढक दिया जाता है। पैदावार १०–१५ मन प्रति एकड़ और उतना ही भूसा होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तम्बाकू

राजा से लेकर रंक तक सभी तम्बाकू का इस्तेमाल करते हैं। इसीलिये कहा गया है कि 'हुक्का तम्बाकू पान, इज्जते हिन्दुस्तान'। इसका प्रयोग हुक्का, सिगार, सिगरेट, बीड़ी और चिलम के द्वारा धूम्रपान एवं सूखी तम्बाकू में चूना मिलाकर खाने, पान की तम्बाकू तथा सुँघनी के रूप में होता है। तम्बाकू की पैदावार में भारतवर्ष का संसार में तीसरा स्थान है।

जातियां—इसकी अनेक जातियां होती हैं। कलकतिया (Nicotiana rustica) जाति की तम्बाकू का पौधा छोटा होता है। इसका फूल हल्का पीला, पत्तियां कुछ सिकुड़ी हुई तथा गोल होती हैं। कड़वी होने के कारण इसका प्रयोग हुक्के के रूप में अधिक होता है। देशी तम्बाकू (Nicotiana tabacum) का पौधा अपेक्षाकृत अधिक ऊँचा होता है। इसका फूल गुलाबी और पत्तियां चिकनी होती हैं। इसे कुटका के रूप में खाने में इस्तेमाल किया जाता है। सिगरेट का सर्वसाधारण में प्रचलित मार्का अमरीका की वरजीनियन किस्मों का (Virginian-varieties) होता है। इसके अतिरिक्त एडकाक (Adcock), कैश (Cash), हैरीसन स्पेशल (Harrison Special) तथा पूसा हाई ब्रिड्स (Pusa hybrids) सिगरेट की तम्बाकू की कुछ प्रमुख किस्में हैं। हाई ब्रिड्स नं. १४२ और ४७ तथा एडकाक उत्तम किस्में हैं।

अच्छी सिगरेट की तम्बाकू में भीनी सुगन्ध, भली-भांति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जलने वाली, रंग चमकदार हलका सुनहला, बढ़िया एकसा गढ़न एवं कुछ लोचदार होती है। तम्बाकू की खेती से लाभ उठाना अधिकतर किसान की योग्यता पर निर्भर करता है, इसलिये यह जरूरी है कि वह खेत की तैयारी, फसल के रख रखाव और बार्न (barn) में उसकी पत्ती के पकाने में होशियारी से काम लें।

भूमि तथा जलवायु—मिट्टी की बनावट तथा जलवायु का पत्ती के गुणों पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। कलकतिया तथा देशी तम्बाकू के लिये भूमि हलकी दोमट हो तो अधिक अच्छा रहता है। वैसे भारी दुमट में भी तम्बाकू की फसल होती है। लोने के विशेष अंशवाली भूमि जिसकी सिचाई खारी कुओं से होती हो, इसकी खेती के लिये सर्वश्रेष्ठ होती है। जहाँ तक सिगरेट की तम्बाकू का प्रश्न है, रेतीली व दुमट भूमि में रंगत व गढ़न में हल्की तथा कम निकोटीन वाली तम्बाकू होती है। यह सिगरेट बनाने के योग्य होती है। मटियार भूमि में होने वाली पत्ती अधिक स्याह, मोटी एवं भारी होती है। इसमें निकोटीन की मात्रा भी अधिक होती है। यह निम्न श्रेणी की सिगरेट बनाने, देशी तम्बाकू की भांति खाने, तथा पीने तथा नास के प्रयोग में आती है। गर्म तथा नम जलवायु में पत्तियां मोटी, गोंददार और सुगन्ध में अच्छी होती हैं। ठंडी जलवायु में पत्तियां बड़ी और पतली तो होती हैं पर इनमें सुगन्ध नहीं होती। पत्ती का मोटा अथवा पतला होना बहुधा स्थानीय वर्षा पर निर्भर करता है। जोरदार बरसात से इसकी पत्ती का गोंद घुल जाता है और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुगंध चली जाती है। तम्बाकू की काश्त के लिये सब से अच्छी मिट्टी वह है जो कि ऊँचे पर स्थित हो, जहाँ से पानी का निकास बढ़िया हो। गांजर भूमि भी तम्बाकू की खेती के हेतु अच्छी रहती है। सिगरेट की तम्बाकू के लिये गर्म-तर जलवायु और मामूली परन्तु सिलसिलेदार वर्षा की आवश्यकता है।

खाद—खाने तथा हुक्का पीने की तम्बाकू के लिये प्रति एकड़ ५०-६० पाउण्ड नाइट्रोजन युक्त खाद की आवश्यकता होती है। जहाँ खारी कुयें हैं, वहाँ एक गाड़ी लोना मिट्टी खड़ी फसल में दो बार छिड़कना चाहिये। पहली बार ७-८ इंच के पौधे होने पर और दूसरी बार एक महीने बाद। गोबर की खाद बोने से पूर्व और लोना सुपरफास्फेट आदि खड़ी फसल में देना चाहिये। सिगरेट की तम्बाकू के लिये हम को अधिक खाद की आवश्यकता नहीं होती। प्रति एकड़ १०० पौंड सुपर-फासफेट और ६० पौंड पोटाश दे देना पर्याप्त है। पौध लगाने के पूर्व नालियों में खाद देकर उन्हें पुनः बन्द कर देना चाहिये। ऊँचे पर स्थित पानी के अच्छे निकास और हलकी दुमट मिट्टी वाले खेतों में हरी खाद देने से लाभ होता है। पर मटियार या ऐसी भूमि जिसमें पानी भर जाता हो हरी खाद कभी नहीं देनी चाहिए।

खेत की तैयारी—तंबाकू की फसल के लिये मिट्टी भुर-भुरी होनी चाहिये। इसके लिये यह आवश्यक है कि मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करने के बाद देशी हल से ५-६ जुताइयाँ की जाँय। पहली जुताई के बाद खेत की घास फूस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीनकर साफ कर देनी चाहिये और प्रत्येक जुताई करने के बाद पाटा देते रहना चाहिये ताकि मिट्टी बारीक रहे।

क्यारियाँ व बियाड़—क्यारियों का स्थान ऐसी ऊँची जगह पर होना चाहिये जहाँ से पानी का निकास अच्छा हो। भूमि अच्छी और गहरी जुती हुई होना चाहिये। इसके पश्चात् काफी खाद लगभग १५० पौंड बढ़िया खाद प्रति १०० वर्ग गज की क्यारी के लिये देने की आवश्यकता होती है। कलकतिया और देशी की फसल में प्रति एकड़ दो ढाई सौ मन गोबर की खाद देनी चाहिये। उसके बाद ऐसी क्यारियाँ बना लें जो बीच में कुछ उठी और चारों ओर ढालू हों। प्रत्येक दो क्यारियों के बीच में एक नाली १॥ फीट चौड़ी और ६ इंच गहरी होनी चाहिए। क्यारी की चौड़ाई ४ या ५ फीट होनी चाहिये : क्यारियों के बीच की नालियाँ नाली और चलने के लिये रास्ता दोनों का काम देती हैं। इसके बाद तम्बाकू के बड़े अच्छे और वजनदार बीज चुन कर थोड़ी सी राख या मिट्टी में मिलाकर बो देना चाहिये। कलकतिया और देशी तम्बाकू के बीज प्रति एकड़ १ छटांक लगते हैं। सिगरेट की तम्बाकू के लिये १०० वर्ग फीट की क्यारी के लिये ½ से ½ औंस बीज काफी है। इसकी बियाड़ एक एकड़ खेत के लिये काफी होती है। कलकतिया और देशी तंबाकू की बियाड़ के बीज सितम्बर के प्रारंभ में और दिसम्बर के अन्त में बोये जाते हैं। बुन्देल-खंड में बीज जून के पहले पखवारे से अगस्त के पहले पखवारे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तक बोया जाता है। सिगरेट वाली एडकाक तम्बाकू की बियाड़ देशी की अपेक्षा देर में उगती है अतः इन्हें देशी से दो सप्ताह पूर्व अगस्त के दूसरे पखवारे तक बो देना चाहिये। एकसा बोने के बाद खुरपी की नोक से बहुत हलकी गोड़ाई कर देनी चाहिए ताकि बीज मिट्टी से ढक जाय और इसके बाद किसी मामूली बेलन से क्यारी की मिट्टी कुछ दबा देनी चाहिये। बीज ज्यादा गहरा न दबना चाहिये और क्यारी में नमी हो परंतु तर न हो। न तो क्यारियों का दोपहर में बिलकुल सूख जाना ही अच्छा है और न सबेरे के समय उनका बिलकुल तर ही होना अन्यथा बीज का जमाव एकसा नहीं होता।

बोवाई के पश्चात् उसकी गोड़ाई, निराई एवं सिंचाई बहुत आवश्यक है। इसे अत्यन्त चतुराई के साथ करना चाहिये। जब बियाड़ में दो चार पत्तियाँ निकलें तो ऊपरी मिट्टी की हलकी गुड़ाई कर देना चाहिये और जैसे-जैसे बियाड़ बढ़े, थोड़ी थोड़ी ताजी मिट्टी समय २ पर बे-बोई हुई क्यारी से लेकर बियाड़ के ऊपर छिड़क दें। इससे वर्षा से बही हुई मिट्टी की कमी पूरी हो जाती है। यदि बियावड़ घनी हो तो बहुधा एक या दो बार उसको विररी करने की आवश्यकता होती है। इसके लिये यदि पौधों के मध्य दो दो इंच का फासला हो तो अच्छा है।*

---

* प्रायः तम्बाकू मे फफूँदी, पीथियम और राइजोकटानिया द्वारा गलता का रोग लग जाता है। खेत में अधिक तरी होना इसका बहुत बड़ा कारण है। इससे बचने के लिये फसल के हलके छप्पर या पाल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेड़ की रोपाई—कलकतिया और देशी तम्बाकू की बियाड़ बोने के लगभग १ महीने बाद जब उसमें ५-६ पत्तियाँ आ जाती हैं तो रोपने के योग्य हो जाती हैं। सितम्बर में बोयी पौध अक्तूबर और दिसम्बर की फरवरी में रोपने लायक हो जाती है। बुन्देलखण्ड में रोपाई का काम अगस्त से अक्तूबर तक होता है।

सिगरेट की तम्बाकू की बियाड़ लगभग छै सप्ताह में लगाने योग्य होती है। जब पौध चार पाँच इंच ऊँची तथा पाँच पत्तियों वाली हो जाय तो उसे लगा देना चाहिये। बेड़ लगाने के लिये अधिकतर तीसरे पहर का समय अच्छा होता है ताकि रात्रि के समय पौधों को ठंडी ओस मिल सके। बियाड़ से पौधों को उखाड़ते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि जड़ों को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचे। खेत में पौध लगाने के ८ व ६ घण्टे के पहिले बियाड़ की क्यारियों को अच्छी तरह से सींच दें इससे मिट्टी ढीली पड़ जाती है, और पौधे अत्यन्त सुगमतापूर्वक निकल आते हैं। पौधे खुरपी द्वारा निकाल कर, टोकनियों में खेत के पास ले जाकर, लाइनों में इस प्रकार लगा देना चाहिए कि एक लाइन से दूसरी लाइन के मध्य ३ फीट और एक पौधे से दूसरे पौधे के मध्य दो फीट का अन्तर हो। पौधों को क्यारी से निकालने के समय यह

से पानी बरसने और रात के समय ढक देना चाहिये और धूप होने पर तुरन्त हटा देना चाहिये। लोना अधिक होने पर यदि पौधे मरने लगें तो ऊपरी मिट्टी हटा कर और मिट्टी डाल देनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहुधा लाभदायक होगा कि खेत में लगाने के पहिले उनकी जड़ों को पेरिस ग्रीन के पाँच प्रतिशत घोल में डुबो लें। इससे कीड़ों और फफूँदियों से उत्पन्न होने वाले रोगों का प्रभाव जड़ों पर नहीं होने पाता। पौध लगाने के पश्चात् तुरन्त ही खेत की सिंचाई कर देनी चाहिए और जब तक पौधे भली भाँति लग न जाँय तब तक सिंचाई आवश्यकतानुसार समय २ पर करते रहना चाहिये। पीने वाली तम्बाकू की सिंचाई खारे पानी से करना अच्छा रहता है। ३ से ८ सिचाइयाँ करनी आवश्यक हैं।

खेत में यदि पौधे मर जाँय तो फौरन ही उनकी जगह नये और ताजे पौधे क्यारी से लेकर लगा देना चाहिए। क्योंकि जहाँ तक हो सके पौधे के खेत में जड़ पकड़ने तक धूप से बचाने के लिये उन पर कुछ साया कर देना चाहिये।

तम्बाकू की फसल काफी तादाद में हवा चाहती है, और खेत रुक जाने तथा हवा की कमी से इसको बहुत हानि पहुँचती है इसलिये प्रत्येक सिंचाई के बाद गुड़ाई करना चाहिये। मैककारमिक कल्टीवेटर से गुड़ाई करना अच्छा रहता है। फफूँद तथा कीड़ों से उत्पन्न होनेवाली बीमारियों के प्रति सदैव सजग रहना चाहिये।

फुनगी का खोटना—फुनगी तथा कनाईयों के तोड़ने के मामले में हमको केवल अनुभव से ही काम लेना पड़ता है। तोड़ना या न तोड़ना प्रायः मिट्टी की दशा, पौधे की बढ़ाव की हालत तथा तम्बाकू की किस्मों के ऊपर निर्भर होता है। सिगरेट की किस्मों के लिये पतली पत्तियों की आवश्यकता होती है,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिससे कि वह बार्न में चमकीली पीली रंग की पक सकें। इसके लिये हद से ज्यादा मोटी तथा पतली दोनों किस्मों की पत्तियाँ ठीक नहीं होती हैं। यदि पत्तियों का रुख अधिक पतली होने की ओर हो तो फुनगी के तोड़ने से पयिताँ औसत दरजे की मोटाई की, की जा सकती हैं। इसी प्रकार मटियार जमीनों में और अधिक खाद वाली मिट्टियों में, जिनमें कि पत्तियों की बाढ़ अधिक तेज हो, और उनका रुख मोटी होने की ओर हो, तो ऐसी दशा में फुनगी तोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं होगी; परन्तु हलकी दुमट जमीनों में जिनमें कि बाढ़ काफी अच्छी न हो और पत्तियों का रुख अधिक पतली होने की ओर हो तो फुनगी तोड़ने से पत्तियाँ वैसी ही हो सकती हैं, जैसी कि हम चाहते हों। देशी और कलकतिया तम्बाकू के कल्ले १॥ महीने बाद फूटने लगते हैं। इन्हें तोड़ देना चाहिये वरना पत्तियाँ छोटी रह जाने का भय रहता है। पौधे में ८–१० पत्तियाँ आने के बाद जब फूल लगें तो उनकी फुनगी तोड़ दें। एक पेड़ में ८-१० से अधिक पत्तियाँ न रहने देना चाहिये।

फसल की तैयारी—तम्बाकू के खेत में पत्ती की रंगत का परिवर्तन यह बतला देता है कि पत्ती कब तोड़ी जानी चाहिये। इसकी कटाई में पत्ती एक२ करके नीचे से ऊपर को तोड़ी जाती है। केवल पकी हुई पत्तियाँ जिनका कि रंग एकसा हो और पत्ती के ऊपर गोंद हो, यानी जिनमें हरे से कुछ कुछ पीलापन आ गया हो, वही पत्तियाँ तोड़ लेनी चाहिए। हरी पत्तियाँ अथवा ज्यादा पकी हुई पत्तियाँ दो में से कोई भी किस्म की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पत्तियाँ ठीक नहीं होतीं, और ऐसी पत्तियों को तोड़ना नहीं चाहिये, क्योंकि यह पत्तियाँ ठीक नहीं पक सकतीं। हरी पत्तियाँ बार्न में हरी रह जावेंगी और आखीर में कत्थई रंग की हो जावेंगी और ज्यादा पीली पत्तियाँ जल्द पीली होकर आखीर में लाल हो जावेंगी। पत्तियाँ केवल उतनी ही तोड़नी चाहिये जितनी की बार्न में भरी जा सकें। अधिक न तोड़नी चाहिये वरना खराब जावेंगी। यदि वर्षा अधिक हो जाय तो पत्ती को उस समय तक न तोड़े जब तक कि पत्तियों पर फिर से गोंद न जम जाय। पत्ती अधिकतर प्रातःकाल तोड़ना चाहिए जब कि पत्तियों की सतह पर अधिक से अधिक ओस हो।*

पत्तियों की रचाई—पत्तियाँ (१) गढ़े में ढेर लगाकर और (२) कमरे में ढेर लगा कर दोनों ही प्रकार से रचाई जाती हैं। दोनों ही दशाओं में ढेर गोलाकार लगाना चाहिये और पत्तियों की नोक भीतर की ओर रहनी चाहिये। तत्पश्चात् ढेरों को कपड़े या टाट से ढक देना चाहिये। तीसरे चौथे दिन यह देखते रहना चाहिये कि पत्तियाँ कहीं अधिक गर्म तो नहीं हो गई हैं। यदि अधिक गर्म हो गई हों तो उन्हें उस स्थान से कुछ हटाकर ढेरी को उलट पलट कर पुनः लगा दें। जब तक

* वर्जीनियन तम्बाकू की पत्तियाँ इस प्रकार चुन-चुन कर बार्न के पास साये में लेआई जाती हैं जहाँ कि वह सुतलियों में पोहकर छड़ियों में लटका कर बार्न में पकने (curing) के लिये चुन दी जाती हैं। बार्न में पश्चिम से भट्ठो द्वारा गर्मी पहुँचाकर पत्ती पकाई जाती है। भट्ठी से गर्मी बार्न के अन्दर १२ इन्ची मोटे पाइपों द्वारा पहुंचाई जाती है। ये पाइप कमरे में चारों ओर फैले होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
तम्बाकू में कुछ धास न आ जाय और पत्तियों का रंग सुनहरा न हो जाय, यह उलट फेर करते रहना चाहिये। खानी की तम्बाकू की दस दस पत्तियों की गड्डियाँ बनाकर सुखाने के लिये डाल दिया जाता है।

वर्जीनिया की तम्बाकू और सिगरेट की अन्य उत्तम किस्मों को पकाने व तैयार करने के लिये अलग विधि काम में लाई जाती है जो निम्नानुसार है—

पत्ती का पकाना प्रायः चार भागों में विभाजित किया जा सकता है:—

(१) पत्ती में पीला रंग लाना:—पत्तियों में अधिक से अधिक मात्रा में नमी वर्तमान होना चाहिये ताकि पत्तियाँ ३० से लेकर ३६ घण्टे जीवित रह सकें। पत्तियां बार्न में चुन देने के पश्चात् सब खिड़कियां, दरवाजे तथा झरोखे आदि बन्द कर देना चाहिये और भट्ठी में अग्नि जलाकर बार्न चालू कर देना चाहिये। इस समय बार्न में गर्मी ७०°F होना चाहिये और फिर बहुत धीरे २ गर्मी को ७९°F तक पहुँचा दें। आरम्भ में प्रथम १२ घण्टे तक बार्न का थरमामीटर (गर्मी) ७९°F से ८३°F तक, दो डिग्री प्रति घण्टे या तीन डिग्री प्रति दो घण्टे के हिसाब से बढ़ाते रहना चाहिये। १२ से १४ घंटे तक गर्मी ९८°F से १००°F तक रखना चाहिये और जब पत्तियाँ ७५ व ८० प्रतिशत पीली हों तो समझना चाहिये कि पीला होने का स्टेज अन्त हो गया।

(२) रंग पक्का करना:—पत्ती जो कुछ रंगत प्रथम स्टेज में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
ला चुकी है, वह रंगत इस क्रिया में पक्की हो जाती है। इसमें आरंभ में १००°F की गर्मी और अन्त में १२०°F से १२५°F तक की गर्मी की आवश्यकता है। पत्ती का ठीक प्रकार से पकना इसी स्टेज पर निर्भर है अतः इस स्टेज में अत्यन्त विचार तथा ध्यानपूर्वक कार्य करना चाहिये।

(३) पत्ती का अंतिम पकावः—इसके बाद तीन से छै घंटे के अन्दर गर्मी १२०°F से १२८°F तक बढ़ा दी जाती है, और फिर बारह घंटे के अन्दर १६० °F तक तीन डिग्री फी घण्टे के हिसाब से बढ़ाते ले जाते हैं। इससे पत्ती बिल्कुल सूख कर चुरचुरी हो जाती है और रीढ़ का सूखना प्रारम्भ हो जाता है।

(४) रीढ़ का सूखना—जब तक कि पत्ती की रीढ़ सिरे तक सूख नहीं जाती तब तक बार्न में १५८°F से १६०°F तक की गर्मी बराबर रक्खी जाती हैं। जब रीढ़ भी सूख जाय तो समझ लेना चाहिये कि पत्ती पक गई और पत्ती के पकाने का कार्य समाप्त हो गया। अब भट्ठी में आग देना बन्द कर देना चाहिये और बार्न को ठण्डा होने के लिये छोड़ देना चाहिये। इस प्रकार पत्ती लगभग पाँच दिन में पक जाती है। बार्न ठण्डे होने पर, जब पत्ती मुलायम पड़ जाय तो बार्न से छड़ियां उतार कर गोदाम में ले जाई जाती हैं, जहां कि पत्तियां निकाल कर एकत्रित करने के पश्चात् बाजार में बेचने के लिये बांध दी जाती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खरीफ की फसलें

वर्षा प्रारम्भ होते ही लगभग २२-२३ जून के बाद खरीफ की फसलें खेतों में बोई जाती हैं। अगली रबी की फसल की तैयारी भी इसी समय से प्रारंभ होती है। खरीफ में बोई जाने वाली फसलों में मक्का, ज्वार, बाजरा, सावाँ, काकुन, मड़वा, मदैला, शीघ्र पकने वाली मूँग, कोदो, धान आदि हैं। धान पर अलग अध्याय दिया गया है।

मक्का

इसका उपयोग अमीर और गरीब सभी करते हैं और भारत के सभी भागों में इसकी खेती होती है। इसे चावल व रोटी के रूप में तथा हरी व सूखी भून कर प्रयोग करते हैं। इसके हरे भुट्टे बड़े स्वादिष्ट होते हैं। यह भारत की पुरानी फसल नहीं है। १८ वीं शताब्दी में इसका बीज भारत आया और यह मुसलमान बादशाहों के राज्यकाल में भारत में फैलने लगी। सम्भवतः इसी कारण इसका नाम अरब के नगर मक्का के नाम पर पड़ा।

भूमि—मक्का के लिए दोमट भूमि जिसमें पानी न रुकता हो अच्छी होती है। इसकी रखवाली के दृष्टिकोण से गाँव के निकट ही इसका खेत चुनना चाहिये।

खाद—अच्छी पैदावार के लिये अधिक मात्रा में खाद देना आवश्यक है। इसे नत्रजन की अधिक आवश्यकता होती है। इसके खेत में ३०-३५ गाड़ी गोबर की खाद पर्याप्त है। इसके

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभाव में १०–१५ गाड़ी गोबर की खाद में १०–१२ मन अन्डी या मूँगफली की खली मिलाकर डाल देना चाहिये। विशेष दशा में पौधों के ६ इंच के हो जाने पर १ मन प्रति एकड़ हिसाब से अमोनियम सल्फेट कतारों में पौधों की जड़ों के पास डाल देना चाहिए।

जुताई—रबी की फसल के बाद गर्मी के दिनों में मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करने के बाद पुनः उसी कूँड़ में उसका मिट्टी पलटने वाला भाग (मोल्ड बोर्ड) निकाल कर जुताई करनी चाहिए। इस प्रकार पाँच जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं। खेत की भूमि १० इंच पोली हो जानी चाहिये।

बीज व बुवाई—पिछली फसल के नीरोग तथा छटे हुए भुट्टों से हाथ से ही बीज निकालने चाहिये। भुट्टे पिछली फसल में छाँट कर बिना छिल्का उतारे हवा में टाँग देने चाहिये। मशीन अथवा कूट कर निकाले हुये बीज न बोने चाहिये। मक्के को हम खुरपी से अथवा हल के पीछे बीज डालकर बो सकते हैं। इसको कतार में बोना चाहिये। इससे निराई में सुविधा रहती है। कतार दो फुट पर होनी चाहिये और कतार में पौधे लगभग एक-एक फुट पर हों।

पानी की सुविधा होने पर इसकी बुवाई जून के प्रथम सप्ताह में ही करनी चाहिये। इससे पैदावार भी अच्छी होती है। जल की सुविधा न होने पर प्रथम वर्षा के साथ ही इसे बो देना चाहिये। इस प्रकार इसकी बुवाई अपनी-अपनी सुविधानुसार मई से शुरू जुलाई तक होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परीक्षण के द्वारा टाइप नं० ४१ सर्वश्रेष्ठ प्रमाणित हुई है। इसकी पैदावार २५–३० मन के लगभग होती है। ३ माह में तैयार होती है। इसके अतिरिक्त मक्का नं० ६,१०,१३ और १७ भी उन्नत बीज हैं। प्रथम के अभाव में इन्हें बोना चाहिये। इसका बीज ६ से ८ सेर प्रति एकड़ लगता है। बड़े दाने का बीज अधिक और छोटे दाने का कम लगता है।

निराई—इसकी निराई और गुड़ाई बहुत आवश्यक होती है। हर सिंचाई या वर्षा के बाद ओठ आने पर हैंडहो, कल्टीवेटर अथवा देशी हल से निराई करादें। इसकी मिट्टी जहाँ तक हो सदैव भुरभुरी रहे और खरपतवार खेत में न रहने पावे।

सिंचाई—पलेवा देकर बोई हुई फसल को वर्षा होने तक दो वार सींच देना चाहिये।

उपज—एक एकड़ में १५००० से १८००० भुट्टे और २० से ३५ मन दाना प्राप्त होता है। चारा भी ६०-७० मन होता है।

रखवारी—मक्के को तोते, कौवे आदि, गीदड़, जंगली सुवर तथा आदमी आदि सभी नुकसान पहुँचाते हैं। जब से भुट्टा निकलना प्रारम्भ हो तभी से रखवाली आरम्भ कर देना चाहिये।

तैयारी—भून कर खाने के लिये दूध पड़ने के बाद भुट्टों को तोड़ लेना चाहिये और अनाज के लिये पूरी तरह पक जाने पर मशीन से अथवा कूटकर दाने अलग कर लेना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भुट्टे शुरू अगस्त में तैयार हो जाते हैं और दानेवाली फसल सितम्बर तक तैयार होती है।

ज्वार

यह खरीफ की एक प्रमुख फसल है। राजपूताना तथा दक्षिणी भारत में इसका उत्पादन सर्वाधिक होता है। अन्न के साथ ही इसकी करबी चारे के काम आती है।

भूमि व तैयारी—भूड़ से लेकर दूमट जमीन तक में यह उत्पन्न होती है। वैसे दोमट और हल्की मटियार भूमि उपयुक्त है। खेत में पानी के निकास का प्रबन्ध होना जरूरी है। इसे बोने के लिये ३-४ जुताइयां आवश्यक हैं। एक जुताई गर्मियों में मिट्टी पलटने वाले हल से कर देने से अधिक लाभ होता है।

खाद—खेत की तैयारी करने से पूर्व २००मन प्रति एकड़ के हिसाब से गोबर या कम्पोस्ट की खाद डाल देना चाहिये। खाद वर्षा होते ही खेत में पहुँचा देनी चाहिये। बरसीम अथवा चने कटने के बाद इसे बोने से उपज अच्छी होती है।

बीज—दाने के लिये बोने पर इसका बीज ७-८ सेर प्रति एकड़ के हिसाब से डाला जाता है। चारे के लिये १५-२० सेर प्रति एकड़ पर्याप्त होता है। इसे बहुधा अरहर, उरद, मूँग, लोबिया के साथ मिलाकर बोते हैं। ज्वार की कई जातियां होती हैं। सफेद एक दानियां और दो दानियां, लाल एक दानियां और दो दानियां, मैली एक दानियां और दो दानियां आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनके अतिरिक्त बुन्देलखंड में चौरी और अनहरी जाति बाई जाती है।

इनमें ज्वार नं० ८ बी०, ज्वार नं० ५ टाल तथा नं० ९, नं० ३ सी० तथा नं० ५ उन्नतिशील जातियाँ हैं जो कृषि विभाग द्वारा प्रचलित की गई हैं। इनमें से प्रथम दो सर्वोत्कृष्ट हैं। १२ सेर से १५ सेर बीज प्रति एकड़ लगता है।

बुवाई—यह छिटकवाँ और हल के पीछे कूँड़ बनाकर, दोनों प्रकार बोयी जाती है। अनुभव से यह सिद्ध हुआ है कि लाइन से बोने पर अधिक लाभ होता है। अरहर के साथ मिलाकर बोने के लिये दो-दो फुट पर पंक्तियों में ज्वार तथा अरहर बो देनी चाहिये, इस प्रकार दो पौधों के बीच का फासला १ फुट रहेगा। इससे निराई आदि में सुविधा रहेगी। जून के अंत तक इसकी बुवाई हो जानी चाहिये।

सिचाई निराई—ज्वार की सिंचाई नहीं की जाती। पर यदि वर्षा न होने पर एक सिंचाई करदी जाय तो फसल अच्छी होती है। पौधों के ७-८ इंच के हो जाने पर खुरपी से और लाइन में बोये गए खेतों में कल्टीवेटर या देशी हल से निराई कर देने से बाढ़ पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

रोग—प्रायः गर्मियों में बोई गई चारे की फसल में एक तरह का विष उत्पन्न हो जाता है। इसका असर वर्षा हो जाने के बाद खत्म होता है। इसके खाने से पशु मर जाते हैं इसलिये इसे वर्षा के बाद ही जानवरों को खिलाना चाहिये। कंडुवा की बीमारी में दाने के स्थान पर गुलाबी रंग के दाने की शक्ल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की लाल-लाल थैलियाँ सी बन जाती हैं। इसके निवारण के लिये बोने के पूर्व बीज को तूतिये के पानी में १५ मिनट तक भिगो लेना चाहिये। ५-६ सेर बीज के लिये ३ सेर पानी में ३ तोला तूतिया पर्याप्त होता है। सूँडी लग जाने पर कीड़े लगे हुये पौधों को उखाड़ कर फेंक देना चाहिये।

तैयारी—दाने की फसल अक्तूबर के अंत और नवम्बर के शुरू में पक जाती है। भुट्टों से मड़नी झाड़कर बीज निकाल लेते हैं। दाना पड़ने के तीन सप्ताह बाद चिड़ियों से फसल की रखवाली करनी पड़ती है।

उपज—एक एकड़ में १५-२० मन अन्न की उपज होती है। साथ ही ५०-६० मन सूखी करबी भी प्राप्त होती है। हरी करबी चारे के काटने पर एक एकड़ में ढ़ाई तीन सौ मन मिलती है।

बाजरा

बाजरा एक गर्म तथा पौष्टिक भोज्य पदार्थ है। इसकी फसल अन्न की दृष्टि से ज्वार से उच्च श्रेणी की मानी गई है। अधिक वर्षा वाले प्रदेशों को छोड़ कर यह पूरे भारतवर्ष में होता है। राजस्थान की तो यह मुख्य उपज है।

भूमि की तैयारी—हल्की भूड़ अथवा दोमट भूमि बाजरे के लिये अच्छी मानी जाती है किन्तु खेत में पानी के निकास की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिये। इसकी फसल के लिये ३-४ जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से कर देनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज व बुवाई—उपज की दृष्टि से उत्तर प्रदेशीय कृषि विभाग बाजरा नं. ४,११,१२,१६, १८ बोने की सलाह देता है। इसकी फसल जुलाई के दूसरे पखवारे में बोई जाती है। अच्छे किसान इसे पुष्य नक्षत्र में ही बोते हैं। ज्वार के समान लोग इसे भी मूँग, अरहर, लोबिया आदि के साथ मिलाकर बोते हैं। मिलवाँ बोने पर १ सेर से डेढ़ सेर तक और अकेला होने पर २-३ सेर बीज प्रति एकड़ पड़ता है। चारे के लिये बोने में लगभग ४ सेर बीज डालना चाहिए।

खाद—बहुत कमजोर खेत में ५०-६० मन गोबर की खाद पर्याप्त होती है। बरसात के शुरू में इसे खेत में फैला देना चाहिये और खेत की तैयारी के समय मिला दें।

साधारणतया इसके बीज खेत में छिटकाकर पाटा दे दिया जाता है, परन्तु इसे एक फुट की लाइनों में बोने से फसल भी अच्छी होती है और निराई आदि की सुविधा भी रहती है।

पौधों के ६ इंच के होने पर हैरो या देशी हल से गुड़ाई कर देनी चाहिए। इससे फसल जोरदार हो जायगी। साधारण तया इसकी सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती।

रोग—ज्वार के समान इसमें भी कंडुवा की बीमारी जोर पकड़ती है। इसलिए उसी प्रकार इसका निरोध करना चाहिए। प्रायः इसकी बाली के दानों के स्थान पर पत्तियाँ निकल आती हैं और बाद को यह पत्तियाँ फटकर तागे के रूप में बदल जाती हैं। ऐसे पौधों को उखाड़ फेंकना चाहिए।

उपज—अक्टूबर के अन्त और नवम्बर शुरू तक फसल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पक कर तैयार हो जाती है। इसे अकेले बोने पर इसकी उपज लगभग १५ मन प्रति एकड़ हो जाती है। साथ ही ५०-६० मन करबी भी मिल जाती है। यह चारे के काम आती है।

साँवाँ

खरीफ़ में बोई जानेवाली फसलों में साँवाँ, काकुन और मेड़वा आदि ऐसी फसलें हैं जो मक्का के समान २ मास के अन्दर ही पक जाती हैं। कहावत प्रसिद्ध है कि यदि रोज थोड़ी बहुत वर्षा होती रहे तो साँवाँ और साठी धान साठ दिन में तैयार हो जाते हैं।* इसका दाना चावल के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। हिन्दू लोग इसे 'नवा अन्न' के पूजन में ग्रहण करते हैं।

भूमि व तैयारी—हल्के किस्म की भूमि इसके लिये उपयुक्त होती है। इसे साधारणतया किसान ज्वार या मड़ैला के साथ मिला कर बोते हैं। यह अकेले भी बोया जाता है। मक्का आदि के समान इसके खेत की तैयारी करनी चाहिये।

बुवाई—इसकी बुवाई भी वर्षारम्भ होते ही शुरू जुलाई तक हो जानी चाहिये। इसका बीज २॥ से तीन सेर प्रति एकड़ पड़ता है। इसे अधिकतर छिटकाकर बोते हैं। वैसे बुवाई १ फुट के अन्तर से पंक्तियों में हल के पीछे करनी चाहिये। ओठ आने पर इसकी भी निराई तथा गुड़ाई करते रहना चाहिये।

खाद—सामान्य उपजाऊ खेत में ५०-६० मन गोबर या

* "साँवाँ साठी साठ दिना, जब दैव बरीसे रात दिना।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कम्पोस्ट की खाद पर्याप्त होती है। निर्बल खेत में ३०-४० पौंड नाइट्रोजन, ८० से १०० मन गोबर या नाइट्रोजन की खाद प्रति एकड़ देना चाहिये।

उपज—इसका दाना बहुत महीन होता है। इसकी पैदावार १०-१२ मन प्रति एकड़ हो जाती है। नागपंचमी तक बुवाई के १॥-२ माह के अन्दर फसल पक कर तैयार हो जाती है।

जेठऊ साँवाँ इसकी जाड़े में होने वाली जाति है। इसे वर्षा के बाद जाड़ों में बोया जाता है। पानी न बरसने पर इसकी सिंचाई करते रहना चाहिये। इसे चेना भी कहते हैं। चेना की फसल पर हमने आगे प्रकाश डाला है।

मडुवा

इसे मकरा और दक्षिणी भारत में 'राजी' कहते हैं। साँवाँ के समान यह भी एक शीघ्र पकनेवाली फसल है। गरीबों का यह विशेष भोजन है।

भूमि और तैयारी—यह हर प्रकार की भूमि में तैयार होता है। बरसात के प्रारंभ में ३-४ जुताइयाँ काफी होती हैं।

खाद—अच्छी फसल प्राप्त करने के लिये ७०-८० मन गोबर या कम्पोस्ट की खाद काफी होती है। वैसे साधारणतया किसान मडुवा की फसल में खाद नहीं देते।

बीज व बुवाई—कहीं-कहीं इसकी खेती धान की तरह बेड़ लगाकर होती है। मई-जून में किसी जल सुलभ स्थान में इसकी बेड़ बो देते हैं और १-१॥ महीने बाद जब बेड़ तैयार हो जाती है तो खेत जोत कर और पाटा देकर धान के समान उसे लगा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देते हैं। यदि बेड़ द्वारा बुवाई करना हो तो शुरू बरसात की ३–४ जुताइयों के बाद ४--५ सेर बीज प्रति एकड़ छिटक कर बो दिया जाता है। फसल की २–३ निराइयाँ कर देनी चाहिये।

कटाई आदि—इसकी फसल काट कर रबी की तैयारी होती है। इसकी फसल सितम्बर में पककर तैयार हो जाती है। इसका अन्न रोटी के रूप में काम आता है।

उपज—प्रति एकड़ १५–१६ मन अन्न मिलने के साथ ही २५–३० मन पुवाल भी मिल जाता है किन्तु यह पौष्टिक नहीं होता।

कोदो

कोदो का दाना मड़वा की अपेक्षा गहरा रंग लिये हुये होता है। यह एक निम्न कोटि का खाद्यान्न है। निर्धन लोगों को कोदो की फसल का बड़ा सहारा रहता है। इसका दाना चावल के रूप में काम आता है।

भूमि व तैयारी—इसे उँचाई पर स्थित उन खेतों में बोना चाहिये जिनमें पानी न रुकता हो। इसे अक्सर निर्बल भूमि में ही बोया जाता है। वैसे दोमट अथवा बलुही मिट्टी इसे अनुकूल पड़ती है।

खाद—अच्छी पैदावार के लिये यह आवश्यक है कि एक एकड़ में ६०-७० मन कम्पोस्ट की खाद दी जाय।

बीज और बुवाई—एक एकड़ में ५-६ सेर बीज लगता है। इसे अकेला बोने पर एक डेढ़ फुट के अन्तर पर बनी पंक्तियों में हल के पीछे बोना चाहिये। लोग बहुधा इसे धान के साथ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बोते हैं। ऐसा करने में एक लाभ यह होता है कि जब धान की फसल वर्षा के अभाव में अच्छी नहीं होती तो किसान को कोदो की फसल मिल जाती है। इसे सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती।

निराई तथा कटाई आदि—अकेली बोई गई फसल की एक गुड़ाई और दो निराइयां करनी चाहिये। इसकी फसल सितम्बर के अन्त से अक्तूबर के प्रारम्भ तक पक कर तैयार हो जाती है। बालियों में दाने पड़ने के बाद चिड़ियों से उनकी रखवाली की आवश्यकता पड़ती है। कटाई के बाद बालियों को खूब सुखा लेना चाहिए क्योंकि इसकी भूसी बड़ी कठिनाई से अलग हो पाती है। एक एकड़ में ८-१० मन दाना तथा १५ से २० मन के लगभग पुवाल होता है। यह याद रखें कि इसका चारा जानवरों को न खिलाना चाहिये। घोड़ों के लिये तो यह विषैला सिद्ध हुआ है।

काकुन

साँवाँ तथा मकरा के समान ही काकुन की भी फसल है। यह भी मक्का के साथ ही बोई जाती है और दो मास में पक कर तैयार हो जाती है। इसका भात व खीर बहुत सुन्दर बनती है। लोग इसे मट्ठे के साथ मिलाकर बड़े चाव के साथ खाते हैं और कबूतरों का प्रिय भोजन है।

भूमि की तैयारी—वैसे यह हर प्रकार की भूमि में होती है किन्तु हल्की मटियार या दुमट भूमि इसे अधिक अनुकूल पड़ती है। मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करने के बाद कल्टीवेटर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

या देशी हल से दो तीन जुताइयाँ कर देनी चाहिये।

खाद–एक एकड़ में ६०-०० मन कम्पोस्ट या गोबर की खाद अवश्य दे देना चाहिये क्योंकि इसे खाद की बड़ी आवश्यकता होती है।

बीज और बुवाई—लोग इसे प्रायः मक्का के साथ बोते हैं। अकेली और छिटकवां दोनों प्रकार बोई जाती है। अकेली बोने पर प्रति एकड़ ३-४ सेर बीज लगता है। लाइन में बोने पर १॥ फुट के अन्तर पर बनी पंक्तियों में हल के पीछे बोई जाती है। १ या २ निराइयाँ काफी होती हैं।

उपज व तैयारी–अगस्त व सितम्बर में फसल कटती है। एक एकड़ में १०-१२ मन अन्न होता है। २० मन के लगभग सूखा चारा भी मिलता है।

अरहर

खरीफ में पैदा होने वाली दलहन की फसलों में अरहर प्रमुख है। शाकाहारियों को प्रोटीन अधिकतर दालों द्वारा ही मिलता है। यह प्रायः पूरे भारत में बोई जाती है। अरहर की दो किसमें होती हैं:—(१) अगहनी जो लगभग ५ माह में पक जाती है और (२) नौ माह में तैयार होने वाली अरहर।

भूमि व तैयारी—चिकनी व दोमट भूमि सर्वोत्तम है। वैसे भूड़ को छोड़कर हर भूमि में होती है। नीची भूमि में जहाँ पानी रुकता है, यह नहीं होती। इसकी ३-४ जुताइयाँ पर्याप्त हैं।

खाद—कम उर्वर खेत में केवल अरहर की फसल बोने के लिए ५०-६० मन गोबर की खाद प्रति एकड़ देनी चाहिये;

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वैसे इसे खाद की आवश्यकता नहीं होती। इसे बहुधा ज्वार, बाजरा, मूंग, मूंगफली, कोदो, कपास आदि के साथ बोते हैं।

बीज व बुवाई—इसकी बुवाई वर्षा आरम्भ होते ही की जाती है। जून के अन्त तक इसकी बुवाई हो जानी चाहिये। जैसा कि कहा जा चुका है, गाँवों में प्राय: इसे मिलवाँ फसल में छिड़कवाँ बोते हैं। अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि इसे यदि घना न बोया जाय तो इसकी बाढ़ तथा उपज अधिक होती है। कृषि विशारदों ने इसके लिये ऐसा ही एक ढंग निकाला है। अरहर का बीज ६-६ फीट के अन्तर पर बनी सीधी लाइनों में बोया जाय। बीज से बीज का अन्तर ६ इंच हो। इन पंक्तियों के मध्य १॥ फुट के अन्तर से मूंग नं० १ अथवा मूंगफली बो दी जाय। बरसात में अरहर का पौदा भी कोई बहुत बड़ा नहीं होता इसलिये इनकी उपज भी नहीं मारी जाती। पौधों के उगने के बाद अगस्त में बीच-बीच में कमजोर पौधों को उखाड़कर पशुओं को खिला देना चाहिये जिससे कि दो पौधों के बीच का अन्तर ३ फुट रह जाय। एक एकड़ में मिलवाँ बोनेपर २ सेर तथा अकेले बोने पर ७-८ सेर बीज लगता है।

शीघ्र पकनेवाली जाति में टाइप १३२ अच्छी होती है। यह फैलने वाली जाति है। यह ५ माह में तैयार होती है और इसकी उपज १०-१५ मन प्रति एकड़ है। पाले का जहाँ अधिक डर हो वहाँ यह उपयोगी सिद्ध हुई है।

लाइन से बोने में और उत्तर प्रदेश के पूर्वी और केन्द्रीय जिलों में टाइप नं० १७ अरहर विशेष उपयोगी सिद्ध हुई है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बिना खाद दिये व सिंचाई किये नयी रीति से बोने पर ३०-३२ मन प्रति एकड़ के हिसाब से होती है। इसके लिए बरसात में दो गुड़ाइयाँ कर देना पर्याप्त है। मिलवां बोने पर अन्य फसलों की कटाई के पश्चात् एक गहरी गुड़ाई कुदाल अथवा हल से कर देना चाहिये।

रोग—जब खेत में पानी भरा रह जाता है तो कुछ पौधे सूख कर मुरझा जाते हैं। इसे उकठा का रोग कहते हैं। इससे बचने के लिए बीज को बोने से पूर्व उसमें ऐग्रेसीन दवा मिला देनी चाहिये। रोग हो जाने पर ऐसे पौधों को उखाड़ कर फेंक देना चाहिये।

कटाई—अरहर की ५ महीने में पकने वाली फसल दिसम्बर में और ९ महीने में पकने वाली मार्च में तैयार हो जाती है। इसे पकते ही काटलेना चाहिये अन्यथा ज्यादा सूखने पर फलियाँ चिटक जाती हैं और दाने खेत में रह जाते हैं। इसे काटने के बाद पीट कर दाने निकाल लिये जाते हैं। इसके सूखे पेड़ों को झांखर कहते हैं। यह छप्पर तैयार करने, चौपाल आदि साफ करने, टट्टर बनाने व जलाने के काम आते हैं।

मूँग

साँवाँ काकुन के समान दलहन की फसलों में मूंग भी एक जल्द पकनेवाली फसल है। एक ही खेत में मार्च और अक्टूबर के बीच तीन फसलें उत्पन्न की जा सकती हैं। किसानों में प्रायः गेहूँ के खेतों को चौमास रखने की प्रथा है। वर्षा में इनमें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुछ नहीं बोया जाता। उत्तर प्रदेशीय कृषि विभाग ने मूंग नं०१ की खोज की है जिसमें इस बीच में मूंग पैदा करने के साथ २ खेतों की उर्वरा शक्ति भी बढ़ाई जा सकती है। इस सम्बन्ध में इसका उल्लेख हम खाद के अध्याय में कर चुके हैं।

भूमि व तैयारी—इसे दोमट मिट्टी अधिक अनुकूल पड़ती है। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और दो साधारण हल से कर देनी चाहिये।

इसे पानी लगने वाले खेतों में न बोना चाहिये। इसके लिये ऊँचे खेत ठीक रहते हैं।

बीज व बुवाई—नहर आदि सिंचाई के साधन होने पर इसकी एक फसल मार्च के अन्तिम सप्ताह में या अप्रैल के आरंभ में केवल ढाई महीने में वर्षा के पूर्व ही तैयार की जा सकती है। दूसरी फसल वर्षा के प्रारम्भ में बोयी जाय और ६०-७० दिन बाद काटी जाय। इसकी अन्तिम फसल भी २० अगस्त से पूर्व बोकर अक्टूबर के बीच तक काटी जा सकती है। बीज पहली फसल में तैयार किये जा सकते हैं। दूसरी फसल काट-कर गेहूँ आदि के खेतों की तैयारी करनी चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर तीसरी फसल भी हो सकती है। मूँग नं० दो ९ इंच की दूरी पर पंक्तियों में बोने पर एक एकड़ में २-२॥ सेर बीज लगता है। वैसे पंक्तियों में बोने पर ५ सेर के लगभग बीज लगेगा।

मार्च तथा अप्रैल की गर्मी में बोयी गई फसल में पौधे-बीज १-१ फुट के अन्तर पर बनी सीधी लाइनों में बोना चाहिये और पंक्तियों में एक बीज से दूसरे बीज ६ इंच की दूरी पर होना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहिये । वर्षा में बोयी गई फसल अधिक जोरदार होती है । इसमें लाइनों का अन्तर १½ फुट कर देना चाहिए और पंक्तियों में दाना ६-६ इंच के स्थान पर ९-९ इंच पर बोना चाहिए।

निराई—फसल उग आने पर लगभग एक सप्ताह में निकाई और गुड़ाई अवश्य कर देनी चाहिये । बड़े फार्मों में पंक्तियों का फासला २-२ फुट कर देना चाहिए जिससे कि कल्टीवेटर से गुड़ाई की जा सके । साधारण किसानों के लिए 'हैन्डहो' बहुत उपयोगी है

सिंचाई–मार्च या अप्रैल में बोई फसल को दो सिचाइयों की जरूरत होती है । जुलाई में बोई फसल को सिंचाई की जरूरत नहीं होती ।

कटाई—बुवाई के ५० दिन बाद फलियों का पकना प्रारंभ होता है । इन्हें तोड़ने का सबसे अच्छा ढंग यह है कि हर पाँचवें छठे दिन पकी फलियाँ तोड़ ली जायँ और उनके दाने तुरन्त निकाल लिये जायें । ऐसा न करने पर इसके दाने पकी हुई फलियों में ही उग आते हैं। अधिक समय तक न तोड़ने पर इसके दानों को फलियों के चटकने से खेत में ही रह जाने का डर है।

फलियाँ तोड़ लेने के बाद इसे मिट्टी पलटने वाले हल से जोत देना चाहिये । यह एक श्रेष्ठ खाद प्रमाणित हुई है ।

इसका बीज ठीक से सुखाकर राख में ३-४ बूँद मिट्टी का तेल मिलाकर रखना चाहिये । इससे घुन नहीं लगता और बीज सुरक्षित रहता है ।

उपज—इसकी प्रति एकड़ औसत उपज ८-१० मन होती है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लोबिया

दलहन की फसलों में मूँग के बाद उरद और लोबिया की फसलों का नम्बर आता है। उत्तर प्रदेश में सर्वत्र इसकी फसल होती है। प्रायः लोग इसे ज्वार बाजरे के साथ बोते हैं। इसके खेत की विशेष तैयारी की आवश्यकता नहीं होती। यह भी एक उत्तम हरी खाद का काम देती है।

मूंग नं० १ के समान लोबिया नं० १ की भी एक ऐसी जाति ढूँढ़ ली गई है जिसकी मार्च और नवम्बर के मध्य तीन फसलें काटी जा सकती हैं। यह लोबिया नं० १ सफेद रंग की बड़े दानों वाली होती है। पहली फसल मार्च के अंतिम सप्ताह में बोने पर जून तक कटती है। जून से अगस्त तक दूसरी और अगस्त से नवम्बर तक तीसरी फसल काटी जा सकती है।

मार्च में इसकी बुवाई डेढ़ फुट के अन्तर से बनी पंक्तियों में करनी चाहिये और दाने ९-९ इंच की दूरी पर डालने चाहिये। वर्षा में बोई जाने वाली शेष दो फसलों में लाइनों का अन्तर ढाई फुट और दानों की दूरी सवा फुट रखनी चाहिये। इस प्रकार बुवाई करने पर इसका पौधा अधिक बढ़ेगा भी और उपज भी अधिक होगी।

बुवाई के १५ दिन तक खेत की मिट्टी भुरभुरी रखनी चाहिये। इसके लिये एक-डेढ़ सप्ताह में दो बार निराई व गुड़ाई हो जानी चाहिये। खेत में खरपतवार होने से उपज मारी जाती है। इसे ज्वार तथा बाजरे के साथ भी बोया जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज-गोदामों से भी इसका बीज अधिक नहीं प्राप्त होता है क्योंकि इसकी खोज हाल में ही हुई है; इसलिये इसका थोड़ा सा बीज लेकर बीज तैयार कर लेना चाहिये। ऊपर कहे गये ढंग से तीन बुवाइयों में १ पाव से २० मन से अधिक बीज तैयार किया जा सकता है।

उर्द

उर्द दालों में एक प्रधान दाल है। यह भी खरीफ की फसल है और ज्वार के साथ बोई जाती है। दाल के अतिरिक्त अन्य प्रकार से भी इसका उपयोग किया जाता है।

भूमि और तैयारी—उर्द को कुछ भारी मिट्टी अनुकूल होती है। इसके लिये भी ज्वार के समान ही खेत चुनते हैं। खाद आदि भी उसी मात्रा में देना चाहिए। इसके लिये २-२ जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं।

बुवाई—इसे छिटकवाँ अथवा लाइन में बोया जाता है। मूँग के समान इसे भी लाइन में बोने से सरलता रहती है।

बीज—देशी उरद की जातियों में हरा और काला, ये दो प्रधान हैं। काला उर्द अधिक लाभदायक होता है। पंजाब और उत्तर प्रदेश में अधिकतर यही बोया जाता है।

फसल की तैयारी—उर्द अक्तूबर-नवम्बर में पक कर तैयार होता है। छोटा उर्द उर्दी कहलाता है जो केवल दो माह में ही कटता है। इसकी बुवाई ज्वार के साथ ही होती है।

इसके हरे पौधे जानवरों के चारे के भी काम आते हैं।

उपज—प्रति एकड़ औसत उपज १०-१२ मन होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सोयाबीन

सोयाबीन का तेल खाने, वार्निश तैयार करने और साबुन बनाने के काम आता है। इसके बीज से आटा बनता है जिसमें ४० प्रतिशत प्रोटीन और २० प्रतिशत चिकनाई होती है। इसकी हरी फलियों से तरकारी बनती है। इसके आटे में पानी मिलाकर उससे दूध (Bean Milk) तैयार किया जाता है। इसकी खेती के लिये पर्वतीय प्रदेश अधिक अनुकूल होते हैं। इसे चारे के लिये भी बोते हैं।

भूमि व तैयारी—इसके लिये दोमट भूमि उपयुक्त होती है। भूमि में पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिये मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करने के बाद देशी हल या कल्टीवेटर से ३-४ जुताइयाँ कर खेत को पाटा देकर समतल बना देना चाहिये।

खाद--५०-६० मन खाद एक एकड़ में काफी होती है।

बीज और बुवाई—इसे दो फीट के अंतर पर बनी नालियों में हल के पीछे बोना चाहिये। इस प्रकार बोने में एक एकड़ में १२ से १५ सेर के बीच बीज लगता है। बरसात प्रारंभ होने पर इसकी बुवाई करनी चाहिये। चारे के लिये २०-२५ सेर बीज छिटकवाँ बोया जाता है और इसकी बुवाई प्रायः पलेवा देकर वर्षा के पूर्व मई-जून में भी होती है।

निराई व सिंचाई—दो तीन निराइयाँ और वर्षा शीघ्र समाप्त हो जाने पर एक सिंचाई कर देनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कटाई व उपज—इसकी फसल नवम्बर में कटती है। चारे की फसल अगस्त व सितम्बर में तैयार होती है। इसकी फसल में प्रति एकड़ १०-१५ मन दाना और २० मन के करीब सूखा चारा मिलता है। हरा चारा तैयार करने पर डेढ़ दो सौ मन होता है।

मूँगफली

हमारे देश में मूँगफली का बड़ा प्रचार है। खरीफ की तेलहन की फसलों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

चना और मटर की तरह यह भी एक दालदार फसल है। इसकी जड़ों में होनेवाली गाँठों में नाइट्रोजन लेने वाले शकाणु रहते हैं, जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं।

भूमि व तैयारी—हल्की बलुई जमीन जहाँ पानी न रुकता हो, इसके लिये अच्छी रहती है। मटियार और भारी दोमट में इसकी पैदावार अच्छी नहीं होती। मूंगफली के खेत के पास कोई पेड़ न हो जिससे वह पक्षियों और बंदरों इत्यादि से बचा रह सके।

रबी की फसल की कटाई के पश्चात् मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई कर दी जाय। इसके पश्चात् तीन चार जुताइयाँ करके जमीन को खूब भुरभुरी करलें जिससे बीज अच्छी तरह जम सके। प्रायः इसे खाद की आवश्यकता नहीं होती; १५-१६ गाड़ी खाद प्रर्याप्त होती है।

बुवाई—बोने से दो-तीन दिन पूर्व बीज को छील लेना चाहिये। ऐसा करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि अन्दर का बारीक छिलका न टूट जाय। यह बीज बोने के दो तीन दिन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के अन्दर का ही छिला हुआ होना चाहिये। इसका बीज २० से ३० सेर प्रति एकड़ पड़ता है।

मूंगफली में टाइप नं० २५ अच्छी मानी जाती है। यह लगभग ५ महीने में पकती है। मूँगफली तीन प्रकार से बोई जाती है :—

(१) बीज छिटका कर जुताई कर देना, (२) हल के पीछे बोना, (३) खुरपी से गाड़ना। इनमें अन्तिम ढंग सर्वश्रेष्ठ है। इससे धन और समय तो अधिक लगता है किंतु बीज कम तथा बराबर पड़ता है, और गुड़ाई तथा निराई में भी आसानी पड़ती है।

बीज को एक से डेढ़ फीट तक के अन्तर से बनी हुई पंक्तियों में बोना चाहिये। बीज से बीज का अन्तर ९ इंच होना चाहिये। फैलनेवाली किस्मों में लाइनों की दूरी अधिक होनी चाहिये। बीज को दो इंच गहरा बोकर मिट्टी से तुरंत ढक देना चाहिये। नमी वाले तथा भारी किस्म की भूमि में यह गहराई कम और हल्की तथा बलुई या कम नमी वाली भूमि में ३ इंच गहराई कर दी जाये। इसकी बुवाई जून और जुलाई में होती है।

सिंचाई—वर्षा होने से पूर्व बोने पर बोवाई से पहले खेत की तैयारी के लिये एक सिंचाई आवश्यक है। वर्षा यदि समय पर होती रहे तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं है। फलियाँ पड़ने के समय नमी की आवश्यकता होती है।

निराई गुड़ाई—फूल आते समय खुरपी या हैंडहो से निराई कर देनी चाहिये। फलियाँ पड़ते समय पौधों पर मिट्टी चढ़ा कर खुरपी से गुड़ाई कर जमीन को मुलायम कर देना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अक्टूबर-नवम्बर में मूँगफली पक जाती हैं। इसकी खुदाई कर सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देना चाहिये।

बीमारियाँ—इसमें टिका की बीमारी हो जाने पर इसकी पत्तियाँ ताम्र वर्ण की हो जाती हैं और बाद में झर जाती हैं। इससे बचने के लिये रोग रहित उन्नतिशील बीज बोने चाहिये और बीमारी वाले खेत में इसकी बुवाई कुछ अरसे तक न होनी चाहिये।

तिल

प्राचीन आर्यों के समय से भारतवर्ष में तिल की खेती होती आ रही है। इसका तेल खाने, सुगंधित तैल बनाने और औषधि निर्माण के काम आता है। तिल भूनकर और लड्डू आदि बना कर भी इस्तेमाल होता है। इसकी खली जानवरों को खिलाई जाती है। यह सामान्यतया गर्म और कम वर्षा वाले प्रदेशों (लग-भग २० इंच) में होता है।

जातियाँ—तिल तीन प्रकार का होता है—(१) काला, (२) भूरा और (३) सफेद। भूरे तिल को दक्षिणी प्रदेशों में अधिक बोया जाता है। उत्तर प्रदेशों में काले तिल की ही फसल अधिक होती है। इसमें तेल और खली दोनो का ही अधिक अच्छा औसत मिलता है।

भूमि व तैयारी—इसे हल्की और कमजोर भूमि में बोते हैं। ऐसी खादर भूमि जहाँ अलसी नहीं उत्पन्न होती, वहाँ इसे बोया जाता है। जिस भूमि में यह बोया जाय उसमें पानी नहीं रुकना चाहिये। मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करने के पश्चात्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तीन जुताइयाँ देशी हल से कर देनी चाहिये। अंत में पाटा चला कर मिट्टी भुरभुरी और समतल कर दें।

खाद—यदि खेत निर्बल हो तो ५०—६० मन गोबर की खाद दे देनी चाहिये अन्यथा इसे खाद की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

बीज व बुवाई—इसे बाजरा, ज्वार और कपास के साथ मिलवाँ बोते हैं। कहीं-कहीं इसे अकेला भी बोया जाता है, जैसे बुन्देलखण्ड और इलाहाबाद का क्षेत्र। इसकी बुवाई जुलाई से अगस्त के प्रथम सप्ताह के मध्य कर देनी चाहिये। इसे खालिस बोने के लिये १ या १॥ फुट की दूरी पर बनी पंक्तियों में हल के पीछे उथली बुवाई करनी चाहिये। पौधों के उगने पर उनकी छटाई कर दें ताकि एक पौधे से दूसरे का अन्तर ६ इंच रहे। इस प्रकार बोने में लगभग २॥ सेर बीज एक एकड़ में लगता है।

निराई, सिंचाई आदि—निराई गुड़ाई व सिंचाई की तो इसे कोई विशेष आवश्यकता होती नहीं किन्तु फसल जब प्रारंभ में बढ़ने लगे तो एक निराई कर देने से उत्पादन अधिक होता है। खेत में पानी रुकना हानिकारक होता है।

फसल की तैयारी—अक्तूबर-नवम्बर में इसकी फसल बिलकुल तैयार हो जाती है। पकी हुई फलियों पर काले धब्बे स्पष्ट दिखाई देते हैं। काटने के बाद फसल को इधर उलट कर सुखा लें और डंडों से पीट कर दाने अलग करलें।

उपज—एक एकड़ में ५—७ मन तिल की उपज होती है। इसमें ४२ से ४६% तक तेल पाया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धान

खरीफ की उपरोक्त वर्णित फसलों में धान की एक ऐसी फसल का वर्णन शेष रह गया है, जो उनमें प्रमुख है।

यों तो इस देश में धान की खेती वर्षा पर निर्भर करती है और सुदूर पूर्व देशों की तरह इसके लिये सिंचाई के साधन नहीं हैं, किन्तु मुजफ्फरनगर के जिलों में तथा पश्चिमी पंजाब में सिंचाई के सहारे उगाई जाती हैं।

वैसे तो बहुत सी जातियाँ हैं किन्तु उनको पकने के मौसम के अनुसार निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटा जा सकता है:—

(१) कुवाँरी धान—जो वर्षा के आरम्भ में बोया जाता है और सितम्बर में काटा जाता है। इस श्रेणी के समुन्नत धानों में एन २२, चाईना १०, ए० ६४ और टाईप ३६ तथा देशी धानों में थक्की, गदरी, दुद्धी, देवला, सरया और मुटमुरी प्रसिद्ध हैं। इन्हें सिंचाई के साधन न होने वाले क्षेत्रों में उत्पन्न किया जाता है।

(२) कार्तिकी या माध्यम धान—इसके पकने में अधिक समय और अधिक नमी की आवश्यकता होती है। इनमें समुन्नत जातियों में टाइप १२१, ४३ टाइप १३७, १३८ तथा चाईना ४ तथा देशी धानों में बाँसमती, हंसराज, रामजवाईन, लालमती, दलबादल और अंजना इत्यादि हैं। सिंचाई वाले क्षेत्रों में इसकी उपज होती है।

(३) जेठी धान—इसकी पौध अक्टूबर में बोकर नदी या तालाब के किनारे जनवरी और फरवरी में लगा कर मई में काटी जाती है। इसे बोरों धान भी कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(४) **अगहनी या जड़हन**—वर्षा के आरम्भ में इसकी पौध बोकर लगभग डेढ़ माह बाद दूसरे खेतों में रोप दी जाती है। सिंचाई का प्रबंध होने पर वर्षा के डेढ़ माह पूर्व ही पौध बोकर वर्षा के आरम्भ में रोप दी जाती है। इस श्रेणी के समुन्नत जातियों में टाईप ९, १७, २२ ए०, टा० ३६, ८८ और टाईप १०० तथा देशी में बाँसी, अंजी, डेढ़वा और मालदह होते हैं। प्रायः इसे वर्षा के प्रारंभ में छिटकवाँ बोते हैं। इसे बोआरी धान भी कहते हैं।

भूमि व तैयारी—धान सभी प्रकार की भूमियों में उत्पन्न होता है अधिकतर मटियार भूमि जिसमें पानी वर्षा काल में तथा उसके बाद में भी ठहरा रहे, बहुत उपयुक्त है। ग्रीष्म में धान के खेतों की जुताई धान की उपज बढ़ाने में बहुत प्रभाव डालती है। खेतों में घास-पात बहुत कम उगता है। अप्रैल के अन्त तक रबी की फसलें कट जाती हैं। अतएव मई और जून में जुताई को पर्याप्त समय मिल जाता है। इससे पैदावार सवाई से ड्योढ़ी तक बढ़ जाती है।

खाद—अन्य फसलों की भाँति चावल खाद से खूब फलता फूलता है। किन्तु दुर्भाग्यवश भारतीय किसान इस ओर उदासीन हैं। विभिन्न खादों का एक एक पौंड नाइट्रोजन देने से निम्न उपज की आशा की जा सकती है:—

खाद	अतिरिक्त उपज की मात्रा
१ सनई की हरी खाद	१०३ सेर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२	आलमोनियम सलफेट	५ = सेर
३	मिली हुई रसायनिक खाद	६ सेर
४	खलियाँ (मूंगफली, नीम, रेंड़ी)	४ सेर
५	गोबर	३$\frac{3}{4}$ सेर
६	मल-मूत्र	२ सेर

इससे स्पष्ट है कि सनई अन्य खादों की अपेक्षा सबसे अधिक पैदावार देती है। इसमें कठिनाई यह है कि पानी लगने वाले खेतों में सफल नहीं होती। इस सम्बन्ध में नगीना फार्म में १९४१ से ४३ तक लोबिया, मूँग, ज्वार और ढैंचा पर प्रयोग करने से निम्न परिणाम निकला।

जहाँ जल बेधन के कारण सनई न बोई जा सके वहाँ लोबिया, मूँग, ढैंचा या ज्वार को हरी खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। धान के लिये ५० पौंड नाईट्रोजन की आवश्यकता होती है। फासफोरस और पोटाश देने की आवश्यकता नहीं होती। हरी खाद के लिये पलेवा के बाद खेत की जुताई करनी चाहिए और रोपाई के ७-८ सप्ताह पूर्व हरी खाद की फसल बोकर रोपाई के एक सप्ताह पूर्व मिट्टी पलटने वाले हल से पलट कर पानी भर देना चाहिये। इसके अतिरिक्त अगर खाद देना हो तो प्रांगारिक खादों को रोपाई से पूर्व और रसायनिक खादों को पौधों के हरा होने पर देना चाहिए।

बुवाई—धान की बुवाई की २ विधियाँ हैं:—(१) छिटकवाँ बोआई और (२) बेड़ बोकर रोपाई करना। छिटकवाँ बोवाई की भी कई विधियाँ हैं। अधिकतर बोवाई होने पर वर्षा के पूर्व

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
जुते खेतों में बीज छिटका कर जुताई करके मिला दिया जाता है। यह बीज वर्षा होते ही उग आता है। इससे लाभ यह है कि बुवाई जल्दी हो जाती है किन्तु पहली बारिश होने पर नमी के अभाव में कम उगता है। दूसरी विधि यह है कि कम खेतों की बुवाई होने पर पहली वर्षा होते ही खेत में पानी भर कर देशी हल से जोत कर पाटा देकर लेव लगा दी जाती है और बीज छिटककर बो दिया जाता है। इस बीज को बोने से पूर्व २४ घंटे तक प्रति ६ घंटे में भिगोते रहना चाहिये और उसे टाट या बोरे से ढक देना चाहिये। २४ घंटे बाद उसे इकट्ठा कर ६ इंच मोटी तह लगा कर पुआल या पतवार आदि रख कर दबा देना चाहिये। २४ घंटे दबे रहने के बाद उससे अंकुर निकल आवें तो उसे छाँह में फैला देना चाहिये। इसके बोने से फसल शीघ्र तैयार होती है। वर्षा कम होने पर इसे खेत में ही छिटक कर हल चला दिया जाता है। इसमें नमी की बहुत आवश्यकता होती है। कुछ लोग खेत में लेवा कर धान को सूखा बो देते हैं। इसके लिये ३ दिन तक बराबर पानी लगा रहना चाहिये। यह बुवाई २० जून तक हो जाना चाहिये।

बेड़ बोकर रोपाई करने की विधि सभी श्रेणी के धानों में प्रयुक्त होती है। इसमें एक अलग खेत में बीज बोकर पौधे तैयार कर लिये जाते हैं और उन्हें खेत में लगा दिया जाता है। रोपने से छिटकने की अपेक्षा ७५% उपज अधिक होती है। कुवाँरी धान के लिये पौधे बेड़ में लगभग एक माह और अगहनी डेढ़ माह तक रखे जाते हैं। कुवाँरी धान की रोपाई जुलाई के प्रथम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सप्ताह तक और अगहनी की जुलाई के अन्त तक कर देनी चाहिये। खेत में उर्वरा शक्ति अधिक और रोपाई उचित समय पर होने पर पौधा ६-६ इंच की दूरी पर और ऐसा न होने पर २ से लेकर ८-१० पौधे तक पास २ रोप दिये जाते हैं। पुनर्वसु-पुष्य या जुलाई में धान के पौधे दूर दूर और अगस्त के अंत में अश्लेखा नक्षत्र में एक एक बीता पर और मघा तथा पूर्वा नक्षत्र में (अगस्त के अन्त और सितम्बर के प्रारम्भ में) बहुत घने और अधिक पौधे लगाने चाहिये, जिससे घोंघा भी सरलता से खेत में न घूम सके। सब प्रकार पैदावार बराबर होती है।* छिटकवाँ बीज की बताई गई तैयारी के समान इसका भी बीज तैयार करना चाहिये। इसमें बीज घना और लेवा कर पाटा देने के आधा घंटे बाद बोना चाहिये।

उपजाऊ खेतों में छिटकवाँ बुवाई करने पर प्रति एकड़ आधा मन और कमजोर खेतों में एक मन से सवा मन तक बीज लगता है। रोपाई में भी इसी प्रकार ८-१० सेर प्रति एकड़ लगता है। बेड़ बोने में ४ सेर से १० सेर तक प्रति एकड़ लगता है। महीन धान कम और मोटा अधिक लगता है।

धान की बोवाई के समय का ज्ञान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसकी बोवाई में चार पाँच दिन भी पिछड़ जाने पर किसान और फसल दोनों के जीवन-मरण का प्रश्न खड़ा हो जाता है। घाघ का कहना है कि कार्तिक की बोवाई १३ दिन में समाप्त हो जानी

* "पुष्य पुनर्वस तान बेतान अशलेषा चित्रा परमान।
मघा पूर्वा घोंघा फेर तीनो काटी एकै बेर॥"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहिये किन्तु असाढ़ में केवल तीन दिन में ही सारी बोवाई समाप्त कर देनी चाहिये, नहीं तो अत्यंत हानि होती है।* धान वर्षा के आरम्भ में १० जुलाई के पूर्व ही आर्द्रा नक्षत्र में बो देना चाहिये। छिटकवाँ बोवाई २० जून तक और कुवाँरी धान की बोवाई यदि हो सके तो जून में ही, नहीं तो २-३ जुलाई तक समाप्त कर देनी चाहिये। अगहनी धान की भी रोपाई १० जुलाई से पहले ही हो जानी चाहिये।

जेठी धान की बेड़ अक्टूबर में बोकर जनवरी में उसे रोपा जाता है। यह मई में पक जाता है। सिंचाई की अधिक आवश्यकता होने के कारण धान तालाब या झील के किनारे ही बोया जाता है।

बोवाई के बाद यह ध्यान रखना चाहिये कि खेत में घास पतवार न होने पाये। बोने के समय धान का बीज साफ हो। घास के बीज उसमें मिले न हों। १५ जून के पूर्व यदि पानी मिल जाय तो खेत में भर देना चाहिये जिससे घास मर जाय। धान के उग आने के १५-२० दिन बाद ६-६ इंच की दूरी पर जोत कर पाटा चला देना चाहिये। इससे घास उखड़ जाती है और धान नमी पाकर पुनः लग जाते हैं। इसमें खेत बिलकुल सूखा होना चाहिये। खेतन की मेड़ ठीक से बाँध कर, फसलों का हेर-फेर करके, खेत में लेवा लगाकर, जरई करके बोने से तथा खुरपी से उखाड़कर भी घास से फसल की रक्षा की जा सकती है।

सिंचाई—पानी न बरसने पर धान में साखें फूटने पर

*"तेरह कार्तिक तीन असाढ़।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा बालियाँ निकलने पर खेत में पानी देना न भूलना चाहिये। धान के लिये लगातार थोड़ा २ पानी मिलता रहना चाहिये। अगस्त में तो प्रति सप्ताह जल की आवश्यकता होती है।

फसल की तैयारी—धान की कटाई जब वह कुछ हरा हो तभी कर लेनी चाहिये। इससे बीज के झरने की आशंका नहीं रहती है और चावल भी अधिक स्वादिष्ट होता है।

धान की फसल में हेर-फेर—कुवाँरी धान के साथ चना, मटर और बरसीम का हेर-फेर अच्छा रहता है। अगहनी धान के साथ बरसीम और अक्सा का हेर-फेर किया जा सकता है। अगहनी धान के खेतों में पर्याप्त नमी रहने पर जड़हन कटने से पूर्व इन्हें छिटकवाँ बो दिया जाय। इनका ध्यान जड़हन के कटने के समय रखना चाहिये कि वे भी कहीं कट न जाँय।

बीमारियाँ—धान को सबसे अधिक हानि गंधी कीड़े से पहुँचती है। यह अक्टूबर-नवम्बर में खेत में अंडे देती है जिससे आगे चलकर बच्चे निकल आते हैं। इससे बचने के लिये गर्मी में खेत की जुताई कर देनी चाहिये। यह दूध आने पर धान के दानों का रस चूस कर छोड़ देती है। इसके आक्रमण का समय १० सितम्बर से १५ अक्टूबर तक, दानों में दूध पड़ने के दस दिन पूर्व तक रहता है। इसलिये इसकी बुवाई शीघ्र ही कर देनी चाहिये जिससे इस समय तक धान पकने लगें। प्रति एकड़ ७॥ सेर से १० सेर तक गैमक्सीन डी० २५ का छिड़काव करके भी इस पर काबू पाया जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गहरे पानी में धान की खेती

गहरे पानी में पैदा होने वाला धान आसाम, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा और मद्रास में बहुतायत से पैदा किया जाता है। उत्तर प्रदेश में भी देवरिया बलिया में ऐसे धानों की खेती होती है। पूर्वी जिलों में प्रायः हजारों एकड़ धान के खेत हर साल जलमग्न हो जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में गहरे धान की खेती अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। ताल में पानी की विभिन्न सतह को सह सकने के अनुसार गहरे पानी के धान की विभिन्न जातियाँ हैं जिनकी तालिका निम्न है:—

	जातियाँ	पानी की गहराई
१	कलंजी	½ फुट से ६ फुट तक
२	गौंठ	२ ,, ,, ८ ,, ,,
३	सिंगरा	२ ,, ,, ८ ,, ,,
४	करियाँवां	५ ,, ,, १५ ,, ,,
५	टुढ़िया	५ ,, ,, २० ,, ,,
६	दुधलची	६ ,, ,, २० ,, ,,
७	जयसुरिया	१० ,, ,, ३० ,, ,,

जयसुरिया बलिया जिले के सुरहा ताल की प्रमुख जाति है। बेड़ के खेत की तैयारी और जरई करके बीज बो दिया जाता है। इसकी बेड़ बोने का समय मार्च के आरंभ से अप्रैल के अंत तक है।

भूमि की तैयारी—फरवरी में अथवा उससे पूर्व ज्यों-ज्यों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खेत का पानी कम होने लगता है, जुताई आरम्भ कर दी जाती है। ताल के सबसे भीतरी भाग में पानी होने के कारण जुताई नहीं हो सकती और केवल हाथ से इधर-उधर साफ किया जा सकता है। इसमें खाद की भी विशेष आवश्यकता नहीं होती।

बुवाई—रोपाई अप्रैल के प्रथम सप्ताह से पूर्व ही आरंभ कर दी जाती है और जून में जब तक पानी नहीं बरसता, होती रहती है। प्रायः २०–२५ दिन के पौधे रोपे जाते हैं। एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति की दूरी तथा एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी ९ इंच से १ फुट तक रहती है और ३ या ४ पौधे एक साथ रोपे जाते हैं।

गर्मी में पानी हट जाने पर कभी-कभी जैसुरिया ऊपर से सूख जाता है, परन्तु इसकी जड़ों में काफी जान रहती है और पानी पाकर यह लहलहा उठता है। एकाएक पानी बढ़ जाने पर यह चौबीस घंटे में एक फुट तक बढ़ता है और २५–३० फुट पानी में फूल-फल सकता है।

जैसुरिया की कटाई नावों की सहायता से हंसिया द्वारा की जाती है। बालियाँ धूप में सुखा कर पीट ली जाती हैं या बैलों द्वारा कुचल ली जाती हैं। विभिन्न जातियाँ विभिन्न समय पर विभिन्न गहराइयों में बोई जाती हैं। जैसुरिया की रोपाई सबसे पहले की जाती है। ढुढ़िया, पुरवैइया, करियाँवाँ, कलंजी और सिंगरा क्रमशः ताल के नीचे भाग से ऊँचे भाग पर छिटक कर बोये जाते हैं। सिंगरा और कलंजी कार्तिक के अन्त तक, पुरवैया, ढुढ़िया और जैसुरिया अगहन तक पक जाते हैं। ताल के ऊपरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भाग में जहाँ कलंजी और सिंगरा छिटक कर बोते हैं, धान की खड़ी फस्ल में कसारी और रबी में चना बो दिया जाता है।

जापानी ढंग से धान की खेती

जापानी धान की खेती और हमारे देश की उन्नत धान की खेती में थोड़ा सा ही अन्तर है। किन्तु दुर्भाग्यवश हमारे यहाँ औसत पैदावार दस मन प्रति एकड़ से अधिक नहीं है, जबकि जापान में ४४ मन प्रति एकड़ से अधिक है। नीचे लिखी रीति से धान बोने से बीज कम लगता है, पैदावार तिगुनी होती है और श्रम की भी बचत होती है।

भूमि व तैयारी—इसकी खेती के लिए उचित भूमि होना आवश्यक है। दोमट और मटियार भूमि इसके लिए सर्वश्रेष्ठ है। हमारे यहाँ धान के खेत को गर्मी में तीन चार बार जोत देने से खर पतवार भी नष्ट हो जाता है और उपज भी बढ़ जाती है।

पौधघर—पौधघर का स्थान ऐसी जगह पर होना चाहिये जहाँ गर्मी में भी पानी दिया जा सके। क्यारी बनाने के पहले खेत की जुताई भलीभाँति कर देनी चाहिये। क्यारी २५ फीट लम्बी और ४ फीट चौड़ी होनी चाहिये और उसमें पानी न रुकना चाहिये ताकि पौधों की जड़ों को हवा मिलती रहे। फालतू पानी के निकास के लिये क्यारी के चारों ओर डेढ़ फुट गहरी और १ फुट चौड़ी नाली बना देना चाहिये और उससे निकली मिट्टी को क्यारी में डाल देना चाहिये।

खाद—उपरोक्त नाप की प्रत्येक क्यारी में १ मन सड़ी हुई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिट्टी अच्छी तरह मिलाकर बराबर कर देना चाहिये। इसके ऊपर लगभग १/२" छनी हुई कम्पोस्ट और उसके ऊपर राख की एक पतली तह फैला देनी चाहिये। इसके बाद आधा पौंड अमोनियम सल्फेट और आधा पौंड सुपर फास्फेट मिलाकर छिड़क देना चाहिये।

बुवाई—एक एकड़ में धान रोपने के लिये १/२० एकड़ में बेड़ लगानी चाहिये। उपरोक्त नाप की २० क्यारियाँ १/२० एकड़ के बराबर होती हैं।

सर्वप्रथम उन्नत-बीज लेकर बोने से पूर्व एक बाल्टी में एक मुट्ठी नमक डाल कर मिलाये हुये पानी में डाल देना चाहिये। नीचे बैठे हुये बीज निकाल कर अच्छे पानी में धोकर छाया में सुखा लेना चाहिये और इन्हें पौध घर में बोना चाहिये। उपरोक्त नाप की एक क्यारी में आधा सेर बीज बोना चाहिये। बोने के बाद बीज को पतली मिट्टी की परत डालकर हल्के हाथ से दबा देना चाहिये और दूसरे दिन नाली से अथवा हजारे से पानी देना चाहिये। पानी को क्यारी के ऊपर ६-७ घंटे से अधिक न रहने देना चाहिये। ८ दिन के बाद खुरपी से निराई कर देनी चाहिये।

जब पौधों में छठी पत्ती निकल आवे तब वे रोपने के योग्य हो जाते हैं। तैयार होने पर उन्हें शीघ्र ही रोप देना चाहिये।

धान के खेत को गर्मी की जुताई के बाद वर्षा होते ही पुनः जोत देना चाहिये।

यदि हरी खाद, जैसे सनई या ढांचे का प्रयोग किया जाय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तो अधिक उपज हो सकती है। हरी खाद बोने के पहले, खेत में सवा मन सुपरफास्फेट डालने से अधिक लाभ हो सकता है। जहाँ कहीं संभव हो हरी खाद को अप्रैल या मई में ही बोकर जून के अन्त तक खेत में अवश्य जोत कर मिला देना चाहिये। हरी खाद जोत कर खेत में पानी भर देना चाहिये और रोपाई कर देनी चाहिये। हरी खाद सड़ती रहेगी और धान भी जड़ पकड़ लेगा।

खेत की मेंड ऊँची और मरम्मत करके मजबूत कर देनी चाहिये, जिससे चूहे तथा अन्य जानवर फसल को नुकसान न पहुंचा सकें। रोपाई के पहले आखिरी जुताई के समय १५ से २० गाड़ी सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट या १०, १२ मन खली की खाद फी एकड़ के हिसाब से प्रयोग करना अधिक पैदावार के लिए परम आवश्यक है। जिस खेत में हरी खाद का प्रयोग किया गया हो उसमें इन खादों की मात्रा आधी कर देना चाहिये।

रोपाई—क्यारियों में से बेड़ निकालते समय इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि इनके तने या जड़ों को किसी तरह से नुकसान न पहुंचे। अगर क्यारी की मिट्टी कड़ी हो गई हो तो खुरपी के सहारे बेड़ को उठाना चाहिये जिससे वे आसानी से निकल आवें। एक दो बेड़ ही हर सूराख में काफी होंगे।

पौधों को पहले दो अंगुलियों और अंगूठे के बीच में, अंगूठा ऊपर की ओर रखते हुए, पकड़ना चाहिये, जिससे पौधे जमीन के अन्दर पहली दो अंगुलियों से बनाये हुये सूराख में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आसानी से रखे जा सकें। ऐसा करते समय किसी तरह का दबाव पौधों पर नहीं पड़ना चाहिए।

रोपाई कतारों में ही करनी चाहिये। कतारों की दूरी एक दूसरे से १० इंच और पौधों के बीच की भी दूरी इतनी होनी चाहिये जिसमें गुड़ाई के औजार आसानी से चल सकें। रोपाई के काम को जल्दी समाप्त करने के लिये सीधी लकीरों में एक रस्सा तानकर १०-१० इंच की दूरी पर निशान बना देने चाहिये और उन्हीं पर पौधों को रोपते जाना चाहिये।

३–पौधों की देखभाल—रोपाई के दो सप्ताह बाद और फिर जब जब आवश्यकता पड़े, गुड़ाई पूरी तरह से करनी चाहिए। उपजाऊ भूमि में घास-पात अधिकता से उग आते हैं, इन्हें शीघ्र निकाल देना चाहिये। जल्दी पकने वाले धान के लिये ३ बार गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है और देर में पकने वाले धान के लिये ४ बार। गुड़ाई करने के बाद पौधों की जड़ों के आस पास की मिट्टी हाथ से कुरेदनी चाहिए ताकि उनमें हवा आती-जाती रहे। फूल आने के दस बारह दिन पहले गुड़ाई बन्द कर देनी चाहिये।

समय समय पर पानी लगाना अच्छी पैदावार के लिये बहुत आवश्यक है। शाख निलकने और फूल आने के समय सिंचाई की विशेष आवश्यकता पड़ती है।

उत्तर प्रदेश में ५०-६० पौंड तक नत्रजन (सल्फेट आफ अमोनिया के रूप में) प्रति एकड़ के हिसाब से उन खेतों में डाला जाता है जिनमें कम्पोस्ट या गोबर की खाद पहले से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

डाली गयी हो। लेकिन हर हालत में किसान को कम से कम २० पौंड फी एकड़ के हिसाब से नत्रजन (सवा मन सल्फेट आफ अमोनिया) प्रयोग करना चाहिए। खाद को पौधों की जड़ों में ही आम तौर से डालना चाहिये। जापान में केवल इस ढंग से खाद डालने से ही वहाँ की पैदावार १० फीसदी बढ़ गई है। सल्फेट आफ अमोनिया को रोपाई के तीन चार हफ्ते बाद डालना चाहिये।

जल्द होने वाले धान के बाद चना टाइप ८७ या मटर टाइप १६३ बोया जा सकता है। दोनों फसलें अच्छी पैदावार दे देंगी; विशेषकर जब धान के खेत में काफी खाद पड़ी हो। यदि सिंचाई का साधन हो तो बरसीम भी चारे के लिये उगाया जा सकता है देर से पकने वाले धान के खड़े खेत में ८ सेर प्रति एकड़ के हिसाब से बरसीम बोना चाहिये। इसकी बोवाई आखिरी सिंचाई के बाद करनी चाहिए।

जापानी धान की खेती करने के लिये उत्तर प्रदेशीय सरकार (१) उपयुक्त उन्नतिशील बीज और सस्ते दामों में अमोनिय सल्फेट देती है।

गन्ना

भारतवर्ष गन्ने की आदि जन्म भूमि माना जाता है। यहाँ से ही यह पूर्वी और पश्चिमी देशों में फैला है। अथर्ववेद में इसके गुणों का वर्णन मिलता है।

भूमि—इसके लिये दोमट भूमि वाले खेत सबसे अच्छे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

माने जाते हैं। भारी दुमट और नीची भूमि में भी जहाँ अधिक पानी न रुकता हो अच्छा होता है।

भूमि की तैयारी व खाद—गर्मी के दिनों में थोड़ी बहुत वर्षा न होने पर अन्य साधनों की सहायता से सिंचाई करके किसी मिट्टी पलटने वाले हल से जोत देना चाहिये। इससे अनेक हानिकारक कीटाणुओं के अंडे नष्ट हो जाते हैं। वर्षा के प्रारंभ में सनई, ढेंचा, लोबिया की हरी खाद बोकर जोत देनी चाहिये। इसके एक माह बाद गन्ने की गुताई प्रारंभ करनी चाहिये। कम से कम ७-८ जुताइयाँ अवश्य होनी चाहिये। इसके लिये कल्टीवेटर लाभदायक है। जिन खेतों में खरीफ की फसल ली गई हो उनकी जुताई फसल कटने के बाद ही प्रारंभ कर देनी चाहिये। जुताई के पूर्व खाद डालना आवश्यक है। प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि गन्ने को १२० पौंड नाईट्रोजन की आवश्यकता होती है, जो ६०० मन सड़ी हुई खाद में होती है। इसके अभाव को हरी खाद और १५० मन गोबर की सड़ी हुई खाद तथा तीन मन अमोनियम सल्फेट या १५ मन अंडी, मूँगफली या नीम की खली देकर भी पूरा किया जा सकता है। नालियों या कूंड़ों में गन्ना डालने से पूर्व, प्रति एकड़ चार मन के हिसाब से बोन मिल या सुपर फास्फेट डालने से गुड़ और शकर की मात्रा बढ़ जाती है। जब गन्ने की बुआई अरहर, मूंग या मूंगफली के बाद की जाय तो इनकी मात्रा आधी कर देनी चाहिये।

जातियाँ—ईख की कई जातियाँ होती हैं। भारतवर्ष का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्राचीन गन्ना जिसे धौंर, पनगा और डगनच कहते हैं, अब नहीं बोया जाता। गन्ने की उन्नतिशील जातियों में कोयम्बटूर नं० ४५३, ३१३, ५२७, ३३१, ३४१, ५५६ तथा कोयम्बटूर शाहजहाँपुर ७६, ३२१, १०९, १८६ और २४५ तथा कोयम्बटूर करनाल ३० हैं। उत्तर प्रदेश के भिन्न-भिन्न भागों में जो जातियाँ अच्छी हैं उनका विवरण नीचे दिया जाता है—

पूर्वी, मध्य पूर्वी तथा बनारस का क्षेत्र—कोयम्बटूर ३१३, ५१३, ३९५, ३६३, ३५६, ३७०, ३५३ और कोयम्बटूर शाहजहाँपुर १०९।

मध्य क्षेत्र—कोयम्बटूर ३१३, ३८५, ५२७, ३६३, ४५१-४५३ और कोयम्बटूर करनाल ३०।

रुहेलखंड क्षेत्र—कोयम्बटूर ३१३, ४५६, ४२१, ४५३ को० शा० ७५, १८६ और २४५।

पश्चिमी क्षेत्र–को० ३१३, ३८५, ४२१, ३५५, ४५३ और को० शा० २४५, ३२१।

बुवाई—बुवाई के लिये बीज छाँटते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये:—

जिस खेत से बीज लेना हो उसका बीज गिरा हुआ न हो, और उसके कल्ले सूखे हुये न हों। फसल में किसी प्रकार की बीमारी न होनी चाहिये।

खेत से गन्ना काटने के बाद जल्दी से जल्दी टुकड़े काट कर बो देना चाहिये। बीज के टुकड़े तीन २ आँख वाले और पूर्ण स्वस्थ होने चाहिये। लगभग १४,००० ऐसे टुकड़े प्रति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एकड़ बोये जाते हैं। औसत से पतली किस्म होने पर ४० से ५० मन और मोटी होने पर ६० से ७० मन प्रति एकड़ लगेगा।

जैसा कि बताया जा चुका है खली और अमोनियम सल्फेट, बोने के पहले, खेत में देना आवश्यक है। गन्ना सीधी कतारों में २॥ या ३ फिट की दूरी पर बोवाई करनी चाहिये। इसमें रस्सी की सहायता ली जा सकती है। कूंड़ इतने गहरे होने चाहिये कि गन्ने के टुकड़े २ या २॥ इंच नीचे रहें। कूंड़ बन जाने पर उनमें अमोनियम सल्फेट अथवा बारीक खली की खाद डालनी चाहिये। नमी कम होने पर इसके पूर्व ही इसे दे देना चाहिये। दीमक की अधिकता होने पर नीम की खली का प्रयोग लाभदायक है। कूंड़ बन जाने के बाद तुरंत बोवाई करनी चाहिये। बोवाई कूंड़ के प्रति फुट लम्बाई पर एक तीन आँख वाले टुकड़े के हिसाब से करनी चाहिये।

बीज की बोवाई सदा फरवरी या १५ मार्च तक अंतिम रूप से समाप्त हो जानी चाहिये। बोवाई के बाद इनको ढँक देना चाहिये। दो फीट की दूरी पर बोवाई होने पर डेल्टा हल द्वारा और २॥ से ३ फिट की दूरी होने पर कूंड़ की बगल में देशी हल चलाने से अथवा छोटा पाटा चलाने से कूंड़ पट जाते हैं। कूंड़ पट जाने पर एक बड़े पाटे द्वारा मिट्टी को अच्छी तरह दबा देना चाहिये। इससे खेत में नमी बनी रहती है।

ठंडक होने पर ६-७ सप्ताह तक और मध्यम मौसम में जल्दी ही अंखुए निकलना प्रारंभ हो जाते हैं। इस समय यह संभव है कि खेत सूख कर कड़ा हो गया हो इसके लिये फोड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अथवा काँटेदार कुदाली से बहुत हल्की गुड़ाई कर देनी चाहिए। लीवर हैरो से भी काम लिया जा सकता है। लगभग अप्रैल तक बोया हुआ गन्ना उग आता है। यदि इस समय पानी बरस जाता है तो गुड़ाई की पुनः आवश्यकता होती है।

गन्ने की बुवाई के बाद जून तक मौसम खुश्क रहता है। यह गन्ने के बढ़ाव का समय है। इस समय पानी की अत्यन्त आवश्यकता होती है। आखीर अगस्त, सितम्बर और अक्टूबर में जब गन्ने में शकर पड़ने लगती है, तब सिंचाई की सख्त जरूरत होती है। अच्छी तरह से खाद दिये गये खेतों में ५ से ८ सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। इनमें से पहली चार, बोने से लेकर जून तक और शेष, मौसम के अनुसार होनी चाहिये।

निराई गुड़ाई—गन्ने के खेत की मिट्टी कड़ी न होने देना चाहिये, इसके लिये कल्टीवेटर या हैंडहो से गुड़ाई करना उचित है ताकि उसकी जड़ें फैल सकें। वर्षा के प्रारम्भ में ही जुलाई के अंत तक जब पौधे ढाई तीन फीट के हो जायें तब दोनों ओर से मिट्टी लेकर पौधों के चारो ओर चढ़ा देनी चाहिये, जिससे पौधे गिरने से बचें और अंखुयें खूब फुटें। मिट्टी चढ़ाने के साथ ही गन्ने के कई कई पौधों को अगौरों (ऊपर की पत्तियों से) बांध देना चाहिये।

फसल की तैयारी—गन्ना नवम्बर से कटने लगता है और फरवरी मार्च तक समाप्त हो जाता है। जरी रखने के लिये फरवरी तक कटाई अवश्य हो जानी चाहिये। जरी अथवा पेड़ी रखने के लिये फसल काटने के बाद बड़ी-बड़ी पत्तियाँ और घास फूस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हटाकर सिंचाई करनी चाहिये और ओट आने पर मिट्टी पलटने वाले अथवा देशी हल से जुताई कर देनी चाहिये और वर्षा के पूर्व घूरे की सड़ी हुई खाद और अंडी अथवा मूंगफली की खाद फैलाकर मिलवा देना चाहिये ।

गन्ने की बीमारियाँ—जैसे ही गन्ने के टुकड़े खेत में बोये जाते हैं दीमक उन्हें खाना आरम्भ कर देते हैं । इससे बचने के लिये गन्ने के सिरे के टुकड़ों को तारकोल से पोत देते हैं । यदि २% फिनाइल के पानी में, बोने से पूर्व २४ घंटे डुबो दिया जाय, तो इससे बहुत कम हानि होती है । बोवाई के पूर्व कूंड़ों में १५ सेर प्रति एकड़ गैमक्सीन मिट्टी में मिला कर डाल देने से भी रक्षा होती है । सिंचाई करते रहने से भी यह दब जाता है । जिस खेत में सफेद मक्खी लग जाती है उसका रंग हरे के बजाय ताँबे जैसा हो जाता है । इसका जोर अगस्त व सितम्बर के महीने में अधिक होता है । इससे बचने लिये कीड़ों की खाई हुई पत्तियों को अलग कर जला देना चाहिये और नीची भूमि में खेती नहीं करनी चाहिये । भूरे रंग का फुदकने वाला कीड़ा (पाइरिल्ला) पौधे के रस को चूस कर उसको कमजोर कर देता है । इसके अंडे-बच्चे गन्ने की पत्तियों पर पलते हैं । ऐसी पत्तियाँ तोड़ कर जला दी जायँ अथवा प्रति एकड़ १५ सेर गैमक्सीन वर्षा के अंत में छिड़क दी जाय ।

उपरोक्त रोगों के अतिरिक्त सूड़ियाँ, सूखा या काना और कंडुवा के रोग भी इसमें लगते हैं । सूड़ियाँ और सूखा में पौधे सूख जाते हैं । कंडुवा में गन्ने से एक काली सी सिकुड़ी हुई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चीज निकल आया करती है। इसके द्वारा ग्रसित पौधों को तुरन्त उखाड़ कर जला देना चाहिये।

गुड़ व राब तैयार करना—हमारे देश में गन्ने से गुड़ व राब बनाने का उद्योग बड़ा प्राचीन है। कोल्हू में गन्ने को पेर कर उसका रस निकाला जाता है। इसे लोहे के कड़ाह में छान कर खूब उबाला जाता है। इसी बीच रस की सफाई के लिये उसमें सज्जी सोडा जैसे पदार्थ डाले जाते हैं और एक प्रकार के झरने तथा एक लकड़ी के हत्थे की सहायता से उसके ऊपर आया हुआ मैल निकालते रहते हैं। इन्हें चदना और पतोई कहते हैं। किसान इन्हें बड़े चाव से खाते हैं। एक निश्चित ताव पर पहुँचने पर उसे घोटा जाता है ताकि उसमें जलन न आ जाय। पका हुआ माल कढ़ाव से निकाल कर चौरस पेंदी के कढ़ाव या निश्चित आकार के पात्रों में भरकर ठंढा किया जाता है। गुड़ बनाने के लिये इनमें कुछ देर तक पाग को चलाया जाता है। रस पेरने में देशी कोल्हू का प्रयोग करने पर रस का परता ५० या ५५ प्रतिशत पड़ता है जब कि सुल्तान, कुमार और हाथी आदि तीन बेलन वाले कोल्हुओं से यह परता ५७ से ६५ प्रतिशत पड़ता है। इसके साथ ही इनसे एक घंटे में २-३ मन गन्ना पेरा जा सकता है। बड़े पैमाने पर यह उद्योग करने पर इंजन के कोल्हू का प्रयोग करना चाहिये। इससे रस का औसत ७० प्रतिशत के लगभग पड़ता है। जालंधर, बिलारी, तूफान, और हादी नामक उन्नतिशील भट्ठियाँ काम में लाने से थोड़े समय में अधिक रस पकता है। कड़ाह में एक सा और आवश्यकतानुसार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आंच लगती है तथा ईंधन की भी बचत होती है। गुड़ और राब साफ, चमकीली, दानेदार तथा एकसां तैयार होती है। उत्तम ढंग यह है कि गुड़ बनाने के लिये भट्ठी पर एक अथवा दो तथा राब के लिये और अधिक कड़ाह काम में लाये जायँ। इन्हें परछी, निरखा, फूला एवं होंज कहते हैं। इनका आकार भिन्न-भिन्न और इनकी चद्दरें मोटे लोहे की होती हैं। इससे चाशनी जलती नहीं है भट्ठी की राख बराबर निकालते रहना चाहिये और ईंधन भी नियंत्रित ढंग से लगाना चाहिये। कड़ाह में रस डालने के पूर्व उसे खूब छान लेना चाहिये। रस ताजा ही हो अन्यथा गुड़ और राब उत्तम नहीं होगी। मैल काटने के निमित्त चतुर किसान रस में उबाल आने पर देवला, सकुलाई, भिन्डी, सेमल अथवा फालसे की छाल का लुबाब डालते हैं। कड़ाह से मैल बराबर निकालते रहना चाहिये। रस साफ करने के लिये सज्जी तथा सोडा का पानी काम में लाना चाहिये। चाशनी का ताव जानने के लिये अनुभवी व्यक्ति की आवश्यकता होती है। गुड़ की चाशनी गाढ़ी तथा राब की पतली ही उतारी जाती है। १०० मन गन्ने में १२ मन राब और १० मन गुड़ तैयार होता है।

समृद्ध किसान सहकारिता के आधार पर सेंट्रीफ्यूगल मशीनों द्वारा राब से कच्ची शक्कर तैयार करते हैं। हाथ से चलायी जानेवाली सेंट्रीफ्यूगल मशीन से एक घंटे में लगभग दो मन राब पेरी जा सकती है। इससे ३०–३५ सेर के करीब अव्वल दर्जे की कच्ची शकर तैयार होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कपास

बहुत ही प्राचीन काल से हमारे देश में कपास की खेती होती चली आ रही है। यह एक रेशेदार पैदावार है। देश का विभाजन होने के पूर्व भारतवर्ष में कपास बहुत होती थी परन्तु विभाजन के बाद कपास की खेती में एक बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ। कपास पैदा करने वाला अधिकांश क्षेत्र पाकिस्तान के साथ चला गया। फलस्वरूप भारतवर्ष की सूती मिलों के सामने कच्चे माल का संकट उपस्थित होने लगा।

उन्नत कपास—आज किसान यदि तनिक भी समझ से काम लें तो लम्बे रेशे वाली कपास "सी ५२० तथा २१६ एफ" पैदा करके बहुत लाभ उठा सकते हैं। कपास का बीज सी ५२० तथा २१६ एफ उन्नतिशील बीज हैं और १५ मई के बाद बोया जा सकता है। जहाँ सिंचाई की सुविधा है वहाँ यह बीज १५ मई से पहिले भी बोया जा सकता है।

भूमि व खाद—कपास के लिये सबसे अधिक उपयुक्त दुमट मिट्टी है परन्तु चिकनी दुमट मिट्टी में भी यह पैदा होती है। एक बात ध्यान में रखने योग्य यह है कि कपास के लिये उतनी ही खाद की आवश्यकता है जितनी कि गेहूँ के लिये, अतः बीज बोने से पूर्व मिट्टी में पर्याप्त खाद मिला देनी चाहिये।

बीज व बुवाई—बीज प्रति एकड़ ८ या १० सेर से अधिक न बोना चाहिये। बीज को बोने से पूर्व उसे कीचड़ गोबर तथा राख के साथ मिलाना चाहिये। ऐसा करने से बीज नमी को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पकड़ लेता है और शीघ्र ही उग आता है। बीज को पंक्तियों में बोना चाहिये और बाद में इस प्रकार से लगाना चाहिये कि एक पंक्ति दूसरी पंक्ति से १॥ फीट की दूरी पर तथा एक पौधा दूसरे पौधे से ६ इंच की दूरी पर हो।

सिंचाई व गुड़ाई—कपास पर्याप्त पानी चाहती है परन्तु यदि खेत में २४ घंटे से अधिक समय तक पानी भरा रहा तो पैदावार को हानि ही नहीं पहुंचती है अपितु पौधे मर जाते हैं। नमी को बनाये रखने के लिये अकोला हल द्वारा गुड़ाई करनी चाहिये। अकोला हल इस काम के लिये अधिक उपयुक्त है। दो पानी देने के बीच में एक बार गुड़ाई करने से बहुत लाभ होता है तथा नमी भी बनी रहती है। ऐसा करने से यदि पानी की थोड़ी कमी भी हो जाय तो फसल को हानि नहीं पहुँचती।

फसल की तैयारी—हमारे यहाँ कपास का चुनना अक्टूबर में शुरू होता है और दिसम्बर तक चलता है।

बीमारियाँ—कपास में आम तौर से दो बीमारियाँ लगती हैं। एक में तो पौधों की जड़ें सड़ने लगती हैं और दूसरी बीमारी में कपास के फूल पकने से पहिले ही झड़ जाते हैं। प्रथम बीमारी के लिये तो यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि मटर तथा मूंगफली के खेत में कपास नहीं बोनी चाहिये तथा दूसरी बीमारी से बचने के लिये कपास का उन्नतिशील बीज २१६ एफ तथा सी ५२० ही बोना चाहिये।

लम्बे रेशे वाली कपास का बीज किसी भी सरकारी कृषि बीज भंडार अथवा सहकारी बीज भंडार से प्राप्त हो सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिन किसानों के पास सिंचाई के लिये कोई साधन नहीं है उन्हें चाहिये कि वे देशी कपास के बीज को बोयें। देशी कपास का बीज भी उपरोक्त दोनों बीज-भण्डारों से प्राप्त हो सकता है।

चेना

यह जायद की फसल है। इसे जेठऊ साँवाँ भी कहते हैं। इसका जिक्र हम साँवाँ की फसल के साथ कर चुके हैं। दक्षिण पूर्वी अवध में यह बहुत होता है। जब रबी और खरीफ की फसलें मारी जाती हैं तो इसकी फसल का बड़ा सहारा होता है।

भूमि व तैयारी—दोमट और बलुही मटियार भूमि चेना की फसल के लिये अनुकूल होती है। शीघ्र पकने वाली रबी की फसल कटने के बाद या गन्ने की फसल के बाद खेत की एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से कर देनी चाहिये। फिर ३-४ जुताइयाँ साधारण देशी हल से करनी चाहिये ताकि मिट्टी भुरभुरी हो जाय। भूमि में नमी कम होने पर पलेवा देकर जुताई कर देनी चाहिये।

खाद—गन्ने की फसल के बाद ७०–८० मन गोबर या कम्पोस्ट की खाद पर्याप्त होती है।

बीज और बुवाई—एक एकड़ में ४-५ सेर बीज लगता है और बुवाई अन्तिम फरवरी से अप्रैल के मध्य तक होती है। इसकी बुवाई १ या १॥ फुट के अन्तर पर बनी पंक्तियों में हल के पीछे करनी चाहिये।

सिंचाई—इसकी सिंचाई हर सप्ताह एक बार अवश्य ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर देनी चाहिये क्योंकि जायद की अन्य फसलों के समान इसे भी पानी की अधिक आवश्यकता होती है।

कटाई और उपज—बोने के दो महीने में फसल पक कर तैयार हो जाती है। काटने में देर करने पर दाने बिखर जाने का भय रहता है। एक एकड़ में १०-१२ मन अन्न और लगभग उतना ही चारा मिलता है।

चारे की फसलें

चारे की फसलों में ज्वार, मक्का, जई, नेपियर या हाथी घास, गायनाघास, लाही, सरसों, बरसीम, लूसर्न, ग्वार, मटर, मेथी और मोठ की फसलें आती हैं। अन्न की फसलों के साथ ही इनमें से बहुतों पर प्रकाश डाला जा चुका है। शेष के संबंध में इस अध्याय में जिक्र किया जायगा।

ग्वार

ग्वार की हरी फली तरकारी के भी काम आती है। इसे बाहवाह की फली भी कहते हैं। इसका दाना अधिक मात्रा में पशुओं को न देना चाहिये अन्यथा अफरा रोग होने का भय रहता है। इसके लिये दोमट भूमि अधिक उपयुक्त होती है और वर्षारंभ होने पर जून व जुलाई में इसे बोया जाता है। अकेला बोने पर १५ से २० सेर और दाने के लिये बोने पर १० सेर बीज प्रति एकड़ का औसत पड़ता है। खेत की तैयारी साधारण तथा बुवाई छिटकवां या कूड़ें बनाकर दोनों ही प्रकार से की जाती है।

फूल आते ही इसकी चरी चारे के लिए काटना शुरू कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देना चाहिए। अगस्त से सितम्बर के मध्य एक एकड़ में किसान को प्रायः दो सौ मन हरा चारा मिल जाता है। दाने के लिए फसल अक्टूबर नवम्बर में तैयार होती है। दाने की उपज १० से १५ मन प्रति एकड़ होती है।

जई

जई को अक्तूबर और नवम्बर में बोया जाता है। यह ठंढे प्रदेशों में अधिक होती है इसकी खेती जौ की भांति की जाती है। प्रति एकड़ डेढ़ सौ मन गोबर की खाद दे देना और खरीफ के बाद १ जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद दो तीन जुताई साधारण हल से कर देना काफी है। इसका बीज लगभग ५० सेर प्रति एकड़ लगता है। चारे के लिए जई की दो कटाइयाँ की जाती हैं। इसकी पहली सींच शुरू दिसम्बर में और दूसरी पहली कटाई के बाद (जनवरी से दूसरे हफ्ते के प्रारंभ में)। दूसरी कटाई फरवरी में होती है। प्रति एकड़ लगभग ढाई सौ मन हरा चारा या १५-२० मन दाना प्राप्त होता है।

मेथी

मेथी चारे के लिये रबी में बोई जाने वाली फसल है। चारे के अलावा इसके दाने का चबेना भी बनता है जो बड़ा स्वादिष्ट होता है। हल्की दोमट भूमि इसके लिये अच्छी रहती है। जई के समान ही इसकी भी तीन चार जुताइयां खरीफ कटने के बाद की जाती हैं। सौ सवा सौ मन गोबर की खाद एक एकड़ में काफी होती है। इसका बीज नवम्बर में छिटकाकर बोया जाता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
है और कल्टीवेटर से भूमि में मिला दिया जाता है। कुछ लोग हल के पीछे कूँड में भी बुवाई करते हैं। एक एकड़ में १४-१५ सेर बीज लगता है। दो तीन सिंचाई काफी हैं। प्रायः जनवरी फरवरी में एक या दो कटाइयाँ की जाती हैं। प्रति एकड़ २०० मन के लगभग हरा चारा प्राप्त होता है।

मोठ

निर्बल खेतों में चारे के लिए प्रायः मोठ की फसल बोते हैं। शुरू बरसात में जुलाई के महीने में १०-१२ सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से छिटकवाँ बोया जाता है। दिसम्बर में चारे के लिए कटाई प्रारंभ करते हैं। प्रति एकड़ ६० से ८० मन हरा चारा प्राप्त होता है।

रिजका या लूसर्न

यह उष्ण और शीत दोनों प्रकार की जलवायु में होने वाला एक बहुवर्षीय पौधा है। ४० इंच से अधिक वर्षा वाले स्थान इसकी फसल के अधिक उपयुक्त होते हैं। इसका हरा चारा घोड़े बड़े चाव से खाते हैं। गाभिन पशुओं को इसका चारा न देना चाहिये। दुधारू पशु का भूसा या कुट्टी के साथ हरियारी के ही रूप में देना चाहिये। हल्की दोमट भूमि इसकी खेती के लिये अच्छी रहती है। खेत की तैयारी गेहूँ के ही समान होती है और डेढ़ सौ मन गोबर की खाद प्रति एकड़ पर्याप्त है।

बुवाई—इसकी बुवाई अक्टूबर-नवम्बर में होती है और एक एकड़ में ६ से ८ सेर तक बीज लगता है। इसे प्रायः खेत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
में क्यारियाँ और नालियाँ बनाकर बोया जाता है। इनमें बीज छिड़कने के बाद उसे मिट्टी में मिलाकर तुरन्त सिंचाई कर दी जाती है। दूसरा ढंग यह है कि खेत में दो दो फीट के अन्तर पर ८ इंच ऊंची और दो फीट चौड़ी मेंड़ बना कर उन पर रिजका के बीज बोये जायँ और उसी दिन बीच की नाली में पानी दे दिया जाय। बीज ठीक से न जमने पर अगले सप्ताह पुनः सिंचाई कर दें। जाड़ों में प्रति माह १ बार और गर्मी में दो बार सिंचाई करते रहना चाहिये।

निराई गुड़ाई—खर फूस बराबर साफ करते रहें। एक कटाई के बाद मिट्टी मुलायम कर पुनः मेंड़ों पर चढ़ा दें। बरसात के बाद गुड़ाई कर देनी चाहिये। पहली कटाई के बाद में गुड़ाई के पश्चात् ६०-७० मन प्रति एकड़ गोबर की खाद देकर सिंचाई कर दें।

कटाई—बोने के बाद तीसरे महीने में पहली कटाई होती है। इसके बाद बरसात को छोड़ कर प्रत्येक महीने के बाद कटाई होती है। ठीक ढंग से देख रेख करने पर ४-५ वर्ष तक चारा मिलता रहता है। एक वर्ष में ७-८ कठाइयों में ७-८ सौ मन चारा मिलता है।

यदि रिजके का बीज लेना हो तो जनवरी के बाद कटाई नहीं करनी चाहिये और फूलने देना चाहिये। मई-जून में फसल काट कर मड़ाई कर बीज निकाल लें। बीज पहले साल की फसल से नहीं लेना चाहिये। एक एकड़ में लगभग ६ मन बीज होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नेपियर या हाथी घास

गन्ने के समान पत्तियों वाला यह एक बहुवर्षीय पौधा है। ३-४ वर्ष से अधिक एक खेत में इसकी फसल न रखनी चाहिये। यह मार्च से सितम्बर तक बढ़ती है। दोमट या हल्की दोमट भूमि में ३-४ जुताइयाँ और २०० मन गोबर की खाद काफी है। इसकी बुवाई तने के टुकड़े काटकर जड़ों द्वारा की जाती है। वर्षा प्रारंभ होने पर १८-२० मन जड़ें प्रति एकड़ के हिसाब से ३-३ फीट के अन्तर से लगा दें। एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति की दूरी भी २-२॥ फीट हो। बरसात को छोड़कर महीने में १ सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिये। पहली कटाई, बुवाई के ४ महीने बाद और फिर दो महीने के अन्तर से करते रहना चाहिये। सिंचाई ठीक होने पर ८-१० और वैसे ५-६ कटाइयाँ की जा सकती हैं। एक एकड़ में १ हजार मन के लगभग चारा मिलता है।

गायना घास

यह घास गर्मियों में बढ़ने वाली और बहुवर्षीय होती है। दोमट भूमि में ३-४ जुताइयाँ और दो ढाई सौ मन गोबर की खाद प्रति एकड़ पर्याप्त है। इसकी बुवाई बीज या जड़ों दोनों ही से होती हैं। एक एकड़ में १५ मन जड़ें दो फीट के अंतर पर बनी पंक्तियों में ३-३ फीट के अन्तर से बोनी चाहिये। साल भर में ७-८ सिंचाइयाँ कर देनी चाहिये। ३-४ फीट की होने पर पहली कटाई करे। वर्ष में ७-८ कटाइयों में लगभग १००० मन चारा मिलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बरसीम

चारे की फसलों में बरसीम का विशेष स्थान है। यह एक स्वादिष्ट एवं पौष्टिक चारा है। इसका चारा हरा और सूखा दोनों ही प्रकार से खिलाया जाता है। प्रोटीन की मात्रा इसमें अधिक होती है। दाल वाला पौधा होने के कारण खेत की उर्वर शक्ति को भी बढ़ाती है। हरी खादों का जिक्र करते हुये हमने बरसीम पर प्रकाश डाला है। यह बलुई भूमि को छोड़ कर हर भूमि में होती है। वैसे बलुही-दुमट भूमि विशेष रूप से अनुकूल होती है। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद २-३ देशी हल से जुताइयाँ करके पाटा देकर खेत बराबर और मिट्टी भुरभुरी कर देनी चाहिये। इसके बाद दो २ क्यारियाँ बना लेनी चाहिये। एक एकड़ खेत में डेढ़ सौ मन गोबर या कम्पोस्ट की खाद काफी होती है।

बुवाई—एक एकड़ में ८ से १० सेर तक बीज लगता है। यदि खेत में बरसीम की बुवाई पहली २ बार हो रही हो तो इसके बीज के साथ 'बरसीम कल्चर'* मिला दें। इससे पौधों की वृद्धि अधिक अच्छी होती है। क्यारियों में बीज छिड़क

* बीज में 'बरसीम कल्चर' मिलाने के पूर्व आध सेर पानी में १ छटाँक गुड़ घोल कर एक पाव का 'बरसीम कल्चर' का टिन खोल कर भली-भाँति मिला दें। इस घोल को ८-१० सेर बीज पर छिड़क कर उलट-पुलट कर ठीक से मिला दें। उसके बाद छप्पर या अन्य किसी साये के नीचे सुखा लें। यदि कल्चर न मिले तो जिस खेत में बरसीम बोई गई हो उसकी २ इंच मिट्टी एक गाड़ी लेकर बोने के १५ दिन पहले खेत मिला दें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर आध इंच मोटी मिट्टी की तह से ढँक कर हल्की सिंचाई कर देना चाहिये। कहीं २ क्यारियों में पानी भर कर उसमें बीज छिड़का जाता है। यह ढंग अधिक उत्तम सिद्ध हुआ है।

बरसीम की बुवाई अक्तूबर से दिसम्बर के मध्य तक होती है।

सिंचाई-कटाई—बुवाई और कटाई के बीच इसकी दो तीन सिंचाइयाँ काफी होती हैं। हर कटाई के बाद सिंचाई कर देनी चाहिये। गर्मी में पाक्षिक सिंचाई करना चाहिये।

बुवाई के १॥ महीने बाद जब पौधे १० इंच के लगभग ऊँचे हो जाँय तो पहली कटाई करनी चाहिये। अक्तूबर में बोयी गयी फसल से अप्रैल तक ४-५ कटाइयाँ की जाती हैं और लगभग ५-६ सौ मन चारा प्राप्त होता है।

यदि बीज लेना हो तो फरवरी के बाद कटाई न करनी चाहिये और समय २ पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। बीज मई के अंत तक पक जायेगा। एक एकड़ में दो मन के लगभग बीज मिलता है।

सहयोगी कृषि और चकबन्दी

सहकारी कृषि का महत्व कृषक की आर्थिक अवस्था के दोषों पर ही निर्भर नहीं कहा जा सकता वरन् इसके स्वयं भी अनेक गुण हैं। इसके अन्तरगत जब विभिन्न उपजाऊपन की भूमि एकत्र कर ली जाती है तो फसल के नष्ट हो जाने पर किसी एक किसान की व्यक्तिगत हानि नहीं होती वरन् इसके सभी भागीदार होते हैं। इसके अतिरिक्त बैलों व यंत्रों का सुचारु रूप से सहयोग किया जा सकता है और भूमि की चकबंदी की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जा सकती है। चकबन्दी के लाभ बताने की आवश्यकता नहीं। कटे-पिटे टेढ़े-मेढ़े छोटे २ खेतों में न तो किसान ट्रैक्टर आदि आधुनिक मशीनें चला कर उनका लाभ उठा पाता है और न अन्य लाभ ही। अधिकतर खेत बिखरे हुए और दूर-दूर होते हैं इसलिए उनकी देख भाल तथा रखवाली भी नहीं की जा सकती। सहकारी कृषि से यह सभी लाभ होते हैं।

इन सहकारी समितियों द्वारा सरकार को अपनी उपज की योजनाओं को प्रसारित करने में, उन्नतिशील उपायों को कृषकों द्वारा मनवाने में तथा कृषि को उच्च स्तर पर बनाये रखने में किसी अड़चन का सामना नहीं करना पड़ता।

अब प्रायः सम्पूर्ण देश में जमीदारी उन्मूलन हो गया है। इसलिए सहकारी कृषि के होने में जो सबसे बड़ा रोड़ा था वह दूर हो गया है। सहकारी खेती से जो अनेक प्रकार के लाभ होते हैं व्यक्तिगत रूप से खेती करने वाले किसान उनसे वंचित रह जाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि सहकारी खेती का अपना निज का महत्व है।

भारत सरकार की पंचवर्षीय योजनाओं में सामूहिक एवं सहकारी खेती का लक्ष्य रखा गया है। नागपुर कांग्रेस के बाद केन्द्रीय एवं प्रदेशीय सरकारों ने तुरंत सहकारी खेती लागू करने का निश्चय किया है। इस प्रकार देश में उन्नत कृषि संभव हो सकेगी और किसान के श्रम और साधनों का सामूहिक लाभ हो सकेगा। चीन और योरुपीय राष्ट्रों में सहकारी खेती द्वारा खेती की बड़ी उन्नति हुई है। हमारे यहाँ सहकारी खेती समितियाँ कई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकार की होती हैं जिन पर यहाँ संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

(१) सहकारी सुधार कृषि समिति (Cooperative Better Farming Society)-इस प्रकार की समिति में सदस्यों को अपनी भूमि की समिति में इकजाई (Pooling) नहीं करना पड़ता और वे अपनी २ जोत का प्रबन्ध अलग-अलग करते रहते हैं। ऐसी समिति केवल उन्नत खेती करने, सिंचाई, भूमि को बनाने, उन्नत बीज खरीदने, खाद प्राप्त करने, फसल की रक्षा, और उत्पत्ति के समुचित ढंग से विक्रय के लिये उत्तम साधन जुटाने और सहूलियत प्राप्त करने के उद्देश्य से बनाई जाती है।

(२) सहकारी संयुक्त कृषि समिति (Cooperative Joint Farming Society)—इसमें समिति के सभी सदस्य अपनी भूमि को एक में इकट्ठा कर और उस पर संयुक्त रूप से खेती करते हैं। भूमि में अपने हिस्से (Share) तक हर सदस्य का अधिकार माना जाता है। जब लाभ का हिसाब लगता है तो एक निश्चित धनराशि प्रतिवर्ष अलग मान कर हर सदस्य की भूमि के हिस्से के अनुपात से काट ली जाती है। इसी भांति कार्य के समय और दिनों का, मूल लागत, विभिन्न सदस्यों की सेवाओं आदि का भी एक लेखा रखा जाता है और उसी के अनुसार जिसकी जो धनराशि पारिश्रमिक आदि के रूप में निकलती है वह उसके लाभांश में जोड़ दी जाती है। दूसरे शब्दों में इसे इस प्रकार कहा जा सकता है कि इस प्रकार की समिति में सब सदस्यों की भूमि एक में करके उसमें खेती संयुक्त रूप से की जाती है। इसका लाभ एकजाई भूमि में प्रत्येक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सदस्य के हिस्से, सदस्यों द्वारा किये गये श्रम के मूल्य, मूल लागत की पूँजी और अन्य सेवाओं के आधार पर अनुपाततः बटता है।

(३) सहकारी टेनेन्ट कृषि समिति (Co-operative Tenant Farming Society)—इसमें भूमि अलग-अलग सदस्यों की न होकर सोसाइटी की होती है। सोसाइटी की इस भूमि को अलग अलग सदस्यों को खेती के लिये बाँट दिया जाता है और वे सदस्य जब तक समिति के उपनियमों के अनुसार निश्चित शर्तों को पूरा करते रहें, उक्त भूमि पर खेती कर सकते हैं। इस प्रकार की समितियाँ प्रायः कम ही मिलेंगी जिनमें भूमि वास्तव में सोसाइटी की ही हो।

(४)सहकारी सामूहिक कृषि समिति (Cooperative Collective Farming Society)—इस प्रकार की समिति अधिकतर वहाँ पर बनाना आसान है जहाँ भूमि नई है और सदस्य निर्धन या भूमिहीन हैं। इसमें भूमि समिति की होती है और खेती संयुक्त रूप से की जाती है। इसमें सदस्यों में लाभ का वितरण सदस्यों के श्रम, धन और सेवाओं के आधार पर होता है।

सहकारी खेती समिति लिमिटेड बनाने के लिये सर्व प्रथम किसानों को आपस में सहयोग उत्पन्न करने की भावना पैदा करनी चाहिये। प्रत्येक जिले में सहकारी कृषि के विकास में सहायता देने के लिये एक अलग अलग सुपरवाइजर होता है। यह सहकारिता-विभाग के अन्तरगत काम करता है। अतएव कोई समिति बनाने के लिये इससे सम्पर्क करना चाहिये*। जमीदारी

* सहकारी खेती समिति की आदर्श नियमावली, अधीक्षक राजकीय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उन्मूलन एवं भूमि सुधार कानून उत्तर प्रदेश (१९५०) के अन्तर्गत यह व्यवस्था है कि किसी गाँव समाज के १० या उससे अधिक सदस्य जिनके पास सब मिलाकर कम से कम ३० एकड़ भूमि हो, सहकारी फार्म बना सकते हैं। रजिस्ट्रार, कोआपरेटिव सोसाइटीज के यहाँ अपने फार्म का रजिस्ट्रेशन होता है। उसकी नियमावली होती है। इन्हें यह चुनना होगा कि ऊपर बताई हुई तीन प्रकार की सहकारी कृषि समितियों में किसको पसन्द करते हैं। इनमें पहले और दूसरे प्रकार की (सहकारी सुधार कृषि समिति और संयुक्त कृषि-समिति) अधिक सुविधाजनक हैं। संयुक्त सहकारी समितियाँ बहुत ही लोकप्रिय हुई हैं। भूमिहीनों के लिये और निर्धन लोगों के लिये सामूहिक कृषि समिति बड़ी उपयोगी है। जिन ग्रामों में आचार्य विनोबा भावे के भूदान आंदोलन में सम्पूर्ण ग्राम दान हो जाता है वहाँ इस प्रकार की समिति द्वारा खेती होती है। इसके अनुसार भूमि समिति की होती है, व्यक्ति की नहीं। विनोबा जी के अनुसार 'सबै भूमि गोपाल की' अर्थात् भूमि वायु जल प्रकाश आदि के समान समस्त समाज की है और व्यक्ति की नहीं। भूदान आन्दोलन में अनेक ग्राम दान हुये हैं। उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जिले में लक्ष्मणपुर और उन्नाव जिले में पुरुषोत्तम ग्राम और गिरजानगर में समस्त भूमि गाँव की सामूहिक कृषि समिति की है और सभी लोग उसमें सामूहिक रूप से खेती कर आदर्श जीवन बिता रहे

मुद्रणालय लखनऊ से प्रकाशित हुई है। इसे उक्त पते से और कोआपरेटिव विभाग के प्रदेशीय या जिला कार्यालय से प्राप्त किया जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं । अपनी २ सुविधा के अनुसार किसानों को इनमें से किसी एक प्रकार की समिति चुन कर नियमावली पर हस्ताक्षर करके उसकी रजिस्ट्री करा लेनी चाहिये ।

यदि किसी मण्डल की अलाभकर जोतों के भूमिधर या सीरदारों के दो तिहाई लोग, जिनकी जोतों का कुल क्षेत्रफल मिला कर मण्डल की जोतों का सम्पूर्ण खातों के संकलित क्षेत्र-फल, क्षेत्रफल का कम से कम दो तिहाई हो तो वे जिलाधीश को इस आशय का प्रार्थना पत्र दे सकते हैं कि वहाँ एक सह-कारी फार्म स्थापित किया जाय । जिलाधीश शेष सभी खाते दारों को नोटिस देकर पूछेगा कि वे कारण बतावें कि उस मंडल के ऐसे खातों के अंतरगत सब भूमि को मिला कर एक सहकारी फार्म क्यों न स्थापित किया जाय । उनकी आपत्तियाँ सुनने के बाद यदि जिलाधीश इसे सब के हित में समझेंगे तो उस मंडल के अन्तर्गत सभी अलाभकर जोतों को मिलाकर सहकारी फार्म बनाने की आज्ञा दे सकते हैं । ऐसे सहकारी फार्म के सदस्यों की मृत्यु पर उनके उत्तराधिकारी फार्म के सदस्य हो जायँगे ।

विशेष सुविधायें—सहकारी फार्म के लिये सरकार अनेक प्रकार की सुविधायें प्रदान करती है । भूमिकर कम देना पड़ता है और कृषि आय कर में काफी छूट मिल जाती है । सरकारी विशेषज्ञों का वैशेषिक परामर्श ब्याज और ब्याज रहित ऋण या अनुदान और सरकारी नहर आदि सिंचाई के साधनों में प्राथ-मिकता मिलने के अतिरिक्त गाँवसभा से भी भूमि मिलने में प्राथमिकता मिलती है ।

——):❀:(——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सरकारी सुविधायें

संसार में सभी उद्योगधन्धों में बड़ी पूँजी लगी हुई है किन्तु खेती का काम बिना पूँजी वाले अधिकतर अशिक्षित छोटे छोटे परिवारों के हाथ में है। सरकार ने उन कठिनाइयों को ध्यान में रखकर अनेक प्रकार की सुविधायें दी हैं। हर प्रदेश की सरकारी सुविधायें अलग अलग हैं और उनकी शर्तें समय समय पर बदलती रहती हैं। यहाँ केवल उन सरकारी सुविधाओं का जिक्र है जो प्रायः सारे देश में मौलिक रूप से समान हैं। विशेष विवरण के लिये निकटस्थ कृषि अधिकारी या विकास क्षेत्र अधिकरी से सम्पर्क स्थापित करना चाहिये।

नौतोड़ भूमि के लिए ऋण—कृषि के योग्य पुराने बंजर तथा परती भूमि को तोड़ने, समतल करने, मेंड़ बाँधने, जंगली वृक्षों को काटने के लिए, आवागमन के लिए पुल और पानी के निकास के लिए नालियाँ बनाने के लिए सरकार नाममात्र ब्याज पर ऋण देती है। सिंचाई के साधनों के अभाव में कुआँ बनाने के लिये भी सरकार ऋण देती है। इनपर सूद साधारण दर से लिया जाता है।

बीज—खरीफ और रबी की फसलों के उन्नति-प्राप्त बीज अधिक से अधिक इकट्ठा करने के लिये राजकीय बीज-गोदाम खुले हुये हैं। बोने के लिये बीज सवाई पर दिया जाता है।

नौतोड़ भूमि के लिये हरी खाद—जो लोग नौतोड़ भूमि में सनई की हरी खाद देने के इच्छुक होंगे, उन्हें उसका बीज

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सवाई पर न देकर लागत मूल्य पर नकद दिये जाने का प्रबन्ध है।

फसल प्रतियोगिता व पुरस्कार—जिन किसानों की खरीफ और रबी की फसलें प्रत्येक दृष्टि से अच्छी होंगी, उन्हें पुरस्कार देने की व्यवस्था की गई है। यह पुरस्कार क्षेत्रीय, जिले की अथवा प्रान्तीय प्रतियोगिता में सफल होने पर ही मिलेंगे।

रासायनिक खादें—इंपीरियल केमिकल इंडस्ट्रीज इंडिया लिमिटेड के अनेक गोदामों द्वारा रासायनिक खादें (अमोनियम सल्फेट और अमोनियम फासफेट) तरकारियों, गन्ने और धान की फसलों के लिए असली दाम पर मिलती हैं।

जहाँ सिंचाई के लिए न तो नहरें हैं और न ट्यूब वेल ही हैं और जहाँ चारे व अन्न की फसलों की सिंचाई केवल वर्षा पर ही निर्भर है, सिंचाई के हेतु पक्के कुयें बनाने के लिए सरकार आर्थिक सहायता के रूप में बिना ब्याज के ऋण और अनुदान देती है।

इसी प्रकार बैल व कृषि के औजारों के लिये, ट्रैक्टर और उसके औजार खरीदने के लिये, ऊसरभूमि को कृषि योग्य बनाने के लिये, जंगल साफ करने और अन्य प्रकार के भूमि सुधारों के लिये भी भिन्न-भिन्न शर्तों पर तकावी देती है।

सरकारी सुविधायें विशेषरूप से छोटी श्रेणी के किसानों को दी जाती हैं। पक्का कुआँ बनाने के लिये कम से कम ५ एकड़, बैल और औजारों के ऋण व अनुदान के लिये १० एकड़ भूमि चाहिये। पक्का कुआँ बनाने के लिये कई लोग मिलकर ५ एकड़ की शर्त पूरी कर सकते हैं और इसी तरह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आपसी सहयोग से ट्यूब वेल बनाने और ट्रैक्टर आदि खरीदने के लिये भी सरकारी सहायता पा सकते हैं।

दूसरे अन्य बड़े कार्य, जिनमें सरकारी सहायता देती है वे ढालू जमीन को काटने से बचाना और जहाँ वर्षा का पानी जमा होकर हर साल खेती को हानि पहुंचाता है, उसके लिये निकास का मार्ग बनाना है। इसमें भी आपसी सहयोग की आवश्यकता है, क्योंकि यह प्रायः बड़े पैमाने पर लाभदायक होते हैं और इनके न करने से पूरे क्षेत्र के किसान प्रभावित होते हैं।

खेती के लिए उन्नत बीज उन्नतिशील औजार और खाद का प्रबन्ध राजकीय कृषि विभाग पिछले ५०-६० वर्षों से करता आ रहा है। "अधिक अन्न उपजाओ" आन्दोलन के साथ इस तरफ भी विशेष ध्यान दिया गया है। उन्नतिशील औजारों से लाभ उठाने का ढंग यह है कि जो किसान बन्धु इससे जानकरी न रखते हों वह अपने क्षेत्र के 'कृषि-ज्ञान-प्रसार इंसपेक्टर' से कहें कि वह ऐसे औजार उनके खेत में चलाकर दिखाये। उनका प्रयोग जानने और लाभ देखने के बाद किसान इन्हें सरकारी बीज गोदामों से प्राप्त कर सकते हैं। कुछ औजार ऐसे भी हैं जिनका मूल्य अधिक है या जो कभी-कभी काम में आते हैं, ऐसे औजारों को गाँव में कृषि-सभा बनाकर सम्मिलित रूप से खरीदना ही उचित है। इन्हें 'कृषि-ज्ञान-प्रसार इन्सपेक्टर' द्वारा किराये पर भी प्राप्त किया जा सकता है।

खाद की सुविधा के लिये कृषि बीज गोदामों से रासाय-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
निक और खेती की खाद सस्ते दामों में मिलती है। सनई, ढेंचा आदि हरी खादों की फसलों का बीज भी इसी प्रकार कृषि बीज गोदामों से मिलता है, परन्तु यह बहुत आवश्यक है कि किसान कूड़े-करकट से अपने लिए कम्पोस्ट खाद बनायें। जिस गाँव के किसान सीखना चाहें वह कृषि-ज्ञान-प्रसार इन्सपेक्टर के द्वारा कम्पोस्ट मिस्त्री को बुलवा कर कम्पोस्ट खाद बनाना भी सीख सकते हैं। प्रायः हर एक शहर और कस्बे में कूड़े से खेती के लिए कम्पोस्ट बनाया जाता है। दूर के खेतों तक इसकी ढुलाई करना कठिन है, इसलिए शहर के आस-पास के क्षेत्रों में विभाग के मोटर-ठेलों द्वारा ढुलाई कराई जा सकती है।

नहर की पानी की सुविधायें—आजकल वरसात होने तक ज्वार, चरी, मक्का, बाजरा, सावाँ, चीना, मकरा, कोदो और काकुन परती भूमि में बोने के लिए बरसात शुरू होने तक नहर के पानी पर कोई कर न पड़ेगा। वह नहरें जिनमें पानी पम्प से उठाया जाता है, इसकी प्रतिवाद हैं।

बरसीम और अन्य चारे वाली घासों को बोने के लिए आबियाने में छूट दी जाती है जो हर फसल में तोड़ का सिंचाई के लिए १ रुपया और डाल की सिंचाई के लिए ८ आने प्रति एकड़ है। इसी प्रकार रबी के पलेवा के लिए भी नहर का पानी मुफ्त मिलता है। वह नहरें जिनमें पम्प से उठाया हुआ पानी चलता है या बुन्देलखंड की नहरें ऐसी सुविधा नहीं देतीं। परन्तु बेतवा की नहर पर यह सुविधा मिलती है। यह सुविधा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
अगस्त और सितम्बर के महीनों में ही मिलती है। नहरों का जायद पानी किसान अपने तालाबों में भर सकते हैं किन्तु इस अधिकार को ठीक ढंग से इस्तेमाल करना चाहिए।

सरकार पानी के निकास के रास्ते बनाने, नदी झील या तालाब पर पम्प लगाने की सुविधायें भी विशेष रूप से देती है। इनसे किसान तभी लाभ उठा सकते हैं जब वे सामूहिक रूप से प्रयत्नशील हों। सहकारी खेती करने पर भी सरकार अनेक प्रकार की सुविधायें प्रदान करती हैं जो सामान्य किसान को नहीं मिलतीं। इनका जिक्र हमने सहकारी कृषि के अध्याय में किया है।

फसल सुरक्षा—कहने की अवश्यकता नहीं कि फसलों के रोग और खेती विनाशक कीड़े पैदावार को बड़ी हानि पहुँचाते हैं। इसलिए "अधिक अन्न उपजाओ" आन्दोलन की सफलता के लिये यह बहुत आवश्यक था कि इस ओर भी ध्यान दिया जाता क्योंकि कृषि वैज्ञानिकों का अनुमान है कि पैदावार का लगभग १० प्रतिशत फसल की बीमारियाँ और कृषि विनाशक कीड़े नष्ट कर देते हैं। किसानों की इस कठिनाई को दूर करने के लिए सरकार ने फसल सुरक्षा के लिये कृषि विभाग का एक अंग बनाया है जिसका काम खबर मिलने पर खेती और बागों की रक्षा के लिए हर तरह के उपाय करना है। उसके पास इस काम के लिये आवश्यक मशीनें व दवायें रहती हैं, जिनका उपयोग फसल और पेड़ों पर मालिकों की सहायता से किया जाता है, परन्तु इस काम को बड़े पैमाने पर करने के लिये यह अति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आवश्यक है आसपास कि के दो चार गाँव के किसान मिलकर फसल सुरक्षक सभायें बना लें। छोटे पैमाने पर दस-पाँच खेतों में दवा के प्रयोग से अधिक लाभ नहीं हो सकता। इन्हें बुलाने के लिए निकटतम कृषि विभाग के कार्यालय, कर्मचारी और विकास क्षेत्र कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिये।

किसान कैसे लाभ उठावें ?—कृषि विभाग के अनेक अधिकारी हर जिले में होते हैं जिनसे मिलकर किसान अपनी कठिनाइयाँ दूर कर सकते हैं और सरकारी सुविधायें प्राप्त कर सकते हैं। सरकार ने कृषि ज्ञान प्रसार अंग इसीलिये चालू किया है। प्रत्येक तहसील में कृषि निरीक्षक और जिले में कृषि अधिकारी होता है। यह लोग उन्नत बीज, तकावी का ऋण, किराए पर औजार तथा अन्य सुविधायें दिलाने में सहायता करते हैं और खेती के सम्बन्ध में प्रत्येक प्रकार की जानकारी कराते हैं। मशीनों आदि का प्रयोग भी यह स्वयं बताता है। प्रत्येक सहायता के लिए इससे संपर्क स्थापित करना चाहिए।

इस सम्बन्ध में अपने क्षेत्र के ग्रामोन्नति कार्यकर्ताओं (ग्राम-सेवक, पंचायत मंत्री व निरीक्षक आदि) से भी सहायता प्राप्त की जा सकती है।

——):o:(——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खेती बारी की जंत्री

जनवरी—(१) गन्ना बोने के लिए उसमें गोबर या खलियों की खाद दी जाय और अन्तिम सप्ताह से गन्ने की बुवाई आरम्भ हो जाय। (२) गन्ने की खड़ी फसल से गुड़ बनाया जाय। (३) रबी की खड़ी फसलों की आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। (४) बरसीम की कटाई और सिंचाई जारी रहे। (५) उन यंत्रों को जिनसे काम न लेना हो, उन्हें किसी छायादार स्थान में रख दें। उनके फाल तथा नट-बोल्ट पर ग्रीज अथवा अंडी का तेल लगा दें। (६) अरहर और सनई की पिटाई करें। (७) अगहनी धान के खाली खेतों की भारी हलों से जुताई करावें।

फरवरी—(१) गन्ने की बुवाई आरंभ हो जाती है। जहाँ गन्ना बो दिया गया हो वहाँ उसकी गुड़ाई कल्टीवेटर से करावें। (२) मटर की कटाई भी शुरू हो जाती है। (३) कंडुवा तथा शुद्ध बोई गई फसलों में से दोगली जाति के पौधे उखड़वा दिए जायँ। (४) गुड़ बनवाने का काम समाप्त कर खलिहान तैयार करावें। (५) बरसीम के जिन खेतों से बीज लेना हो उनकी कटाई समाप्त कर दें। (६) अरहर की कटाई शुरू हो जाती है।

मार्च—(१) गन्ने की फसल की सिंचाई करावें। अकोला हो अथवा कल्टीवेटर से उसकी गुड़ाई करवाते रहें। (२) रबी की फसलों की कटाई शुरू हो जाती है। (३) जानवरों के हरे चारे के लिए मोठ, लोबिया बुवा सकते हैं। (४) जिन खेतों की कटाई हो चुकी है उनमें गरमी की जुताई के लिए अभी से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मिट्टी पलटने वाले हलों से जोतना शुरू कर दें और जहाँ बुवाई करानी हो वहाँ इस काम को १५ मार्च से पहले समाप्त कर दें। (५) अरहर की कटाई जारी रखें। (६) चना की बुवाई की जावे।

अप्रैल—(१) गन्ने की गुड़ाई और सिंचाई जारी रखें। चोटी की ओर से लगने वाली सूंडी यदि खेत में दिखलाई पड़े तो उसे तुरन्त नष्ट कर दें। (२) चारे के लिये मक्का बुवा दें। (३) खेतों की गर्मियों की जुताई जारी रखें। (४) रबी की फसलों की मड़ाई जारी रहे। बीज के लिए अलग रखी हुई फसल की मड़ाई पहले ही अलग से कर लें। (५) गन्ने के खेतों की सिंचाई करते रहें। (६) अरहर और रबी की कटाई समाप्त कर दें।

मई—(१) गन्ने के खेतों की सिंचाई और गुड़ाई कराई जावे। नालियों में बोई गई फसल की मेड़ों पर से मिट्टी धीरे-धीरे गिराकर गुड़ाई के काम में लावें और खेतों की गर्मियों की जुताई जारी रहे। (२) कपास, मक्का, अरहर और मूंगफली तथा चरी के लिए ज्वार की बुवाई कराई जा सकती है, यदि पलेवा के साधन हों। (३) धान की पौध लगाने के लिए खेतों में खाद डलवाकर उनकी तैयारी कराई जावे और अन्तिम सप्ताह तक उनमें धान छिटकवा दें। अगहनी धान के लिए सनई बुवाई जाय। (४) मड़ाई का काम समाप्त करा दिया जाय। (५) देशी हलों और मेस्टन, गुर्जर आदि हलों की मरम्मत करा ली जाय। (६) अरहर की मड़ाई समाप्त कर दी जाय। (७) खरीफ की फसलों के लिये खेतों में खाद पड़ जाय। (८) बरसीम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और रिजका की बीज के लिये छोड़ी गई फसल अब काट ली जाय। (९) कपास का बीज बोने से पहले कड़ी धूप में सुखा लिया जावे। (१०) गोदाम में रखने वाले बीजों को सुखा कर बोरों में भर दिया जावे और उनमें फिनाइल की गोली डाल दें।

जून—(१) गन्ने की गुड़ाई और सिंचाई वर्षा होने तक समाप्त करा दें। जहाँ नालियों में गन्ना बोया गया है उसकी मेंड़ें बराबर करा दी जावें। (२) खेतों में खाद डालने का काम वर्षा शुरू होने से पहले ही पूरा किया जाय। (३) खरीफ की फसलों की बुवाई पहली वर्षा होते ही शुरू करा दी जाय, जो फसलें बोई जा चुकी हैं उनकी सिंचाई, निराई और गुड़ाई कराते रहें। (४) वर्षा यदि हो गई हो तो गन्ने की नालियाँ तुड़वा दी जावें और धान के लिए बोई गई सनई को पलटवा दिया जावे। (५) धान के लिये पौद तैयार करावें। (६) सनई और ढेंचा हरी खाद के लिये बुवा दें। (७) जहाँ वर्षा शुरू हो गई हो, नेपियर घास की जड़ें लगा दी जावें। (८) १५ जून तक बीज के लिये गल्ला सुरक्षित गोदाम में रखवा दें।

जुलाई—(१) गन्ने की फसल में अमोनियम सल्फेट और खलियाँ मिलाकर डाली जावें और आखिरी सप्ताह में मिट्टी चढ़ाने का काम शुरू कर दिया जावे। (२) खरीफ की फसलों की निराई, गुड़ाई और मिट्टी चढ़ाने का काम जारी रखें। (३) जून में बोई गई सनई की पलटाई शुरू करा दें। (४) अगहनी धान की बुवाई और अन्य खरीफ की फसलों की बुवाई पहले या दूसरे सप्ताह तक समाप्त हो जाय। (५) अगहनी धान की नरसरी बो दी जाय और जो नरसरी जून में बुवाई गई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

थी, आखिरी हफ्ते में यदि पर्याप्त वर्षा हो तो बैठा दी जाय। (६) मक्का के भुट्टों का तोड़ना शुरू कर देवें। (७) चौमास खेतों की जुताई जारी रहे। (८) धान वाले खेतों की मेंड़बन्दी करा दें। (६) बाजरे की बुवाई आखिरी सप्ताह में शुरू करा दें।

अगस्त—(१) १५ अगस्त तक सनई की पलटाई और गन्ने की मिट्टी चढ़ाने का काम खतम करा दिया जावे और उसको गिरने से बचाने के लिये बाँध दिया जावे। (२) पलिहर खेतों की जुताई करते रहें। (३) अगहनी धान की पौध जल्द से जल्द बैठा दी जावे और खेतों की मेंड़बन्दी करा देवें। (४) खरीफ की फसल की निराई, गुड़ाई होती रहे। (५) पाइरिल्ला, कपास के कीड़ों, और गंधी को पकड़ने और नष्ट करने के उपाय किये जावें। बाजरे की बुवाई १५ अगस्त तक समाप्त कर दी जावे।

सितम्बर—(१) जल्द पकने वाला धान और खरीफ की फसलें जो पक गई हों, काट ली जावें और खेतों की जुताई कर दी जावे। (२) रबी के खेतों की तैयारी शुरू कर दी जावे और आखिरी सप्ताह तक उनमें खाद डाल दी जावे। (३) जई और बरसीम की बुवाई आखिरी सप्ताह से शुरू कर देवें। (४) कपास की चुनाई अगर गूलर खिल गए हों तो शुरू करा देवें। (५) खेत की घास तथा जड़ें निकलवायें।

अक्तूबर—(१) रबी के लिये खेतों की तैयारी की जावे और आखिरी सप्ताह तक बुवाई समाप्त करा दी जावे। (२) इस मास में केवल देशी हल और कल्टीवेटर इत्यादि से खेत तैयार करने का काम किया जावे। (३) कपास की चुनाई तथा अन्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खरीफ की फसलों की कटाई शुरू की जावे। (४) रबी की सिंचाई के लिए उपयुक्त प्रबन्ध किया जावे। (५) बरसीम तथा रिजका की बुवाई करा दी जावे।

नवम्बर—(१) अगर रबी की बुवाई समाप्त न हुई हो तो १५ नवम्बर तक अवश्य समाप्त करा देवें। (२) रबी की फसलों की पहली सिंचाई करा देवें। (३) शीघ्र पकने वाला गन्ना पेरना शुरू कर देवें। अगहनी धान, कपास, उर्द, मूँग, ज्वार इत्यादि फसलों की कटाई की जावे। (५) गन्ना बोने के लिये खेत की तैयारी तथा नालियाँ बनाने के कार्य आरम्भ कर देवें। (६) रबी की फसलों की निराई, गुड़ाई करावें और गेहूँ तथा जौ के खेतों में पहली सिंचाई के बाद हैरो से पपड़ी तोड़ देवें। (७) धान और गन्ने के खेत जो खाली हो गये हों उनकी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करा देवें। (८) खरीफ की फसलों की मड़ाई आरम्भ कर दी जावे।

दिसम्बर—(१) रबी की फसलों की सिंचाई की जावे। (२) गन्ने की कटाई तथा गुड़ बनाने का कार्य चलता रहे। (३) खरीफ की फसलों की मड़ाई समाप्त कर दी जावे और बीज को सुखा लिया जावे। (४) सनई और अरहर काट ली जावें और उसकी पिटाई करके दाना निकाल लिया जावे। (५) गन्ने के खेत की तैयारी की जावे और खेतों में गोबर की खाद डालना आरंभ कर देवें। (६) पाले से रबी की फसलों को बचाने के लिये रात में खेतों में आग जला कर धुआँ किया जावे। (७) जई और बरसीम की कटाई आरम्भ कर दी जावे।

——):❀:(——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तृतीय खण्ड

शाक सब्जी और मसाले

शाक सब्जी की खेती का महत्व

प्रकृति की कृपा से हमारे देश की जलवायु में साल भर बराबर तरकारी की खेती की जा सकती है। इस पर भी निरर्थक स्थिति, अज्ञान एवं पुरानी परंपरा से बँधे होने के कारण इसका पूरा २ लाभ नहीं उठाया जाता। आज कल जब कि हमारे देश में अन्न की कमी है, हमारे भोजन में, पर्याप्त मात्रा में, पौष्टिक पदार्थों की कमी रहती है। अस्तु अन्न बचाने एवं राष्ट्रीय स्वास्थ्य को अच्छा बनाने में शाक-भाजी की खेती एवं उसका उपयोग बढ़ाने की अत्यंत आवश्यकता है।

हमारे स्वास्थ्य के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि थोड़ा बहुत खार जो कि हमारी मांस पेशियों में होता है शरीर में इकट्ठा रहे। अमिष जातीय वस्तुयें जैसे सेम, लोबिया एवं मटर की फली इस खार की मात्रा को कम कर देती हैं क्योंकि इनमें प्रोटीन अधिक होती है। हरे पत्ते वाली तरकारियाँ खार की मात्रा को बढ़ाती हैं। अस्तु हमारे भोजन में इनका अधिक मात्रा में होना परम आवश्यक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तरकारियों में खनिज पदार्थ—हमारे स्वास्थ्य को बनाये रखने एवं शरीर के समुचित विकास के लिये जिन खनिज पदार्थों की आवश्यकता होती है उनमें चूना, फास्फोरस एवं लोहा शरीर की आवश्यकता के अनुपात से कम पाये जाते हैं। हड्डी व दांतों के लिये चूने की आवश्यकता है। फास्फोरस अस्थियों और दांतों के निर्माण में भाग लेता है। यह शरीर-वृद्धि में सहायक होता है। लोहे के कारण रक्त में लाल रंग उत्पन्न होता है। चूना सेम, पातगोभी, फूलगोभी, गाजर, प्याज, पालक, मटर और टमाटर में पर्याप्त मात्रा में होता है। फास्फोरस के लिये टमाटर, गाजर, सेम, पालक, खीरा, आलू और गोभी जैसी तरकारियाँ अधिक अच्छी होती हैं। लोहा पालक, पातगोभी टमाटर, मटर, सेम एवं प्रत्येक हरे साग में पर्याप्त मात्रा में रहता है।

विटामिन या जीवनीयगण—व्यक्ति के जीवन एवं स्वास्थ्य के लिये आवश्यक विशिष्ट द्रव्यों का ज्ञान अनेक अनुसंधानों से हुआ है जिनके उत्पत्तिस्थान विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ होते हैं। इन्हें विटामिन या जीवनीयगण कहा गया है। इनकी संख्या ९ होती है। ए, बी१ सी, डी, ई, बी२, के, एफ, पी। यह कुछ मात्रा में हमारे भोजन की वस्तुओं में पाये जाते हैं जिनमें से तरकारियाँ विटामिनों की मुख्य उपादान हैं। अब हमें देखना है कि किस तरकारी में कौन विटामिन होता है और वह क्या कार्य करता है ?

विटामिन ए—यह शरीर को बढ़ाने के साथ ही शरीर में एक विशिष्ट प्रकार की क्षमता उत्पन्न करता है जिससे अनेक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
रोगों से मुक्ति मिलती है। इसकी कमी से सुषुम्नादण्ड क्षय (Degeneration of Spinal cord), नेत्र रोग, न्यूमोनिया आदि संक्रामक रोग, पायरिया तथा पथरी आदि कठिन रोग हो जाते हैं।

हरे पत्ते वाले शाक और पीली तरकारियों में यह विटामिन मिलता है। पालक, गाजर, गोभी, मटर, टमाटर, मूली, बथुवा, शल्जम, लौकी, परवल, करमकल्ला, सलाद इसके अन्य साधन हैं।

विटामिन बी१—यह शरीर की वृद्धि के साथ प्रान्तिकनाड़ी शोथ को रोकता है। यह भूख बढ़ाता और पाचन शक्ति में सहायता देता है। इसके अभाव में बेरी-बेरी, अपच तथा संग्रहणी जैसे विकार हो जाते हैं। इसके प्रयोग से दिमाग की नाड़ियों को बल मिलता है।

यह पालक, पातगोभी, बथुवा, टमाटर, सलाद, भिंडी, सेम, मटर, बैंगन, प्याज, आलू, गाजर एवं शकरकंद, शलजम और खरबूजे में थोड़ी मात्रा में मिलता है। यह पानी में घुलनशील है। साधारणतः शाक पका कर उसका पानी हटा दिया जाता है। अस्तु जल में घुलनशील यह विटामिन भी उससे अलग हो जाता है। इस लिये लोगों को चाहिये कि वे इन्हें उबाल कर पानी को अलग न करें।

विटामिन सी—इससे स्वास्थ्य उत्तम रहता है, मसूढ़े मजबूत होते हैं और स्कर्वी की बीमारी नहीं होती। इसकी कमी से वजन कम, स्वभाव चिड़चिड़ा तथा स्मरणशक्ति निर्बल होती है। यह पातगोभी, पालक, टमाटर, बथुवा, आँवला, निंबू, सलाद, भिंडी, मटर, सेम, बैंगन, प्याज, गाजर, मिर्च व ककड़ी में मिलता है। यह भी पानी में घुलनशील होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विटामिन डी—इसकी उपस्थिति से अस्थियों की दशा दृढ़ होती है। यह शरीर को हड्डी की कमजोरी व बच्चों के सूखा रोग से बचाता है। इसकी कमी से बालकों को अस्थिवक्रता नामक रोग हो जाता है। यह सूर्यरश्मियों से भी प्राप्त होता है। यह हरी तरकारियों व फलों में बड़ी मात्रा में प्राप्त होता है।

विटामिन ई—इसका सर्वाधिक प्रभाव स्त्री तथा पुरुष के सन्तानोत्पादक अंगों पर पड़ता है। इसकी कमी से वन्ध्यत्व तथा नपुंसकता बढ़ती है। यह वसा में घुलनशील होता है। यह सलाद, प्याज, टमाटर व अन्य तरकारियों में होता है

विटामिन बी२—इसके अभाव में पैलेग्रा नामक बीमारी हो जाती है। यह एक कोढ़ जैसी बीमारी होती है। इसके अभाव में शरीर का ठीक विकास नहीं होता। यह जल में घुलनशील होता है। पालक, सलाद और हरे पत्ते वाले सागों में मिलता है।

विटामिन के—वसा में घुलनशील यह तत्व पालक, करमकल्ला आदि हरी शाक भाजियों में विशेष पाया जाता है। इसकी हीनता से रक्त जमने की क्रिया में बाधा पड़ती है। तथा जरा सी चोट लगने पर भी बहुत रक्त शरीर से निकल जाता है।

विटामिन एफ—वानस्पतिक व जांतव तैलों से प्राप्त होता है।

विटामिन पी—यह तत्व ताजे निंबू के रस में बहुत होता है। इसके अभाव में रक्त केशिकाएँ दूषित हो जाती हैं।

अन्य तत्व—इसी प्रकार तरकारियों में पानी, 'प्रोटीन', कार्बोहाइड्रेट्स, चर्बी तथा नमक आदि हमारे शरीर के लिये प्रायः सभी आवश्यक तत्व मिल जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस प्रकार तरकारी की खेती से हमारे राष्ट्रीय स्वास्थ्य की उन्नति के साथ ही साथ हमारी आर्थिक स्थिति भी उन्नत होगी और राष्ट्र की अन्न-समस्या की पूर्ति होगी।

बुनियादी बातें

तरकारी की विभिन्न फसलों का वर्णन करने के पूर्व कृषि की बुनियादी बातों की जानकारी आवश्यक है। पुस्तक के प्रथम खंड में भूमि और उसकी विभिन्न किस्में, भूमि की तैयारी, खाद, सिंचाई, बीज और पौधा, फसलों के शत्रु और जलवायु आदि कृषि के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। वे बुनियादी चीजें हैं और अन्न, तरकारी और फल सभी की फसलों के लिये समान हैं। अतएव उनकी यहाँ पर पुनरावृत्ति अनावश्यक ही है। जहाँ तक जलवायु और फसलों का संबंध है, प्रथम खण्ड में हम बता चुके हैं कि जलवायु के अनुसार हमारे देश में तीन फसले होती हैं*।

(१) रबी (२) खरीफ और (३) जायद। इन्हीं तीन फसलों के अनुसार ही तरकारियों की भी फसलें चलती हैं। यहाँ हम फसल-वार तरकारियों की सूची पाठकों की सुविधा के हेतु दे रहे हैं—

रबी की तरकारियाँ

आलू, गोभी, शलजम, मूली, गाजर, प्याज, लहसुन आदि। यह तरकारियाँ सामान्यतया सितम्बर से नवम्बर तक बोयी जाती हैं।

---

* देखें प्रथम खंड, अध्याय—जलवायु और फसलें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खरीफ की तरकारियाँ

बैंगन, भिन्डी, लौकी, कद्दू, करेला, टमाटर और घुइयाँ आदि तरकारियाँ खरीफ की फसल में होती हैं और इनकी बुवाई प्रायः जून-जुलाई में होती है।

जायद की तरकारियाँ

तरोई, कद्दू, भिन्डी, लौकी, करेला, घुइयाँ, तरबूज, खरबूजा और ककड़ी आदि जायद की फसल में बोई जानेवाली तरकारियाँ हैं। यह फरवरी से मई तक के बीच बोई जाती हैं।

तरकारियों की श्रेणी में मटर पपीता और कटहल भी आते हैं। हमने मटर को अन्न के साथ और पपीता और कटहल को फलों के साथ दिया है।

नरसरी

तरकारियों के कुछ बीज ऐसे होते हैं जिन्हें अलग स्थान पर उगा कर फिर खेत में बोया जाता है। ऐसे बीजों को थोड़ी सी जगह में उगाते हैं और उस स्थान को पौदघर या नरसरी कहते हैं।

स्थान—कोमल बीजों की तेज धूप, अधिक पानी से रक्षा के लिये उपयुक्त स्थान जहाँ सिंचाई का पूरा प्रबन्ध हो, चुनना चाहिये। यदि थोड़े ही बीज उगाने हों तो टूटा कनस्तर या घड़ा भी काम में लाया जा सकता है। दोनो ही दशाओं में तेज धूप और पानी से रक्षा करना आवश्यक है। इसलिये उनके ऊपर सिरकी का पाल या पत्तियों के छप्पर से समय-समय पर साया करना जरूरी होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि—पौदघर के लिये हल्की बलुई दूमट भूमि सबसे अच्छी रहती है। भारी तथा चिकनी मिट्टी में पौद हरगिज न बोई जानी चाहिये। लाचारी की हालत में भारी जमीन को रेत और पत्तियों की सड़ी खाद डाल कर काम में ला सकते हैं। भूमि ढेले रहित तथा मिट्टी भुरभुरी होनी चाहिए। गोबर की बिना सड़ी खाद अथवा कच्ची पत्तियाँ डालने से दीमक और अन्य कीड़ों के लगने का भय रहता है। भूमि में पानी का रुकना पौदों के लिये अत्यन्त हानिकारक होता है। वर्षा ऋतु में पौदघर को सदा ऊँचा कर दिया जाना चाहिये।

बीज और बुवाई—पौदघर में बोये जाने वाले बीज प्रायः कोमल होते हैं। इनसे सफलता पूर्वक पौद के लिये नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना जरूरी है:—

१—अच्छी तरह सूखी जगह में रक्खे हुये नमी रहित बीज ही बोये जाने चाहिये।

२—मौसम के अनुसार ही बीज बोये जावें। देर में पकने वाली जातियों के बीज जल्दी और जल्दी पकने वाली जातियों के बीज देर में न बोये जाने चाहियें।

३—बीज को सदा उपयुक्त नमी वाले स्थान में ही बोया जाय।

४—तरकारियों के बीज छोटे होते हैं इसलिये अधिक गहराई में पड़ जाने पर उनके सड़ने और न जमने का डर रहता है।

५—छोटे बीजों को जैसे, सलाद, टमाटर, बैंगन, इत्यादि सदा भुरभुरी मिट्टी अथवा रेत के साथ मिलाकर पौदघर में छिड़कें। बीज छिड़कने के बाद हल्की मिट्टी ऊपर से छिड़क

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दें। इस मिट्टी का छिड़काव इतना हो कि बोये हुये बीज की मुटाई से ३-४ गुनी से अधिक न हो।

६—एक जाति के बीजों को दूसरी जाति के बीजों से एक या डेढ़ फुट का फासला देकर ही बोया जाना चाहिये जिससे कि निराई, गुड़ाई और पौधों के उखाड़ने में आसानी रहे।

७—बीज बो देने के बाद हजारे से पानी देना चाहिये। साधारण रीति से सिचाई करने पर बीज के बह जाने का अंदेशा रहता है।

सिंचाई और देखरेख—जब पौदघर की ऊपर की मिट्टी सूखने लगे तो सिंचाई हजारे से ही की जानी चाहिये और पानी शाम के समय ही देना चाहिये। थोड़ा-थोड़ा पानी कई बार देना अच्छा समझा जाता है, जिससे मिट्टी कभी सूखने न पाये। पौद अधिक घनी न बोनी चाहिये, जिससे कि घास फूस की आवश्यकतानुसार निराई करते रहें।

नरसरी से पौद उखाड़ना—साधरणतया पौद में चार या पाँच पत्तियाँ निकल आने पर पौद उखाड़ने लायक हो जाती हैं। पौदघर में पौद को अधिक लम्बा न होने देना चाहिये। इससे पौदे कमजोर हो जाते हैं और जल्दी ही फल देने लगते हैं। पौद उखाड़ने से ३–४ घंटे पहले पौदघर को सींच देने से भूमि मुलायम हो जाती है और पौदे की जड़ें नहीं टूटतीं। गहरी जड़ वाले पौदों को बारीक लम्बी खुरपी के सहारे ही उखाड़ा जाना चाहिए। खींचने से जड़ों के टूटने का डर रहता है।

यदि पौदे को बाहर भेजना है या १०-१२ घंटे के बाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लगाना है तो जड़ों के चारो ओर गीली मिट्टी लपेट कर केले के पत्ते से बाँध, छायादार नम स्थान में या कपड़े से ढक कर रखना चाहिये। बोने और बाहर ले जाने की सहूलियत के लिये ५०-५० या १००-१०० पौदों की गाँठे बना लेना अच्छा रहता है।

पौद लगाने से पूर्व खेत की तैयारी–(१) खेत बढ़िया बना हो और ढेलों और घास-फूस रहित हो। (२) खेत में काफी नमी हो। (३) उचित दूरी पर लगाने के लिये लाइनें और मेड़ें बनी हों। (४)पौद को लगाते समय उसकी जड़ें सावधानी से अच्छी तरह फैला लीजानी चाहियें। ध्यान रहे कि सिकुड़ीहुई और टेढ़ी जड़ों के पौदे बाद में धीरे-धीरे बढ़ते हैं अथवा कभी-कभी सूख भी जाते हैं।

पाले से बचाव—दिसम्बर और जनवरी के महीने में कभी-कभी ठंडी हवा बहती है और जोरों का पाला पड़ता है जिससे पौदों को नरसरी और खेतों में काफी हानि पहुँचती है। कभी-कभी तमाम फसल नष्ट हो जाती है। पाले से बचाने के लिये निम्नलिखित उपाय किया जाना चाहिये।

नरसरी किसी छायेदार जगह में होनी चाहिये। ऐसे स्थान के अभाव में छप्पर या टट्टियाँ रखकर रात में ढक दिया जाय। टट्टियाँ नरसरी में ४-५ इंच किसी सहारे के ऊपर रखी जानी चाहिये। नरसरी में सिंचाई करते रहना चाहिये जिससे कि वह सूखने न पावे। उसको कभी सूखने न दें। खेतों में पाले से रक्षा के लिये फसलों की सिंचाई कर देनी चाहिये। बाग में जो पौदे छोटे हों उनके ऊपर लकड़ियों का सहारा देकर फूस का छप्पर डाल देवें या फूस की आड़ लगा देवें। केवल पूरब की ओर कुछ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिस्सा खुला रखना चाहिये। बाग और खेतों में जगह-जगह आग जला कर रात में धुआँ करना पाले के लिये लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

आलू

आलू एक ऐसी तरकारी है जिसे अमीर व गरीब समान रूप से पसंद करते हैं। इसकी लोकप्रियता का कारण यह है कि स्वादिष्ट और पुष्टिकारक होने के साथ ही यह बारहो मास पाया जाता है। इसमें स्टार्च (श्वेतसार) का भाग अधिक रहता है। आलू में विटामिन 'ए' 'बी' और 'सी' पाये जाते हैं। आज सब से अधिक बोई जाने वाली तरकारी यही है। इसकी माँग भी अधिक है और मूल्य भी अच्छा मिलता है।

जातियाँ—वैसे तो आलू की अनेक किस्में होती हैं किन्तु इन्हें मुख्यतया तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है:—

(१) पहाड़ी—यह मिठास लिये हुये अन्य किस्मों से बड़ा होता है। यह पहाड़ी क्षेत्रों में अधिक उत्पन्न होता है और जल्द तैयार होता है। पहाड़ी आलू की जातियों में मैजिस्टिक, दार्जलिंग, लाल, मिलिटरी आदि प्रमुख हैं।

(२) देशी—यह मैदानी क्षेत्रों में अधिक बोया जाता है। इसकी भी अनेक किस्में होती हैं जिनमें (क) लाल या पटना और (ख) सफेद या फरूखाबादी (फुलवा) मुख्य हैं। उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक पैदावार देनेवाली आलू की किस्में पटने का सुखी, फुलवा और मिलिटरी हैं और जल्द तैयार होनेवाला पटने का साठा आलू है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(३) विलायती—इसका बीज बाहर से आता है।

भूमि—आलू की खेती के लिये दोमट और हल्की दोमट भूमि सबसे अधिक अनुकूल पड़ती है। भारी तथा चिकनी मिट्टी में आलू न बोना चाहिये। इसमें आलू छोटे और कम होते हैं। खेत समतल हो तथा उसमें पानी के निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिये।

भूमि की तैयारी—खरीफ में मूंग नं० १ या मक्का जैसी शीघ्र तैयार होने वाली फसलों को काट कर मिट्टी पलटने वाले हल से एक या दो जुताइयाँ कर देनी चाहिये। इसमें ७-८ जुताइयाँ काफी होती हैं। जुताई ९-१०इंच गहरी तथा मिट्टी खूब भुरभुरी होनी चाहिये। इसके लिये हर जुताई के बाद पाटा चलाना आवश्यक है। नली की कमी होने पर पलेवा देकर जुताई करनी चाहिए।

खाद—इसे नाइट्रोजन के अतिरिक्त फासफोरस और पोटाश की अत्यधिक आवश्यकता होती है। इसके लिए प्रति एकड़ ३०० मन कम्पोस्ट सड़े हुये गोबर या मैले की खाद सितंबर के प्रारंभ में खेत में फैला कर उसे जोत देना चाहिये। इसके अभाव की पूर्ति बनावटी खादों से की जा सकती है। इसके अतिरिक्त प्रति एकड़ ५ मन के हिसाब से राख की खाद देना चाहिए। ८-१०सेर प्रति एकड़ के हिसाब से नीम या रेंड़ी की खली कूट कर खेत में छिड़क देना अच्छा होता है। इससे फसल में दीमक नहीं लगती और पैदावार बढ़ जाती है। गर्मी में आलू

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के खेत में मूंग और वर्षा के प्रारंभ में सनई की हरी फसल बोकर हरी खाद देने से पैदावार अधिक बढ़ जाती है। हरी खाद देने पर गोबर या कंपोस्ट की खाद सौ डेढ़ सौ मन दे देना काफी है। खाद जुताई से पहले डालनी चाहिये जिससे कि भली भाँति मिल जाय।

बीज और बुवाई—पानी की सुविधा होने पर आलू की दो-दो फसलें एक ही वर्ष में ली जा सकती हैं। एक सितम्बर से १० अक्टूबर तक बोकर जनवरी तक समाप्त हो जाती है और दूसरी फरवरी के अन्त में बोकर जून तक तैयार हो जाती है। बम्बई और उत्तर प्रदेश के पहाड़ी भागों में जहाँ पानी की कमी नहीं होती और भूमि उर्वरा है वहाँ ऐसा ही करते हैं। इसकी बुवाई के लिये अक्टूबर मास का प्रथम पखवारा सबसे अच्छा रहता है।

बड़ा आलू काटकर ही बोया जाता है। इसमें यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक भाग में दो-तीन अँखुये अवश्य रहें तथा बीज अच्छा और चुना हुआ हो। साबुत आलू बोने से पौधे अधिक तन्दुरुस्त तथा बढ़ने वाले होते हैं। छोटे आलू साबुत तथा बड़े आलू काटकर बोना चाहिये। बोते समय आलू के अँखुये ऊपर ही रखने चाहिये। प्रत्येक बीज में दो-तीन अँखुये होना आवश्यक है। छोटे आलू ३-४ मन, मझोले ६-७ मन और बड़ा १०-१२ मन प्रति एकड़ लगता है।

बोते समय पंक्ति से पंक्ति की दूरी डेढ़ फीट से दो फीट तथा बीज से बीज का अन्तर ६ इंच से ८ इंच रखना चाहिये। बीज

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को पतली कुदाली (कस्सी) की सहायता से दो-ढाई इंच गहरा बोकर ऊपर २-३ इंच मिट्टी देकर हल्की क्यारियाँ सी बना देना चाहिये। यह मिट्टी चढ़ाने के बाद अन्त में १ फीट ऊँची हो जाती है। यदि खेत गीला हो तो मेड़ों पर बुवाई करना अच्छा रहता है। खेत तैयार हो जाने पर क्यारियों में मेंड़ें बनाकर बोना चाहिये। इसमें भी पंक्तियों तथा बीज का अन्तर इसी प्रकार रखना चाहिये।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—यद्यपि सिंचाई, भूमि, मौसम व बीज पर निर्भर करती है तो भी आलू को लगभग ७-८ सिंचाई की आवश्यकता होती है। जब मेड़ों पर २-२॥ इंच के अँखुये निकल आवें तब पहली सिंचाई करनी चाहिए। यह १३-१४ दिन में निकल आते हैं। १५-२० दिन के बाद पहली सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिये। सिंचाई करते समय पानी मेड़ों के बराबर न भरना चाहिये।

पहली सिंचाई के बाद एक सप्ताह के अन्दर जब मिट्टी निराई के योग्य हो जाय तब निराई कर उसे भुरभुरी बना देना चाहिये। १५ मन प्रति एकड़ अन्डी की खली और ५ मन प्रति एकड़ अमोनियम सल्फेट मिलाकर पौधों की जड़ों में डालकर मिट्टी चढ़ा देना चाहिये और फिर हल्की सिंचाई कर देनी चाहिये। इसके पश्चात् हर १२ दिन तक ४ दिन के अन्तर से सिंचाई करते रहना चाहिये और बाद में १० दिन के अन्तर से सिंचाई करते रहना चाहिये। बनावटी खादों के अभाव में सिंचाई कम और इनके डालने पर अधिक करनी चाहिये। आलू के लिये २-३

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बार मिट्टी चढ़ाना आवश्यक है। यह कार्य सिंचाई के बाद ही करना चाहिये।

फसल की तैयारी—आलू की फसल तीन से साढ़े चार माह के अन्दर तैयार हो जाती है। बुवाई के समय के अनुसार नवम्बर से मार्च तक खुदाई की जाती है। जब इसके तने व पत्तियाँ सूख कर पीले हो जायँ तब इसे तैयार समझना चाहिये। खुदाई के समय खेत की मिट्टी गीली न हो नहीं तो यह उनमें चिपक जाती है। इसकी खुदाई खुरपी से अत्यन्त सावधानी के साथ करना चाहिए जिससे कि आलू कट न जाय। अगले वर्ष के लिए बीज रखने के लिए खुदाई तब तक न करनी चाहिए जब तक कि पत्तियाँ पूर्णतया सूख न जायँ। खुदाई के बाद जब तक इसका छिलका मजबूत न हो जाय, इसे साए में रखना चाहिए। इसके लिए एक सप्ताह पर्याप्त है।

उपज—साधारणतया आलू की पैदावार २५० से ३०० मन प्रति एकड़ तक होती है। हापुड़ निवासी श्री रतन प्रकाश ने एक एकड़ में ६६७ मन आलू पैदाकर भारतवर्ष में सबसे ऊँचा रिकार्ड स्थापित किया है। शीघ्र तैयार होने वाली जातियों की उपज सौ से डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ तक होती है।

संग्रह—आलू को संग्रह करने के लिये जितने भी सड़े या कटे आलू हों उन्हें छाँटकर अलग कर लिया जाय। जिस कमरे या गोदाम में आलू रखे जायँ वह काफी हवादार तथा सीलन-रहित हो। गैमक्सीन मिश्रित बालू की लगभग ३ इंच मोटी तह बिछाकर उसके ऊपर आलू की एक तह इस प्रकार लगा दे कि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
एक आलू दूसरे का स्पर्श न करे। इसके ऊपर पुनः गैमक्सीन का छिड़काव करें। इसके ऊपर इतना गैमक्सीन मिश्रित बालू डाला जाय कि सब आलू ढक जायँ। इसी प्रकार नीचे ऊपर तीन तहें लगाकर ऊपर बालू से भलीभाँति ढक दें। यदि ऐसा करने में कठिनाई हो तो किसी नमी रहित तथा हवादार कमरे में एक-एक फुट की ऊँचाई के बाँस के टट्टर बना लेवें। इन पर भी आलू इस प्रकार बिछावें कि एक दूसरे का स्पर्श न करें। बाद में प्रति सप्ताह सड़े गले आलू छाँट छाँट कर अलग करते जायँ। ५% वाला डी० डी० टी० पाउडर १५ मन बालू में मिलाकर उसमें आलू रखने से कीड़ों का असर कम पड़ जाता है। मैदानी भागों में जहाँ सुविधा होती है आलू को शीत भंडारों (Cold storage) में रखा जाता है। इन भंडारों का तापक्रम स्थानीय वातावरण के अनुसार ३६° से ३८° फा० रखा जाता है और उनमें आलू टोकरियों में भर कर रेकों में रखे जाते हैं।

कीड़े व बीमारियाँ—कीटाणु, पाला, दीमक और साही आदि से आलू की फसल को बहुत नुकसान पहुंचती है। फफूंदी से अर्लीब्लाइट नामक बीमारी हो जाने पर पत्तियों पर छोटे भूरे दाग पड़ जाते हैं और बढ़ने पर गहरे व भूरे धब्बे पड़ जाते हैं और पत्तियाँ मुरझा जाती हैं। इससे बचने के लिये पहले ही बोर्डो-मिक्सचर या पेरीनोक्स का छिड़काव कर देना चाहिये। इसका आक्रमण होने पर ०·७५ या १ प्रतिशत बोर्डो-मिक्सचर अथवा ०·२५% से ०·३५% पेरानोक्स के घोल को मौसम में दो तीन बार छिड़क देना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसी प्रकार फफूंदी के आक्रमण से पत्तियों पर पानी भरे हुये धब्बे हो जाते हैं जो बढ़कर काले पड़ जाते हैं। नम और सुरक्षित स्थानों पर इनके ऊपर एक सफेद झिल्ली पड़ जाती है। बाद में यह काली पड़ जाती है और पत्तियाँ सड़ने लगती हैं। आलुओं में भी पहले तो हल्के भूरे चक्कर बन जाते हैं और बाद में दुर्गन्ध के साथ सड़ने लग जाते हैं। इस बीमारी को लेट ब्लाइड कहते हैं। इसमें भी उपरोक्त छिड़काव लाभदायक होता है। प्रारंभिक दशा में बीमार पौधों को उखाड़कर फेंक देना चाहिये।

उकठा का आक्रमण होने पर भी एकाएक पौधे मुरझा जाते हैं और लटकने लगते हैं। कभी २ लम्बी भूरी धारियाँ तने पर दिखाई पड़ती हैं। बीमारी के कारण आलू व शाखों का सड़ना प्रारम्भ हो जाता है। इससे बचने के लिए बीमार पौधों को तुरन्त उखाड़ कर फेंक देना चाहिये और एक बार बीमारी लग जाने पर ३ साल तक उस खेत में आलू की फसल न बोनी चाहिये।

एक विषैले रस के प्रभाव से कोढ़ का रोग हो जाता है। इसमें पत्तियाँ टेढ़ी हो जाती हैं और पौधा मुर्झाया सा दिखता है। आलू छोटे २ ही रह जाते हैं। यह बीमारी छूत की होती है, अस्तु क्षेत्र के सभी खेतों के ऐसे पौधे उखाड़ कर जला देने चाहिये। बीमार पौधों को छूकर तन्दुरुस्त पौधों को उन्हीं हाथों न छुये। इससे बचने के लिए १-१ इंच बड़ा आलू बोयें जिसमें यह रोग नहीं होता।

इनके अलावा सूक्ष्म जन्तुओं वाली पोटेटो स्कैप आदि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
अनेक बीमारियाँ होती हैं जिनसे खेत को हरी खाद देकर, नीम, रेंड़ी खली तथा चूने की खाद देकर बचाया जा सकता है।

प्याज

यह एक मूल जातीय उद्भिद है। इसकी जन्म भूमि अफ्रीका मानी गई है किन्तु अब प्रत्येक देश में इसकी खेती होती है। इसे लोग तैयार होने के बाद तो खाते ही हैं किन्तु हरी दशा में भी इसका प्रयोग किया जाता है। इसमें केवल अनुपम पौष्टिक पदार्थ ही नहीं है वरन् अनेक रोगों के निवारण के गुण भी हैं। संस्कृत में इसे पलाण्डु कहते हैं। आयुर्वेद के अनुसार यह शुक्रवर्धक और अग्नि को प्रज्वलित करने वाला होता है। प्लीहा और जलोदर के रोगियों के लिये यह अत्यन्त लाभकारी है। तरकारी के अलावा यह मसाले एवं औषधि के रूप में भी इस्तेमाल होता है।

जातियाँ—विदेशों में प्याज की अनेक किस्में उगाई जाती हैं। इसका बीज एक साल से अधिक नहीं टिकता और विदेशी बीज आने में एक वर्ष लग जाता है। इस लिए देशी तैयार किये हुए बीज का ही प्रयोग करना चाहिए। इसकी प्रमुख दो जातियाँ हैं:—

(१) सफेद छिलके वाला 'पटनिया प्याज' और (२) लाल छिलकेवाला। बंगाल में एक और जाति होती है जो बहुत छोटी किन्तु तेज होती है। विलायती बीजों में आस्ट्रेलिया व अमेरिका का बीज यहाँ की जलवायु के अधिक अनुकूल सिद्ध हुआ है। अतएव विलायती बीजों में यहीं के बीज मँगाने चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसके लिये आरम्भ में पर्याप्त ठंडक तथा भूमि में नमी की आवश्यकता होती है। परंतु फसल के पकने के समय काफी गर्मी और भूमि तथा वातावरण में पर्याप्त खुश्की होनी चाहिए।

भूमि—प्याज की खेती बलुई दोमट से लेकर चिकनी मटियार भूमि तक में की जाती है। बलुई दोमट में फसल तो शीघ्र पैदा होती है किन्तु अन्टियाँ अधिक समय तक नहीं रखी जा सकतीं। पर्याप्त मात्रा में खाद दी हुई मटियार भूमि में अधिक उपज तथा उसमें टिकाऊपन अधिक होता है। भूमि उपजाऊ, मिट्टी भुरभुरी तथा नमी को रोक रखने वाली होनी चाहिये। शक्तिशाली दोमट भूमि सबसे अच्छी रहती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—खेत को ५ या ६ बार देशी हल से जुताई करनी चाहिये। इसकी जड़ें भूमि की ऊपरी सतहों से ही खाद्य सामग्री प्राप्त करती हैं इसलिये ६ या ७ इंच तक की गहराई तक जोतना पर्याप्त होता है। जुताई के समय ३०० मन प्रति एकड़ के हिसाब से सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद मिला देनी चाहिये। इसके पश्चात् ढेले तोड़ कर भूमि को समतल व भुरभुरी बनाकर पाटा या बेलन की सहायता से भूमि को दबा देना लाभदायक सिद्ध हुआ है। गोबर की खाद के अभाव में सनई की हरी खाद से यह कमी पूरी की जा सकती है। कृत्रिम खादों के पौदों के खेत में लग जाने के बाद आवश्यकतानुसार २ या ३ बार में पौदों के समीप फैला देने से उपज बढ़ जाती है।

नरसरी तैयार करना—प्याज का बीज एक साल से अधिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुराना होने पर उगने की शक्ति खो देता है। यह एक साल से पुराना न होना चाहिये यह दो बार बोया जाता है, सितम्बर और जनवरी में। क्यारियों में पाँच छः सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से गोबर की खाद मिलाकर समतल भूमि पर बराबर फैला कर, छनी हुई पत्तियों की खाद या मिट्टी से ढक दिया जाता है, और प्रातः सायं अथवा कम से कम एक बार पानी दिया जाता है। बीज बोने के बाद केले के पत्तों से ढक देते हैं। गर्मी पाकर बीज शीघ्र उग आते हैं। प्याज के बीज एक दो सप्ताह के अन्दर उग आते हैं और सवा या डेढ़ माह के बाद पौधे खेत में लगाने के योग्य हो जाते हैं। एक एकड़ भूमि में तीन सेर बीज लगता है। पाँच सौ से छः सौ वर्ग गज में इतना बीज बोया जाता है।

पौधों को खेत में लगाना—पौधों को मेड़ों या समतल क्यारियों में एक या डेढ़ फीट के अन्तर पर कतारों में लगाया जा सकता है। कतार में पौधों का फासला छः से नौ इंच तक होता है। पौधे एक सप्ताह के बाद जड़ पकड़कर बढ़ने लगते हैं।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—पौदों में बाढ़ आने के बाद कुल इतने पानी की आवश्यकता होती है जिससे बाढ़ सामान्य रूप से होती रहे। आरम्भ में पौधों की बाढ़ अधिक तीव्र होती है। इसलिये सिंचाई चार पाँच दिन के बाद और बाद में फसल खोदने तक लगभग सात या दस दिन के अन्तर पर आवश्यकता अनुसार करना चाहिये। इसकी खेती में सिंचाई के विषय में अधिक सतर्क रहना जरूरी है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रत्येक सिंचाई के बाद भूमि को गोड़कर पौधों की जड़ों के आस-पास की भूमि को मुलायम कर देना चाहिये। इसमें गहरी गुड़ाई की आवश्यकता नहीं होती। इसका ध्यान रखना चाहिये कि इसकी जड़ें खुलने न पावें। खेत का खरपतवार साफ करते रहना चाहिए।

फसल की तैयारी—पौध लगाने के तीन या साढ़े तीन मास बाद बाढ़ रुक जाती है और उनमें फूल वाले तने निकल आते हैं। अन्टियों वाली फसल में इन्हें तुरन्त काट देना चाहिये और फसल की सिंचाई बन्द कर देनी चाहिये। जब पौधों की पत्तियाँ पीली होकर सूख कर गिरने लगें तो फसल को खोदने योग्य समझना चाहिए। अन्टियों के तैयार हो जाने के बाद उन्हें खेत से उखाड़ लें। वरना नमी पाते ही उनमें पुनः जड़ें फूट निकलती हैं। अक्टूबर-नवम्बर में लगाई जाने वाली फसल अप्रैल में तथा फरवरी में लगाई जाने वाली फसल जून में खोदने योग्य हो जाती है। खोदते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि अन्टिया कटने न पावें।

उपज—भूमि जलवायु तथा खेती के साधनों के अनुसार दो से तीन सौ मन प्रति एकड़ तक इसकी उपज होती है।

बीज प्राप्त करना—बीज से तैयार किये हुए पौधों से एक ही मौसम में अच्छा बीज नहीं तैयार होता। गाँठें उखाड़ते समय बड़ी-बड़ी गाँठों को बीज के लिए छाँट कर रख देना चाहिए। इन अन्टियों का लगभग एक बटा तीन भाग काट दिया जाता है ताकि उनमें कल्ला सुगमता से निकल आवे। अक्टूबर व नवम्बर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में एक खाद दी हुई क्यारी में १'-१½' के अन्तर पर लगाते हैं। इसकी देख भाल सामान्य प्याज की फसल की भाँति ही की जाती है। दो तीन मास के वाद उनमें डंठल निकल आते हैं जिनके ऊपर सफेद रंग के फूल के गुच्छों में बीज पैदा किये जाते हैं। अप्रैल मई तक यह पोढ़े पड़ जाते हैं। पकने पर धूप में सुखा कर लकड़ी के डण्डों से पीट कर बीज साफ करके ऐसे वर्तनों में रख देना चाहिए जिनमें हवा और नमी न जा सके।

कीड़े व बीमारियाँ—इसके पौदों को टिड्डे काट देते हैं। इसी प्रकार "थ्रिप्स" नामक कीड़े का आक्रमण होने पर पत्तियों का रंग कुछ सफेद होने लगता है और वह ऐंठ कर सिकुड़ और बाद में सूख जाती हैं। यह कीड़ा इतना छाटा होता है कि इसे केवल खुर्दबीन की सहायता से देखा जा सकता है। फफूँदी से प्याज को सबसे अधिक हानि पहुँचती है। यह कई प्रकार की होती है। एक के होने पर पत्तियाँ पीली पड़कर सूखने लगती हैं और गाँठों पर सफेद रुई के समान फफूँदी लग जाती है। दूसरी प्रकार का होने पर पुरानी पत्तियाँ नीचे के भाग में काली पड़ जाती हैं और फिर अन्य पत्तियों पर आक्रमण होता है। एक तीसरे प्रकार की फफूँदी के कारण पत्तियों पर बहुत बारीक सफेद पाउडर सा छिड़का हुआ मालूम होता है। इसका आक्रमण गोदाम में भी होता है। बोर्डो मिक्स्चर और पेरिनोक्स का इस्तेमाल करने से लाभ होता है।

संग्रह—इसे अधिक समय तक संग्रह करने के लिए यह आवश्यक है कि इसे भली-भाँति सुखा लिया जाय नहीं तो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फफूँदी लगने और सड़ने का डर रहता है। थोड़ी मात्रा में संग्रह करने पर पत्तियों सहित छोटे २ गड्ढे बनाकर रस्सियों में बाँध कर टाँग देते हैं। कुछ समय के लिए बोरों में भर कर हवादार स्थान में भी रखा जा सकता है। परंतु सबसे सुन्दर ढंग यह है कि इसका एक गोदाम बना लिया जाय। इसकी दीवारें चिरे हुये बाँस की खपच्चियों की बनती हैं। इनमें बीच-बीच में हवा जाने का मार्ग छोड़ दिया जाता है। ऊपर छप्पर छा दिया जाता है। नीचे की तरी का बचाव करने के लिए उसकी फर्श भूमि से २' ऊँची रखते हैं। उसके भीतर चिरे हुये बाँस के अल्मारी-नुमा स्थान बना लेते हैं। इन्हीं में प्याज रखा जाता है। इन्हें एकहरी पर्त में रखना चाहिए और समय २ पर सड़ी हुई अंटियों को छाँट कर निकालते रहना चाहिए।

लहसुन

प्याज के समान लहसुन की भी खेती पूरे भारतवर्ष में की जाती है। इसकी जन्मभूमि सिसली, दक्षिणी फ्रांस और मध्य एशिया में मानी गई है। डक्टरों का मत है कि इसमें कैल्शियम की मात्रा बहुत अधिक होती है। इसकी गांठ घी में भून कर अथवा इसका खील बनाकर खाने से क्षय की बीमारी में लाभ होता है।

लहसुन का बीज नहीं वरन् गाँठें ही बोने के काम आती हैं। एक गाँठ में कई जवे होते हैं जिन्हें बोने से पूर्व अलग २ कर लिया जाता है। यह एक ही किस्म का होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि—लहसुन की खेती प्याज के समान हल्की दूमट से लेकर चिकनी मटियार भूमि तक में की जा सकती है। किन्तु हल्की दूमट में इसकी विशेष पैदावार होती है। इसे जहाँ तक हो हल्की भूमि में ही बोना चाहिए।

भूमि की तैयारी तथा खाद—लहसुन के खेत की जुताई तथा खाद आदि की व्यवस्था प्याज के समान ही करनी चाहिये। इसकी बुवाई में बीज की कीमत अधिक होने के कारण प्रायः लोग इसे अन्य फसलों के साथ खेत में मेड़ों पर लगा देते हैं।

बीज और बुवाई—इसे प्रायः अन्य तरकारियों के साथ भी बोते हैं। इसकी बुवाई का समय सितम्बर व अक्तूबर का है। यह बताया जा चुका है कि प्रत्येक गाँठ में कई जवे होते हैं। इन्हें अलग कर ७-८ इंच के अन्तर पर बनी पंक्तियों में बो देना चाहिए। पौदों की दूरी ४ इंच रखनी चाहिए। क्यारियों की मेड़ों पर यह दूरी ६ इंच कर देनी चाहिए। बीज $\frac{1}{2}$ इंच की गहराई में बोना चाहिए।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—यदि जमीन में पूरी नमी रहे तो एक सप्ताह में अंकुर निकल आते हैं। नई पत्तियाँ निकल आने पर सिंचाई कर देना चाहिए। इसके बाद हर पंद्रहवें बीसवें दिन सिंचाई करते रहना चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के बाद निराई गुड़ाई करते रहना चाहिए। पहली ३-४ सिंचाई के बाद तो निराई तथा गुड़ाई अवश्य ही कर देनी चाहिए।

फसल की तैयारी—फसल पकने पर इसके पत्ते पीले होकर सूख-सूखकर गिरने लगते हैं। फरवरी-मार्च तक यह तैयार हो जाता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। पकने पर इसकी गाँठें निकालकर एक दो दिन सुखाकर हवादार स्थान में रखना चाहिये। यह साल भर तक रखा जा सकता है।

कीड़े व बीमारियाँ—फंगस का आक्रमण होने पर इसकी जड़ें बेकार हो जाती हैं और अन्त में ऊपर की पत्तियाँ भी सूखने लगती हैं। क्रमशः यह बीमारी गाँठों में असर करती है और उन्हें भी सुखा देती है। थोड़े दिन में यह सूखकर काली पड़ जाती हैं।

इससे बचने के लिये खराब काली गाँठों को जला देना चाहिये और खेत में यह बीमारी अधिक होने पर कुछ साल तक उसमें लहसुन व प्याज की खेती न करनी चाहिये।

उपज—एक एकड़ में लगभग ५० मन उपज होती है। लहसुन की गाँठों के संग्रह में यह ध्यान रखें कि गोदाम में रखने से पूर्व पत्तियाँ तोड़कर गाँठों को भली भाँति सुखा लें।

मूली

हमारे देश के प्रत्येक भाग में मूली की खेती की जाती है। यह एक कन्द जातीय शाक है। इसकी कोमल पत्तियों का शाक बनता है और मूल या कन्द का भी। मूली कच्ची और पक्की दोनों ही प्रकार खाई जाती है। मूली की हरी फलियों की भी तरकारी बड़ी स्वादिष्ट होती है। आयुर्वेद में इसका बहुत गुण-गान है। यह पाचन शक्ति बढ़ाती है, अग्नि प्रज्वलित करती और मूत्राशय का शोधन करती है। इसकी ३ मुख्य किस्में होती हैं।

(१) लम्बी जड़वाली, (२) अण्डाकार जड़वाली, (३) शलजम जैसी जड़वाली।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देशी जातियों का रंग सफेद और जड़ें लम्बी होती हैं। जौनपुरी मूली लगभग डेढ़ फीट लम्बी और तीन चार इंच तक मोटी होती हैं। विलायती जातियाँ अण्डाकार तथा शलजम की भाँति लाल व बैंगनी रंगवाली होती हैं। बरसाती मूली वर्षा के प्रारंभ में बोई जाती है और जुलाई में तैयार हो जाती है। मूली की एक ऐसी भी जाति होती है जिसकी जड़ें नहीं खाई जातीं वरन् हरे एवं बैंगनी रंग की लम्बी-लम्बी छीमी (फलियाँ) काम में लाई जाती हैं। हमारे देश में विलायती किस्में सरलता से उत्पन्न होती हैं।

भूमि—मूली के लिये मिट्टी हल्की होनी चाहिये जिससे उसकी जड़ें आसानी से भूमि के भीतर बैठ सकें। बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिये अच्छी रहती है। भूमि उपजाऊ तथा मुलायम होनी चाहिये।

भूमि की तैयारी तथा खाद—मूली की खेती में जुताई पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। मिट्टी पलटने वाले हल से दो बार गहरी जुताई (१२ इंच से १५ इंच) कर देनी चाहिये। इसके अभाव में फावड़े से भी काम चलाया जा सकता है। इसके पश्चात् ५-६ जुताइयाँ करनी आवश्यक हैं। कुश्ती लड़ने के अखाड़े के समान इसकी मिट्टी हो जाय तो उपज अच्छी होती है। खेत में लगभग १५ फीट × १० फीट की छोटी-छोटी क्यारियाँ बना लेनी चाहिये। इसके खेत में प्रति एकड़ डेढ़ सौ मन गोबर की सड़ी हुई खाद देकर जुताई कर देनी चाहिये। मूली जिस खेत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में बोई जाती है उसका इतना रस खींच लेती है कि उस खेत में दूसरी फसल लेने के लिए पर्याप्त खाद देने की आवश्यकता होती है ।

बीज व बुवाई—मूली का बीज सितम्बर से दिसम्बर तक बोते हैं । बरसाती फसल लेने के लिये इसे जून व जुलाई में बोया जाता है, एक एकड़ में ३-४ सेर बीज पर्याप्त होता है । इसको छिटकवाँ तथा कतारों में दोनो प्रकार से बोया जाता है । दोनो ही रीतियों से बोने पर पंक्तियों का अंतर ९ इंच से १२ इंच और पौदों के उगने पर उनकी दूरी ६ इंच से ८ इंच रखनी चाहिये । गुड़ाई करते समय पौदों का फासला ६ इंच कर देना चाहिये। गोल जड़ वाली मूली का पेड़ लगाकर बोने से पैदावार अच्छी होती है । बरसाती फसल को मेड़ पर बोना चाहिये ।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—बरसाती मूली के लिये वर्षा का जल पर्याप्त होता रहता है । बरसात के बाद हर सातवें आठवें दिन सिंचाई करते रहना चाहिये । २-३ गुड़ाइयाँ करना पर्याप्त है । गुड़ाई करते समय कुछ मिट्टी भी चढ़ाते रहना चाहिये ।

फसल की तैयारी—एक डेढ़ महीने में बारीक जड़ों तथा पीली पत्तियों को तोड़कर और धोकर बाजार में भेजने योग्य हो जाती है । दो ढाई महीने में इसकी फसल तैयार हो जाती है । मूली ज्योंहीं खाने के लायक हो त्योंहीं उसे उखाड़कर काम में लाना चाहिये;देर करने पर वह कड़ी हो जाती है। खुदाइ से पूर्व हल्का पानी देने से जड़ें उखाड़ने में सरलता रहती है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपज—इसकी पैदावार २५० से ३०० मन प्रति एकड़ होती है।

बीज तैयार करना—मूली बैठ जाने पर अक्टूबर की बोई हुई फसल में सुडौल व तन्दुरुस्त मूलियाँ छाँटकर उखाड़ ली जायँ। इसके पश्चात् ऊपर के हिस्से की पत्तियाँ छाँटकर और जड़ का ⅔ भाग काटकर तने को खाद दी हुई क्यारी में २॥ से ३ फीट की दूरी पर लगभग २ इंच गहरा लगा देते हैं। इसी में पुनः नये पत्ते फूल और फलियाँ लगती हैं, इन्हीं फलियों में मूली के बीज होते हैं।

इन फलियों के पकने पर बीज निकाल लिये जाते हैं। इन बीजों को दो तीन दिन धूप में सुखाकर बोतल या डिब्बों में अच्छी तरह बंद कर देना चाहिये। इस तरह सुरक्षित रखने से बीज २-३ साल तक काम में आते हैं।

कीड़े व बीमारियाँ—मूली को ब्लैक माथ और मक्खी से बड़ी हानि होती है।* इसी प्रकार फँगस की बीमारियाँ हो जाने पर जड़ों पर गाठें पड़ जाती हैं और ऊपरी भाग पर सफेद गिरवी लग जाती है। इनसे बचने के लिये तम्बाकू के पानी का छिड़काव लाभदायक सिद्ध हुआ है। बोते समय बीज को राख के साथ मिलाकर बोने से भी कीड़ों का प्रभाव अधिक नहीं होता।

गाजर

यह वास्तव में कोई भारतीय वनस्पति नहीं है। इसकी

* विशेष विवरण के लिए प्रथम खंड में 'फसलों के शत्रु' अध्याय को देखें। आगे पातगोभी के रोगों के साथ ही इन पर भी प्रकाश डाला गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रारंभिक उत्पत्ति पूर्वी योरप और हिमालय के पश्चिमी भागों में हुई। अब हमारे देश के कई प्रदेशों में इसकी खेती खूब होती है। गाजर, कच्ची तरकारी के रूप में, मिठाई तथा अचार बनाकर प्रयोग में लाई जाती है। गाजर एक पौष्टिक पदार्थ है। आम-तौर से लोग इसे घोड़ों और दुधारू जानवरों को खिलाते हैं। पित्त, कफ, संग्रहणी और बवासीर के रोगियों के लिये बहुत लाभ-प्रद है। इसकी प्रमुख दो जातियाँ हैं:—

(१) देशी और (२) विलायती। विलायती गाजर की भी दो किस्में होती हैं—एक लम्बी और दूसरी छोटी। देशी गाजर गहरी लाल और विलायती नारंगी या गुलाबी रंग की होती है। जानवरों के लिए देशी और मनुष्यों के लिए विलायती गाजर का अधिक प्रयोग होता है।

भूमि—गाजर की खेती के लिये हल्की दूमट भूमि सबसे अच्छी रहती है। हल्की मिट्टी में चौरस और भारी मिट्टी में मेड़ पर बोना चाहिए। कड़ी मटियार भूमि को छोड़कर प्रायः सभी प्रकार की सामान्य खेतिहर भूमि में गाजर की खेती होती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—इसकी जुताई भी मूली के समान ही करनी चाहिए। एक या दो बार भारी हलों से जुताई करने के बाद ४-५ जुताइयाँ देशी हल से कर देनी चाहिए। इसे नाइट्रोजन की अपेक्षा पोटाश की अधिक आवश्यकता होती है जिसकी कि पूर्ति रासायनिक खादों से की जा सकती है। इसके खेत में डेढ़ सौ से दो सौ मन गोबर की सड़ी हुई खाद तथा १० मन खली की खाद पर्याप्त होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज और बुवाई—इसकी बुवाई का समय अगस्त से अक्तूबर तक है। यदि फसल लगातार लेना हो तो बुवाई १५-१५ दिनों के अन्तर पर दो तीन बार में करनी चाहिए। इसकी बुवाई छिटकवाँ तथा कतारों में दोनो प्रकार से की जाती है। छिटकवाँ बोने से ३ और कुंड में २ सेर बीज प्रति एकड़ लगता है। कुंड में बुवाई करने पर बीज को हल्की मिट्टी से ढक दिया जाता है। कतार से कतार की दूरी ९ इँच से १० इँच तक रखते हैं। लम्बी जड़वाली जातियों में दूरी अधिक और छोटी जड़वाली जातियों में कम रखी जाती है; गुड़ाई करने के समय पौदे से पौदे की दूरी ३ इँच रखनी चाहिए। इसका बीज १०-१५ दिन में जम आता है। बम्बई और गुजरात आदि प्रदेशों में इसे खरीफ में भी बोया जाता है।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—इसे अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। यदि नम भूमि है तो पौधों के बढ़ जाने के पश्चात् इसकी आवश्यकता नहीं रहती। महीने में दो बार सिंचाई पर्याप्त होती है। इसे कुल ३-४ सिंचाई की आवश्यकता होती है। अंकुर निकल आने पर बीच में निराई की आवश्यकता पड़ती है। जो गाजर भूमि से ऊपर निकल आवें उन्हें तुरंत मिट्टी भरकर ढँक देना चाहिए। निराई करते समय २-३ बार मिट्टी चढ़ाने की आवश्यकता होती है।

फसल की तैयारी—इसका कंद दो माह में उखाड़ने योग्य हो जाता है। देर करने पर इसकी सिरायें पुष्ट हो जाती हैं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और खाने के योग्य नहीं रहतीं। फसल देर तक मिलती रहे इसलिये थोड़ा २ करके बोना और क्रम से उखाड़ना चाहिये। भारी मिट्टी को उखाड़ने से पूर्व सींच देना चाहिये।

उपज—पैदावार दो ढाई सौ मन प्रति एकड़ होती है। इसे बालू या ठंढे स्थान में काफी समय तक रखा जा सकता है।

बीज की तैयारी तथा बीमारियाँ—मूली के समान ही इसका भी बीज तैयार किया जाता है। इसे फंगस व सूक्ष्म जन्तु वाली बीमारियाँ थोड़ी सी हानि पहुँचाती हैं। रसोईघर की चिमनी की कालिस, लकड़ी के कोयले का काला चूर्ण तथा चूने का पानी देना लाभदायक सिद्ध हुआ है।

शलजम

हमारे देश के कई प्रदेशों में शलजम की खेती होती है। यह विदेशी शाक है। पिछले १५–२० वर्षों से इसका उपयोग हमारे देश में निरंतर बढ़ रहा है। पत्तियों सहित तरकारी बनाने पर यह बहुत पुष्टिकर तथा स्वादिष्ट होता है। यह सुपाच्य होता है और अचार के रूप में भी काम आता है। लोग इसे मांस के साथ भी बनाकर खाते हैं। यह स्वभाव से गर्म होता है।

जातियाँ—यह दो प्रकार का होता है:—(१) पटनिया और (२) विलायती। पटनिया गोल और ऊपर नीचे चिपटा होता है। विलायती की तीन किस्में होती हैं: एक बिलकुल सफेद तथा दूसरा पीला होता है। यह दोनो ही लड्डू की शकल के होते हैं। दूसरा मुँह पर बैंगनी होता है तीसरा लम्बा मोटी मूली की शकल का होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि—शलजम की खेती के लिये हल्की दूमट और दूमट भूमि अच्छी रहती है। यह पहाड़ी भूमि पर भी होता है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—दो बार भारी हलों से जुताई करने के बाद हल्के हलों से ४–५ जुताइयाँ की जायँ। इसके खेत की ६-७ इंच मिट्टी भुरभुरी हो जानी चाहिये। इसमें मूली के समान ही खाद की आवश्यकता पड़ती है।

बीज और बुवाई—इसका बीज डेढ़ दो सेर प्रति एकड़ लगता है। देशी बीज की बुवाई का समय जुलाई से सितम्बर तक है। विलायती बीज सितम्बर से नवम्बर तक बोना चाहिये। बोते समय कतार से कतार की दूरी १$\frac{1}{8}$ फीट तथा पौदों की दूरी ८इंच रखनी चाहिये। बीज $\frac{1}{8}$इंच से$\frac{1}{2}$इंच गहरा बोना चाहिये। पटनिया शलजम ऊँची भूमि में छिटक कर बोया जाता है। यह मूली के साथ भी बोया जाता है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—मूली के समान ही इसे भी पानी की आवश्यकता होती है। निराई तथा गुड़ाई भी उसी के समान होनी चाहिये। गाँठ के लगभग आधा बढ़जाने पर मिट्टी चढ़ाना न भूलना चाहिये। मिट्टी चढ़ाते समय यदि मेड़ों की मिट्टी में थोड़ी खली की खाद मिला दी जाय तो शलजम सरस, सुस्वादु और उत्तम होता है।

फसल की तैयारी—इसकी फसल ढाई तीन महीने में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार भी दो ढाई सौ मन प्रति एकड़ होती है। इन्हें अधिक समय तक खेत में रखना हानिकर होता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। यत्नपूर्वक ठंढी जगह में रखने से यह कुछ दिन टिकाया भी जा सकता है।

बीज की तैयारी तथा बीमारियाँ—इसका बीज मूली के समान ही तैयार किया जाता है। विलायती बीज टंढ़े स्थानों में ही पैदा होता है। देशी शलजम प्रत्येक स्थान पर तैयार किया जा सकता है।

बँद गोभी व मूली को हानि पहुँचाने वाले कीड़ों से इसे भी हानि पहुँचती है। अस्तु इनसे बचने के लिए वही साधन काम में लाने चाहिये।

चुकन्दर

यह भी मूल जातीय शाक है। कुछ लोग इसे विदेशी समझकर त्याज्य बताते हैं किन्तु यह अत्यन्त लाभदायक तथा स्वादिष्ट शाक होता है। यह दो प्रकार का होता है—

(१) लम्बी और (२) गोल।

भूमि—बलुई और दोमट भूमि सबसे अधिक अनुकूल पड़ती है। इसे हल्की भूमि में बोना चाहिये।

भूमि की तैयारी तथा खाद—१०-१२इंच गहरी ५-६ जताइयाँ पर्याप्त होती हैं। एक एकड़ में ४०० मन के लगभग सड़ी हुई गोबर की खाद देनी चाहिये। नाइट्रोजन व पोटाश युक्त खादें भी लाभ पहुँचाती हैं।

बीज और बुवाई—इसके बोने का समय अगस्त से अक्टूबर तक का है। एक एकड़ में ढाई तीन सेर बीज लगता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसे एक डेढ़ फीट के अंतर पर बनी कतारों में ४ इंच के अंतर से बोना चाहिए।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—५-६ सिंचाई और प्रत्येक सिंचाई के बाद निराई व गुड़ाई आवश्यक है। इसकी जड़ों पर एक बार मिट्टी अवश्य चढ़ा देना चाहिये।

फसल की तैयारी—३ महीने में फसल पूर्णरूप से तैयार हो जाती है। देर करने से चुकन्दर कड़ा पड़जाता है और तरकारी अच्छी नहीं बनती।

उपज—एक एकड़ में ४०–५० मन पैदावार होती है।

बीमारियाँ व कीड़े—प्रायः शलजम मूली आदि के कीड़ों व बीमारियों से इसे भी भय रहता है। इसके खेत में आधा मन चूना प्रति एकड़ छिड़क देने से लाभ होता है।

अरवी (घुइयाँ) और बंडा

यह दोनो एक ही जाति की हैं। छोटी जाति अरवी और बड़ी जाति को बंडा कहते हैं। घुइयाँ एक ऐसी तरकारी है जो आलू के समान वर्ष भर प्राप्त होती रहती है। इसके पत्तों का भी शाक खाया जाता है। बंडा दो तरह का होता है—(१)बंगाली और (२) देशी या फैजाबादी। बंगाली की फसल लगभग १० महीने में और देशी की ६ महीने में तैयार हो जाती है।

भूमि—इसके लिये हल्की दोमट भूमि विशेष उपजाऊ सिद्ध होती है। वैसे यह कड़ी, मटियार और बलुई भूमि को छोड़कर हर तरह की भूमि में उत्पन्न होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि की तैयारी तथा खाद—मिट्टी पलटने वाले हल से दो जुताई करके देशी हल से ५-६ जुताइयाँ कर देनी पर्याप्त होती हैं। एक एकड़ में २५० मन सड़े हुये गोबर की खाद तथा१० मन अंडी की खाद देनी चाहिये। राख सुपरफास्फेट देने से पैदावार बढ़ जाती है। बनावटी खादें मिट्टी चढ़ाते समय ही दी जानी चाहिये।

बीज व बुवाई—इसका बीज ५–६ मन प्रति एकड़ लगता है। बंडे का बीज टुकड़ों में काटकर, जिसमें दो तीन अँखुये हों, बोना चाहिये। इसकी बुवाई दो बार की जाती है।(१) वर्षा के आरम्भ में जून व जुलाई के मध्य और (२) जाड़े के अन्त में जनवरी तथा फरवरी के मध्य। दूसरी फसल के लिये पानी का उचित प्रबन्ध करना पड़ता है अस्तु पहली ही फसल अधिकतर बोई जाती है। इसे नालियों में तथा चौरस क्यारियों में दोनो ही प्रकार से बोया जाता है। अंतिम जुताई के बाद ३ इंच ४ इंच गहरी नालियाँ डेढ़ फीट के अन्तर पर बनाकर उनमें १ इंच के अन्तर पर बोकर मिट्टी से ढक देना चाहिये। बीज को ३ इंच गहरा बोना चाहिये।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—वर्षा की समाप्ति पर इसकी एक दो सिंचाई करनी पड़ती हैं। जाड़ेवाली फसल की सिंचाई प्रति सप्ताह करनी आवश्यक है। ३-४ निराइयाँ अवश्य की जानी चाहिये। सिंचाई के साथ निराई गुड़ाई भी होती रहे। दो तीन बार मिट्टी चढ़ाना आवश्यक है। बरसातवाली फसल में पानी के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निकास का ठीक प्रबन्ध रखना चाहिये। गरमी में प्रति माह ३-४ पानी तथा १-२ निराई गुड़ाई काफी है।

फसल की तैयारी—इसकी पत्ती दो तीन माह में तरकारी के योग्य हो जाती है। अरवी की गाँठें लगभग ६ माह में पक कर तैयार होती हैं। वैसे फरवरी की फसल मई जून में और बरसात वाली नवम्बर में खुदना व बिकना प्रारम्भ हो जाती है। बंडा पकने व तैयार होने में कुछ अधिक समय लेता है।

उपज—इसकी पैदावार २०० मन प्रति एकड़ तक होती है। इसे खोदकर हवादार स्थान में रखना चाहिये। पौधों के आस पास निकली हुयी पत्तियों को काटकर तरकारी के रूप में इस्तेमाल करते रहना चाहिये। इससे घुइयाँ अच्छी बढ़ती हैं।

कीड़े व बीमारियाँ—इसमें एक प्रकार का विषैला रस होता है जिससे इसे बीमारियों तथा कीड़ों का अधिक भय नहीं रहता।

प्रायः देखा जाता है कि पौधों के लगभग दो महीने के हो जाने पर पत्तियाँ पीली पड़कर तथा धब्बेदार होकर ऐंठ जाती हैं। पौधा छोटा व कमजोर हो जाता है। गाँठें खोखली पड़ जाती हैं अथवा सड़ जाती हैं। इससे बचने के लिये तंदुरुस्त बीज बोना, पानी के निकास का उचित प्रबंध करना तथा फसलों में हेर-फेर करते रहना चाहिये।

फंगस की एक बीमारी होने पर पत्तियों पर काले व भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। गाँठें काटने पर गोलाई से काली या भूरी दिखती हैं। फसलों को हेर फेर-से तथा बीज को बोर्डोक्स मिक्सचर में डुबा कर बोने से इससे बचा जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हल्दी

हल्दी हमारे दैनिक व्यवहार की वस्तु है। हमारे देश में इसकी बहुत खपत है। यह तरकारी नहीं है किन्तु सभी तरकारियों तथा दालों में मसाले के रूप में इसका प्रयोग होता है। यह कृमिनाशक होती है। भारतवर्ष में यह प्रायः सभी प्रकार की जलवायु में बोयी जाती है।

जातियाँ—हल्दी की गाँठें दो प्रकार की होती हैं एक मोटी गोल और सख्त होती हैं जो प्रायः रंगाई के काम आती हैं। दूसरी प्रकार की गाँठें पतली लम्बी और मुलायम होती हैं। यह मसालों के काम आती हैं।

भूमि—इसकी खेती के लिये बलुई दोमट तथा दोमट भूमि सबसे अच्छी होती है। हल्दी का खेत विशेष ताकतवर होना चाहिये। कछार व मटियार में भी इसकी पैदावार होती है।

खेत की तैयारी तथा खाद—इसके खेत की मिट्टी आठ नौ इंच गहरी, खूब पोली और भुरभुरी कर लेनी चाहिये। ७-८ जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं। मिट्टी पलटने वाले हल से २ जुताई कर देना चाहिये। यह भूमि उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाती है।

दो ढाई सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से गोबर की खाद देनी चाहिये। पौदों के उगने पर अंडी की खली की खाद बारीक पीसकर १० मन प्रति एकड़ के हिसाब से लेनी चाहिये। इसमें ३ मन प्रति एकड़ के हिसाब से भेड़ बकरियों की लेंड़ी की खाद, राख तथा शोरा मिला लेना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज और बुवाई--इसकी बुवाई फरवरी से जुलाई के प्रारंभ तक की जाती है अन्तिम जुताई के बाद मेड़ें तथा नालियाँ बना लेना चाहिये। इन्हीं मेड़ों पर इसकी बुवाई आलू आदि के समान करना चाहिये। मेड़ों में नमी कम होने पर बोने के बाद ही सिंचाई कर देनी चाहिये। अँखुये बुवाई के १५ दिन बाद निकलते हैं। कछार भूमि में जहाँ सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती इसे चौरस क्यारियों में लगाकर बाद में मिट्टी चढ़ाते हैं। गाँठ से गाँठ १०-१२इंच के अन्तर पर तथा कतार या मेड़ १५ से १८ इंच के अन्तर पर होनी चाहिये। इसकी छोटी-छोटी गाँठें बोने के काम आती हैं। प्रति एकड़ ८-१०मन बीज लगता है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—इसकी४-५सिंचाइयाँ पर्याप्त होती हैं। नदी के कछारों में प्रायः सिंचाई की कम जरूरत होती है। बीज जमने पर और पौधे उग आने पर सिंचाई के बाद निराई करते रहना चाहिये तथा दो बार मिट्टी चढ़ाना चाहिये, एक पहले और दोबारा पौधों के बड़ा होने पर।

फसल की तैयारी—दिसम्बर तथा फरवरी तक इसकी फसल तैयार हो जाती है। जब पत्ते सूखकर तथा स्वयं झड़ कर गिरने लगें तब गाँठों को खोद लेना चाहिये। अधिक उपज के लिये उसे दो साल बिना उखाड़े छोड़ दें। सूखे पत्तों को तोड़ कर निकाल दें। जब पुनः कोपलें निकलें तब निराई करके गुड़ाई कर देनी चाहिये।

उपज—इस प्रकार तीसरे वर्ष १५० मन के लगभग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पैदावार होती है, जिसके सूखने पर १/२ का पड़ता बैठता है जब कि एक साल में खोदने पर ६०-७० मन के लगभग पैदावार होती है और सूखने पर १/६ का पड़ता बैठता है।

बीज रखना—बीज के लिये खेत के एक हिस्से में हल्दी बिना उखाड़े छोड़ दें और मई के प्रारम्भ में ही खोद कर बो दें।

दूसरी रीति यह है कि ठंढे तथा हवादार स्थान में १८इंच गहरा गढ़ा खोदकर उसमें गाँठें रखकर ऊपर से हल्दी के पत्तोंकी एक तह लगा दी जाय और ऊपर से ६इंच मिट्टी डाल कर ढक दें। गड्ढे में पानी का प्रवेश न होना चाहिये। इस रीति से हल्दी सुरक्षित रहती है। काम पड़ने पर उसे निकालते रहना चाहिये।

हल्दी तैयार करना—हल्दी को उखाड़कर उसके रेशों को काट देते हैं। उसे पानी के साथ उबाल कर टाट पर रगड़ कर छिलका निकालते हैं। पानी के बर्तन का मुँह ठीक से बंद होने पर यह स्वयं अपनी भाप से ही ३-४ घंटे में पक जाती है। छिलका निकल जाने के बाद पीली हल्दी की गाँठ के रंग से रंगने के बाद सुखाकर हल्दी तैयार कर लेते हैं। सूखने पर हल्दी पर पालिश करने के लिये खुरदरे पत्थर या मशीन का इस्तेमाल किया जाता है।

कीड़े व बीमारियाँ—इसे पानी की अधिकता होने पर गाँठें सड़ने के सिवा अन्य कोई विशेष व्याधि नहीं होती। इसलिये पानी आवश्यकता से अधिक न देना चाहिये।

अदरख

अदरख की तरकारी तो नहीं किन्तु अचार बहुत स्वादिष्ट

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बनता है। इसे लोग भोजन के समय चटनी आदि के समान अलग काटकर रख लेते हैं और कच्ची ही खाते हैं। इसकी चटनी भी बड़ी स्वादिष्ट होती है। यह कफ नाशक होती है और मन्दाग्नि को दूर करती है। हल्दी के समान इसकी भी गाँठें काम में आती हैं। यह औषधि के रूप में भी इस्तेमाल होती है।

भूमि व खेती की तैयारी—इसके खेत की भूमि तथा जुताई हल्दी के ही समान होनी चाहिये। १२५ मन गोबर की सड़ी हुई खाद तथा १० मन अंडी की खाद पर्याप्त होती है।

बुवाई—इसकी बुवाई भी हल्दी के समान जून से जुलाई तक होती है। इसकी बुवाई १½ फुट के अन्तर पर बनी कतारों में करनी चाहिये। एक गाँठ से दूसरी गाँठ का अन्तर नौ इंच से एक फुट तक रखना चाहिये। बोने के समय इसकी गाँठों के इस प्रकार टुकड़े कर लिये जाते हैं जिससे प्रत्येक गाँठ में दो तीन अँखुये अवश्य हों। इन्हें उपर्युक्त अन्तर से बनी मेड़ों पर २-३ इंच गहरे गाड़ देना चाहिये। प्रति एकड़ ८-१० मन बीज पड़ता है।

सिंचाई निराई आदि तथा तैयारी—इसकी हल्दी के समान ४-५ सिंचाई करनी चाहिये और पौधों के बढ़ने पर निराई कर उन पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिये। यह हल्दी के साथ ही तैयार हो जाती हैं।

उपज—इसकी उपज सवा से डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ तक होती है।

सोंठ तैयार करना—यही अदरख सूखने पर सोंठ बन जाती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। १०० मन ताजे अदरख की २० मन सोंठ तैयार होती है। अदरख से सोंठ बनाने के लिये उसे ३-४ दिन पानी में भिगोये रखना चाहिये जिससे कि मलने से उसका छिलका सरलता से निकल जाय। छिलका निकाल कर उसे तीन चार रोज सुखाना चाहिये। तीन चार बार ऐसी ही क्रिया करने पर सोंठ तैयार हो जाती है।

कीड़े व बीमारियाँ—हल्दी के समान ही अदरख को भी कीड़ों तथा बीमारियों का अधिक भय नहीं रहता। इसे पानी आवश्यकता से अधिक न देना चाहिये नहीं तो गाँठों के सड़ने का डर रहता है।

शकरकन्द

यह आलू के समान एक मूल जातीय शाक है। इसका जन्मस्थान अमेरिका है। यह जितना पौष्टिक होता है उतना ही सुस्वादु। वैज्ञानिकों का मत है कि इसमें दुग्ध, शकर, स्टार्च आदि सभी शरीर पोषक तत्व रहते हैं। इसकी तरकारी भी बनती है। इसका स्वाद मीठा होता है इसीलिये अँग्रेजी में इसे 'स्वीट पोटेटो' कहते हैं। लोग इसे उबालकर छीलने के बाद सानकर मुंगौड़ी के समान चुवाकर सूखने के पश्चात् रख लेते हैं और मौसम के बाद दूध में उबालकर खाते हैं। कुछ लोग टुकड़े-टुकड़े कर सुखा लेते हैं और पीस कर आटे के काम में लाते हैं। इसके आटे से रोटी, पूड़ी, कचौड़ी तथा हलुवा आदि सभी कुछ बनता है। इसकी दो किस्में होती हैं—(१) सफेद तथा (२) लाल।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लाल सफेद की अपेक्षा अधिक मीठी होती है। शकरकंद एक बहुवर्षीय पौधा होता है—लेकिन इसकी बुवाई प्रतिवर्ष की जाती है।

भूमि—इसकी खेती के लिये हल्की भूमि चुननी चाहिये। बलुई तथा हल्की दोमट भूमि सबसे अच्छी रहती है। कछार में भी इसकी खूब पैदावार होती है। भारी भूमि में बोने पर इसकी फसल अच्छी नहीं होती।

भूमि की तैयारी तथा खाद—इसकी दो जुताइयाँ मिट्टी पलटने वाले हल से और ५-६ देशी हल से करनी चाहिये। जुताई ८-९ इंच गहरी होनी चाहिये।

आलू की भाँति इसे भी खाद की अधिक आवश्यकता पड़ती है। नाइट्रोजन के अतिरिक्त पोटास और फासफोरस युक्त खादें देने से पैदावार विशेष बढ़ती है। २०० मन सड़े हुये गोबर की खाद मिलाकर जुताई करनी चाहिये। अंडी की खली तथा राख १०-१० मन प्रति एकड़ के हिसाब से देनी चाहिये।

बीज और बुवाई—बोने में इसका बीज नहीं वरन् गाँठों और लताओं के टुकड़े बोये जाते हैं। बीज के लिये डेढ़ इंच मोटी गाँठें फसल खुदते ही छाँट कर रख लेना चाहिये। मोटी शकरकंद भी लम्बी काटकर लगा देनी चाहिए। ढाई तीन मन शकरकंद प्रति एकड़ लगती है। हमारे देश में अधिकतर लताओं के टुकड़े ही लगते हैं। उन्हें पिछली फसल से लेकर थोड़ी सी जमीन में अलग लगा देना चाहिये।

शकरकंद चौरस में बोने की अपेक्षा मेड़ों पर बोना अच्छा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहता है। इन्हें ३ फीट का अन्तर देकर ८इंच–९इंच ऊँची बना लेना चाहिये। अक्तूबर नवम्बर में पिछली फसल की खुदाई के बाद उससे डेढ़ दो फीट लम्बे लता के टुकड़े लेकर डेढ़ दो फीट की दूरी पर ५–६ इंच गहरे बोने चाहिये। प्रत्येक टुकड़े में दो तीन अंकुर अवश्य होने चाहिये।

गाँठों की भी बुवाई इसी भाँति २॥–३इंच गहरी करनी चाहिये। लताओं तथा गाँठों का निरोग होना आवश्यक है। उन्हें फंगस की बीमारियों से बचाने के लिये बोर्डोक्स मिक्सचर में डुबो कर लगाना चाहिये।

जहाँ पाले आदि का अधिक भय नहीं रहता (बम्बई और गुजरात आदि) वहाँ इसकी बुवाई जाड़े में भी करते हैं। बिहार आदि प्रान्तों में दो फसलें लेने के लिये एक सितम्बर में तथा दूसरी बुवाई जनवरी में करते हैं। उत्तर प्रदेश में वर्षा के प्रारंभ में ही जून-जुलाई के अन्त तक बो देते हैं।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—यदि वर्षा न हो तो ऊँची तथा बलुई भूमि में २-३ सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। शुरू में जब तक लताएँ फैल न जाँय २-३ बार निराई तथा गुड़ाई करनी चाहिये। इसी बीच दो बार मिट्टी चढ़ाना भी आवश्यक है।

फसल की तैयारी—इसकी फसल लगभग ५-६ महीने में पक कर तैयार हो जाती है। वैसे लगभग ४॥ माह में यह काम में लाई जाने लगती है। जब पौधे पीले पड़ जाँय और कुछ कुछ सूखने लगें तब इसे उखाड़ना चाहिए। दो एक कन्द काट

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर छोड़ दिये जाँय। यदि इनका कटा हुआ भाग (सतह) शीघ्र ही सूख जाय तो इसे पका हुआ समझना चाहिए। फसल तैयार होने के बाद उखाड़ने में देरी करने से पिल्लू लग जाने का भय रहता है। इसे हल द्वारा अथवा खुरपी की सहायता से बहुत सावधानी के साथ खोदना चाहिए जिससे कि यह कट या रगड़ न जाँय।

उपज—इसकी प्रति एकड़ पैदावार लगभग दो ढाई सौ मन होती है।

संग्रह—गोदाम नमी से रहित गर्म और हवादार होना चाहिये रखने के लिये भली भाँति पकी हुई ऐसी शकरकंद निकाल लेना चाहिए जो न तो कटी पिटी हों और न रगड़ खाई हों। इसके गोदाम अधिकतर लकड़ी के बनाये जाते हैं जिनमें कि खिड़कियाँ अधिक रहती हैं। पहले जब तक गाँठों में नमी रहे इसे गर्मी की अधिक आवश्यकता होती है किन्तु बाद को अधिक गर्मी से बचाना चाहिए। इसे मचान पर रख कर ४-५ महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

कीड़े व बीमारियाँ—इसमें भी आलू के समान काटने वाले कीड़े पत्तियों और तनों को काट कर हानि पहुंचाते हैं। भूसी, शीरा तथा संखिया मिश्रित लड्डू बना कर २-३ बार स्थान पर रख देने से इसे खाकर यह मर जाते हैं। इसे फंगस की अनेक बीमारियों का भय रहता है। एक में पत्तियों का रंग पीला तथा गाँठों पर कुछ गोल तथा काले धब्बे पड़ जाते हैं। इसी तरह दूसरे प्रकार की बीमारी होने पर पत्तियों के पीला पड़ने के साथ ही साथ तने के सफेद भाग का रंग हल्का बैंगनी अथवा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नीला हो जाता है। इससे शकरकंद छोटे रह जाते हैं। इससे बचने के लिए बीज बोने से पूर्व बोर्डोक्स मिक्सचर भिगोकर जन्तुहीन करने के अतिरिक्त तन्दुरुस्त बीज तथा फसलों को बदल कर बोना और गोदाम में बीज सुखाकर रखना चाहिये। एक अन्य फसली बीमारी हो जाने पर छिलके का रंग कहीं कहीं बदलकर भूरे रंग का हो जाता है। हल्की भूमि में यह बीमारी कम होती है।

गोदाम से शकरकंद जब बाहर भेजे जाते हैं तब कभी कभी उनका सड़ना प्रारम्भ हो जाता है और उनके दबाने से पानी निकलता है; यह भी फंगस की ही बीमारी है। इन्हें निकालकर अलग कर देना चाहिए। इसी प्रकार फंगस के प्रभाव से कभी-कभी पत्तियाँ छोटी व पीली होकर सूखने लगती हैं। जड़ों का फैलाव बंद होकर उनका रंग काला पड़ जाता है। फसल को बदलकर बोने व हरी खाद देने से इसमें लाभ होता है।

एक किस्म के कीड़े (Root Knot) के लगने पर जड़ों पर गाँठ पड़ जाती है। इन्हें न बोना चाहिये।

जमीकंद

इसे सूरन भी कहते हैं। यह अग्निवर्धक, पुष्टिकर, कफ-नाशक और हल्का होता है। बवासीर में लाभकारी है। इसे ४-५ वर्ष तक खेत में रखना चाहिये।

भूमि—बलुई व दोमट भूमि सर्वश्रेष्ठ रहती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—दो जुताई गहरे मिट्टी पलटने वाले हल से और ५-६ जुताई देशी हल से करनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हरी खाद देना लाभदायक है। पहले साल दो सौ मन सड़े हुये गोबर की खाद देनी चाहिये। बाद में प्रतिवर्ष पौधों को थोड़ी-थोड़ी खाद देते रहें।

बीज और बुवाई—इसकी बुवाई जून व जुलाई में होती है। एक एकड़ में १५—२० मन बीज लगता है। गाँठें डेढ़ फीट के अंतर पर कतारों में बोनी चाहिये।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—प्रतिवर्ष ४-५ सिंचाई अवश्य करनी चाहिए और आवश्यकतानुसार निराई व गुड़ाई करते रहना चाहिये।

फसल की तैयारी—वैसे ४-५ वर्ष में फसल तैयार होती है किन्तु उसके पहले भी काम में लाया जाता है। यह जितना पुराना होता है उतना बढ़ता जाता है।

उपज—पैदावार लगभग ४०० मन प्रति एकड़ के होती है।

बैंगन

बैंगन को भाँटा या बताऊँ भी कहा जाता है। हमारे देश के प्रत्येक प्रदेश में बैंगन की खेती होती है। यह हमारे देश का मौलिक शाक है। संस्कृत में इसे 'वार्ताकु' कहते हैं। आयुर्वेद के अनुसार बारहमासी बैंगन वायु-कफ-पित्त इन तीनो दोषों को शांत करता है। बड़े बैंगनों का चोखा बहुत सुन्दर बनता है। जातियाँ— रंग व आकार प्रकार की दृष्टि से यह कई प्रकार का होता है— (१) काला गोल (मानिक) और (२) काला लम्बा (बारहमासी) तरकारी के लिए सबसे अच्छी जातियाँ हैं। (३) इसकी एक जाति गोल हरी व सफेद चित्तीदार (भाँटिन) होती है। (४)सफेद तथा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अंडाकार (विलायती भाँटा) और (५) टमाटर की भाँति लाल बैंगन खाने में कम किन्तु देखने में बहुत सुन्दर लगते हैं।

भूमि—वैसे यह भूड़ से लेकर मटियार तक हर तरह की जमीन में पैदा होता है किन्तु हल्की दोमट भूमि इसकी खेती के लिए विशेष अनुकूल पड़ती है। दोमट भूमि में भी इसकी अच्छी पैदावार होती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और ४-५ जुताई देशी हल से करनी चाहिये। प्रति एकड़ २००मन गोवर की सड़ी हुई खाद तथा ५-६ मन खली देनी चाहिये। इसके अतिरिक्त राख तथा अन्य पोटाश वाली खादें भी दी जा सकती हैं। पौधों पर लोना मिट्टी का छिड़काव भी करते रहना चाहिए। इसकी बियाड़ खेत में लगाई जाती है।

नर्सरी तैयार करना—टमाटर की भाँति बैंगन की बियाड़ तैयार करनी पड़ती है। एक एकड़ के लिये १पाव बीज की पौध पर्याप्त होती है, जिसे १५फीट×५फीट के नाप की दो क्यारियों में लगाया जा सकता है। इसका बीज साल में तीन बार बोया जाता है किन्तु केवल बरसात की फसल से ही साल भर तक फल लिये जा सकते हैं। पौध के लिए बीज—(१)फरवरी-मार्च(२)वर्षा के आरम्भ में जून तथा जुलाई के प्रथम सप्ताह में तथा (३) अक्टूबर के अन्त में बोया जाता है। चार-पाँच दिन में बीज जम आते हैं। जब पौधे ½ फीट के हो जायँ, तो उन्हें उखाड़कर खेत में लगा देना चाहिए। पौध लगभग एक महीने में खेत में लगाने के योग्य हो जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौधों को खेत में लगाना—पौधे के ६ इंच बढ़ जाने पर खेत में लगाना चाहिए। पौधों को ढाई-तीन फीट के अंतर पर बनी कतारों में लगाना चाहिये। पौधे से पौधे का अंतर २ से २।। फीट रखना चाहिये।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—सिंचाई तथा पानी के निकास की सुविधा के लिए कतारों के बीच नालियाँ बना लेनी चाहिये। पौध लगाने के बाद ही एक सिंचाई आवश्यक है। मार्च की फसल में ७ वें दिन तथा गर्मी में व वर्षा समाप्त होने पर चौथे दिन सिंचाई करनी चाहिये। ४–५ बार निराई गुड़ाई करने से फसल अच्छी होती है। दो गुड़ाइयाँ फावड़े से करनी चाहिये। पौधों के लग जाने पर निराई-गुड़ाई के समय पौधों पर मिट्टी चढ़ाना आवश्यक है।

फसल की तैयारी व उपज—इसकी फसल लगभग तीन या साढ़े तीन महीने में तैयार हो जाती है। यदि ठीक से सेवा की जाय तो प्रति एकड़ दो ढाई सौ मन तक पैदावार होती है।

बीज तैयार करना—बीज के लिये कुछ स्वस्थ पौधे चुनकर उनके फल तोड़ते जायँ और केवल एक फल छोड़ दें। इससे इसका आकार बढ़ जायेगा। जब यह पककर पीला पड़ जाय तब इसे तोड़कर तथा इसका बीज निकाल कर सुखा लें। सुखाकर इन्हें बोतल में ठीक से बंद कर इस प्रकार रखें कि नमी व वायु से यह खराब न हो जायँ।

कीड़े तथा बीमारियाँ—इसके पौधों में एक किस्म के पिल्लू लगते हैं जो चारे को चाट जाते हैं। बाद में फलों में लगने पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फल काने होकर सड़ जाते हैं। ऐसी शाखों व फलों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिये और पौधों पर राख का छिड़काव करते रहना चाहिये। फंगस की बीमारी होने पर पत्तों में धब्बे पड़ जाते हैं और फलों का सड़ना प्रारम्भ हो जाता है।

बोर्डोक्स मिक्सचर छिड़कने से इसमें लाभ होता है। इसकी नर्सरी में फंगस की एक अन्य किस्म की बीमारी हो जाती है जिसमें पौधे के तनों का सड़ना प्रारम्भ हो जाता है। यह रोग टिमाटर में भी होता है। टिमाटर की फसल के अनुसार ही इसका भी निदान करें। इसे कृपया टिमाटर की बीमारियों में विस्तार से पढ़ें।

टमाटर

कुछ ही दिनों से हमारे देश में टमाटर की खेती होने लगी है। इसका असली स्थान दक्षिणी अमेरिका है। पके हुये फलों का सलाद, चटनी, मुरब्बा, अचार और तरकारी बहुत ही स्वादिष्ट बनती हैं। जब से यह जाना गया कि इसमें उत्तम कोटि के विटामिन होते हैं तबसे सारे संसार में इसकी माँग जोरों से बढ़ गई है।

जातियाँ—हमारे देश में इसकी लाल जाति अधिकतर उत्पन्न की जाती है। नुमायशों के लिये पीली व नारंजी किस्में भी उगाई जाती हैं। हमारे देश में प्रत्येक किस्म उत्पन्न होती है। यद्यपि यहाँ तैयार किये हुये बीजों से पौधे उगाये जा सकते हैं तथापि गुणों में परिवर्तन हो जाने से और सुन्दर सुडौल फल उत्पन्न करने के लिये विलायती बीज बोना लाभदायक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि—हमारे देश की जलवायु इसके लिये अत्यंत अनुकूल पड़ती है। इसे चिकनी तथा बलुई भूमि को छोड़कर प्रत्येक किस्म की भूमि में बहुतायत से उत्पन्न किया जा सकता है। बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिये विशेष अनुकूल पड़ती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—इसकी दो जुताइयाँ मिट्टी पलटने वाले हल से और ५-६ देशी हल से करनी चाहिये। जुताई अधिक से अधिक ८ इंच गहरी हो।

टमाटर को अधिक खाद की आवश्यकता नहीं रहती। १५० मन प्रति एकड़ सड़े हुये गोबर की खाद देनी चाहिये। इसे फासफेट और पोटाश की अधिक आवश्यकता होती है। इसकी पूर्ति प्रति एकड़ २ मन हड्डी का चूरा अथवा सुपर फास-फेट देकर की जा सकती है। एक एकड़ में तीन मन के हिसाब से राख देनी चाहिये।

नरसरी तैयार करना—इसका बीज पहले नरसरी में तैयार किया जाता है और तब खेत में बेड़ लगाई जाती है। इसका बीज नरसरी में ४-४ इंच के अन्तर पर बनी कतारों में बोना चाहिये। नरसरी में बीज १५ जुलाई से अक्तूबर के अन्त तक बोये जाते हैं। जब पौधे ७-८ इंच के हो जायें तब इन्हें खेतों में लगा देना चाहिये। इसका बीज २-३ छटांक प्रति एकड़ लगता है। जल्दी फसल लेने के लिये बीज जुलाई में ही बोना चाहिये।

पौदों को खेत में लगाना—बोवाई की सबसे अच्छी रीति यह है कि प्रत्येक क्यारी में डेढ़ फीट की दूरी पर तीन कतारों में पौधे लगाये जायँ। प्रत्येक क्यारी के बाद ३ फीट जगह छोड़

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
दी जाय जिसमें सिंचाई की नाली बना ली जाय। साथ ही साथ पौधों की गुड़ाई निराई तथा फल तोड़ने में भी इससे सुविधा रहेगी। पौधे से पौधे का अन्तर १५ से १८ इंच रखना चाहिये। उपरोक्त रीति से पौधे लगाकर उनकी जड़ों में मिट्टी चढ़ा दी जाय। प्रत्येक पौधे के निकट एक लकड़ी लगा दी जाय। जैसे-जैसे पौधे बढ़ते जायँ उन्हें इसका सहारा देकर सीधा करते जाना चाहिये और ५ फीट से अधिक बढ़ने पर ऊपर की टहनियों को तोड़ते जाना चाहिये। उत्तरी भारत में जहाँ पाला अधिक पड़ता है पौधों को साये में और घना लगाना चाहिये। पंक्तियों का अंतर डेढ़ फीट और पौधों का अन्तर सवा फीट रखना चाहिये। जब रात में अधिक ठंढ पड़े अथवा पाले का भय हो तब मौसम ठीक होने तक चटाई अथवा घास की टट्टी से पौधों को नित्य शाम से ही ढँक देना चाहिये तथा सिंचाई प्रति सप्ताह एक बार करनी चाहिए।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—इसकी सिंचाई खुश्क मौसम में दसवें दिन और वैसे पन्द्रहवें दिन सिंचाई करते रहना चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के बाद निराई करना आवश्यक है। गुड़ाई कर ऊपर की पपड़ी तोड़कर भूमि भुरभुरी कर देना चाहिए। बड़े फल लेने के लिए जब पौधे छोटे हों तभी नीचे की एक-एक कर धीरे-धीरे डालियाँ तोड़ते जाना चाहिये। जिससे पौधा अधिक बढ़े और भूमि में न लगे। इससे फल बड़े होते हैं किन्तु पैदावार कुछ कम पड़ जाती है।

फसल की तैयारी व उपज—लगभग तीन महीने में कच्चे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फल लग जाते हैं जो १ महीने में पककर तैयार हो जाते हैं। यह २०० से २५० मन प्रति एकड़ तक उत्पन्न होता है।

बीज तैयार करना—यदि ठीक से रखा जाय तो इसका बीज ३-४ वर्ष तक काम देता है। टमाटर के सुडौल तथा पके हुये फलों को तोड़कर तथा उन्हें काटकर भीतर के बीजों को निकालकर टाट या ब्लौटिंग पर फैलाकर सुखा ले अथवा एक बर्तन में रख छनी हुई राख मिलाकर भली भाँति मसल कर धो डाले। बीज के साफ हो जाने पर सुखाकर शीशी या अन्य किसी ढक्कनदार बर्तन में, जिसकी कार्क अथवा ढक्कन मोम से बंद किया जाय, रखना चाहिए।

कीड़े व बीमारियाँ—टमाटर को कीड़ों व बीमारियों से, अधिक कोहरे व पाले से नुकसान पहुँचता है। इससे फसल को बचाने के उपाय हम ऊपर बता चुके हैं। दो तितली की जाति के कीड़ों (ग्रीजी सरफेस कटर पिलर और टोबैको कटर पिलर) के बालकीट पत्तों को खाते हैं। इन्हें मारने के लिये गेहूँ की भूसी में शीरा संखिया मिलाकर लड्डू बना लेना चाहिये। इन्हें खेत में दो तीन बार स्थान-स्थान पर रख देना चाहिए। इन्हें यह खाकर मर जाते हैं। इस पर लीफ रोल आफ टोमेटो नामक बीमारी का आक्रमण होने पर पत्तियाँ ऊपर को ऐंठ जाती हैं। पौधा कम बढ़ता है और फल छोटे ही रह जाते हैं। यह एक छूत की बीमारी है; ऐसे पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिये। इसी प्रकार माई आदि रोगों की भी रोक थाम आवश्यक है। इसी प्रकार टोमेटो मुजेक नामक बीमारी होने पर भी पत्तियाँ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
ऐंठ जाती और उनपर पीली चित्तियाँ पड़ जाती हैं। यह भी छूत की बीमारी है। पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिये।

फँगस का आक्रमण होने पर कभी कच्चे और कभी पक्के फलों का सड़ना आरम्भ हो जाता है। उन पर गोल दबे हुये दाग पड़ जाते हैं। ऐसे फलों को उखाड़ कर फेंक देना चाहिये। कच्चे फल अधिकतर हर मौसम में सड़ने लगते हैं। इसके लिये पानी का निकास ठीक रखना, फसलों को हेर-फेर से बोना, सफाई तथा लकड़ी लगाना आवश्यक है।

इसी प्रकार फंगस की एक अन्य प्रकार की बीमारी में पौदे सूख जाते हैं। ऐसे पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए तथा फसलों को हेर-फेर से बोना चाहिए।

अक्सर फंगस के प्रभाव से नरसरी में ही पौधों का सड़ना आरम्भ हो जाता है। इसके लिए नर्सरी में नई मिट्टी डालना चाहिए अर्थात् खौलता हुआ पर्याप्त पानी छिड़ककर उसे कीड़ों से रहित कर देना चाहिए। नरसरी में पत्तियाँ इकट्ठा कर आग लगा देने से भी यह हो सकता है। ४० वर्ग फीट नरसरी में १ सेर फारमोलीन को ५० गैलन पानी मिलाकर छिड़क देने से भी कीड़े मर जाते हैं।

फंगस के आक्रमण पर बोर्डोक्स मिक्सचर का पौधों पर छिड़काव लाभदायक सिद्ध हुआ है।

मिर्च

मिर्च को पूर्ण रूपेण शाक तो नहीं कहा जा सकता परंतु शाक के साथ कच्चे-पक्के, सूखे या गीले किसी न किसी रूप में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसका प्रयोग सर्वत्र होता है। अतएव शाक से अधिक यह मसाला है। गुजरात व मद्रास आदि में इसकी तरकारी खूब खाई जाती है। यह तीखी चरपरी और गर्म होती है।

जातियाँ—मिर्च की कई जातियाँ होती हैं। संक्षेप में कुछ प्रमुख जातियाँ यहाँ दी जाती हैं। मूल रूप से इन्हें दो वर्गों में बाँटते हैं—(१) मौसमी और (२) बहु वार्षिक। मौसमी जाति एक ही ऋतु में समाप्त हो जाती है। इसकी भी कई किस्में होती हैं। एक किस्म चेरी के फल की भाँति छोटी व गोल होती है तथा दूसरी स्पेन की बड़ी जाति की मिर्च होती है। तीसरी जाति बैंगनी रंग की होती है। वह वार्षिक जाति के पौधे झाड़ीदार होते हैं और कई वर्ष तक फल देते रहते हैं। बड़ी जाति की मिर्च कम कड़वी होती है किन्तु छोटी जाति अपने कड़वे तथा तीखेपन के लिये प्रसिद्ध है।

भूमि—दोमट तथा हल्की दोमट भूमि इसकी खेती के लिये विशेष रूप से अनुकूल पड़ती है। वैसे, यदि वर्षा का क्रम ठीक रहे तो भारी भूमि में भी बिना सिंचाई के यह उत्पन्न की जा सकती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—इसकी ६–७ जुताइयाँ करनी चाहिये। पहली दो जुताइयाँ मिट्टी पलटने वाले हल से करना अच्छा रहता है। इसके लिये प्रति एकड़ लगभग १५० मन सड़े हुये गोबर की खाद पर्याप्त होती है। लाल मिर्च की खेती में नाइट्रोजन की अधिक आवश्यकता होती है। इसके लिये नाइट्रेड आफ सोडा प्रति एकड़ सवा मन से डेढ़ मन के हिसाब से देना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नर्सरी तैयार करना—यद्यपि बीज को खेत में छींटकर भी इसकी बोआई की जा सकती है किन्तु बीड़ तैयार कर खेत में पौधे रोपने की रीति अधिक अच्छी तथा प्रचलित है। नरसरी में बीज अप्रैल से जून तक बोते हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में अप्रैल में शीघ्र ही बुवाई शुरू हो जाती है। पौधों को नरसरी में एक महीने तक बढ़ने दिया जाता है। एक एकड़ भूमि के लिए ३-४ छटांक की पौध काफी होती है।

पौधों को खेत में लगाना—एक महीने बाद उन्हें खेत में लगा दिया जाता है। लगाते समय पंक्तियों का अन्तर दो फीट तथा पौधे से पौधों का अन्तर एक फीट रखना चाहिए। बड़ी किस्मों की बीड़ अगस्त व सितम्बर में बोकर अक्टूबर में खेत रोप देते हैं।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—बरसात में इसकी सिंचाई की जरूरत नहीं होती। खुश्क मौसम में प्रति सप्ताह और वैसे हर दसवें दिन सिंचाई करते रहना चाहिए। हर सिंचाई के बाद ओट आने पर निराई व गुड़ाई करना तथा पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ाते रहना चाहिए।

फसल की तैयारी—जब इसके फल कच्चे रहते हैं तभी से इसकी बिक्री प्रारंभ हो जाती है। जो लोग पके हुये फल लेना चाहते हैं वे उन्हें पकने पर धूप में सुखा लेते हैं और बोरों में भर कर रख लेते हैं। बड़ी मिर्च जो तरकारी के काम आती है जनवरी व फरवरी में काम लायक हो जाती है। पतली व छोटी किस्मों में इसी समय सुर्खी आने लगती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपज—भली भाँति सिंचाई आदि करने पर १५-२० मन प्रति एकड़ इसकी औसत उपज होती है।

बीज तैयार करना—विलायती (बड़ी किस्में) बीज तो बाहर से ही मँगाना पड़ता है किन्तु शेष किस्मों के बीज यहीं तैयार किये जा सकते हैं। पहली तोड़नी के मिर्च अगली फसल के लिये रख छोड़ने चाहिये और बोने के समय उसे झाड़ कर साफ करके बो देना चाहिये।

कीड़े व बीमारियाँ—प्रायः कच्चे तथा पक्के फलों का सड़ना प्रारंभ हो जाता है। यह फंगस की एक बीमारी है। ऐसे पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिये। तरी अधिक होने पर पत्तियों का सिकुड़ना प्रारंभ हो जाता है। अतएव सिंचाई आवश्यकता से अधिक करनी चाहिये।

भिंडी

भिंडी की तरकारी बहुत स्वादिष्ट एवं पुष्टिकारक होती है। गर्मी में जब अन्य शाक सब्जियों का अभाव रहता है तब यह बहुतायत से प्राप्त होती है। यह शरीर को शीतल रखती तथा बल-वीर्य वर्धक होती है। कोमल अवस्था में ही इसका स्वाद अच्छा होता है परंतु कड़ी होने पर वह जाता रहता है। देश काल के भेद से यह राम परवल, रामतरोई, भिंडी आदि नामों से पुकारी जाती है।

जातियाँ—मुख्यतः इसके २ भेद होते हैं—(१) विलायती या अमेरिकी जिसका फल गहरा हरा तथा चिकना होता है। इस पर रोंये नहीं होते। (२) देशी जिसके दो भेद हैं:—(१) पटनियाँ जिसका फल उजलापन लिये हल्के हरे रंग का और चिकना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होता है और (२) देशी साधारण---जिसका रंग हरा और फल रोंयेदार होता है। यह निम्न कोटि की भिंडी होती है। काल-भेद से भी इसके दो भेद हैं (१)बरसाती जिसका पौधा ४-५ फीट लम्बा और (२) जाड़े के अंत में होने वाली जिसका पौधा १॥-२ फीट होता है। बरसाती पौधे में फल अधिक होते हैं।

भूमि—इसकी खेती हर प्रकार की भूमि में की जा सकती है। किन्तु दोमट तथा हल्की दोमट भूमि इसकी खेती के लिये विशेष अनुकूल पड़ती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—इसकी एक जुताई भारी मिट्टी पलटने वाले हल से तथा ३-४ देशी हल से करनी चाहिये। प्रति एकड़ १५० मन सड़े हुये गोबर की खाद पर्याप्त होती है। सड़ी हुई पत्ती की खाद भी इसे दी जा सकती है।

बीज और बुवाई—इसकी दो फसलें बोई जाती हैं। इसके बोने का समय जनवरी से मार्च तक और जून से जुलाई तक है, किन्तु इसकी बुवाई अधिकतर फरवरी और जून में ही की जाती है। इसे खेत में बोकर अथवा नर्सरी में तैयार कर दोनो ही तरह से लगाया जा सकता है। बोवाई का ढंग सुगम तथा अच्छा है। बीज को रात भर भिगोकर बोने से जल्द उग आता है। लग-भग ४-४॥ सेर बीज प्रति एकड़ लगता है। जहाँ पौधे न जमें वहाँ नर्सरी से लेकर लगाने चाहिये। जाड़े के अन्त में बोने के लिये १ फिट के अंतर पर १½ फिट चौड़ी सिंचाई की नालियाँ बना लेनी चाहिये। इन नालियों में किनारे से कुछ जमीन छोड़ कर दो कतारों में बोवाई करनी चाहिये। बरसाती फसल चौरस खेत में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२-२।। फीट के अंतर पर बोनी चाहिये। बीज से बीज की दूरी ६ से ८ इंच तक रखनी चाहिये। फसल को अधिक समय तक पाने के लिये एक साथ बोवाई न करके हर पंद्रहवें दिन दो चार क्यारियों में बोवाई करते रहना चाहिये।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—बरसाती फसल के लिये तो नहीं किन्तु जाड़े के अंत वाली फसल की सप्ताह में एक सिंचाई कर देनी चाहिये। इसकी ३-४ बार निराई तथा २-३ बार गुड़ाई कर मिट्टी चढ़ाना आवश्यक है। निराई व गुड़ाई के समय बरसाती फसलों में पौधों का अन्तर २ इंच और जाड़े की फसल में १ इंच कर देना चाहिये।

फसल की तैयारी—इसकी फसल दो ढाई महीने में, जाड़े की फसल से जुलाई तक और बरसाती फसल से नवम्बर तक मिलने लगती है। भिंडी कोमल अवस्था में ही खाने के योग्य रहती है।

उपज—जाड़े की फसल से ६० से ६५ मन प्रति एकड़ और बरसात की फसल से ७० से ८०मन प्रति एकड़ तक पैदावार होती है।

बीज के लिए नीरोग, स्वस्थ, पके और अच्छे फल छाँटकर रख लेना चाहिये।

कीड़े व बीमारियाँ—इसमें एक ऐसा कीड़ा लगता है जो फलों में छेद कर अन्दर के भाग को खा जाता है। ऐसे फलों को तोड़कर जला देना चाहिये। एक अन्य लाल रंग का कीड़ा फल, फूल, पत्ती और शाख का रस चूस कर पौधे को निर्बल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बना देता है। मिट्टी के तेल में पानी मिलाकर उसमें पौधा हिला कर इसको गिरा लेना चाहिए।

फंगस की बीमारी होने पर पत्तियाँ झड़ जाती और पौधा सूख जाता है। तने काटने पर अन्दर काला सा दिखाई देता है। ऐसे पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए और फसल में हेर-फेर कर देना चाहिए। इसी प्रकार फंगस की एक अन्य बीमारी होने पर पत्तियाँ पीली होकर झड़ जाती हैं। फल कम लगते हैं। इसे दूर करने के लिये बोर्डक्स मिक्सचर का छिड़काव करना चाहिये।

परवल

परवल एक विशुद्ध भारतीय शाक है। स्वादिष्ट होने के साथ ही यह लाभदायक भी होता है। यह हल्का और गुणकारी होता है। रोगियों को परवल का रस पथ्य में दिया जाता है। यह पश्चिमी बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश में अधिकता से उत्पन्न होता है। इसकी दो जातियाँ होती हैं:—

(१) पतला, भूरे रंग का और (२) मोटा हरे रंग का व सफेद धारियों वाला; यह पकने पर पीला पड़ जाता है। (३) एक जंगली जाति का परवल भी होता है जो बिना बोए झाड़ियों में पैदा होता है। इसकी तरकारी भी लोग बड़े शौक से खाते हैं।

भूमि—परवल की खेती के लिए दोमट तथा बलुई दोमट भूमि सबसे उपयोगी है। कछार भूमि में इसकी अधिक उपज

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होती है। परवल के खेत की भूमि कुछ ऊँची होनी चाहिये जिससे कि पानी उसमें न रुके।

खेत की तैयारी और खाद—१ जुताई मिट्टी पलटने वाले भारी हल से करने के पश्चात् ४-५ देशी हल की जुताई लगभग ७ इंच से ८ इंच गहरी करनी चाहिए।

गोबर की खाद इसके लिए विशेष उपयोगी होती है। इसके खेत में लगभग २०० मन सड़ी हुई गोबर की खाद देना चाहिए। बकरी की लेंड़ी तथा घोड़े की लीद डालने से उपज बढ़ती है।

बीज व बुवाई—इसका बीज भी बोते हैं और लता भी लगाई जाती है। बीज मई से जुलाई के मध्य ३-३ इंच के अन्तर पर बने हुए सड़े गोबर की खाद से युक्त थहलों में बोए जाते हैं। बीज प्रति एकड़ आधा सेर से तीन पाव तक लगते हैं। लताओं को लगाने की रीति यह है कि इन्हें तीन चार हाथ ऊपर से काटकर इस तरह मोड़े कि उसके छोर एक ही ओर रहें। इन्हें मोड़ कर एक फीट रखना चाहिए और तीन फीट के अंतर पर पंक्तियों में ४ इंच गहरा गाड़ना चाहिए। गाड़ते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इनके दोनो सिरे बाहर रहें और बीच का भाग भूमि के अन्दर रहे। पौध से पौध का अन्तर भी ३ फीट रखना चाहिए। कहीं-कहीं लताओं के फैलने के लिए टट्टी भी लगा देते हैं, किन्तु भूमि में फैलने से पैदावार कम नहीं होती। कहीं-कहीं पान के भीटों में इसकी खेती बहुत होती है।

सिंचाई, निराई, तथा गुड़ाई—कछार भूमि की सिंचाई की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहुत कम आवश्यकता पड़ती है। अन्य स्थानों में लताओं के लग जाने पर २ इंच चौड़ी नालियाँ बनाकर प्रति सप्ताह सिंचाई करते रहना चाहिये। बरसात के बाद दो तीन सिंचाई देना पर्याप्त होता है। परवल के लिये ४-५ निराई तथा ३-४ गुड़ाई की आवश्यकता होती है। इस समय लताओं को समय-समय पर फेरते रहना चाहिये जिससे कि वे पुनः जड़ें न पकड़ सकें। ऐसा होने पर पैदावार कम पड़ जाती है। प्रथम वर्ष की फसल के बाद भूमि गोड़ कर खाद देनी चाहिये।

फसल की तैयारी—अप्रैल से नवम्बर तक इसकी फसल मिलती रहती है। पहले साल इसकी फसल साधारण और दूसरे साल बहुत अच्छी होती है। तीसरे साल खेत अवश्य बदल दें।

उपज—एक एकड़ की औसत पैदावार ६०-७० मन है। दूसरे और तीसरे साल उपज में कुछ वृद्धि होती है। परवल तोड़ कर पानी में डाल कर तर रखना चाहिये।

कीड़े व बीमारियाँ—इसे किसी प्रकार की बीमारी व कीड़ों का अधिक भय नहीं रहता।

सेम

सेम की फलियों व शाक बहुत अच्छा बनता है। यह रुचिवर्धक होती है। शाक के अतिरिक्त इसका अचार बहुत सुन्दर बनता है। किन्तु इसका सेवन लगातार करने से खुजली व फुन्सियाँ होने की संभावना होती है। इसकी ६ जातिया होती हैं:—

(१) बड़ी-सेम या सेमा (२) सोयाबीन (३) देशी सेम (४) लोबिया या बोड़ा (५) ग्वार (केमाच) (६) गोआबीन (चार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कोनी सेम)। इसकी उपरोक्त ६ किस्मों में देशी-सेम ज्यादा बोई जाती है। इसकी खेती अलग नहीं वरन् अन्य फसलों के साथ की जाती है। शाक के लिये प्रचलित जातियों में झाड़ी वाली और लता वाली जातियाँ मशहूर हैं

भूमि—इसकी खेती के लिये बलुई दोमट और दोमट भूमि सबसे अच्छी रहती है। खेत में पानी का निकास ठीक होना चाहिये तथा छाया रहनी चाहिये। भारी मिट्टी या मटियार में इसकी फसल अच्छी नहीं होती।

भूमि की तैयारी तथा खाद—खेत की ४-५ जुताइयाँ ६-७ इंच गहरी होनी चाहिये। एक एकड़ में ५०-६० मन सड़े हुये गोबर या पत्ती की खाद व २ मन हड्डी का चूरा देना चाहिये।

बीज और बुवाई—मैदानी क्षेत्रों में सेम की बुवाई अगस्त, सितम्बर और अक्टूबर के महीनों में और पहाड़ी क्षेत्रों में अप्रैल, मई और जून महीनों में की जाती है। बोते समय कतार-कतार का अंतर १½-२ इंच तथा पौधे से पौधे का अंतर ९ इंच रखना चाहिये। बड़ी सेम और लोबिया ४इंच-५इंच पर बनी पंक्तियों में बोई जानी चाहिये। पौधों का अंतर २इंच हो। इसे अन्य फसलों-गन्ना, बाजरा आदि के साथ खेत के किनारे बोया जाता है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—वर्षा का समय न होने पर प्रति सप्ताह सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। फलियों में दाने पड़ जाने पर तीसरे चौथे दिन सिंचाई करनी चाहिये। कभी-कभी निराई तथा गुड़ाई भी कर देनी चाहिये। लताओं के बढ़ने पर उन्हें चढ़ाने का प्रबंध करना चाहिये। इसके लिये झाँखर, टट्टियाँ,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बाँस की खपच्चियाँ लगा कर अथवा बाग के किनारे की चहार दीवारी आदि का सहारा देकर चढ़ाना चाहिये ।

फसल की तैयारी—बोने के चार महीने बाद इसकी फसल तैयार हो जाती है और इसकी छीमी निकलने लगती है । छीमियों को तोड़ते रहना चाहिये । अन्यथा सख्त हो जाने पर उनकी तरकारी अच्छी नहीं बनती और पैसा कम मिलता है ।

उपज—इसकी पैदावार लगभग १०० मन प्रति एकड़ होती है।

लौकी

यह विशुद्ध भारतीय वनस्पति है। इसका शाक अच्छा बनता हैं । इसका रायता उत्कृष्ट होता है । इसके पके फलों के भीतर का बीज और गूदा निकाल देने से इसकी तोंबी के कमण्डल बहुत सुन्दर बनते हैं । बोने के अनुसार यह दो प्रकार की होती है:—(१) कार्तिकी और (२) जेठऊ । आकार प्रकार की दृष्टि से भी यह दो तरह की होती है:—(१) लम्बी और (२) गोल ।

भूमि—यों तो यह सभी प्रकार की भूमि में होती है परंतु बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिये विशेष उपयोगी है ।

खेत की तैयारी तथा खाद--इसकी ७ इंच गहरी ५–६ जुताई करनी चाहिये । इसके खेत में १२५ मन सड़े हुये गोबर या कम्पोस्ट की खाद पर्याप्त होती है ।

बीज और बुवाई—इसके बीज जनवरी-फरवरी, और जून-जुलाई के महीनों में बोये जाते हैं। जुलाई वाली फसल ५ फिट×५ फिट के अंतर पर बने हुये गड्ढों में बोनी चाहिये। फरवरी की फसल के लिये ५ फीट के अन्तर से दो फुट चौड़ी नालियाँ बना लेनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहिये और इन्हीं में ३ इंच के अंतर से बुवाई करनी चाहिये। बीज का नोकदार सिरा नीचे और चपटा ऊपर रखना चाहिये। एक एकड़ में ढाई तीन सेर बीज लगता है। प्रत्येक थाले के चारो कोनों पर एक-एक बीज बोना चाहिये और उगने पर सबसे स्वस्थ १ पौधे को रखना चाहिये।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—जब तक पौधों में फूल न आ जाँय इसे बराबर पानी की आवश्यकता रहती है। वर्षा के अभाव में तथा गर्मी की फसल में प्रति सप्ताह सिंचाई करते रहना चाहिये। इसकी ३-४ बार निराई तथा गुड़ाई अवश्य कर देनी चाहिये। लताओं के चारों ओर और गड्ढों में थोड़ी-थोड़ी खाद देते रहना चाहिये। लतायें जगह-जगह जड़ें न फेकने पायें इसलिये निराई गुड़ाई के समय उठा कर देख लेना चाहिये। गर्मी के मौसम में बेल को खेत में ही फैलने दिया जाता है। परंतु बरसात के मौसम में बेल के ऊपर चढ़ने और फैलने के लिये लकड़ी लगादी जाती है। जो लौकी तीन चार फीट तक लम्बी होती है उसके लिये मचान बना देना चाहिये और उस पर बेल फैलाना चाहिये। लताओं में यदि कम फल निकलें तो नियम से दो एक दिन उनकी जड़ों में बासी माँड़ डालने से खूब फल निकलते हैं। लताओं में जब फूल निकलने लगें तब मछलियों का धोवन या अंतड़ी उनकी जड़ पर डालना चाहिये।

फसल की तैयारी—बरसाती फसल अक्टूबर और नवम्बर में तैयार हो जाती है। फरवरी की बोयी हुई फसल अप्रैल और मई के महीने में तैयार होती है। यह जब आधी पक जाय तभी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तोड़ लेना चाहिये। देर करने पर इसका छिलका कड़ा हो जाता है और यह खाने योग्य नहीं रहता।

उपज—लौकी की औसत पैदावार ५० से ६० मन प्रति एकड़ होती है।

बीज तैयार करना—बीज लेने के लिये कुछ स्वस्थ फल छाँट लें और उनके पक कर सूख जाने पर उनके बीज निकाल लें और साफ कर शीशी में रख लें।

कीड़े व बीमारियाँ—इसे एक प्रकार के लाल कीड़ों और चूहों से बड़ी हानि होती है। राख का छिड़काव करना न भूलना चाहिए। चूहों को मारने के लिए चूहेदानी का प्रयोग करना अथवा आटे में चूहे मारने का विष मिला कर स्थान-स्थान पर रख देना चाहिए।

तरोई

बरसात में होने वाली यह एक प्रमुख तरकारी है। इसकी तरकारी बहुत ही स्वादिष्ट होती है जिस समय अन्य शाक सब्जियों का अभाव सा हो जाता है उस समय यह बहुतायत से प्राप्त होती है। इसकी तीन किस्में होती हैं:—(१) नेनुआ (घिया तरोई), (२) सतपुतिया और (३) झिंगा तरोई। नेनुआ या घिया तरोई आकार प्रकार में एक फुट तक भी लम्बी होती हैं। इसका ऊपरी भाग मुलायम, सुडौल और रंग पीलापन लिए हुये होता है। सतपुतिया का आकार प्रकार छोटा होता है। वह परवल के समान होती हैं और गुच्छों में फरती हैं। झिंगा (अरों)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तरोई आकार में नेनुआ से छोटी होती है। यह गहरे हरे रंग की होती है और इस पर उभरी हुई धारियाँ होती हैं।

भूमि—सीताफल के समान ही दूमट और बलुई दूमट भूमि इसके लिये सबसे अधिक उपयुक्त है। पानी के निकास का ध्यान रखना चाहिये।

भूमि की तैयारी तथा खाद—६-७ इंच गहरी ५-६ जुताइयाँ करके १२५ मन प्रति एकड़ सड़े गोबर व कम्पोस्ट की खाद देनी चाहिए।

बीज और बुवाई—इसके बोने का समय जनवरी-फरवरी व जून-जुलाई है। जून जुलाई में बोई जाने वाली फसल ४×३ फीट तथा फरवरी में बोई जाने वाली फसल ४×२ फीट के अंतर पर गड्ढों में बोनी चाहिए। एक गड्ढे में चार बीज बोने चाहिये। निराई व गुड़ाई करते समय इनमें छाँटकर दो लता जो सबसे तन्दुरुस्त हो रखनी चाहिये। बरसाती फसल में बीज दो सेर तथा गर्मी की फसल में तीन सेर प्रति एकड़ लगता है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—गर्मी की फसल में प्रति सप्ताह सिंचाई करनी चाहिये। पानी नाली में देना चाहिये। बरसाती लताओं को ऊपर चढ़ाना चाहिये। २-३ निराई पर्याप्त होती हैं।

फसल की तैयारी—फरवरी वाली फसल अप्रैल से जुलाई में तथा बरसाती अक्टूबर व नवम्बर में तैयार होती है। इसको तोड़ने में देरी न करनी चाहिए। कड़ी होने पर यह खाने के योग्य नहीं रहती।

उपज—इसकी उपज २००-३०० मन प्रति एकड़ होती है

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसका बीज भी लौकी के ही समान तैयार कर लेना चाहिए।

कीड़े तथा बीमारियाँ—पौधों के उगने पर इसमें भी लाल कीड़े कोमल पत्तों को चाट जाते हैं। इन्हें एक-एक कर मारना चाहिये। राख का छिड़काव करते रहने से कीड़ों से बहुत बचाव होता है।

करेला

करेले की तरकारी तीती होने पर भी रुचिकर होती है। यह पित्त को शान्त करता और रुचि बढ़ाता है। तरकारी के अतिरिक्त इसका अचार भी बनता है। कालभेद से यह दो प्रकार का होता है—(१)बरसाती और(२)गर्मी का। बरसाती फसल का करेला कम दलदार, पतला व लम्बा होता है किन्तु गर्मी की फसल का छोटा, दलदार तथा मोटा होता है। इसका रंग हरा होता है। इसकी एक सफेद किस्म भी होती है। इसमें तीतापन बहुत कम होता है और लम्बा भी अधिक होता है। कुछ लोग 'करेली' की भी तरकारी रुचि के साथ खाते हैं यह छोटी अंडाकार होती है और झाड़ियों में स्वतः उग आती है।

भूमि—इसकी खेती दोमट व हल्की दोमट भूमि में करने से उपज अधिक होती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—इसके खेत की ७ इंच गहरी ५-६ जुताइयाँ करनी चाहिये। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा शेष देशी हल से करनी चाहिये। सड़े हुए गोबर या कम्पोस्ट की खाद प्रति एकड़ १२५ मन देना पर्याप्त होता है।

बीज और बुवाई—इसकी बुवाई जनवरी तथा जून में की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
जाती है। बोवाई में लगभग ३ सेर बीज लगता है। इसे बरसाती फसल में ५ फीट के अन्तर पर बनी हुई पंक्तियों में गढ़े बनाकर बोना चाहिये। एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी लगभग १½ फीट रखनी चाहिये। गर्मी की फसल में पंक्तियों का अन्तर ३फीट कर देना चाहिये। प्रत्येक गढ़े में चार बीज बोने चाहिये और निराई के समय केवल दो तन्दुरुस्त लतायें रखनी चाहिए।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—गर्मी की फसल में मौसम खुश्क होने पर पौधों की पाँचवें दिन सिंचाई कर देनी चाहिए। बरसाती फसल में वर्षा के बाद २-३ सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। २-३ निराई गुड़ाई पर्याप्त होती हैं। बरसाती लताओं को ऊपर चढ़ाने का प्रबन्ध करना चाहिए। खेत में लकड़ियाँ डाल देनी चाहिए।

फसल की तैयारी—बरसाती फसल सितम्बर, अक्टूबर में तथा गर्मी वाली अप्रैल में तैयार हो जाती है।

उपज--इसकी उपज प्रति एकड़ १५० से २०० मन के लगभग होती है। अगली फसल के लिये बीज रखने के लिये पकने पर बीज निकालकर सुखा लें और फिर नेप्थलीन की गोली के साथ नमी रहित बोतल में बन्द कर रख दें।

कीड़े तथा बीमारियाँ—इसमें अक्सर बीमारी लगने पर भीतर के बीज लाल से पड़ जाते हैं कीड़ों का भी इस पर कम असर नहीं होता। इन सबसे बचने के लिये राख का छिड़काव करना चाहिये। रोगी तथा कीड़ों वाले पौधों को खेत से उखाड़ कर बाहर फेक देना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सीताफल

लौकी के समान यह भी विशुद्ध भारतीय शाक है और उसी के समान यह लताओं में पैदा होता है। साधारण श्रेणी के भारतीय इसका शाक बहुत बनाते हैं। इसका कारण यह है कि यह बहुत सस्ता होता है और सुस्वाद एवं मीठा भी। इसके फूल की भजिया भी बहुत सुन्दर बनती है। इसे काशीफल और कोहड़ा भी कहते हैं। कालभेद से इसकी मुख्य दो जातियाँ होती हैं (१) कार्तिकी और (२) जेठऊ।

भूमि—दोमट तथा बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिये विशेष अनुकूल पड़ती हैं।

भूमि की तैयारी तथा खाद—७ इंच गहरी ५-६ जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं। एक एकड़ में डेढ़ दो सौ मन सड़े हुये गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट देनी चाहिए।

बीज और बुवाई—इसकी बुवाई के लिए ५ फीट के अंतर पर बनी कतारों में गड्ढे बना कर बुवाई करनी चाहिए। गड्ढों का अन्तर ५ फीट होना चाहिए। प्रत्येक गड्ढे में तीन बीज नीचे की ओर मुँह करके बोने चाहिए। जाड़े की फसल में इस अन्तर को कुछ कम किया जा सकता है बाद में एक निराई के समय हर गड्ढे में एक तन्दुरुस्त लता रखनी चाहिये।

इसकी बुवाई का समय जुलाई तथा फरवरी व मार्च का है। एक एकड़ में दो ढाई सेर बीज लगते हैं

सिंचाई, निराइ तथा गुड़ाई—इसकी सिचाई गड्ढों की मध्य-भूमि में नाली बनाकर करनी चाहिए। वर्षा के बाद, जाड़े

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में हर पंद्रहवें दिन तथा गर्मी में प्रति सप्ताह सिंचाई करनी चाहिए इसकी ४-५ निराई तथा ३-४ गुड़ाई आवश्यक हैं बरसाती लताओं को ऊपर चढ़ाने का प्रबन्ध अत्यन्त आवश्यक होता है। गर्मी वाले पौधे भूमि पर फैल सकते हैं।

फसल की तैयारी—फरवरी वाले फल जून-जुलाई में और जुलाई वाले अक्टूबर व नवम्बर के महीनों में तैयार होते हैं। ठीक से देख-रेख करने पर इसकी औसत पैदावार ढाई तीन सौ मन प्रति एकड़ होती है।

बीज तैयार करना—बीज के लिए प्रथम आये हुए फलों में से स्वस्थ फलों को छाँट लेना चाहिए और पक जाने पर उन्हें सुखा कर रख लेना चाहिए। इसमें यह ध्यान रखना चाहिए कि कार्तिकी बीज कार्तिकी फसल के लिए और जेठऊ बीज जेठऊ फसल में ही बोने के लिए रखे जाँय।

कीड़े और बीमारियाँ—इसके पौधों में लाल कीड़े बहुत लगते हैं जो इसकी कोमल पत्तियों को चाट जाते हैं। इनको चुन-चुन कर मार डालना चाहिए और राख का छिड़काव करना चाहिए इसके अतिरिक्त चूहों से होने वाले नुकसान से बचने के लिए लौकी के समान इसमें भी चूहेदानी तथा विष का प्रयोग करना चाहिए। वनतुलसी की गंध से चूहे भागते हैं अस्तु इसके पत्ते खेत में इधर-उधर डाल देने चहिए।

चचेंडा

यह बलवीर्य्य वर्धक, रुचिकर, पथ्य और क्षय तथा पित्त के रोगों के लिए लाभकारी होता है। इसकी तरकारी भी बहुत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वादिष्ट होती है। यह दो तरह का होता है:—(१) सफेद और (२) धारीदार।

भूमि की तैयारी और खाद—यह सब सीताफल के ही समान होने चाहिए।

बीज और बुवाई—बोने का समय अप्रैल तथा जुलाई उपयुक्त है। ३ सेर बीज प्रति एकड़ लगता है। कतारों में बुवाई करने पर ५ फीट के अन्तर से और गड्ढों में ३ फीट का अन्तर रखना चाहिए।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—इन सबमें यह लौकी के ही समान है।

फसल की तैयारी—अप्रैल वाली फसल अगस्त में और बरसाती, अक्टूबर-नवम्बर में तैयार होती है। रात में यह बड़े जोरों से बढ़ता है। एक एकड़ में प्रायः २००, ३०० मन पैदावार होती है।

बीमारियाँ और कीड़े—तरोई, लौकी आदि के समान ही है।

खीरा

खीरा ककड़ी आदि मौसमी लतायें हैं जो जाड़े के अन्त से वर्षा के आरम्भ तक बोई जाती हैं। इससे गर्मी तथा बरसात में फल मिलते हैं। नमक मिर्च के साथ इसे अधिकतर कच्चा ही खाया जाता है। इसकी तरकारी व रायता भी बनता है खीरा मुख्यतया दो प्रकार का होता है:—(१) देशी (२) विलायती। देशी जाति तीन किस्म की होती है:—एक बड़े फल वाली जाति होती है जो पहले हरी और पकने पर मटमैले रंग की हो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाती है। इसकी तरकारी अधिक बनती है। कच्चा खाने में उतना स्वादिष्ट नहीं होता। दूसरी किस्म छोटे दल वाली होती है जो प्रारम्भ में सफेद और पकने पर दोनों सिरे भूरे हो जाते हैं। तीसरी किस्म गोल खीरे की होती है जो अण्डाकार होता है। प्रारंभ में हरा तथा सफेद धारियों वाला तथा बाद में भूरा हो जाता है।

विलायती किस्में अक्टूबर में बोई जाती हैं और उपज अच्छी होती है।

भूमि—इसकी खेती के लिये बलुई कछार भूमि तथा बलुई दोमट भूमि विशेष रूप से अच्छी रहती है।

खेत की तैयारी तथा खाद—हल्की भूमि में चार-पाँच तथा भारी भूमि में आठ नौ जुताइयाँ आध फीट गहरी करनी चाहिये।

एक एकड़ में १५० मन सड़े गोबर या कम्पोस्ट की खाद देनी चाहिये। इसके अतिरिक्त लगभग ८ मन राख तथा ३ मन सुपर फास्फेट प्रति एकड़ देनी चाहिये।

बीज और बुवाई—इसके बोने का समय जनवरी-फरवरी व जुलाई है। देशी पहली दोनो किस्में (लम्बी और छोटी) फरवरी से जुलाई तक बोते हैं तथा गोल खीरा फरवरी से मई तक बोया जाता है। विलायती खीरा अक्टूबर में बोने से अच्छी उपज होती है। इसे पहाड़ों पर फरवरी से मई तक भी बोया जा सकता है; एक एकड़ में १२ छटाँक के लगभग बीज लगते हैं। जुताई के बाद खेत में कतारों में ४-५ फिट की दूरी पर गड्ढे बना लेते हैं। उन्हीं में खाद देना चाहिये। कतारों का फासला ५-६ फिट रखते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
हैं। पानी देने में आसानी रहे, इस लिए फरवरी मार्च में गड्ढे में बोवाई न करके ४फिट×१½फिट के अंतर पर नालियाँ बनाकर बोना चाहिये। एक स्थान पर दो तीन बीज बोते हैं और निराई के समय एक स्थान पर केवल एक तन्दुरुस्त पौधा रखते हैं।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—बरसात में सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं रहती परंतु पहली फसल को मौसम के अनुसार ५-६ दिन में एक बार सींच देना चाहिये। बरसात में लताओं को ऊपर चढ़ाने की आवश्यकता होती है। जब पौधों में तीन चार पत्ते लग जाँय तो कोपलों को तोड़ देना चाहिये जिससे नई नई शाखायें निकल आवें और फूल देवें। यदि फूल फिर भी न आवें तो पुनः यह क्रिया करनी चाहिये। निराई कर देना लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

फसल की तैयारी—बरसाती फसल सितम्बर में और जायद की अप्रैल-मई में तैयार होती है। इसकी पैदावार २५०से ३०० मन प्रति एकड़ होती है। इसे समय से तोड़ते रहना चाहिये जिससे कि अधिक फल लग सकें।

कीड़े तथा बीमारियाँ—फलों को सड़ाने वाली मक्खी के बच्चे फलों को भीतर ही भीतर खाते हैं जिससे वे सड़ जाते हैं। ऐसे सड़े फलों को निकाल कर दो छटाँक संखिया तथा दो छटाँक शीरे में चार छटाँक जल का मिश्रण कर घोल तैयार करके पत्तियों पर इधर-उधर छिड़क देना चाहिये।

माहू के बच्चे पत्तियों का रस चूस कर नुकसान पहुँचाते हैं। एक कीड़ा पत्तियों को काट कर खाता है। इसके लिये१०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
भाग बुझा चूना और एक भाग लेड आर्सीनेट मिलाकर पौधों पर छिड़कना चाहिये। राख का छिड़काव करने से भी लाभ होता है।

इसी प्रकार फंगस की बीमारियों के हो जाने पर पौधे सूख जाते हैं। अन्य पत्तियों पर चित्तियाँ पड़ जाती हैं। इन्हें दूर करने के लिये बोर्डोक्स मिक्सचर का छिड़काव करना चाहिये। कभी-कभी सूख जानेवाली एक बीमारी होने पर फलों पर पीले धब्बे पड़ जाते हैं और गोंद सा बाहर निकलने लगता है। ऐसा होने पर गंधक का छिड़काव करना चाहिये। इसी प्रकार अन्य कई रोग होते हैं। इनसे बचने का सबसे अच्छा उपाय है कि उपरोक्त उपयोगों के साथ-साथ रोग-ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर तुरंत नष्ट करते जाँय।

ककड़ी

यह खीरे के ही समान स्वादिष्ट होती है। इसे लोग बड़े स्वाद के साथ खाते हैं। छोटी दशा में यह नर्म हरी व रोएँदार होती है और पकने पर पीली पड़ जाती है। कालभेद के अनुसार इसके दो भेद होते हैं:—(१)गर्मी की और (२) बरसाती। गर्मी की फसल की ककड़ी पतली सफेद रंग लिये हुये होती है और बरसाती मोटी तथा लम्बी होती है। यह पकने पर चिटक जाती है तब इसे फूट कहते हैं। शकर के साथ खाने में यह बड़ी स्वादिष्ट होती है। इसे अक्सर मक्का के साथ बोया जाता है। गर्मी की ककड़ी की फूट नहीं होती। यह कच्ची ही खाई जाती है।

भूमि तैयारी तथा खाद—यह सब खीरे के ही समान करनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज और बुवाई आदि—इसका बीज एक एकड़ में एक सेर लगता है। फरवरी के प्रारंभ से अप्रैल तक गर्मी की फसल बोई जाती है। बरसाती फसल के बोने का समय जुलाई का है। इसकी बुवाई का ढंग खीरे के ही समान करना चाहिये।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई आदि भी उसी के समान करना चाहिये। इसकी भी पैदावार खीरा के समान ही होती है।

खरबूजा

खरबूजा भी खीरा-ककड़ी के समान लताओं में उत्पन्न होता है। कच्चे खरबूजे की तरकारी बनाई जाती है। अधिक लोग पका हुआ खरबूजा छील कर खाते हैं। यह मीठा और अत्यंत सुस्वादु होता है। रंग तथा आकार प्रकार के अनुसार इसकी अनेक जातियाँ होती हैं। लखनऊ के पीले रंग के सफेदा खरबूजे प्रसिद्ध हैं। इसी प्रकार जौनपुर व आगरा के भी खरबूजे अच्छे माने जाते हैं

भूमि—बलुई भूमि में बोनेपर तरबूज व खरबूजे की पैदावार तो अधिक होती है किन्तु मिठास कम पड़ जाती है। दोमट व दोमट मटियार भूमि में यद्यपि पैदावार कम पड़ जाती है परंतु फल मीठे एवं स्वादिष्ट होते हैं। बलुई, कछार की मिट्टी व दोमट में इसे बोया जाता है। मटियार में इसकी पैदावार बिलकुल नहीं होती।

भूमि की तैयारी तथा खाद—इसकी भी जुताई व खाद खीरे तथा ककड़ी के समान ही होनी चाहिए।

बीज और बुवाई—खरबूजा जनवरी से मार्च तक १½ सेर प्रति एकड़ के हिसाब से बोया जाता है। इसके लिये भूमि में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
काफी तरी की आवश्यकता होती है। खीरे के समान इसे ५-६ फिट के अन्तर पर गढ़े बनाकर बुवाई करते हैं। फरवरी व मार्च में गढ़े के बजाय नालियों में बुवाई करनी चाहिये। खाद इन्हीं गढ़ों में देनी चाहिये। एक स्थान पर २-३ बीज बोये जाते हैं और निराई के समय केवल एक स्वस्थ पौधा छोड़ा जाता है। बहुत से लोग खरबूजा १ फिट चौड़ी व १ फिट गहरी और ५-६ इंच की दूरी पर बनी नालियों में पर्याप्त खाद डालकर बोते हैं और लताओं को बीच भूमि पर फैलाते हैं। यह ढंग भारी मिट्टी के लिये ठीक है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई--इसकी सिंचाई १०-१२ मार्च तक प्रति सप्ताह तथा मई-जून में हर तीसरे दिन करते रहना चाहिये। कछार में इतनी नमी रहती है कि सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती। ४-५ निराई एवं गुड़ाई आवश्यक हैं। खरबूजे व तरबूज को प्रारम्भ में अधिक पानी देना चाहिये और फल के बढ़ जाने पर कम कर देना चाहिये। पकते समय केवल इतना ही पानी दिया जाय जिससे लतायें जीवित रह सकें। बरसात में लताओं को ऊपर चढ़ाने का प्रबन्ध करना चाहिये। खीरे के समान इसकी भी कोपल तोड़ देना चाहिये। प्रत्येक शाख में २ फल होने चाहिये।

फसल की तैयारी--खरबूजा की फसल वर्षा के प्रारंभ होने तक समाप्त हो जाती है। जब रंग पीला पड़ जाय तो फल तोड़ लेना चाहिये। यह जून तक मिलता है। एक लता से १०-१२ फल मिलते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपज--इसकी पैदावार लगभग ४०० मन प्रति एकड़ तक होती है।

कीड़े और बीमारियाँ--खीरे के ही समान इसकी भी फसल के लिये उन्हीं बीमारियों तथा कीड़ों की आशंका रहती है। दूर करने के लिये वही ढंग काम में लाने चाहिये।

तरबूज

इसकी तरकारी तो नहीं बनती किन्तु पका हुआ तरबूज खाने में अत्यंत स्वादिष्ट होता है। इसकी भी कई किस्में होती हैं जिनमें फरुखाबादी गोल तरबूज प्रसिद्ध हैं। लम्बे को बंगाली कहते हैं। कच्चे तरबूज हरे और पकने पर उनका रंग अधिक गहरा हो जाता है। लाल रंग के गूदे वाला तरबूज अधिक स्वादिष्ट होता है।

भूमि तैयारी तथा खाद—इसे खीरे तथा खरबूजे के समान ही भूमि, जुताई तथा खाद की आवश्यकता होती है।

बीज, बुवाई व सिंचाई आदि—तरबूज जनवरी से मार्च तक ढाई-तीन सेर फी एकड़ के हिसाब से बोते हैं। इसकी खरबूजे के समान ही बुवाई करना चाहिये। सिंचाई आदि भी उसी के समान होनी चाहिये।

उपज—तरबूज की पैदावार लगभग १००० मन प्रति एकड़ तक होती है।

कीड़े व बीमारियाँ—इसे भी खीरे व खरबूजे वाली बीमारियाँ व कीड़ों से डर रहता है। अस्तु उसी प्रकार फसल की रक्षा करनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोभी

हमारे देश में गोभी की खेती पहले नहीं होती थी। यह विदेशियों के साथ हमारे देश में आई। आज तो यह एक सर्व-प्रिय तरकारी बन गई है। यह एक स्वादिष्ट तरकारी है और हमारे देश में आलू के साथ इसे प्रायः पकाया जाता है। गोभी साधारणतया तीन प्रकार की होती है:—

(१) बंद गोभी(२)फूल गोभी(३)गाँठ गोभी। इसे ठंडी जलवायु अनुकूल रहती है।

बंद गोभी

यह पत्र जातीय गोभी है जो ठंढी जलवायु में उत्पन्न होती है। इसके घने बंधे हुये पत्तों का शाक बनता है। इसकी निम्न आठ किस्मों की खेती होती है:—

(१)वेकफील्ड ग्रुप—यह किस्म छोटी,नुकीली और जल्द होने वाली है। (२) कोपेनहेगेन मारकेट ग्रुप—यह गोल तथा जल्द तैयार होने वाली किस्म है। (३)ड्रम हेड ग्रुप—ढोल के आकार की देर में तैयार होने वाली यह किस्म हमारे देश में अधिक होती है। पौधा बड़ा व ठोस होता है। (४)सेवाय ग्रुप—गहरे हरे रंग तथा सिकुड़ी हुई पत्तियों वाली यह एक श्रेष्ठ जाति होती है। (५) डेनिश बाल हेड ग्रुप—यह जाति अधिक समय तक रखी जा सकती है। इसका पौधा ठोस तथा पतली पत्तियों वाला होता है। (६)एल्का ग्रुप—इसका पौधा वेकफील्ड (नं०१) से छोटा किन्तु गोल होता है। यह जल्द तैयार होने वाली जाति है परन्तु बिक्री के दृष्टिकोण से अच्छी नहीं मानी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
जाती। (७) वाल्गा ग्रुप—यह एक देर में तैयार होने वाली जाति है। इसका पौधा बड़ा गोल, बड़ी और मोटी पत्ती वाला होता है। (८) रेड पिक्लिंग कैबेज—इसका पौधा ठोस तथा पतली एवं बैंगनी पत्तियों वाला होता है। इसमें स्मिथ, रौक रेड, रेड डच व रेड डेनिश अच्छी जातियाँ हैं।

बंद गोभी की अच्छी फसल उन्हीं प्रदेशों में होती है जहाँ इसकी बाढ़ के लिये अधिक काल तक सामान्य ठंढक तथा वातावरण में पर्याप्त नमी रहती है। ऐसी जगहों में जहाँ तापक्रम बहुत कम हो जाता है या पाला पड़ने लगता है वहाँ पौदों में समय से बहुत पूर्व ही छोटे-छोटे फूल निकल आते हैं जो अधिक समय तक रखे नहीं जा सकते।

भूमि—बंद गोभी की खेती बलुई दोमट, दुमट और दुमट मटियार भूमि में की जाती है। जल्दी तैयार होने वाली जातियों के लिये बलुई दोमट और देर में तैयार होने वाली जातियों के लिये दोमट व दोमट मटियार भूमि अच्छी होती है। मिट्टी भुर-भुरी और अधिक समय तक नम रहने वाली होनी चाहिये।

खेत को तैयार करना और खाद देना—मिट्टी पलटने वाले हल से ६ इंच गहरी जुताई दो बार और देशी हल से छः बार करना चाहिये। इसे नाइट्रोजन पोटाश की अधिक आवश्यकता होती है। गोबर की खाद ३००मन प्रति एकड़ और पोटेशियम सल्फेट ढाई-तीन मन प्रति एकड़ डालना चाहिये। पैदावार बढ़ाने के लिये इनका एक साथ प्रयोग करना चाहिये। इनके अभाव में इनकी पूर्ति सनई की हरी खाद अथवा राख व खली की खाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
से भी की जा सकती है। गोबर व खली की खाद पौधे लगाने के एक माह पूर्व ही खेत में पहुँच जानी चाहिये। राख तथा रसायनिक खादें पौधे लगाने के पश्चात् दो तीन बार में देना चाहिये। गोबर या खली देने के बाद ढेले तोड़कर भूमि को समतल भुरभुरी बनाकर पाटा या बेलन की सहायता से भूमि को दबा देना बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है।*

नरसरी तैयार करना--गोभी के बीज छोटे होने के कारण पहले नरसरी में उगा लिये जाते हैं। बीज को नरसरी में अगस्त से अक्टूबर माह तक जल्द व देर से पकने वाली जातियों के अनुसार बो देना चाहिये। ५० वर्ग गज की नरसरी में १ छ. बीज बोया जाता है। २ से ३ छटांक बीज एक एकड़ के लिये लगता है। जल्द पकनेवाली जातियों में अधिक बीज खर्च होता है क्योंकि पौधे पास-पास लगाये जाते हैं और बरसात में मरते भी बहुत हैं। पाँच छः सप्ताह के बाद जब पौधे ४-५ इंच लम्बे हो जायँ तब उन्हें खेत में लगाने के योग्य समझना चाहिये।

पौदों को खेत में लगाना--पौदों को खेत में शाम को लगाना चाहिये। पौदे लगाते समय खेत में नमी होनी चाहिये जिससे पौदे तुरन्त जड़ें पकड़ लें। पौदों को लगाने के बाद अँगूठे से मिट्टी को भली भाँति दबाकर शीघ्र ही सींच देना चाहिये। जल्द बोई जाने वाली जातियों में पंक्तियों का अन्तर १$\frac{1}{2}$

---

* प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि गोभी की फसल के लिये ५०० पौंड अमोनियम सल्फेट, १००० पौंड सुपर फास्फेट और २०० पौंड सुपर फास्फेट देना काफी होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और पौधों का अन्तर १ फीट तथा देर में बोई जाने वाली जातियों में २ फीट×१½ फीट का अंतर रखना चाहिये। जल्द बोई जाने वाली किस्मों को हल्की मेंड़ें बनाकर लगाना चाहिये। इससे वर्षा में खेत में पानी भर जाने पर नुकसान नहीं होता। तरकारी लगातार मिलती रहे, इसलिये पौधों को कुछ समय का अन्तर देकर कई बार लगाना चाहिये।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—सिंचाई करते समय मुख्य ध्येय यह रहना चाहिये कि पौदों के जीवन काल भर ३ या ४ फीट तक भूमि में पर्याप्त नमी रहे जिससे कि उनकी बाढ़ सामान्य रूप से होती रहे। फसल कटने तक लगभग ७ या १० दिन के अन्तर पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिये। इसकी चार से पाँच बार गुड़ाई और जब पौधे आधे बढ़ चुकें तब उनकी जड़ों पर मिट्टी चढ़ाने की आवश्यकता होती है। खेत में उगने वाली खर पतवार साफ करते रहना चाहिये। मिट्टी चढ़ाने के पूर्व आवश्यकतानुसार बनावटी खाद दे देनी चाहिये। सिंचाई का क्रम साधारणतया सप्ताह में एक बार रहना चाहिये।

फसल की तैयारी व उपज—जल्द तैयार होने वाली किस्में ढाई और देर में पकनेवाली किस्में तीन साढ़े तीन माह में तैयार हो जाती हैं। ठीक से देखभाल करने पर एक एकड़ में ५-६ हजार गोभी निकलते हैं।

कीड़े व बीमारियाँ—गोभी की तितली, जिसके सफेद पंखों पर काले धब्बे होते हैं, से बड़ी हानि पहुँचाती हैं। इसका कीड़ा पत्ती खाता और गोभी को छेदता है। इससे बचने के लिये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तम्बाकू का पानी छिड़कना लाभदायक है। इसी प्रकार पत्ती खाने वाले डायमण्ड ब्लैक माथ के कीड़े को भी तम्बाकू के पानी अथवा मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख छिड़ककर मारा जा सकता है। एक प्रकार की मक्खी जिसे मस्टर्ड सा फ्लाई कहते हैं, पत्ती को चीरकर अण्डा देती हैं; यह दिन में पत्ती खाती हैं और रात में मिट्टी में रहती हैं। इसे मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख छिड़ककर मारा जा सकता है। नरसरी में व खेत में मटमैले रंग के छोटे टिड्डे बड़ी हानि पहुँचाते हैं। इनसे बचने के लिये स्टमक प्वाइज़न (Stomach Poison) का छिड़काव लाभदायक सिद्ध हुआ है। इसी प्रकार माहू भी जो पत्तियों का रस चूसती है, तम्बाकू के पानी का छिड़काव कर मारी जा सकती है।

अक्सर भूमि में पानी की अधिकता से अथवा तेजाबपन आ जाने से गोभी की जड़ों पर गाँठें पड़ जाया करती हैं जिससे पौधों को खूराक मिलनी बंद हो जाती है। इसलिये इससे बचने के लिये पानी के निकास का प्रबन्ध ठीक रखने के साथ ही साथ पौधे लगाने से पूर्व खेत में चूना डालना उपयोगी है। नरसरी में २० गैलन पानी में एक छटांक मरकरी क्लोराइड घोलकर छिड़कने से भी यह विकार नहीं होता। इसी प्रकार प्रायः एक सूक्ष्म कीटाणु की बीमारी भी हो जाया करती है जिसे ब्लैक राट कहते हैं। इसके होने पर पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं और उनकी नसें काली हो जाती हैं। इससे बचने के लिये बीज को मरकरी क्लोराइड १%के घोल में ३० मिनट तक भिगो लेना चाहिये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और इस बीमारी के होने पर जल्द तैयार होने वाली फसल न उगानी चाहिये।

फूल गोभी

यह पुष्प जातीय गोभी है। इसके फूल का शाक और अचार बनता है। कुछ लोग इसकी कोमल पत्तियों का भी शाक बनाते हैं। इसके फूल को काट कर धूप में सुखा लिया जाता है और मौसम की समाप्ति पर इस सुखौने को पानी में फुला कर तरकारी बनाई जाती है।

जातियाँ—हमारे यहाँ देशी व पटनियाँ गोभी सर्वत्र प्रचलित है। इसकी दो जातियाँ होती हैं:—(१) कतकी जिसके फूल आश्विन तक तैयार हो जाते हैं और (२) माघी जो माघ तक तैयार हो जाती है। देशी गोभी के बीज अधिकतर पटने में प्राप्त होते हैं। विलायती गोभी की भी दो जातियाँ होती हैं:—(१) शीघ्र तैयार होने वाली और (२) देर से तैयार होने वाली। देशी गोभी यहाँ के जलवायु में भली भाँति उत्पन्न होती है किन्तु विलायती बीज ठंढे स्थानों में ही तैयार होता है।

भूमि—बंद गोभी के समान इसकी भी भूमि होनी चाहिये। भूमि समतल, भुरभुरी और नमी को अधिक समय तक रोक रखने वाली होनी चाहिये।

खेत को तैयार करना और खाद देना—इसके खेत में खाद तथा इसकी तैयारी बंद गोभी के समान ही होना चाहिये। पौधे बढ़ने पर गाँठें बहुधा फसल को हानि पहुँचाती हैं। जुताई करते समय इनकी गाँठों को बीन कर बाहर कर देना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नरसरी तैयार करना—मौसम के आरम्भ में आने वाली फसल के लिये वर्षा होते ही बीज को ऐसी क्यारियों में बोते हैं जो आस पास की भूमि से १ फुट ऊँची हो ताकि पानी उनमें रुककर पौदों को सड़ा न दे। ऐसी जातियाँ जिन्होंने भारतवर्ष की जलवायु को अपना लिया है जून के दूसरे सप्ताह से अगस्त के अन्त तक बोई जाती हैं। विलायती बीज सितम्बर के आरंभ से अक्टूबर के अन्त तक बोया जाता है। मौसम में अधिक समय तक गोभी को पाते रहने के लिये दोनो प्रकार के बीजों का प्रयोग करना चाहिये जो दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह दिन के अन्तर पर नरसरी में बोये तथा खेतों में लगाये जा सकते हैं। एक एकड़ खेत में लगाने के लिये दो छटाँक बीज बोने से पर्याप्त पौध तैयार हो जाती है। इतने बीज को बोने के लिये १५० वर्ग फीट नरसरी की आवश्यकता होगी। यह ३ से १४ दिन के अन्दर भली भाति जम जाते हैं। शेष सब बंद गोभी के समान ही होता है। जल्द तैयार किये हुये पौधों को खेत में लगाने से पूर्व नर्सरी से निकाल कर दूसरी क्यारी में ३इंच×२इंच अन्तर पर लगाना चाहिये जिससे खेत में लगाते समय तक पौधे अधिक जोरदार हो जायँ।

पौधों को खेत में लगाना—बंद गोभी के समान ही इसे भी खेत में लगाना चाहिए। पौदों को बहुधा २½×१½ फीट से २ फीट के या ३×२ फीट से २½ फीट के अन्तर पर लगाना चाहिए। बड़ी किस्मों की दूरी अधिक और छोटी किस्मों की दूरी कम रहती है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—बंद गोभी के समान इसकी भी सिंचाई, निराई व गुड़ाई करनी चाहिए। अंत की २ या ३

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सिचाइयों को छोड़कर हर सिंचाई के बाद भूमि को गोड़ देना चाहिये।

फसल की तैयारी—पहले आने वाली जातियाँ ६० से १०० दिन में और देर में आने वाली १०० से १३० दिन में तैयार हो जाती हैं। जून से अगस्त तक बोई जाने वाली फसल नवंबर में और सितम्बर व अक्टूबर में बोई जाने वाली दिसम्बर से फरवरी के अंत तक फूल देती रहती हैं। काटते समय फूल खूब गझा तथा ठोस और सफेद दूधिया रंग का होना चाहिये। फूलों को काटने से पहले उनकी पत्तियों को बाँध देते हैं। इससे उनमें सफेदी आ जाती है। ४-५ दिन तक पत्तियों को बाँधना पर्याप्त होता है। फूल के अच्छी तरह बढ़ जाने पर ही इस प्रकार करना चाहिये।

उपज—भली भाँति देख-रेख करते रहने पर एक एकड़ में ५ से ६ हजार तक फूल निकलते हैं।

बीज तैयार करना—पात गोभी तथा फूल गोभी का बीज प्रत्येक स्थान पर नहीं तैयार हो सकता। इसे ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। पात गोभी का बीज यहाँ नहीं हो सकता परंतु फूल गोभी का बीज उत्तर प्रदेश के ठंडे स्थानों में हो जाता है। बीज के लिये ऐसे फूल छाँटने चाहिये जो स्वस्थ हों, जिनमें पत्तियाँ अधिक हों और जो अधिक समय तक सफेद, ठोस और गझे बने रहें। इनको कुछ मिट्टी के साथ उखाड़ कर भली भाँति खाद दी हुई क्यारियों में लगा कर पानी देते हैं। कुछ दिनों बाद फूल फूट निकलते हैं और उनमें फूल व कलियाँ निकल आती हैं। जब फलियों में बीज पड़ जाते हैं और वह सूख कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

झनझनाहट की आवाज देने लगती हैं, तो पौधों से काट ली जाती हैं। बीज को निकाल कर और साफ करके ऐसी बोतलों में रख दिया जाता है जिनमें नमी न जा सके। एक पौदे से लगभग दो छटांक अच्छे बीज प्राप्त होते हैं। बोतलों में कीड़ों के डर को कम करने के लिये दो एक नेप्थलीन की गोलियाँ रख देनी चाहिये इस प्रकार बीज २-३ वर्ष तक रखा जा सकता है।

कीड़े व बीमारियाँ—पातगोभी के समान ही कीड़े व बीमारियाँ इसमें भी होती हैं। फसल के बढ़ने पर बहुधा माहू व एक अन्य काली गुजिया भी पत्रों का रस चूस कर पौदों को बड़ी हानि पहुँचाती हैं। इनसे बचने के लिये पौदों पर निकोटीन सल्फेट, साबुन तथा पानी के घोल को छिड़कने से पर्याप्त सफलता हुई है।

गाँठ गोभी

यह ग्रन्थि जातीय गोभी है। इसकी गाँठ का शाक बनता है। इसे कहीं-कहीं गोल-गोभी भी कहते हैं। अन्य मूल जातीय तरकारियों के समान इसकी गाँठें भूमि के अन्दर नहीं वरन् भूमि के ऊपर बैठती हैं। इसमें शलजम की तरह की एक गंध होती है। जो लोग लहसुन प्याज आदि तीव्र गंध विशिष्ट पदार्थ खाते हैं वे इसे अधिक पसंद करते हैं। कारण गरम मसाले आदि से इसकी गंध की कटुता जाती रहती है और स्वाद भी अच्छा हो जाता है। इसकी अनेक जातियाँ हैं जिनमें दो अधिकतर उगाई जाती हैं—(१) सफेद (२) बैंगनी।

भूमि—इसकी खेती के लिये दुमट जमीन सबसे अच्छी होती है। मटियार भूमि में भी यह उत्पन्न होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खेत की तैयारी और खाद तथा सिंचाई आदि—पौद की तैयारी, खाद, सिंचाई, गुड़ाई तथा निराई आदि ये सब बातें बंदगोभी के समान होती हैं। इसमें २०० मन प्रति एकड़ गोबर की खाद पर्याप्त होती है।

नरसरी तैयार करना—इसके बीज नरसरी में सितम्बर से अक्तूबर के अंत तक बोये जाते हैं। इसका बीज ८–१० छटांक प्रति एकड़ लगता है। जब पौधे तीन-चार इंच के हो जाते हैं तब खेत में बेहन लगाई जाती है। फसल देर तक लेने के लिये बियाड़ १५-१५ दिन के अन्तर पर लगानी चाहिये। लगाते समय पंक्तियों का अन्तर १२इंच से १५इंच और पौधे से पौधे का अंतर ९इंच होना चाहिये। शेष सब पात गोभी के समान ही रहता है। इसकी देख भाल सब उसी के समान करनी चाहिये।

फसल की तैयारी—इसे बहुत बड़ा होने का अवसर देना ठीक नहीं। अत्यधिक पुष्ट हो जाने पर इसकी गाँठों में रेशे पड़ जाते हैं जिससे स्वाद बिगड़ जाता है। डेढ़ दो माह के अंदर ही इसकी फसल तैयार हो जाती है।

उपज—एक एकड़ में लगभग २००मन पैदावार होती है।

सलाद

यह आजकल की सर्वप्रिय तरकारी है। इसकी दो किस्में होती हैं:—(१) बँधी हुई पातगोभी के समान और (२) खुलीहुई।

भूमि तैयारी व खाद—दोमट भूमि सर्वश्रेष्ठ रहती है दो जुताइयाँ मिट्टी पलटने वाले हल से और २–३ देशी हल से करनी चाहिये। एक एकड़ में २५-३० मन खाद पर्याप्त होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज और बुवाई—डेढ़ दो सेर बीज प्रति एकड़ लगता है। बोने का समय सितम्बर से दिसम्बर तक है। बीज नर्सरी में बोकर तैयार किया जाता है।

जल्दी वाली फसल के लिये पौदे का फासला ६ इंच और देरवाली के लिए १ फीट रखते हैं। कतारों का फासला १ से २ फीट तक रहता है।

सिंचाई निराई तथा गुड़ाई—७-८ सिचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। ३-४ निराई या गुड़ाई करनी चाहिये।

पैदावार व बीमारियाँ प्रायः गोभी के ही समान होती हैं।

पालक

यह पत्र जातीय शाकों में सर्वोत्तम होती है। इसका शाक हल्का, स्वादिष्ट एवं रुचिवर्धक होता है। यह कई तरह का होता है—देशी पालक, विलायती पालक, और खट्टी पालक। इन सब में चिकने पत्ते वाली देशी पालक सर्वाधिक सुस्वादु एवं लाभदायक होती है।

भूमि—बलुई भूमि के अतिरिक्त सब प्रकार की जमीनों में इसकी खेती होती है। दोमट और हल्की दोमट भूमि में यह विशेष रूप से उपजती है।

भूमि की तैयारी तथा खाद—४-५ जुताईकर देना पर्याप्त होता है। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से कर देनी चाहिये। एक एकड़ में सौ डेढ़ सौ मन सड़े हुये गोबर की खाद पहुँच जानी चाहिये।

बीज और बुवाई—पहाड़ी भागों में इसकी बुवाई मार्च से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जून तक होती है। मैदानी क्षेत्रों में अगस्त से अक्टूबर तक बोया जाता है। वैसे इसे फरवरी व जून में भी बो सकते हैं। इसको छिटका कर बोना चाहिये। वैसे कतारों में भी इसे बोया जाता है। कतारों में बुवाई करने के लिये जुताई के बाद खेत में क्यारियाँ गुड़ाई करके तैयार करना चाहिये। फिर उनमें बुवाई १ फीट की दूरी पर मेंड़ें बनाकर ६ इंच के अंतर से करनी चाहिये। एक एकड़ में डेढ़ दोसेर के लगभग बीज लगता है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई—इसकी सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती। इसे ३-४ पानी की आवश्यकता होती है। अच्छी फसल लेने के लिये १-२ निकाई अवश्य कर देनी चाहिये। पौधों में जब फूल लगें तो उन्हें तोड़ते जाना चाहिये। केवल बीज के लिये कुछ पौधे छोड़ देना चाहिये।

फसल की तैयारी—एक महीने में तैयार हो जाती है। इसकी ७-८ कटाइयाँ की जाती हैं। एक एकड़ में सौ डेढ़ सौ मन तक के लगभग हरा साग उत्पन्न होता है।

कुलफा, मरसा और चौराई

जायद की फसलों में कुलफा, मरसा और चौराई की तरकारियाँ खूब होती हैं। चौराई आदि तो बिना बोये भी काफी तादाद में इधर-उधर उग आती हैं। इन तीनों ही तरकारियों के लिये समान बातों की आवश्यकता होती है।

भूमि की तैयारी—खेत की १ फीट गहरी ३-४ जुताइयाँ करके मिट्टी को खूब भुरभुरी बना लेना चाहिये। यदि मिट्टी सख्त हो तो पलेवा देकर उसे मुलायम बना देना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाद—डेढ़ दो सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से गोबर की सड़ी हुई या कम्पोस्ट की खाद देना पर्याप्त है।

बीज और बुवाई—इन्हें क्यारियों में छिटकवाँ बोते हैं। एक एकड़ में लगभग दो सेर बीज पड़ता है। बोने के दूसरे दिन हल्के पानी से सींच देना चाहिये। इन्हें बोने का अधिक प्रचलित समय मार्च से मई तक का है। लगातार अधिक समय तक फसल लेने के लिये १०-१० दिन के अंतर पर थोड़ी-थोड़ी क्रमशः बुवाई करनी चाहिये।

फसल की तैयारी—आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहने से बुवाई के दो महीने बाद पत्तियाँ चुनने लायक हो जाती हैं। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई करते रहने पर ४-५ कटाइयाँ की जा सकती हैं। दो निराइयाँ कर देना पर्याप्त है।

उपज—एक एकड़ में १०-१५ मन हरा साग होता है।

धनिया

धनिया के पौधे में बड़ी सुगन्धि होती है। इसकी पत्तियों को दाल, शाक तथा चटनी पकौड़ी आदि में डाल देने से सुगन्धि के साथ-साथ स्वाद भी बढ़ जाता है। इसका दाना मसाले के काम आता है।

भूमि, तैयारी तथा खाद—यह बलुई भूमि के अतिरिक्त सब जमीनों में पैदा होती है। ५ इंच गहरी ४-५ जुताइयाँ पर्याप्त होती हैं। एक एकड़ में सवा सौ मन सड़े हुये गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट पर्याप्त होती है। बकरी तथा मेंगनी की खाद देने से उपज अधिक होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज और बुवाई—इसके बोने का समय सितम्बर से अक्टूबर तक का है। एक एकड़ में ८-१० सेर बीज लगता है। यह छिटकवाँ तथा कतार में दोनो ही प्रकार से बोई जाती है। बोने से पूर्व बीजों को कपड़े की पोटली में बाँधकर ८-१० घंटे पूर्व पानी में भिगो लेने से वे अंकुरित शीघ्र होते हैं। बीज को बोने से पूर्व लकड़ी के हल्के बेलन की सहायता से बहुत ही धीरे से दल देते हैं, जिससे बीज के दोनो पाट अलग-अलग हो जायँ। यह सदैव ध्यान रखें कि ऐसा करने में बीजांकुर घायल न हो। अधिकतर लोग इसकी छिटकवाँ बुवाई करते हैं। बोने के १२ से १५ दिन बाद धनिया उगना शुरू होती है।

सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई आदि—इसकी ३-४ बार सिंचाई आवश्यक है। १५-१६ दिन में एक सिंचाई कर देना चाहिये। २-३ निराई और गुड़ाई होने से यह अधिक जोरदार हो जाती है। पौधों के ४-५ इंच के हो जाने पर इसकी पत्तियाँ काम में लानी चाहिए। बीज और दाने के लिए फूल आने के बाद खुटकना हानिकारक है। इसके पूर्व खुटकने से पौधे का विकास अधिक होता है। इस प्रकार लगभग १½ महीने में तोड़ने के योग्य हो जाती है। मसाले के लिये फसल मार्च-अप्रैल में तैयार हो जाती है। एक एकड़ में ८-१० मन सूखा धनिया होता है।

पुदीना

यह एक अत्यन्त लाभदायक विशुद्ध भारतीय पौधा है। यह मेदे को ठीक कर पाचन शक्ति में वृद्धि करता है। तासीर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में यह ठंढा होता है । लू लग जाने पर प्रायः लोग इसका सेवन करते हैं । इसकी पत्तियों की चटनी बनती है और इसका अर्क बड़े काम का होता है ।

भूमि, तैयारी तथा खाद—यह हर प्रकार की मिट्टी में विशेषकर चिकनी मिट्टी में उत्पन्न होता है । इसके खेत की तैयारी भी, धनिया के समान ही करनी चाहिए । क्यारियों में पिंडोर कूट कर डालने तथा भेड़ व बकरी की लेंड़ी की खाद देने से अच्छी फसल होती है ।

बुवाई, सिंचाई आदि—इसका बीज नहीं होता । मोटी डालें या तने ही बोये जाते हैं । इसके तने के टुकड़े करके अक्टूबर या नवम्बर के महीनों में बुवाई की जाती है । इसे १ फीट के अन्तर पर बनी पंक्तियों में बोना चाहिए । पौधे से पौधे का अंतर ६ इंच रखना चाहिये । इसकी ३-४ सिंचाइयाँ पर्याप्त होती हैं । चौथे पाँचवें दिन निराई गुड़ाई कर देनी चाहिए ।

फसल की तैयारी—इसकी फसल दिसम्बर से बरसात तक मिलती है । बरसात के पानी से पुदीना जल जाता है । इसलिये आगे के लिये तने काटकर गमलों या बक्सों में लगाकर साया में रख देना चाहिये । काम के लिये इसे जड़ से न काटकर केवल डालियाँ काट ली जाती हैं ।

मेथी

नरम पत्तियों और कोपलों का शाक, व तरकारी में मसाले के तौर पर यह अत्यधिक व्यवहृत होती है। सूखे बीज भी मसाले

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और औषधि के रूप में काम आते हैं। तासीर गर्म होती है। कुछ लोग मेथी की खिचड़ी बड़े चाव से खाते हैं।

भूमि तैयारी तथा खाद—दोमट और कछार भूमि इसके लिये सबसे अधिक अनुकूल सिद्ध हुई है। खेत की तैयारी तथा खाद में, धनियाँ के समान ही व्यवहार करना चाहिये।

बीज व बुवाई—बुवाई का समय सितम्बर से अक्टूबर तक का है। एक एकड़ में लगभग १२ से १५ सेर बीज की आवश्यकता पड़ती है। इसे छिटकवाँ तथा कतार में दोनों ही रीतियों से बोया जाता है। कतार में बोने पर पंक्तियों का अंतर एक-एक फीट और पौधे से पौधे का अंतर ५से६ इंच तक रखना चाहिये।

सिंचाई, निराई एवं तैयारी—इसके लिये ३-४सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। दो तीन निराई गुड़ाई कर देने से मेथी अच्छी होती है। २ महीने में पत्ते तैयार हो जाते हैं और बीज के तैयार होने में साढ़े तीन महीने के ऊपर लगता है।

उपज—एक एकड़ में सौ डेढ़ सौ मन हरा साग अथवा ४-५ मन दाना प्राप्त होता है।

सोया

सोया और मेथी का शाक किसी भी तरकारी में मिलाकर बनाने से स्वाद बढ़ जाता है इसकी पत्तियाँ मसाले के लिये सुखाकर भी रखी जाती हैं। इसमें पाचक गुण विशिष्ट है।

मिट्टी, तैयारी तथा खाद—दोमट भूमि इसकी खेती के लिये सबसे अच्छी रहती है। आध फीट गहरी ४-५ जुताइयाँ करनी आवश्यक हैं। एक एकड़ में १०० मन खाद काफी होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीज और बुवाई—इसकी बुवाई अक्टूबर में होती है। एक एकड़ में ७-८सेर बीज लगता व लगभग ७-८मन पैदावार होती है। बुवाई, सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई मेथी के ही समान चाहिये। पत्ते महीने डेढ़ महीने में और बीज मार्च तक तैयार होते हैं।

जीरा

जीरे की तरकारी नहीं किन्तु मसाले के रूप में बहुत उपयोग होता है। आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार यह पाचक, दीपक तथा क्षुधा-वर्धक होता है। यह दो तरह का होता है। (१) सफेद (२) काला; अधिकतर सफेद जीरे की ही खेती होती है।

भूमि, तैयारी व खाद—यह बलुई दोमट और दोमट भूमि में पैदा होता है। ५ इंच गहरी ४-५ जुताइयाँ व एक एकड़ में १००मन सड़े हुये गोबर या कम्पोस्ट की खाद देनी चाहिये।

बीज और बुवाई—इसके बोने का समय सितम्बर से अक्टूबर तक है। इसे १ फुट के अंतर पर बनी पंक्तियों में बोना चाहिये। पौधे से पौधे की दूरी ७ से ८ इंच हो।

सिंचाई, निराई, गुड़ाई तथा तैयारी—३ से ४ सिंचाई, दो तीन बार निराई-गुड़ाई करना चाहिये। फसल मार्च तक तैयार हो जाती है। फी एकड़ लगभग ४-५ मन पैदा होता है।

अजवाइन

जीरे के समान यह भी मसाले के काम आती है। तासीर गर्म, कृमिनाशक, कफ तथा वायुशामक होती है।

भूमि तैयारी तथा खाद—बलुवा व मटियार के अलावा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह सभी प्रकार की भूमि में उत्पन्न होती है। इसके खेत की खाद तथा तैयारी जीरे के ही समान होनी चाहिये।

बीज और बुवाई—अक्टूबर मास में बोया जाता है। प्रति एकड़ लगभग ४-५ सेर बीज लगता है। बोते समय कतारों का फासला १ फीट तथा पौधे से पौधे का अन्तर ६ इंच रखना चाहिये।

सिंचाई, निराई, गुड़ाई तथा तैयारी—३-४ सिंचाइयाँ तथा २-३ निराई व गुड़ाई होनी आवश्यक हैं। फरवरी तथा मार्च तक एक एकड़ में ४-५ मन तक पैदावार तैयार हो जाती है।

कलौंजी

यह भी मसाले के काम आती है। यह वायुनाशक तथा पाचन शक्ति को बढ़ाती है। यह दो प्रकार की होती है:—

(१) सफेद और (२) काली। हमारे यहाँ अधिकतर काली किस्म की प्रयोग होती है।

भूमि, तैयारी तथा खाद—भूमि बलुवा दोमट और दोमट। जुताई तथा खाद जीरा के समान होनी आवश्यक है।

बीज, बुवाई तथा सिंचाई आदि—इसके बोने का समय सितम्बर व अक्टूबर है। एक एकड़ में लगभग ७-८ सेर बीज लगता है। इसे डेढ़ फीट के अन्तर पर बनी पंक्तियों में बोना चाहिये। पौधे की दूरी ६ इंच रखनी चाहिये। सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई जीरे के ही समान होनी चाहिये।

फसल की तैयारी—इसकी फसल मार्च, अप्रैल में जाकर तैयार होती है। पैदावार ७-८ मन प्रति एकड़ होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पपीता

फल के रूप में इस्तेमाल होता है किन्तु तरकारी भी बनती है। इस पर चतुर्थ खण्ड (उद्यान) में प्रकाश डाला गया है।

केला

कच्चे केले की भी तरकारी बड़ी अच्छी बनती है। इसे भी चतुर्थ खण्ड (उद्यान) में दिया गया है।

नीबू

नीबू के लिये भी चतुर्थ खण्ड में देखें।

कटहल

कटहल एक उत्तम कीमती तरकारी है, इसलिये व्यापारिक दृष्टि से भी लाभप्रद है। इसका पेड़ बड़ा होता है, इसलिये बाग-बगीचे के अन्तरगत चतुर्थ खण्ड में दिया गया है।

——:*:——

शाक-सब्जी की जंत्री

जनवरी—(१) गरमी की तरकारियों को बोने के लिये खेत की तैयारी करें। (२) रबी की तरकारियों की निराई, गुड़ाई तथा सिंचाई करें और मिट्टी चढ़ायें (३) पहाड़ी आलू बोयें और प्याज की पौद लगावें। (४) आलू की खुदाई प्रारम्भ कर दें। (५) तैयार रबी की तरकारियों की कटाई। (६) पाले से बचाने के लिये खेतों में रात के समय धुँवा करें। (७) जायद तरकारियों के बीजों का प्रबन्ध करें।

फरवरी—(१) गरमी की तरकारियों के लिये खेत की तैयारी करें और खाद डालकर मिला दें। घुइयाँ, शकरकंद, करेला, सीताफल, ककड़ी, खरबूजा और तरबूज इत्यादि बो दिये जायँ। (२) रबी व जायद फसलों की सिंचाई कर दें। पहाड़ी आलू की बुवाई समाप्त कर दी जाय। देशी आलू की खुदाई करें। (४) पातगोभी, गाँठगोभी, टमाटर, बैंगन, सेम, मिर्च, शलगम, गाजर, मूली इत्यादि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की चुनाई और खुदाई करें। (५) प्याज की पौद बैठाने का कार्य समाप्त कर दें।

मार्च—(१) देशी आलूकी खुदाई समाप्त कर दी जाय और पहाड़ी आलू में सिंचाई,गुड़ाई और मिट्टी चढ़ाने का कार्य किया जाय। (२)जायद तरकारियों की बुवाई समाप्त कर दी जाय और पहले की बोई हुई तरकारियों में सिंचाई, निराई और गुड़ाई की जाय। (३) जायद की तरकारियों में राख व गैमेक्सीन छिड़कें। (४) रबी की तरकारियों के जो खेत खाली हो गये हों उनकी जुताई कर दी जाय। (५) प्याज की खुदाई आरम्भ कर दें।

अप्रैल—(१)जायद तरकारियों की सिंचाई, निराई तथा गुड़ाई की जाय। (२) पौधों पर राख व गैमेक्सीन फलने से पूर्व छिड़कें। (३) भुइयाँ पर मिट्टी चढ़ा दें। (४)पहाड़ी आलू की खुदाई करें। (५) जायद तरकारियाँ, जो फल देने लग गई हों, उनकी चुनाई आरम्भ कर दें। (६) खाली खेतों की गहरी जुताई करें। (७) पहाड़ी आल को किसी हवादार स्थान में आलू की तह में रखें। (८) प्याज और लहसुन खोद लिया जावे।

मई—(१) खाली खेतों की जुताई (२) बरसाती तरकारियों के बोने के के लिये नरसरी तैयार करें और बीज बो दें। (३)सिंचाई वाले स्थानों में भिन्डी, तुरई, सीताफल, टिण्डा, करेला इत्यादि बोयें। (४) जायद की तरकारियों की सिंचाई व चुनाई (५) आलू को गोदाम में सुरक्षित रखने के लिये सड़े हुये आलू की छटाई की जाय। (६)प्याज को किसी हवादार जगह में रखें। सड़े हुये प्याज छांट दियेजायँ (७)खरीफ की तरकारियों के बीज मास के अन्त तक मँगवा लें।

जून—(१) खरीफ की तरकारियों के बोने के लिये खेतों में खाद डालें। (२) बैंगन,टमाटर और मिर्च की नरसरी किसी ऊँची जगहपर बोयें। (३) जायद तरकारियों की चुनाई करें। (४) अरवी की खुदाई आरम्भ करें। (५) सड़े हुए आलू और प्याज की छटाई करें। (६) खड़ी हुई फसलों की सिंचाई करें। (७) लू और पानी से बचाने के लिये नरसरी पर साया का प्रबन्ध करें। (८) अगर वर्षा शुरू हो गई हो तो बरसाती तरकारियाँ बोना आरम्भ कर दें।

जुलाई—(१)खरीफ की तरकारियों की बुवाई आरम्भ करें। (२) बैंगन, मिर्च और टमाटर की पौद लगा दें और मूली की बुवाई कर दें! (३) अरवी की खुदाई करें। (४) खरीफ की तरकारियों की निराई और गुड़ाई करें। (५) तरकारियों के पौदों पर राख या गैमेक्सीन का छिड़काव करें। (६) लौकी, तरोई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टिण्डा, भिण्डी, खीरा, परवल की चुनाई। (७) शकरकंद की बेलें खेतों में लगावें। (८) रबी में बोई जाने वाली तरकारियों के बीजों का मास के अन्त तक प्रबंध।

अगस्त—(१) खरीफ की तरकारियों की चुनाई करें। (२) फूल गोभी, पात गोभी, टमाटर इत्यादि नरसरी में बोयें। (३) खेतों की निराई, गुड़ाई करें। (४) शकरकंद पर मिट्टी चढ़ावें। (५) परवल की बेल लगावें। (६) टमाटर के सहारे के लिये टहनियाँ लगावें। (७) प्याज और आलू की छटाई करें।

सितम्बर—(१) आलू तथा अन्य रबी की तरकारियों के लिये खेत तैयार करें और खाद दें। (२) टमाटर, गोभी की पौद बैठाई जाय और शलजम, गाजर धनियाँ, मेथी पालक बो देवें। (३) रबी की तरकारियों की निराई, गुड़ाई करें। टमाटर में सहारा लगा देवें। (४) तैयार फसलों की चुनाई हो। (५) तिपखिया आलू की बुवाई की जाय। (६) प्याज की गाठें हरे प्याज के लिये खेत में लगावें।

अक्टूबर—(१) आलू, लहसुन, मेथी, पालक, धनियाँ, शलजम, गाजर मूली इत्यादि की बुवाई करें। (२) टमाटर, गोभी की पौद खेत में लगायें। पौदों पर राख और गैमेक्सीन का छिड़काव करें। (३) प्याज की नरसरी बो दें और बीज के लिये प्याज की गाठें क्यारियों में लगावें। (४) रबी की तरकारियों में निराई, गुड़ाई व सिंचाई। (५) अरवी की खुदाई। (६) लौकी कद्दू, तरोई, बैंगन, मिरचा, सेम, पालक व मेथी की चुनाई। (७) तिपखिया आलू खोदा जाय।

नवम्बर—(१) प्याज की नरसरी बो दें। (२) पातगोभी और गाँठगोभी की पौद खेत में बैठा दी जाय। (३) आलू की सिंचाई करें और मिट्टी चढ़ादी जाय। (४) रबी की तरकारियों में सिंचाई, निकाई और गुड़ाई की जाय। (५) फूल गोभी, बैंगन, टमाटर, मूली, पालक, मेथी, बोड़ा, सेम, मिरचा की चुनाई हो (६) आलू की बुवाई की जावे। (७) तिपखिया आलू खोद लिया जावे। (८) फूल गोभी के फूल आने के बाद उनकी पत्तियों को ऊपर मिलाकर बाँध दें।

दिसम्बर—(१) रबी की तरकारियों की चुनाई व सिंचाई करें। (२) आलू की सिंचाई करें और मिट्टी चढ़ा दें। (३) पहाड़ी आलू बोने के लिये खेत की तैयारी करें और खाद डालें। (४) प्याज की पौद बैठा दी जाय। (५) गाजर और मूली को बीज के लिये उखाड़ कर दूसरी जगह बैठा दिया जाय।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चतुर्थ खण्ड

(उद्यान)

(फल, फूल और मेवा)

विषय प्रवेश

हजारों वर्ष पूर्व से ही हमारे देश में फलों की खेती होती आ रही है और आज इसका एक विशेष महत्व है। प्राचीनकाल में हमारे देश में वृक्ष लगाना बड़े पुण्य का कार्य समझा जाता था। हमारे प्राचीनतम वेद--ऋग्वेद के अतिरिक्त वेदों और अनेक पुराणों में इसकी महिमा का गान हुआ है*। सम्राट् अशोक महान् ने कहा है—"मार्ग पर मैंने वृक्ष रोप दिये हैं, जिनसे मनुष्यों और पशुओं को छाया मिलती है। आम के वृक्षों के समूह भी लगा दिये हैं।" इसी प्रकार इस्लाम धर्म के प्रवर्तक मुहम्मद साहब ने भी फलदार दरख्तों को कभी न काटने की हिदायत की है। मदीने के बाहर भेजी जानेवाली फौजों के सरदारों से मुहम्मद साहब कहते हैं—"लोगों के रोटी कमाने के औजारों और फलदार दरख्तों को बरबाद न करना, खजूर के पेड़ों

* "जो मनुष्य वृक्षों को नष्ट करता है, उसे दण्ड दिया जाय"—मत्स्य पुराण। "जो मनुष्य वृक्ष लगाता है, वह तीस हजार पितरों का उद्धार करता है।"—अग्नि पुराण।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को कभी हाथ न लगाना, क्योंकि उनका साया लोगों के लिये मुफीद है और हरियाली लोगों के दिलों को खुश करती है।" इससे यह सिद्ध होता है कि आदिकाल से ही लोगों को फलों और वृक्षों के महत्व का ज्ञान था और उन्होंने इस ओर विशेष ध्यान दिया। उ० प्र० के भूतपूर्व राज्यपाल महामहिम कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने ठीक ही कहा था कि "वृक्ष ही जल है*, जल ही रोटी है और रोटी ही जीवन है।"

हमारे देश में अनुमानतः ३० लाख एकड़ फलों की खेती होती है। हमारे यहाँ के पुराने बागों में प्रायः अच्छी किस्में नहीं पाई जातीं। उनमें बीजू पौधे एक दूसरे के अत्यन्त निकट होते हैं। उनमें न तो खाद देने की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है और न सिंचाई, निराई, गुड़ाई और छँटाई आदि ही ठीक से की जाती है। इसके साथ ही उनकी बिक्री का ढंग भी इतना गलत होता है कि मालिक को मूल्य का बहुत कम भाग मिलता है। यदि उपरोक्त त्रुटियों को सुधारा जाय, बाग ठीक ढंग से लगाये जायँ और उनकी देख-रेख की जाय तो पैदावार बढ़ने के साथ-साथ बागवान को मूल्य भी अधिक मिलेगा। अतएव प्रत्येक व्यक्ति के लिये उद्यान-संबंधी आवश्यक ज्ञान से परिचित होना आवश्यकीय है। हमारे राष्ट्र के गिरते हुये स्वास्थ्य के लिये फलों

---

* इसका तात्पर्य यह है कि वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि वर्षा पेड़ों पर ही निर्भर करती है। उदाहरणार्थ, सब से अधिक वर्षा जंगलों में होती है, जहाँ अधिक पेड़ होते हैं। इसीलिये हमारी सरकार प्रति वर्ष वन-महोत्सव मनाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की बड़ी ही आवश्यकता है। इसमें जीवनीयगण (विटामिन) और शरीर के पोषक तत्व बहुत अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। किस फल में कौन जीवनीयगण होता है, इसकी सूची आगे दी जायगी। बाग कई प्रकार के होते हैं—(१) फल के बाग, (२) पुष्प वाटिका, और (६) मिश्र बाग—फूल और फल। हम सर्वप्रथम फल के बागों के स्थूल सिद्धान्तों का वर्णन करेंगे।

जलवायु, भूमि और उसकी किस्में, खादें और उनके तैयार करने के ढंग तथा सिंचाई के साधन और बागबानी में प्रयुक्त होने वाले औजार आदि ऐसे प्राथमिक विषय हैं जिनसे बागवान को अवगत होना आवश्यक है। पुस्तक के प्रथम खंड में उक्त सभी प्राथमिक विषयों का विस्तृत निरूपण किया गया है। बुनियादी बातों की जानकारी के बिना फलों की खेती के जटिल विषय में उलझना गलत है। उन सभी की पुनरावृत्ति न कर हम यहाँ केवल 'जलवायु' दे रहे हैं।

जलवायु—पेड़-पौधों पर सर्वाधिक प्रभाव जलवायु का पड़ता है। भूमि का सुधार और आवश्यकतानुसार जल तो मनुष्य की शक्ति से बाहर नहीं हैं, किन्तु ऋतु का परिवर्तन मानवशक्ति से परे है।

प्रत्येक स्थान का जलवायु गर्मी, प्रकाश, नमी, हवा का दबाव, वर्षा और हवा की चाल पर निर्भर करता है। हमारे देश में इतने प्रकार की जलवायु पाई जाती है कि यह निश्चित करन कठिन है कि सब जगह किस तरह के पौधे लगाये जा सकते। प्रत्येक प्रदेश के तापक्रम से ही यह निश्चय किया जा सकता है कि वहाँ कौन-कौन पौधे बोये जा सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भारतवर्ष में प्रधान तीन ऋतुयें होती हैं—
(१) वर्षा, (२) शीत और (३) ग्रीष्म।

पाश्चात्य देशों में, जहाँ विज्ञान के साधन प्रचुरता के साथ उपलब्ध हैं, काँच के मकानों में कृत्रिम जलवायु के द्वारा दूसरे देशों के पौधे तैयार करते हैं। हमारे यहाँ यह सब दुःसाध्य है। एक योग्य बागबान अपना सारा काम जलवायु के अनुसार ही करता है। किस ऋतु में पौधे को कितने पानी की आवश्यकता होती है और किस ऋतु में उसे धूप अथवा पाले से बचाना है, इसका उसे पूर्ण ज्ञान होना चाहिये। पौधे तैयार करने, उन्हें लगाने और खाद देने आदि के लिए कौन समय उपयुक्त होता है और किस पेड़ अथवा जाति के लिये कैसी जलवायु अनुकूल पड़ती है, इसे हम विषयानुसार देते चलेंगे। बागबान को प्रत्येक कार्य जलवायु को दृष्टि में रखकर ही करना चाहिये।

औजार

प्रत्येक बागबान को बगीचे के लिये अनेक औजारों की आवश्यकता पड़ती है। यहाँ पर कुछ प्रमुख औजारों के नाम और उनका प्रयोग दिया जाता है।

(१) कुल्हाड़ी—यह पेड़ काटने के काम आती है। इसे १ रुपया से २ रुपये तक में गाँव का लुहार तैयार कर देता है।

(२) डिबलर—यह एक नुकीली लकड़ी होती है, जिसके सिरे पर लोहा लगा रहता है। यह पौधे लगाते समय सूराख करने का काम देती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(३) घास काटनेवाली मशीन—यह दो तरह की होती है। एक छोटी और दूसरी बड़ी।

(४) गैंता—कंकरीली-पथरली भूमि तथा सड़क आदि खोदने के काम आता है।

(५) कंगी—मिट्टी बारीक एवं बराबर करने के काम आती है। मूल्य १-१॥ रुपया है।

(६) फल तोड़नेवाला (फ्रूटपिकर)—एक लंबे बाँस में हँसियानुमा चाकू लगा रहता है, जिसे हँसुली कहते हैं। उसके नीचे एक झोली लगी होती है। यह १ रुपया की लागत में तैयार होता है। उसी चाकू द्वारा फल पेड़ से अलग होकर झोली में आ जाता है और चोट भी नहीं लगती।

(७) सिकेटियर—यह डालियाँ काटने के काम आती है। तिहाई इंच से अधिक मोटी डाल इससे न काटनी चाहिये।

(८) आरी—तिहाई इंच से अधिक मोटी शाख को काटने के काम में आती है

(९) ट्रीपुनर या ब्रांच कटर—पेड़ की शाखों को काटने के काम में आती है।

(१०) प्रनिंग शियर्स—आध इंच से मोटी डालियों को छाँटने में काम आती है।

(११) हजारा—नरसरी में पौदों को पानी देने के काम आता है। इससे वर्षा के समान ही पौधों को पानी मिलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१२) हैण्डहो—पपड़ी तोड़ने व घास साफ करने के काम आता है।

(१३) बडिंग-नाइफ-यह चश्मा लगाने में काम आता है।

(१४) ग्राफ्टिंग नाइफ-यह कलम लगाने में काम आता है।

(१५) स्प्रेयर—यह पौधों पर दवा छिड़कने के काम आताहै। यह बड़े और छोटे सभी प्रकार के आते हैं।

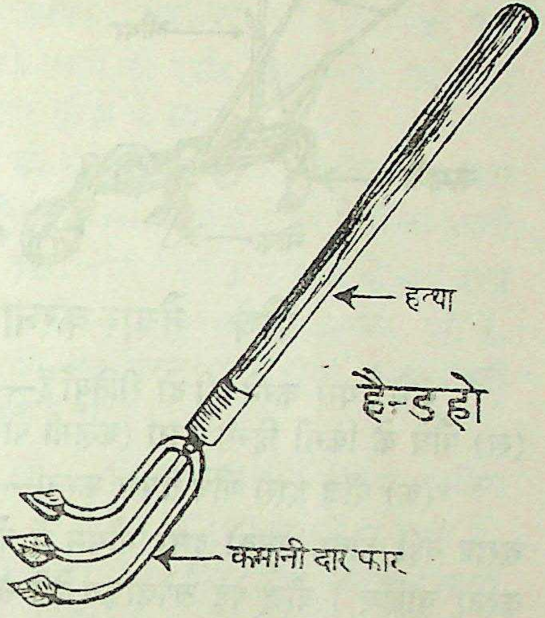

(१६) डस्टर—गंधक और अन्य पाउडर के छिड़काव के लिए बड़े उपयोगी होते हैं।

(१७) कल्टीवेटर—यह दो प्रकार का होता है—(१) मैकर्मिक और (२) कानपुर। यह जुताई और गुड़ाई के काम आता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मैकोर्मिक कल्टीवेटर

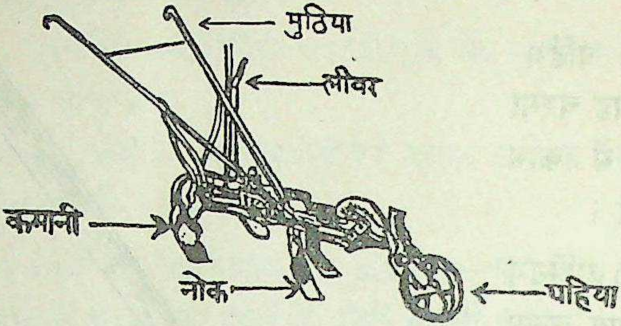

पौधे तैयार करना

पौधे तैयार करने की दो रीतियाँ हैं—(क) बीज द्वारा और (ख) पौधे के किसी हिस्से द्वारा (कलमी पौधे)।

(क) बीज द्वारा पौधे तैयार करना—जिन पौधों का बीज खराब नहीं होता, उनको दूसरे मौसम में बोने के लिए तैयार करना चाहिए। बीजू पेड़ अपेक्षाकृत देरी से फलते और अधिक समय तक फल देते रहते हैं। इसके फल कम गुदार और छोटे होते हैं। इनकी आयु अधिक होती है और कभी-कभी नए किस्म के फल मिलने लगते हैं। बीज के लिए कुछ अच्छे पौधे छाँट लेने चाहिये। पौधे रोग रहित, अच्छे रंग तथा मोहक सुगंधयुक्त फलवाले हों। पेड़ में अधिक तथा स्वस्थ पत्तियाँ हों। सूखे फलों से बीज निकालकर, ३–४ दिन तक धूप में सुखाकर और बोतल अथवा डिब्बे में रखकर, नमी से बचाने के लिए ऊपर से राँगा या मोम से बंद कर देना चाहिए। पके फलों को सड़ाकर धोने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के पश्चात् इसी भाँति सुखाकर रखना चाहिए। यदि बीज खरीदा हुआ हो, तो ध्यान रखना चाहिए कि (१) दूसरी जाति के बीजों की मिलावट न हो, (२) बीज चमकीले, स्वस्थ तथा दुर्गन्ध रहित हों, (३) कच्चे और अधपके बीजों का मेल न हो, (४) बीज पुराने न हों तथा उनमें उगने की पर्याप्त शक्ति हो, तथा (५) बीज रोग-रहित हों और कीड़ों के खाये न हों।

बीज के उगने की शक्ति एक गीले सोख्ते (ब्लाटिंग पेपर) अथवा रेत में भिन्न-भिन्न किस्मों के बीज बोकर देखी जा सकती है। उन्हें तीन दिन तक अंधेरे स्थान में रखने के बाद देखा जाय कि किस जाति के बीज सबसे अधिक उत्पन्न हुए हैं, उन्हें ही बोया जाय। जो बीज जितना भारी होगा, उसमें उतनी ही उगने की शक्ति अधिक होगी।

बीज बोने का ढंग—बीज बोने की तीन रीतियाँ प्रचलित हैं—(१) गमले, नाँद या पिरिच में, (२) लकड़ी के बक्से में, (३) समतल या ऊँची नर्सरी में। बीज किस स्थान में बोया जाय, यह किस्म, मौसम, भूमि की दशा तथा अन्य सुविधाओं पर निर्भर करता है। नर्सरी की क्यारियाँ तीन फीट चौड़ी और १०-१२ फीट लम्बी होनी चाहिये, जिससे कि निराई में आसानी रहे।

एक भाग बाग की मिट्टी, $\frac{1}{2}$ भाग सड़े हुये गोबर तथा $\frac{1}{4}$ भाग पत्ती की खाद, $\frac{1}{8}$ भाग बालू और थोड़ा भली भाँति पिसा हुआ कोयला मिलाकर इसका मिश्रण तैयार कर लेना चाहिये। नमी की कमी होने पर सिंचाई करो। आँठ आजाने पर ८-९ इंच गहरी गुड़ाई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
जो बीज जितना बड़ा हो उसे उतना ही गहरा बोना चाहिये। आम, शरीफा, कटहल, जामुन आदि बड़े पेड़ ८-६ इंच के अंतर पर बनी पंक्तियों में और अमरूद, पपीता, नीबू, कमरख जैसे छोटे बीजों को छिटकवाँ बोना अच्छा रहता है। उपरोक्त बीजों को उन्हीं की मुटाई के बराबर पत्ती की खाद से ढककर हल्की थापी से थपथपा देना चाहिये। जल्द जमनेवाले बीजों को जमने के बाद ही पानी देना चाहिए। कड़े छिलकेवाले बीज देर में उगते हैं, अतएव हजारे से, जब तक अँखुए न निकल आवें, जमीन तर करते रहना चाहिए। घास या खर-पतवार उखाड़ते रहना चाहिए। पौधों में तीन-चार पत्तियाँ आ जाने पर यदि ऋतु अधिक ठंढी या गर्म नहीं है, तो नई बनाई हुई उसी नाप की क्यारियों में खाद डालकर बदल देना लाभदायक सिद्ध हुआ है। पौधों की खुदाई बड़ी सावधानी से करनी चाहिए, जिससे कि उनकी जड़ों को कोई हानि न पहुँचे। बदली के समय पौधों को ६ से १२ इंच के अन्तर पर बनी पंक्तियों में लगाकर उनके चारों ओर की मिट्टी दबा दें और तुरंत सिचाई कर दें। अधिक वर्षा के समय क्यारियाँ सिरकी के पाल से ढक देना चाहिए, जिससे कि क्यारियों में अधिक जल न भर जाय। अधिक धूप होने पर भी ऐसा ही करना चाहिए।

(ख) पौधे के किसी हिस्से द्वारा पौधा तैयार करना--इस रीति से पेड़ अच्छी किस्म के और एक जैसे तैयार होते हैं। एक किस्म के पेड़ों में एक ही प्रकार के फल, एक ही समय पैदा होते हैं और बागबान इससे पहले से ही अवगत रहता है। इनका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
स्वभाव व रंग-रूप भी एक ही रहता है। प्रायः देखा गया है कि कुछ फलों की अच्छी किस्म में तो बीमारियाँ लगती हैं, परन्तु खराब किस्म में बिलकुल नहीं लगतीं। इनमें स्टौक पर चश्मा बाँधकर अच्छे पौधे तैयार किये जा सकते हैं। इसी भाँति भिन्न-भिन्न फलों के गुणों से युक्त पौधे भी तैयार किये जा सकते हैं। जिस जाति के फलों से बीज नहीं बनता, उनकी पौध इसी भाँति तैयार की जाती है।

शाखा या जड़ आदि काटकर लगाने या दो पौधों के भाग को मिलाने से पौधे तैयार किये जाते हैं। जिस पौधे में सजातीय किसी अन्य पौधे के किसी भाग का मेल किया जाता है, उसे नर कहते हैं। मादा पौधा नीरोग, चैतन्य तथा पुष्ट होना चाहिये। इसमें यह ध्यान रखना चाहिये कि द्विदल जातियों (आम, नारंगी, नीबू आदि) की ही कलमें लगायी जा सकती हैं, एकदलीय पौधों (नारियल, सुपारी, ताड़ आदि) की नहीं। पौधे के भिन्न-भिन्न भागों से विभिन्न प्रकार से पौधे तैयार किये जाते हैं। संक्षेप में कलमी पौधे तैयार करने की विभिन्न युक्तियाँ आगे दिये अनुसार हैं।

अब हम यहाँ भारतवर्ष में कलमी पौधे तैयार करने की प्रमुख प्रचलित रीतियों पर प्रकाश डालेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कलमी पौधे

(पौधे के किसी भाग द्वारा पौधा तैयार करना)

- स्वाभाविक (पुत्तियों से)
  - पौंच (Suckers)
  - टोंटा (Offs ets)बल्बिल्स (Bul bils) आदि
- कृत्रिम
  - एकवृत्ती
    1. डाली लगाना (Gutting)
    2. दाब लगाना (Layering)
    3. अण्टा बाँधना (Gooty)
  - द्विवृत्ती
    - स्वजातीय
    - विजातीय
      1. चश्मा लगाना (Budding)
      2. पैवन्द लगाना Grafting)
      3. भेंट कलम (Inarching)

स्वाभाविक युक्ति (पुत्तियों से)—यह नये पौधे तैयार करने की सबसे सरल एवं स्वाभाविक विधि है। इसमें पुत्तियों को जड़ सहित निकाल कर दूसरी जगह लगा दिया जाता ह। इनका स्थानांतर कर देख-रेख करते रहने से ही यह दूसरी जगह लगाये जाते हैं। पौधे के विभिन्न अंगों से प्राप्त होने वाली पुत्तियों के नाम भी अलग-अलग हैं। उदाहरण के लिये जो पुत्तियाँ पौधों के नीचे से निकलती हैं उन्हें पौंच (Suckers) कहते हैं। केले के पौधे के लिए यही पुत्तियाँ काम में लाई जाती हैं। अनन्नास के फल के ऊपर भी पुत्तियाँ निकलती हैं,इन्हें कलगी की पुत्ती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(Crown) कहते हैं। किस फल के पौधों को किस प्रकार की पुत्तियों से तैयार करना अच्छा रहता है, यह प्रसंगानुसार दिया जायगा।

पुत्तियों से पौधे तैयार करने के लिये उत्तम ढंग यह है कि सबसे पहले लगाये जाने वाले स्थान पर ३ फीट गहरा और इतना ही लम्बा व चौड़ा गढ़ा अथवा दो फीट चौड़ी व तीन फीट गहरी नाली तैयार कर लें। इसके बाद दो टोकरी खाद प्रति वर्ग गज के हिसाब से जमीन में मिला दें। इसके बाद जिस पौधे की पुत्तियाँ लगानी हों उन्हें लेकर नये बनाये हुये स्थान (गढ़ा या नाली) में पुत्ती के बराबर गढ़ा खोदकर उसे लगा दें और आप-पास की मिट्टी दबाकर समुचित सिंचाई करें। इसके बाद पहले महीने में चौथे दिन और बाद में आवश्यकतानुसार पानी देते रहें।

कृत्रिम रूप से पौधे तैयार करना

कृत्रिम रूप से पौधे तैयार करना बड़े अनुभवी तथा परिश्रमी व्यक्ति का काम है। कृत्रिम रीति से पौधे तैयार करने की युक्तियों को दो भागों में बाँटा जाता है—(१)एकवृक्षी जिसमें एक ही वृक्ष का कोई भाग काम आता है और (२) द्विवृक्षी जिसमें दो पौधों (स्वजातीय अथवा विजातीय)को संलग्न किया जाता है। उदाहरण के लिये आम के पौधे पर आम की कलम चढ़ाना स्वजातीय और आड़ू के पौधे पर आलूबुखारा की कलम विजातीय कलमें हैं। इन सभी युक्तियों पर विस्तार से प्रकाश डालने के पूर्व कुछ ऐसी बुनियादी आवश्यकताओं पर प्रकाश डालना

आवश्यक हैं जिन पर कलम की सफलता निर्भर करती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौधों का स्वास्थ्य—कलम लगाने में सबसे पहले पौधे के स्वास्थ्य पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। जिस पौधे पर कलम चढ़ाई जाय उसे स्वस्थ व नीरोग होने के साथ ही उसमें किसी प्रकार के कीड़े या अन्य कोई व्याधि न हों। इसी प्रकार जो टहना कलम तैयार करने के लिये छांटी जाय वह स्वस्थ तथा अखण्ड पत्तों वाली हो और उसको किसी रोग या कीड़े आदि ने किसी तरह की हानि न पहुँचाई हो। साथ ही चश्मे(Woodbud) भी नीरोग और कीड़ों आदि द्वारा विक्षत् न हो।

कलम तैयार करने का समय—कलम लगाने के सिलसिले में दूसरी आवश्यक बात यह है कि पौधों की बाढ़ के प्रारंभिक काल में ही कलमें तैयार की जायँ तो अच्छा रहता है क्योंकि बाढ़ के समय उनमें रस संचालन बड़ी तीव्र गति से होता है। पौधे की जाति के अनुसार यह समय वर्षा ऋतु के प्रारंभ से वसंत के अन्त तक रहता है और किसी-किसी जाति में गर्मी की ऋतु में भी ऐसा होता है।

देखभाल—कलमें लगाने के बाद बड़ी सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है। इसे सदैव सतर्क दृष्टि से देखते रहना चाहिये कि कहीं कलमों को किसी प्रकार के रोग, कीड़े या हवा से कोई हानि तो नहीं पहुँच रही है। उन्हें आवश्यकतानुसार समय से पानी मिलता रहे तथा जाड़े में शीत से बचाने की कोशिश करनी चाहिये।

अनुभव एवं ज्ञान—कलम लगाने में क्रियात्मक ज्ञान की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहुत बड़ी आवश्यकता है। बिना अनुभव के कोरे सिद्धान्तों एवं शास्त्रीय विवेचन के आधार पर कलम लगाना गलत है। बागवान को यह जानना चाहिये कि किस रीति से किस जाति के पौधे की उत्तम कलम तैयार होगी, या विजातीय जातियों के योग में किस जाति के पेड़ों का मेल हो सकता है। तात्पर्य यह है कि कलमें तैयार करने के लिये निजी अनुभव की आवश्यकता होती है।

एकवृक्षीय कृत्रिम कलमें

डाली या कलम लगाना (Cutting)—इस रीति से प्रायः आड़ू, शहतूत, अंजीर और मीठा अनार आदि के पेड़ अधिक तैयार किये जाते हैं। कुछ पौधों की कलमें वर्ष भर और कुछ की जाड़े में और अधिकतर बरसात में लगायी जाती हैं। ठंढे देश के पौधों की कलमें शीतकाल में ही लगायी जानी चाहिये। कलम लगाने का समय शीत ऋतु में अक्टूबर से दिसम्बर तक का है। वर्षा ऋतु में अगस्त-सितम्बर का समय सबसे अच्छा रहता है।

बीज द्वारा पौधे तैयार करने के ढंग से क्यारियाँ बना लेनी चाहिये। कलम लगाने के हेतु पौधों की शाखें भिन्न-भिन्न आयु की ली जाती हैं। यह एक वर्ष से अधिक आयु की होनी चाहिये। भूमि के निकटवाली शाखों की कलमों से तन्दुरुस्त तथा अधिक फैलनेवाले पौधे तैयार होते हैं, किन्तु ऊपरवाली शाखों से तैयार किये गये पौधों में फूल व फल शीघ्र तैयार होते हैं। जिस समय पौधों में रसाभिसरण जोरों से हो रहा हो, वही मौसम डाली

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लगाने के लिये सर्वोत्तम है। शाखाओं पर आँखें (चश्मे) होती हैं। इन्हीं में जड़ें छोड़ने की शक्ति रहती है। जहाँ शाख से पत्तों का मेल होता है वहाँ चश्मे (Buds) होते हैं। शाखा की संधि के स्थान से भी जड़ें निकलती हैं, अतएव डाली, आँख या संधि से कुछ नीचे की ओर ही काटनी चाहिये। बड़े पौधों की छँटाई करके आधा इंच से पौन इंच मोटी शाखायें लाकर, प्रत्येक में एक-आध छोड़कर शेष पत्तियों को तोड़ देना चाहिये। इनमें से ८-९ इंच लम्बी टहनियाँ काट लें। यह स्मरण रहे कि इन ८-९ इंच लम्बी टहनियों में ४-५ कलियाँ (आँखें या चश्मे Buds) अवश्य हों। इन शाखाओं की पत्तियाँ तोड़ लेनी चाहिये। कलम के दोनों मुँह तिरछे कटे होने चाहिये। नीचे का कटाव पत्ते के मेल के स्थान से कुछ नीचे होना आवश्यक है। इन कलमों को एक-एक बालिश्त पर लगभग ६० अंश का कोण बनाती हुई लगाना चाहिये। कलम का दो तिहाई भाग भूमि में और एक तिहाई भाग ऊपर रखना चाहिये। जहाँ तक हो सके दो आँखें भूमि के अंदर और तीन ऊपर रखें। कलम ऐसे लगाया जाय, जिससे कलियों का मुँह ऊपर को रहे। लगाने के पश्चात् पौधे के चारों ओर की मिट्टी दबा देनी चाहिये और तुरन्त क्यारी काटकर सिंचाई कर देनी चाहिये। सिंचाई के बाद पतली खुरपी से निराई व गुड़ाई करते रहना आवश्यक है। १ इंच से अधिक गहरी भूमि सूखने न पावे, अस्तु सिंचाई करते रहना चाहिये और इसी प्रकार निराई गुड़ाई भी करना आवश्यक है। बरसात

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में लगभग १माह में और जाड़े-गर्मी में ४-५ माह में पौधे तैयार हो जाते हैं। वर्षा या फरवरी में इन कलमों की बदली, क्यारी बनाकर और उनमें खाद देकर, कर देनी चाहिये। इस समय यह ध्याना रखना चाहिये कि जड़ों को कोई हानि न पहुँचे और उसके आस-पास मिट्टी टूटने न पावे, लगाने के बाद मिट्टी दबाना और तुरन्त पानी देना न भूलना चाहिये।

दाबे से (Layering)—इस रीति से डाली को पेड़ से अलग करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। डाली को पेड़ पर रखकर ही कलम लगायी जाती है। इस ढंग से पौधे बड़े तथा तन्दुरुस्त होते हैं। जिन पौधों की डालियाँ भूमि के निकट होती हैं, उनमें यह ढंग सरल रहता है। लीची, अंगूर आदि के पौधे इसी ढंग से तैयार किये जाते हैं। १५-२० दिन से २-२।। महीने का समय अलग-अलग पौधे की जाति के अनुसार दाबा तैयार करने में लगता है।

पहली विधि—उन पेड़ों को, जिनकी शाखायें जमीन तक पहुँच सकती हैं, चुनकर उनके नीचे की भूमि का खर-पतवार व कंकड़ साफ कर, गुड़ाई कर, भूमि भुरभुरी कर देनी चाहिये। टहनियों को बाँधकर इतना नीचे झुका लेना चाहिये कि वे भूमि छूने लगें। टहनियों के भूमि को छूने के स्थान पर चाकू से सावधानी के साथ एक छोटा सा नश्तर लगा देना चाहिये। नश्तर टहनी की मोटाई के $\frac{१}{३}$ से अधिक गहरा न हो। इस कटे हुये स्थान के समीप की ४-५ इंच टहनी, जिसमें २-३ कलियाँ भी हों, भूमि में ३-४ इंच दाब दें। इस स्थान पर एक ईंट रख

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दें, जिससे टहनी निकल न जाय । डाल हिलने डुलने या उठने न पावे इसलिये एक खूँटा गाड़कर उसमें बाँध देना सबसे

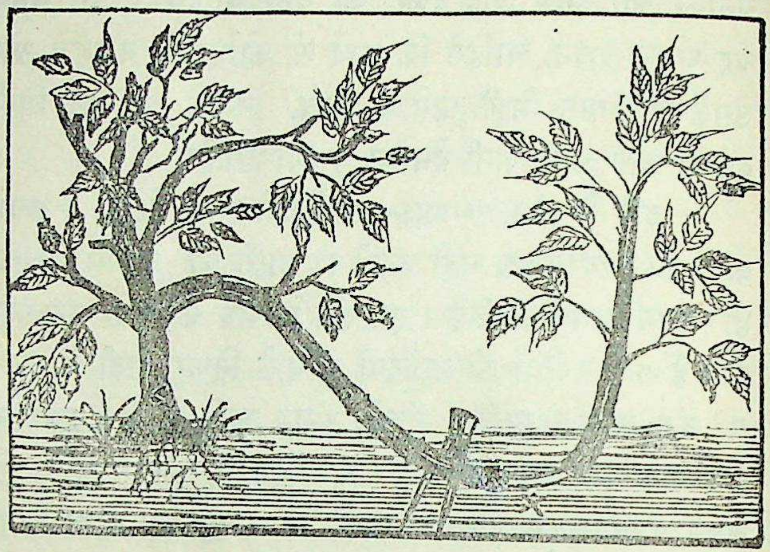

दाब कलम—विधि १

अच्छा रहता है । यदि वर्षा न हो रही हो तो भूमि को सींचते रहना चाहिये । दो महीने में दाबे हुए स्थान से जड़ें निकल आयेंगी । गड़ी हुई डाली में, भूमि के निकटवर्ती भाग के मोटा नजर आने पर समझ लेना चाहिये कि जड़ें निकल आई हैं । जड़ें निकल आने के बाद टहनी को इस स्थान पर से ही साव-धानी के साथ काट लें जिससे डाली को झटका न लगे और नई क्यारियों या गमलों में बदल दें । इस समय जल देते रहना और कड़ी धूप से रक्षा करना आवश्यक है ।

दूसरी विधि—कहीं-कहीं शाखा को बिना छीले हुये, उसे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीच से चीर कर उपरोक्त रीति से भूमि में दाबकर, जड़ें निकल आने पर पेड़ से अलग कर दूसरे स्थान पर लगा देते हैं।

दाब कलम—विधि २

तीसरी विधि—कुछ लोग डाली को तोड़कर ही उपरोक्त रीति से तैयार भूमि में गाड़ देते हैं। इस प्रकार शाख का आधा भाग शाख से ही जुड़ा रहता है। जड़ें निकल आने पर उसे अन्यत्र बदल देते हैं।

इसके अतिरिक्त गमले से भी दाबा किया जाता है, परन्तु यही ढंग अधिक प्रचलित हैं। पौधों की ऊँची शाखों में दाबा करने की निम्न विधियाँ हैं:—

१. पेड़ की अच्छी डाल छाँटने के पश्चात् छीलकर या चीरकर तैयार करना चाहिए। इसके बाद एक गमले को मिट्टी, पत्ती की खाद और बालू से भरकर और उसका एक बाजू तोड़कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

डाली की ऊँचाई के अनुसार किसी ऊँची चीज पर रख देना चाहिए। इसमें पहली अथवा दूसरी विधि के अनुसार डाल लगा कर आवश्यकतानुसार पानी देते रहना चाहिए। पानी देने के लिए एक महीन छेद वाला बर्तन गमले पर रखकर उसमें पानी भर देने से कलम को आवश्यकतानुसार पानी मिलता रहता है। जब डाली तन्दुरुस्त दिखाई दे और उसमें नई पत्तियाँ निकल आवें, तो समझ लेना चाहिए कि जड़ें निकल आई। इस समय शाखा को काटकर स्थानान्तरित कर देना चाहिए।

२. एक चार इंच गमले को बीच से दो भाग कर, दाबा की जानेवाली शाख को इनके बीच से निकालकर बाँध दिया जाय। गमले में उपरोक्त ढंग से मिट्टी आदि देकर सिंचाई करते रहना चाहिए। महीने डेढ़ महीने में जब डाली में जड़ें निकलें तो उसे काटकर अलग कर देना चाहिए।

अण्टा बाँधना (Gooty)—यह बहुत कुछ दाब कलम से मिलती-जुलती है। इसके लिए वर्षा ऋतु में जुलाई व अगस्त का समय सबसे अच्छा रहता है। वैसे मार्च व अप्रैल से सितम्बर तक भी इसका उपयुक्त समय है। इस रीति से नींबू, चकोतरा व लीची-लोकाट आदि की कलमें तैयार की जाती हैं।

एक साल की आयु की आधा इंच मोटी तन्दुरुस्त शाखों को छाँटकर एक गाँठ के नीचे आध इंच से एक इंच तक चौड़ा छिलका चारों ओर से चाकू की मदद से निकाल दें। यह कटाव इतने गहरे हों की चारों ओर से सिर्फ छाल ही कटे। इसके ऊपर गूँटी की मिट्टी रखकर टाट व सुतली से बाँध देना चाहिये,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिससे मिट्टी गिरने न पावे। गूँटी की मिट्टी–नौ भाग तालाब की चिकनी मिट्टी, चौथाई भाग खली, चौथाई भाग भूसा तथा

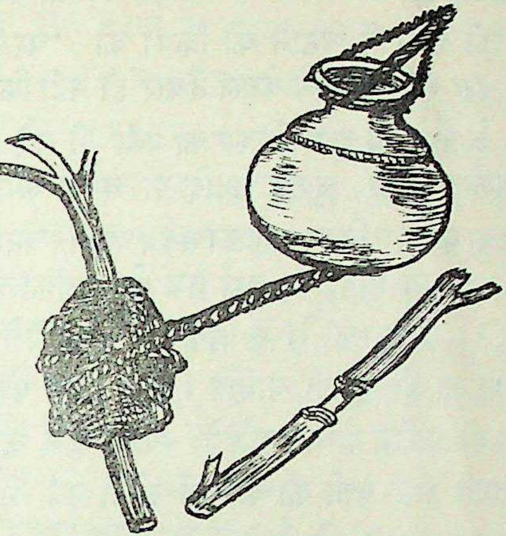

गूँटी बाँधना

मछली आदि डालकर, सड़ाकर तैयार की जाती है। मिट्टी बहुत न गीली न होनी चाहिये। वह सिर्फ इतनी गीली हो कि जोर से दबाने पर बँध जाय और छोड़ने पर जरा से दबाव में फिर बिखर जाय। लगातार पानी देने के लिये मिट्टी के घड़े को किसी डाल से लटकाकर उसके अन्दर सुतली डालकर गूँठी से बाँध दें और नित्य पानी से भर दें। इससे जरूरत भर पानी मिलता रहेगा और अंटा तर रहेगा। डेढ़ या दो माह बाद टाट के बाहर जड़ें निकले हुये स्थान के ऊपर से, दो या तीन बार में डाली काट लें और नई क्यारियों या गमलों में स्थापित कर दें। गूँटी के पौधे लगभग ३ माह में तैयार हो जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्विवृक्षीय कृत्रिम कलमें

चश्मा चढ़ाना (Budding)—एक पेड़ की डाली से शाखें दूसरे पेड़ की छाल में बिठाने की क्रिया को 'चश्मा चढ़ाना' कहते हैं। इस रीति से पौधे केवल तैयार ही नहीं किये जाते वरन् एक जाति के पौधे को दूसरी किस्म का बना भी लेते हैं। माल्टा, नारंगी, चकोतरा, बेर, लुकाट आदि पर चश्मा लगता है।

चश्मा करने में निम्न बातों का सदैव ध्यान रखना चाहिये—

(१) चश्मा प्रातः या जहाँ तक हो सायंकाल ही बाँधना चाहिये। (२) आँख (कली) के लिये जोरदार, नीरोग, नई और बढ़ती हुई शाखा ही चुननी चाहिये। (३) सिर्फ पत्ती की कली (आँख) का ही प्रयोग करना चाहिये; क्योंकि फूल की कली फूल कर सूख जाती है। पत्ती की कलियाँ छोटी तथा नुकीली होती हैं। (४) कड़ी धूप से बचाने के लिये कली को तने पर उत्तर की ओर लगाना चाहिये। (५) यदि चश्मा बाँधनेवाली शाख के अतिरिक्त सब डालियाँ काट दी जायँ, तो चश्मा पौधे की किसी एक शाख पर बाँध सकते हैं; परन्तु बीज बोकर या कांटग लगाकर तने तैयार करना ही ठीक रहता है (६) चश्मा लगाते समय तना तन्दुरुस्त तथा बाँधने योग्य होना चाहिये। यदि उसका छिलका आसानी से अलग हो जाय, तो ठीक और यदि फट जाय, तो उसे अनुपयुक्त समझना चाहिये। (७) तना तथा कलीवाली शाख एक ही मोटाई की होनी चाहिये। नई शाखों से, जो एकाएक नीचे से उग पड़ती हैं, कली न लेनी चाहिये।

बीजू पौधे के धड़ पर भूमि से तीन चार इंच ऊँचाई पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
लगभग डेढ़ इंच लम्बा चीरा लगाया जाता है। यह इतना गहरा हो कि केवल छाल ही कटे। इसके बाद पौधे को झुकाकर चाकू के पतले दस्ते से छाल को लकड़ी से अलग कर दिया जाता है। इसी खुले स्थान पर चश्मा चढ़ाया जाता है जिसमें बीच के काष्ठ के साथ उसका सम्बन्ध हो जाय। चश्मा बाँधने का सबसे उपयुक्त समय बसन्त से पूर्व जनवरी के अन्त व फरवरी में और जुलाई से अक्टूबर तक है। संतरा आदि में फरवरी व जुलाई में और गुलाब में जनवरी तथा अक्टूबर में चश्मा चढ़ाना चाहिये। बेर में जून के महीने में चश्मा चढ़ाया जाता है। चश्मा लगाने के पश्चात् पौधे को सीधा करके रफिया घास, केले की बनाई चीप या धज्जी से मजबूत बाँध देना चाहिये। बाँधने में यह ध्यान रहे कि आँख खुली रहे और पट्टी के नीचे दब न जाय। बाँधने के पश्चात् मोम या कलमी मिट्टी लगा देना चाहिये।

इसकी आवश्यकतानुसार सिंचाई और गुड़ाई करते रहें। यदि कली तने से जुड़ने लगेगी तो हरी रहेगी अन्यथा सूख जायगी। ६-७ सप्ताह में कली जुड़ जाती है और ४-५ सप्ताह में कली में फूलकर बढ़ने के लक्षण स्पष्ट दिखाई पड़ने लगते हैं। जब कली बढ़ना शुरू हो जाय तो रफिया घास या केले की चीप यदि वह गल कर अलग नहीं हो गई है तो उसे काट कर अलग कर दें। चश्मे के नीचे निकली शाखायें बराबर तोड़ते रहें। पौधे बदलने के अगले उपयुक्त समय में इन्हें बदली हुई क्यारियों में लगा दें। चश्मा लगाने में अलग अलग रीतियाँ काम में लाई जाती हैं पर ऊपर दी हुई बुनियादी बातें सब में समान रहेंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चश्मा बाँधने की कई रीतियाँ प्रचलित हैं, जो निम्न हैं—

पहली रीति—सबसे सरल और प्रचलित ढंग यह है कि पौधों में सीधा चीरा देकर, डाली को छीलकर तथा कुछ लकड़ी का पर्त भी शाख से निकालकर तने में बाँधने के पहले, पत्ती की डंडी का चौथाई भाग छोड़कर शेष सब काट दें। तने को सीधा कोष्टक में दिये आकार का (T) काटकर चश्मे को इस प्रकार बिठावें कि अँखुवा और पत्ती की डंडी के अतिरिक्त छिलके का कोई भाग बाहर न रहे। इसके पश्चात् केले के रेशे से अथवा रफिया घास से बाँध दिया जाय। इसमें यह ध्यान रखना चाहिए कि इससे अँखुवा ढँकने न पावे। रफिया घास और केले के छिलके के स्थान पर रबर के तागे बाँधने से उन्हें काटने की आवश्यकता नहीं रहती। रबर, तने की मोटाई के साथ-साथ बढ़ती रहती है और फिर सड़कर स्वयं गिर जाती है। अँखुवा निकालने में बड़ी सावधानी से काम लेना चाहिए। अँखुवा खराब होने का भय हो तो उसे लकड़ी-सहित लगा सकते हैं। कुछ समय के पश्चात् डंडी और पत्ती का भाग सूखकर गिर जाता है। कली के चौथाई इंच बढ़ने पर रेशा काट देना चाहिए। तने का कुछ भाग चश्मा बाँधने के बाद ही काट देना चाहिए और चश्मे के बढ़ जाने पर कुल काट देना चाहिए। ध्यान रहे कि तने के ऊपर व नीचे किसी शाख के उगने से चश्मा कमजोर पड़ जाता है; अस्तु उन्हें काटते रहना चाहिए। इसी रीति को 'शील्ड बडिंग' (Shield budding) कहते हैं।

दूसरी रीति—इसमें मोटे छिलकेवाले पौधे चुनने चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तने की एक गाँठ पर कुछ छिलका चौकोर आकार का निकाल कर उस स्थान पर उसकी ही नाप का चश्मा बिठा दें। चश्मा शाख से खींचकर न निकालना चाहिये; नहीं तो उसके अन्दर लकड़ी का कुछ भाग शेष रह जायगा। रेशा बाँधने से चश्मा शीघ्र सूख जाता है; अस्तु, मोमी कपड़े के फीते का प्रयोग करना चाहिए। पौधों की पत्तियाँ और डंडियाँ बड़ी होने से चश्मा बाँधने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। ऐसे समय चश्मा लगाने के पूर्व ही शाख की पत्तियों को डंडी के साथ, केवल डंडी का $\frac{१}{२}$ भाग छोड़कर काट देना चाहिये। चश्मा बढ़ने पर तने के ऊपर का भाग काट दें। काटने के बाद मोम लगाना न भूलना चाहिये। इसे 'पैच बडिंग' (Patch budding) कहते हैं।

(१) चश्मा निकालने के लिये चुनी हुई शाखा।
(२) तैयार किया गया चश्मा।
(३) चश्मा बिठाने के लिये शाख में दिया गया चीरा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तीसरी रीति—जब छाल आसानी से नहीं निकलती तो इसमें तने का लगभग १ इंच छिलका एक गाँठ पर सीधा चीरने के बाद चारों ओर से चीरा लगाकर वर्गाकार छीलकर निकाल लेते हैं और वहीं पर उसी नाप व आकार का चश्मा निकालकर बिठा देते हैं। शेष सब क्रिया दूसरी रीति के ही अनुसार होती है। इस रीति को 'फ्लूट बडिंग' (Flute budding) कहा जाता है।

चौथी रीति—जिन पेड़ों का छिलका मोटा हो और आसानी से निकल आये, उनमें यह रीति काम में लानी चाहिये।

तने को भूमि से १ फुट की ऊँचाई पर गाँठ के ½ इंच ऊपर काट दें और चोटी पर १ इंच लम्बा छिलका खींचकर निकाल दें। इसके पश्चात् समान मोटाई की शाख से १ इंच लम्बा चश्मा उतारकर तने पर बिठा कर खुले हुये स्थान पर मोम लगा दें। यह रीति अधिक उपयोगी नहीं है। इसे 'रिंग बडिंग' कहते हैं।

पाँचवीं रीति—तने का छिलका चश्मे के छिलके से अधिक मोटा होने पर यह रीति बड़ी उपयोगी है। तने के छिलके को कोष्टक में दिये आकार का (H) काट लें। इसमें दूसरी रीति के (Patch Budding) के अनुसार चश्मा बिठा दें। इसकी देख-भाल में बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। इसे हिंज बडिंग (Hinge Budding) कहते हैं।

छठी रीति—जिन पौधों का छिलका चश्मा बाँधने के समय सरलता से अलग नहीं होता (अंगूर आदि) उनके लिये यह रीति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काम में लानी चाहिये। पकी हुई शाख से चश्मा लेना अच्छा रहता है। तने की एक गाँठ से ऊपर लगभग १ इंच लम्बा टुकड़ा कुछ लकड़ी व छिलका सहित काटकर उसी नाप का चश्मा निकालकर बाँध दें। चश्मा भूमि के पास बाँधना चाहिये और तुरंत ही ३ इंच नम मिट्टी से ढक देना चाहिये। तने को दूसरे बसन्त तक न काटना चाहिये। बाँधने के लिये केला अथवा रफिया घास काम में लानी चाहिये। चश्मा आसानी से कट सके इसलिये पहले गाँठ के नीचे शाख को काटकर चश्मे को चाकू की सहायता से ऊपर से नीचे की ओर काटना चाहिये। यह रीति केवल अंगूर के काम आती है। इसे 'चिप बडिंग' (Chip Budding) कहते हैं।

पैबंद लगाना (Grafting)—वृक्ष की किसी शाखा को उस वर्ग के किसी दूसरे वृक्ष पर लगाने की क्रिया को पैबंद लगाना या भेंट कलम कहते हैं। पैबंद केवल एक ही जाति या वर्ग के वृक्षों में लगाया जाता है। आम पर नारंगी की शाखा नहीं लगायी जा सकती किंतु नींबू पर नारंगी की टहनी कलम की जा सकती है। पैवन्द, आम, अमरूद, आँवला और लुकाट आदि में अपने ही बीज़ू पौधे पर बाँधा जाता है। इसके लिये जुलाई अगस्त का समय सबसे उपयुक्त है किन्तु इसे फरवरी में भी कर सकते हैं।

भेंट कलम की दो मुख्य रीतियाँ हैं—पहली में पौधे से शाख अलग नहीं की जाती और दूसरी में शाख को पौधे से काटकर दूसरे तने से उसका संयोग कर देते हैं। हमारे यहाँ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पहली रीति अधिकतर प्रचलित है। दूसरी रीति बरसात में या वर्षा ऋतु में काम आती है।

पैबन्द लगाने में सामान्यतया पहले बीज से पौधे तैयार किये जाते हैं। फिर आधा इंच मोटे तने वाले पौधों को खोद कर या तो किसी गमले में बदल लिया जाता है, अथवा मजबूत मुंजेटी में बाँध दिया जाता है। ऐसा करने के बाद पौधों को उस पेड़ के पास ले जाया जाता है जिसकी डालियों पर पैबन्द लगाना है। बड़े पेड़ की कुछ डालियाँ भूमि पर झुका लेंगे या बाँसों का मचान बनाकर गमले उस पर रख देंगे। मचान का काम मोटी टहनियों में गमला बाँध कर भी लिया जा सकता है। कहने का तात्पर्य यह कि नया पौधा और बड़े पेड़ की वह शाखाएँ जिनमें पैबन्द लगाना है, इतने निकट हो जायँ कि पैबन्द बाँधा जा सके। इसके बाद नये पौधे के तने की एक फीट ऊँचाई से २ इंच लम्बा व तने की एक तिहाई मोटाई की लकड़ी व छिलका उतार दिया जाता है। इसके बाद बड़े पेड़ पर इसी मोटाई की लकड़ी चुनकर उसमें भी दो गाँठों के बीच के स्थान पर उसी नाप का (जिस नाप का नये पौधे पर हो) नश्तर लगा कर लकड़ी व छिलका अलग कर दिया जाता है। फिर शाख और नये पौधे का तना कटे हुये नश्तर के स्थान पर एक में मिलाकर एक दूसरे पर रखकर बान से बाँध देते हैं। बान बाँधने में यह ध्यान रखना चाहिये कि बान नश्तर के जोड़ने वाले स्थान के आधा इंच से नीचे तक बाँधना चाहिये जिससे पानी व कीड़े

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अन्दर न जा सकें। बान पर गीली मिट्टी का लेप किया या मोम लगाया जाता है। गमले में नित्य पानी देते रहना चाहिये। प्रायः दो सवा दो महीने में तना व टहनी जुड़ जाते हैं। इसके पश्चात जब पौधा जुड़ जाय तब उसका वह हिस्सा जो कि जोड़ के ऊपर है, तेज चाकू से काट दिया जाता है। पेड़ वाली टहनी पर जोड़ के स्थान से एक डेढ़ इंच ऊपर छोटा सा नश्तर लगा दिया जाता है। इसकी गहराई टहनी की मोटाई की एक तिहाई ही होनी चाहिये। १५ दिन बाद इस घाव पर से टहनी काट दी जाती है और नया कलमी पौधा तैयार हो जाता है। कलम के स्थान पर बँधा हुआ बान खोल देना चाहिये।

इनार्चिंग (Inarching)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऊपर बतायी गयी रीति पैबन्द लगाने (Grafting) की सर्वसुलभ एवं प्रचलित रीति है। इसे ही भेट कलम या इनार्चिंग (Inarching) कहते हैं। नये पौधे प्रायः एक साल बाद लगाने के योग्य हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त और भी प्रचलित रीतियाँ यहाँ दी जा रही हैं।

टंग ग्राफ्टिग—यह भी इनार्चिंग के ही समान है। अंतर केवल इतना है कि इसमें सीधा काटने के स्थान पर तने और शाख को जीभ की तरह काटकर, दोनो को सटाकर सुतली से बाँध देते हैं। इसमें अभ्यास और सावधानी की बड़ी आवश्यकता है। टंग ग्राफ्टिग की १० विधियाँ हैं, जिनका विवरण नीचे दिया जाता है।

पहली रीति—एक या दो साल का तना चुनकर भूमि से ९ इंच छोड़कर उसे काट दें और चोटी पर कुछ चपटा भाग छोड़कर उसे नीचे की ओर सीधा काट दें। इसी प्रकार शाख को भी काट दें और सटाकर बाँध दें। ऊपर मिट्टी व गोबर मिलाकर बाँध दें। इसमें जड़ को पानी देते रहना चाहिये, जिससे नमी बनी रहे।

दूसरी रीति—एक ही मोटाई का तना व शाख चुनकर पहली रीति के अनुसार ९ इंच काटकर चोटी पर इस तरह काटें कि उसमें खूँटी की शक्लवाली शाख बैठ सके। फिर उपरोक्त रीति से बाँधकर छाया में रख दें। पौधा डेढ़-दो माह में तैयार हो जाता है।

तीसरी रीति—इसमें तने से पतली शाख चुन लें। तने को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बगल में चाकू से आधा इंच के लगभग नीचे की ओर काटकर शाख को खूँटीनुमा बनाकर बाँध दें।

चौथी रीति—तने की मोटाई से शाख की मोटाई आधी अथवा चौथाई हो। भूमि से ६ इंच ऊपर काट दें। इसके पश्चात् आरी की सहायता से बीच से खड़ा चीर, बीच में कोई खूँटी या लकड़ी लगा दें। पुनः दो शाखों को खूँटीनुमा काटकर दोनो छोरों पर इस प्रकार बिठा दें कि शाख का अन्दरवाला छिलका तने के छिलके के सामने रहे। इसके पश्चात् लगायी हुई खूँटी अथवा लकड़ी अलग कर लें और तने को ऊपर बाँध दें। कटे हुये भाग में मोम लगा दें।

पाँचवीं रीति—चौथी रीति के समान ही तने को काटकर चोटी से नीचे की ओर लगभग आध फीट छिलके को चाकू से

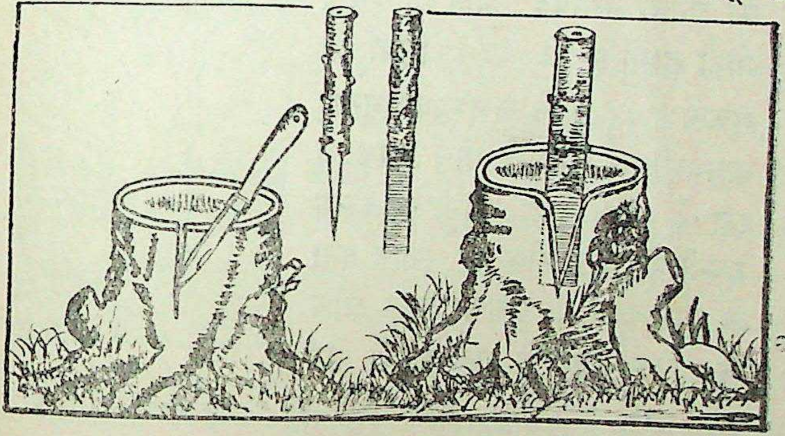

भेंट-कलम—रीति ५

चीरकर, दोनो भागों को सावधानी से अलग करें। शाख की पत्तियाँ अलग कर उसे खूँटीनुमा काटकर लकड़ी व छिलके के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मध्य सटाकर बाँध दें और मिट्टी व गोबर मिलाकर लगा दें। तना मोटा होने पर दो शाखें भी लगायी जा सकती हैं। अधिक धूप से इसकी रक्षा करते रहना आवश्यक है। इस रीति को खूटी मारने की रीति भी कहते हैं।

छठी रीति (Top Working)—यह रीति पुराने आम के वृक्षों में नई टहनियाँ लगाने के लिये कहीं-कहीं काम में लाई जाती है। वृक्ष की शाखों को आरी की सहायता से इतनी ऊँचाई पर काटें कि ३ इंच या ४ इंच मोटी शाखें कट जायँ जिनमें कि नयी शाखें लगायी जायँ। पतली शाखाओं को चुनना लाभप्रद होता है, यद्यपि मोटी डालों से भी काम लिया जा सकता है। पहले आवश्यकतानुसार कलमें तैयार कर उन्हें गीले कपड़े में रख लें। फिर जिस टहनी पर कलम रखनी हो चाकू ठोंक कर स्थान बना लें और कलम बिठालकर चाकू खींच लें। फिर बाँधने के बाद कलमी मोम लगा दें। उपरोक्त तीनों रीतियाँ (चौथी, पाँचवीं और छठी जनवरी से फरवरी तक काम में लाई जानी चाहिये, जबकि कलियाँ अपनी सुषुप्तावस्था में हों अथवा उनका निकलना प्रारम्भ हो रहा हो।

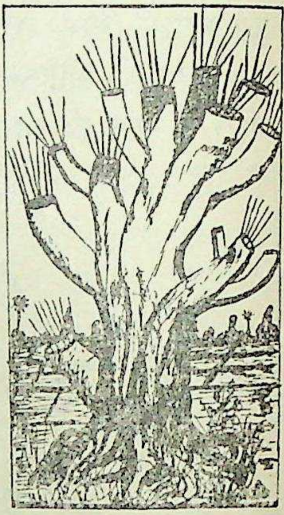
भेंट-कलम—रीति ६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सातवीं रीति–केवल तने के छिलके को चीरकर और उसके पुराना होने पर बिना चीरे हुये ही शाखों को छिलके व लकड़ी के बीच डालकर बाँध दें। इसके लिये शाखों को जनवरी व फरवरी में काटकर बालू या काई में रख लें, जिससे कि उनकी कलियाँ बढ़ने न पावें और बसंत के बाद लगा दें। इस समय छिल्का सरलता से अलग हो जाता है।

आठवीं रीति—यह रीति साल में कभी भी काम में लाई जा सकती है। चाकू व छोटी आरी से तने में एक-डेढ़ फुट लम्बे दो-तीन तिकोने गड्ढे इस प्रकार बनायें कि वे लगभग तने के बीच में पहुँच जायँ। इसके पश्चात् शाखों को भी इसी आकार का काटकर, सटाकर बाँध दें। इस रीति से शाखों के जुड़ने में कुछ समय अधिक लगता है।

नवीं रीति—तने के छिलके के कट जाने अथवा सड़ जाने से उसके सूखकर मरने का भय सदैव बना रहता है। ऐसी दशा में सड़े हुये भाग को अलग कर नई शाखें इस प्रकार बिठावें कि ऊपर व नीचे के जीवित छिलके का संबंध हो जाय। सातवीं रीति से शाखों को काटकर तैयार कर लें। शाखों के दोनो ओर खूँटीनुमा बनाकर तने के चारो ओर २-३ इंच के अन्तर से कई शाखें लगा दें। इसमें यह स्मरण रहे कि उनके सिरे लकड़ी और छिलके के बीच में रहें। खुले हुये भाग पर मोम लगा दें और शाखों से निकली हुई कलियों को तोड़ना न भूलें। यह रीति बसंत ऋतु में ही काम में लायी जाय।

दसवीं रीति–यह रीति ठंढे प्रदेशों में सेब तथा नासपाती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की ग्राफ्टिंग के लिये बहुत प्रसिद्ध है। ४-६ इंच की एक शाख पूरी जड़ अथवा उसके एक भाग पर बाँध दें। पौधों की पत्तियाँ झड़ जाने पर जड़ खोल दें और पुनः शाख छीलकर या जीभ-नुमा (टंग ग्राफ्टिंग) काटकर बाँध दें।

फलदार पौधे लगाना

नये बाग लगाने से पूर्व बागवान को काफी विचार कर लेना आवश्यक है। एक बार लगाया हुआ बाग उल्टा-पल्टा नहीं जा सकता। थोड़ी सी भूल वर्षों के पश्चात्ताप का कारण बन जाती है।

स्थान—फल के बाग के स्थान के चुनाव में निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है:—

१. भूमि—यद्यपि अनेक फलदार पौधे प्रत्येक प्रकार की भूमि में उत्पन्न होते हैं, किन्तु बिलकुल खराब भूमि में उनके बढ़ने की आशा न रखनी चाहिये। साधारणतया जिन जमीनों में अच्छी खेती की पैदावार हुई हो, फलदार वृक्षों के लिए अच्छी रहती हैं। किन्तु उचित गहराई (छोटे पौधों के लिए ४–५ फीट और बड़े पौधों के लिए ८ या १० फीट) आवश्यक है। भूमि में १०–१२ फीट की गहराई तक कंकड़-पत्थर की कड़ी तह न हो। भूमि में पानी के निकास का प्रबंध होना अत्यंत आवश्यक है। भिन्न-भिन्न फलदार वृक्षों के लिये कौन भूमि अनुकूल है, इसका विवरण प्रत्येक फल के साथ दिया जायगा।

२. सिंचाई—प्रारंभ में २–३ साल तक पानी की अधिक आवश्यकता होती है; परन्तु पर्याप्त मात्रा में सिंचाई के साधनों का प्रबंध अत्यंत आवश्यक है। नहर के ऊपर ही बागवान को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निर्भर न रहना चाहिए, क्योंकि नहर से उसकी आवश्यकता के समय पानी नहीं मिलता। सिंचाई का पानी खारी न होना चाहिये।

३. स्थिति—स्थान किसी रेलवे स्टेशन अथवा सड़क के समीप हो। पैदावार की बिक्री के लिए समीप कोई बाजार या मंडी हो। जंगली व हानिकारक जानवरों का भय न हो तथा सस्ते मजदूर आसानी से मिल सकें।

भूमि की तैयारी—प्रायः बागवान फल के लिए भूमि की जुताई की आवश्यकता ही नहीं समझते हैं। उनका यह विचार सर्वथा हानिकारक तथा मिथ्या है। बाग की भूमि की तैयारी में जुताई का उतना ही स्थान है जितना कृषि में। पौधे लगाने से पूर्व भूमि की सतह बिलकुल बराबर कर लेनी चाहिए जिससे सिंचाई का पानी सब जगह पहुँच सके। सिंचाई की नाली सबसे ऊँचे स्थान पर हो। भूमि की गहरी जुताई के द्वारा खर-पतवार उखाड़कर दूर कर देना चाहिए। वास्तविकता यह है कि पेड़ लगाने के बाद भी जुताई की आवश्यकता होती है। इससे जड़ें अधिक गहराई तक जाती हैं। प्रारंभ में साल-दो-साल ६ इंच की गहराई तक जुताई करना लाभदायक सिद्ध हुआ है।

जातियों का चुनाव—उपरोक्त बातों को तय कर लेने के पश्चात् हमारे सम्मुख फलों की जातियों के चुनाव का प्रश्न आता है। मौसम में सबसे पूर्व और अन्त में आनेवाली फसल सबसे अधिक कीमत की होती है। एक फसल की बहुत सी किस्में लगाना अधिक लाभप्रद नहीं होता, अस्तु २–३ अधिक बिक्रीवाली जातियाँ बोनी चाहिए। जातियों के चुनाव में यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भी ध्यान रखना चाहिए कि वे ही पौधे लगाये जायँ जो वहाँ की जलवायु के अनुकूल हों और निकटवर्ती बाजार में उनकी खपत हो।

पेड़ों के बीच अंतर—पौधों को एक-दूसरे से उचित अंतर पर लगाया जाय। यह अंतर उनके फैलाव पर निर्भर करता है। पेड़ों को इतने अन्तर से बोना चाहिए कि उनकी जड़ें आपस में मिलकर पोषक-तत्व के लिए झगड़ने न पावें। प्रत्येक पौधे के विवरण के साथ ही हम उसके पौधे से पौधे का अंतर भी देते चलेंगे।

पौधा लगाने का ढंग—एक बगीचा लगाने में एक सुनियोजित योजना के अनुसार ही कार्य करना चाहिए। यदि कई तरह के पौधे अथवा जातियाँ बोनी हों, तो उनके क्षेत्र अलग-अलग होने चाहिए। एक साथ फसल देनेवाले पौधों को एक अलग क्षेत्र में लगाने से उनकी सेवा करने तथा फसल आदि लेने में आसानी रहती है।

बाग लगाने के कई ढंग प्रचलित हैं—(१) वर्गाकार (२) आयताकार (३) त्रिभुजाकार (४) षट्कोणाकार (५) क्विनकुंस।

वर्गाकार (चौकोर)—बाग लगाने का यह सबसे सुन्दर और सरल तरीका है। इस प्रकार से पंक्ति में पौधे से पौधे की दूरी तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी एक समान रहती है। सिंचाई करने में भी सुविधा रहती है।

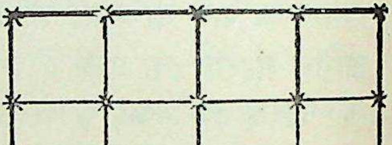

वर्गाकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आयताकार—इस रीति से कतारों का फासला कम कर दिया जाता है जिससे कि पौधे अधिक लग सकें। इस रीति से पौधे समकोण बनाती हुई सीधी पंक्तियों में बोये जाते हैं।

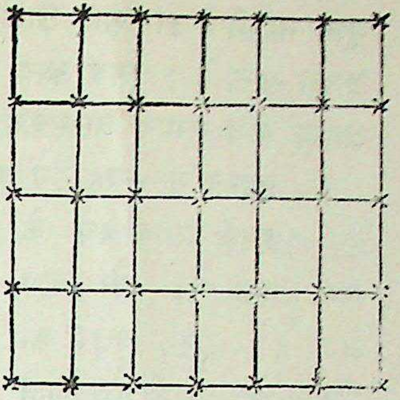

आयताकार

त्रिभुजाकार—इस तरीके से त्रिकोण के तीनों कोनों पर पौधे लगाये जाते हैं। इसमें पौधे से पौधे की और पंक्ति से पंक्ति की दूरी तो समान रहती है; किन्तु पंक्तियों की एक-दूसरे से दूरी, पौधों की दूरी के बराबर नहीं होती। वर्गाकार की अपेक्षा इस रीति से कुछ कम पौधे लगते हैं।

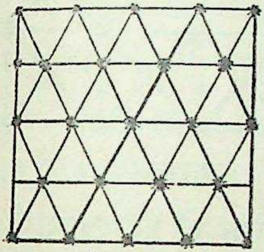

त्रिभुजाकार

षट्कोणाकार—यह ढंग एक समभुज त्रिभुज के समान होता है, जिसमें कि पेड़ समान भुजावाले त्रिकोण के कोनों पर लगाये जाते हैं। ६ पेड़ों से एक षट्कोण बनता और इसके बीचोबीच में एक और पेड़ होता है। इसमें तीनों ओर से सिंचाई और जुताई की जा सकती है। उन स्थानों में जहाँ

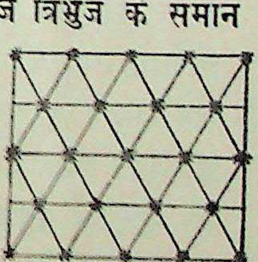

षट्कोणाकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि महँगी है और खाद आदि की सुविधा है, वहाँ यह ढंग अच्छा रहता है । इसमें अन्य तरीकों की अपेक्षा थोड़ी भूमि में अधिक पौधे लगाये जा सकते हैं ।

कुइनकुंस—यह ढंग वर्गाकार ढंग के ही समान होता है । इसमें प्रत्येक वर्ग के मध्य एक पेड़ और लग जाता है । इसमें वृक्षों की संख्या तो बहुत बढ़ जाती है, परन्तु कोने से मध्य की दूरी कम हो जाती है और पौधों की सेवा ठीक से नहीं हो पाती । यह ढंग वहाँ ठीक रहता है, जहाँ अस्थायी पौधों के साथ-साथ स्थायी पौधे लगाने का विचार हो । अस्थायी पौधे मध्य में और स्थायी चारों ओर लगाये जायँ ।

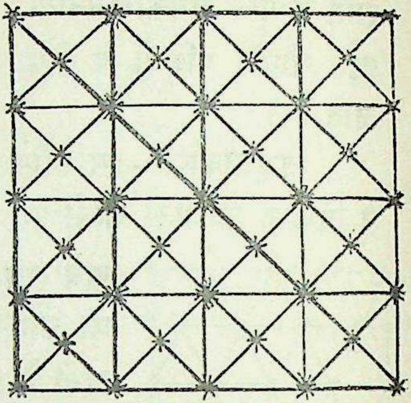

कुइनकुन्स

बाग की रक्षा—बगीचे के वृक्षों की जानवरों, पक्षियों तथा चोरों से रक्षा करने की अत्यन्त आवश्यकता होती है । यह सब पौधे लगाने से पूर्व ही कर लेना चाहिए । उपरोक्त चीजों के अतिरिक्त प्रबल वायु के झकोरे भी लू तथा ठंडी हवाओं के रूप में हानि पहुचाते हैं । इसके लिए कुछ उपाय नीचे दिये जा रहे हैं । सुविधानुसार कोई एक चुन लेना चाहिए—

(क) चारों ओर ३ फीट गहरी और ३ फीट चौड़ी खाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खोदकर उसे किनारे चारों ओर भरा दें। इसके ऊपर सेहुँड़ अथवा नागफनी जैसे काँटेदार पौधों की डालें काटकर लगा दें। यह डालें बरसात में जड़ें शीघ्र पकड़ती हैं। २-३ वर्ष में इसकी एक दीवार सी खड़ी हो जायगी और किसी का प्रवेश, प्रधान मार्ग के अतिरिक्त अन्य मार्ग से होना अत्यन्त कठिन कार्य हो जायगा। सेहुँड़ लगाने से वह कुछ-न-कुछ वायु से भी रक्षा करेगा।

(ख) यदि खाई न उठा सकें तो खट्टा बेर, बबूल, रामबाँस, नागफनी और सेहुँड़ आदि काँटेदार पेड़ों की बाढ़ ही लगा देने से काम चल सकता है। इनमें वही पौधे हों, जिनकी जड़ें दो फीट से अधिक न बढ़ती हों।

(ग) उपरोक्त दोनो रीतियों में हमेशा परिश्रम करना पड़ेगा। इसलिए एक स्थायी प्रबंध चाहनेवालों को काँटेदार तारों की ४ फुट ऊँची बाढ़ लगा देनी चाहिए। इनसे जानवरों की तो रोक होती है, किन्तु मनुष्यों और वायु से नहीं। साथ ही दाम भी इसमें अधिक लगते हैं।

(घ) पक्की ईंटों की दीवाल उठा देने से सब प्रकार से रक्षा होती है और स्थायित्व भी होता है, परन्तु यह अधिक खर्चीली होती है।

(ङ) बबूल तथा बेर आदि काँटेदार टहनियाँ भी चारों ओर से गाड़ दी जायँ, तो यह भी एक अच्छा ढंग है। यह ढंग छोटे-छोटे फूल आदि के बगीचों के लिए ठीक रहता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तीव्र वायु के झोकों से बचाव—हम ऊपर इनका उल्लेख कर चुके हैं। बाग के किनारे दक्षिण-पश्चिम की ओर से उत्तर-पूर्व की ओर तक घने, ऊँचे तथा जल्द बढ़नेवाले पेड़ आवश्यकतानुसार बोने चाहिये। बाकी किनारा वायु तथा प्रकाश के लिए खुला रहे। ऐसे पेड़ देशी आम, जामुन, खट्टा नींबू, कमरख व बेर आदि हैं।

पौधे मँगाना—इसके पश्चात् यदि बाहर से पौधे मँगाने की आवश्यकता हो, तो किसी विश्वसनीय नर्सरी से निश्चय किये हुए किस्म के पौधों के मँगाने का प्रबन्ध किया जाना चाहिये। जहाँ तक हो सके, स्वयं जाकर और अच्छी भाँति समझकर कलमें खरीदनी चाहिए। पौधों को चुनते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(१) वे मजबूत तथा स्वस्थ हों तथा पत्तों का रंग हरा व चमकीला हो।

(२) कलमें दो वर्ष से अधिक और एक वर्ष से कम आयु वाली न हों। कलम भली भाँति जुड़े हुए होने चाहिए। चश्मा तने पर एक फुट की ऊँचाई के अन्दर लगा हो।

(३) यह निश्चय कर लेना चाहिए कि जिन पेड़ों से यह कलम या चश्मा लिया गया है, वे अच्छे फल देनेवाले वृक्ष हैं।

पौधे मँगाने के लिए यह स्मरण रहे कि सदैव हरे रहनेवाले वृक्षों के पौधे (आम, कटहल, अमरूद, लीची आदि) वर्षाकाल या बसंत ऋतु में मँगाकर लगाते हैं। पतझड़ वाले वृक्षों के पौधों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को (अंजीर, अंगूर, शहतूत, फालसा, आँवला, आड़ू आदि) शीतकाल में (नवम्बर से जनवरी तक) मँगाकर लगाते हैं; क्योंकि पौधे इस समय सफर के कष्ट को आसानी से सहन कर सकते हैं।

सफर में बड़ी सावधानी रखने की आवश्यकता होती है। भेजने से पूर्व जड़ों को मिट्टी सहित सरपत, घास, केले की पत्तियाँ अथवा चटाई में बाँध देना चाहिए। ज्यादा दूर भेजने के लिए टोकरियाँ, पीपे, चीड़ के बक्से काम में लाये जा सकते हैं। अमरूद, केला, संतरा आदि टोकरियों में जा सकते हैं; परंतु लुकाट और आम आदि कनस्तर व बक्सों में ही भेजे जायँ। शाखों को हानि न पहुँचे, इसलिए बक्सों में घास अथवा पुवाल (पैरा) भर देना अच्छा रहता है। भेजने से पूर्व ध्यान रहे कि जड़ों अथवा शाखों को कोई हानि न पहुँचने पावे और सिंचाई भी कर दी जाय। २×१×१ फुट नाप के बक्से में ६ कलमें सुगमता से पैक की जा सकती हैं।

सफर तय करने के बाद भी पौधों के संबंध में सावधानी बरतनी चाहिए। पार्सल मिलने के बाद उन्हें ठीक जगह पर खोलकर निकालना चाहिए। खोलते समय यह ध्यान रहे कि उनकी जड़ों की मिट्टी न टूटने पावे। यदि थापी टूट जाय, तो उसे गमले में बदलकर पानी दे दें। प्रत्येक ३-घण्टे के बाद पानी देना आवश्यक है। जिन शाखाओं को मार्ग में हानि पहुँची हो, उन्हें स्वस्थ स्थान से काट लिया जाय।

गड्ढे तैयार करना—ऊपर हम बाग लगाने के अनेक ढंग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा चित्र दे चुके हैं। उनमें से कोई एक चुनकर बताये ढंग से ठीक अन्तर पर लाइनें बना लें। प्रत्येक पौधे की दूरी हम आगे देंगे। इन पंक्तियों की दूरी आदि उसी के अनुसार हो। फिर पौधे लगाने के स्थान पर गढ़े खोदें।

गढ़े खोदकर पौधे लगाने से अनेक लाभ होते हैं। छोटे पौधों की जड़ों को फैलने के लिये मुलायम भूमि प्राप्त हो जाती है। सूर्य के प्रकाश से उसके अन्दर के हानिकारक कीड़े मर जाते हैं। भूमि की उर्वरा-शक्ति बढ़ जाती है और यदि उसमें कंकड़-पत्थर हों, तो उनका पता चल जाता है।

यह गड्ढे पौधे लगाने से कम-से-कम एक महीना पहले खोद लिये जायँ। भिन्न-भिन्न कद के पौधों के गड्ढे भिन्न-भिन्न नाप के होने चाहिये। बागबान को इनकी नाप निम्नानुसार रखनी चाहिये—

पूरी उम्र में ३० फीट से अधिक फैलनेवाले बड़े पौधों के गढ़े ४×४×४ फीट की नाप के होने चाहिये। मध्यम पौधों का अधिकतम फैलाव १५ से ३० फीट तक होता है, उनके गढ़े ३×३×३ फीट की नाप के होने चाहिये। १५ फीट से कम फैलाव वाले छोटे पौधों के गढ़े २-२ फीट लम्बे चौड़े तथा गहरे होने चाहिये। केला और फालसा को २-२ फीट चौड़ी तथा गहरी नालियों में भी बोया जाता है। गड्ढे गोल तथा ऊपर से नीचे तक समान चौड़ाई वाले हों। इसके पश्चात् गढ़े से निकली हुई मिट्टी और एक भाग खाद मिलाकर गढ़े में दबाकर भर दें। यदि भूमि उपजाऊ हो, तो खाद की मात्रा बढ़ा देनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भरने के बाद वर्षा के अभाव में गढ़े में पानी देना न भूलना चाहिये, जिससे कि मिट्टी बैठ जाय। इसके पश्चात् गड्ढा भूमि से ४ इंच गहरा रहना चाहिये। यदि अधिक हो, तो खाद व मिट्टी डालकर उक्त नाप तक भर लें।

पौधे लगाना--पौधे मँगाने व लगाने का समय हम पहले दे चुके हैं। पौधे सायंकाल, गढ़े के ठीक बीचोबीच, सीधे लगाये जाने चाहिये। लगाते समय पौधे के चारों ओर लगी हुई मुँजेटी आदि को खोलकर अलग कर लें। पौधा लगाने के बाद चारों ओर से खाली जगह में मिट्टी दबा-दबाकर भर दें। पौधे इतनी गहराई पर लगाये जायँ कि उनकी जड़ें ही ढकें, तना न ढकने पाये। लगाने के बाद तुरंत हजारे से हल्की सिंचाई कर देना आवश्यक है। जब तक पौधे का बढ़ाव न प्रारम्भ हो, अधिक सिंचाई न करनी चाहिये। लगाने के बाद प्रायः पौधे मुरझा जाते हैं, अतएव उन्हें किसी लकड़ी आदि के सहारे से खड़ा कर देना चाहिये। इसके बाद तेज धूप और हवा से उसकी रक्षा आवश्यक है। पौधे कतार में ही रहें, इसका ध्यान रहना आवश्यक है।

आदर्श नरसरी उपकरण

एक आदर्श नरसरी के लिए आवश्यक उपकरण यहाँ दिये जा रहे हैं। प्रत्येक सौ सवा सौ ग्रामों या हर तहसील में एक नरसरी की आवश्यकता है। नरसरी-भूमि ऊँचे स्थान पर और समतल हो। हमेशा दोमट भूमि ही चुननी चाहिये। आवश्यक उपकरण निम्नानुसार हैं:—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुवाँ (रहट या चरसा)—एक बोरिंग किया हुआ जिस पर रहट या चरसे का प्रबन्ध होना आवश्यक है। यदि सिंचाई के लिये बैल किराये पर मिलने की व्यवस्था न हो तो एक गोई बैल भी होने चाहिए।

इसके साथ ही एक पक्का, १० फीट लम्बा, १० फीट चौड़ा तथा ४ फीट गहरा हौज होना आवश्यक है। बीज की क्यारियों में सबेरे शाम पानी दिया जाता है। सिंचाई के दिन इसको भर लेंगे। यह पानी एक सप्ताह तक काफी होगा।

खाद के गड्ढे—क्रमशः १२ फीट लम्बे व चौड़े तथा ३ फीट गहरे ५ गढ़ों में कम्पोस्ट या गोबर की खाद लाकर भर देंगे जो कि बगीचे में काम आती रहेगी। ३ गढ़ों में पत्तियाँ इकट्ठी करके उनकी खाद बनायेंगे जो कि नर्सरी के लिए अति आवश्यक है।

औजार

क्रम संख्या	औजार का नाम	औजार की संख्या	औजार का कार्य
१	फावड़े	५	गुड़ाई और खुदाई के लिए।
२	खुरपी	५	निकाई-गुड़ाई के लिये।
३	लम्बी खुरपी	५	पौधे खोदने के लिए।
४	कुदार	२	लाइनों में गुड़ाई के लिए।
५	गेंती	१	कड़ी जमीन से कंकड़ आदि निकालने के लिए।
६	कुल्हाड़ी	१	डाल इत्यादि काटने के लिए।
७	बाँक	१	,, ,, ,,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

८	आरी	१	डाल इत्यादि काटने के लिए।
९	सेकेटियर	२	छोटी टहनियाँ काटने के लिए।
१०	ग्राफ्टिंग चाकू	२	पियून्द गूटी बांधने के लिए।
११	चश्मे का चाकू	२	चश्मा बाँधने के लिए।
१२	प्रूनिंग का चाकू	१	कटिंग काटने के लिए।
१३	शेवर	१	झाड़ियाँ काटने के लिए।
१४	टोवेल	२	पौधे उखाड़ने व बदलने के लिए।
१५	हैंडहो	१	पपड़ी तोड़ने के लिए।
१६	गार्डन फोर्क	१	खाद मिलाने के लिए ताकि हानि न हो।
१७	हैन्ड फोर्क	२	गमलों में इस्तेमाल के लिए।
१८	टारी बनेज	२	बीज दबाने के लिए।
१९	हँसिया	१	पतली टहनी तोड़ने के लिए या घास काटने के लिए।
२०	खूँटियाँ	१०	निशान लगाने के लिए।
२१	रस्सी पतली	१०० फीट	,, ,, ,,
२२	फीता	१०० फीट	,, ,, ,,
२३	गमले	१००	१० इंच वाले।
२४	गमले	१००	४ ,,
२५	गमले	१,०००	२ ,,
२६	कूंडे	१०	बीज बोने के लिए।
२७	फूस	..	भेजते समय पौधों को बांधने के लिए।
२८	बान	..	पियून्द बांधने के लिए।
२९	गूटी बांधने के लिए टाट		
३०	केले की चीप		चश्मे के लिये (अपने यहाँ बना लेंगे)।
३१	हजारा	..	पानी देने के लिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३२	बाल्टी	...	पानी भरने के लिए ।
३३	टोकरियाँ	...	खाद डालने के लिए ।
३४	ह्वील् बेरो	...	खाद व पौदे ढोने के लिए ।

नोट : (१) नर्सरी में मूल-पेड़ (मदर-प्लाण्ट) के लिए इस क्षेत्र में होने वाली फलों की क़िस्में ही लगायें। हर क़िस्म की संख्या क्षेत्र की मांग के अनुसार निर्धारित करेंगे ।

(२) बड़े पेड़ खेत के पश्चिम की ओर, छोटे पेड़ पूर्व की ओर लगायेंगे।

(३) हवा की रोक के लिए देशी आम, जामुन या शहतूत के वृक्ष १०-१० फीट पर पश्चिम व दक्षिण दिशा में अवश्य लगा देंगे ।

(४) बाढ़ (फेंसिंग) के लिए खट्टे नीबू या करौंदा की झाड़ियाँ ठीक रहेंगी। हमारी नर्सरी की बचत भी हो जायगी क्योंकि इन झाड़ियों में काटे होते हैं और इनसे फल के बीज भी मिलते रहेंगे ।

एक सामान्य बाग के लिए आवश्यक उपकरण

यहाँ ५ एकड़ के एक आदर्श बगीचे के लिए आवश्यक उपकरणों की सूची दे रहे हैं। इनके बिना बागबान को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उपकरणों के सामने उनकी आवश्यक संख्या और उनका निमित्त भी दिया गया है।

उपकरण	संख्या	उपकरण का कार्य
फावड़े (छोटे बेंट व बड़े बेंट के)	१०	गोड़ने व खुदाई के लिए ।
खुरपी (लम्बी व छोटी)	१२	निराई व पपड़ी तोड़ने के लिए तथा घास निकालने के लिए ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गेंती	२	कड़ी मिट्टी व कंकड़ आदि खोदने के लिए।
कुदाली	२	रास्ता ठीक करने के लिये व जमीन खोदने के लिए।
हँसिया	२	घास काटने के लिए।
रेक	२	घासफूस इकट्ठा करने के लिए।
हैंडहो	१	गुड़ाई के लिए।
बांक	२	छँटाई के लिए।
हजारा	२	पानी देने के लिए।
आरी	१	मोटी शाखाओं को काटने के लिए।
सेकेटियर	२	शाखें काटने के लिए व प्रनिंग के लिए।
बडिंग नाइफ	१	चश्मा बनाने के लिए।
ग्राफ्टिंग नाइफ	१	ग्राफ्टिंग बनाने के लिए।
प्रनिंग वेअर	१	प्रनिंग के लिए।
फल तोड़नेवाला	२	फल तोड़ने के लिए।
कुल्हाड़ी	१	शाखा काटने के लिए।
हाथ गाड़ी	१	मिट्टी या खाद वगैरह ढोने के लिए।
कुआँ रहट लगा हुआ	१	सिंचाई के लिए।
बाल्टी	२	पानी देने के लिए।
रस्सियाँ	१०० फीट	निशान लगाने के लिए।
फीता	१	नापने के लिए।
टोकरियाँ	१०	खाद, मिट्टी व कूड़ा ढोने के लिए।
खूँटियाँ	१२	निशान के लिए।

नोट : (१) बगीचे में पेड़ों के बीच की खाली जगह में पपीता व फालसा बीच में लगाया जा सकता है।

(२) बैल किराये पर आ जाने का प्रबन्ध है। क्योंकि प्रारम्भ में ५ एकड़ का बाग एक जोड़ी बैल का खर्च नहीं चला सकता।

(३) यदि इस बीच की खाली जमीन में सब्जी की काश्त करने का विचार हो तो निम्नलिखित औजार और चाहिये:—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१—एक जोड़ी बैल ।

२—जुआ ।

३—देशी हल ।

४—मिट्टी पलटने वाला हल ।

बगीचे की देख रेख

बगीचा लगाने के बाद बागबान को बड़ी सावधानी के साथ उसकी देखरेख करनी चाहिए। किंचितमात्र भी असावधानी नयी पौध की मृत्यु का कारण बन सकती है। बागबान को निम्न बातों का सर्वाधिक ध्यान रखना पड़ता है।

(१) सिंचाई, (२) जुताई, निराई तथा गुड़ाई, (३) पाले तथा कठिन धूप से पौध की रक्षा, (४) जंगली तनों से शाखें फूटना, (५) दीमक से बचाव और (६) छँटाई ।

सिंचाई की मात्रा—पानी का पौधों के जीवन के लिए क्या महत्व है, यह बताने की आवश्यकता नहीं है। पौधे लगाने के बाद सिंचाई की मात्रा का सबसे अधिक ध्यान रखना चाहिए। पौधे को किस आयु में कितना पानी दिया जाय, यह नीचे दिया जाता है। वर्षा होने पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं।

प्रारम्भिक दो वर्ष तक सिंचाई—प्रारम्भ में एक महीने तक सप्ताह में दो बार सिंचाई करनी चाहिये। इसके पश्चात् ६ माह तक प्रति सप्ताह एक सिंचाई करते रहना चाहिये। प्रायः वर्षा ऋतु में लगाये गये पौधों की सिंचाई की आवश्यकता अगस्त से अक्टूबर तक बहुत कम पड़ती है। नवम्बर से फरवरी तक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पंद्रहवें दिन और मार्च-अप्रैल में दसवें दिन सिंचाई करते रहना चाहिये। मई-जून में पुनः प्रति सप्ताह एक सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इस समय नमी बनी रहे, अस्तु, सिंचाई के बाद गुड़ाई कर, घास-फूस से ढाँक देना अच्छा रहता है।

तीसरे व चौथे वर्ष की सिंचाई—जुलाई से अक्टूबर के महीने तक सिंचाई की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती और नवम्बर से फरवरी तक प्रति माह एक सिंचाई हो जानी आवश्यक है। मार्च व अप्रैल में, महीने में दो बार और मई-जून में दस-ग्यारह दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिये।

चार वर्ष के बाद सिंचाई—इसके बाद जाड़े में प्रति माह और गर्मी में पंद्रहवें दिन सिंचाई करते रहना चाहिये। बरसात में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसमें यह ध्यान रखना चाहिये कि फूल आने पर फलों के विकास के लिये तथा उनके पकने के समय सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिये।

सिंचाई का ढंग—गाँवों में सिंचाई के ढंग प्रायः गलत होते हैं। किसान पानी की एक ही नाली से एक के बाद दूसरे पौधे को सींचता है। इससे पौधों की खाद पानी में बह जाती है। कोई पौधा अधिक कोई कम पानी पाता है। परिणाम यह होता है कि कोई पौधा खूब बढ़ जाता है और किसी की बाढ़ मारी जाती है। प्रायः यह भी देखने में आता है कि पौधे के चारों ओर थाला बनाकर उसमें पानी भर देते हैं। इससे तने में पानी लग जाने पर अनेक बीमारियों की आशंका रहती है। वास्तव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में फल के पेड़ों को वहीं पानी दिया जाना चाहिये, जहाँ उनकी जड़ें हों।

सिंचाई करने के ठीक ढंग नीचे दिये जाते हैं। इनमें उक्त प्रकार का कोई हानि होने का अन्देशा नहीं रहता है।

पहली रीति——पौधों की दो पंक्तियों के मध्य पानी की एक नाली रहती है और हर पौधे को पानी देने के लिये इससे शाखें निकलती हैं, जैसाकि चित्र में दिया गया है। पौधे के चारों ओर एक फुट से ऊँचा चबूतरा अथवा थाला बनाकर उसके चारों ओर ६ इंच चौड़ी तथा २ इंच गहरी नाली बना दी जाती है। इसी में उन शाखों से पानी दिया जाता है। थाला उतना ही चौड़ा होना चाहिये जितना कि शाखों का फैलाव हो।

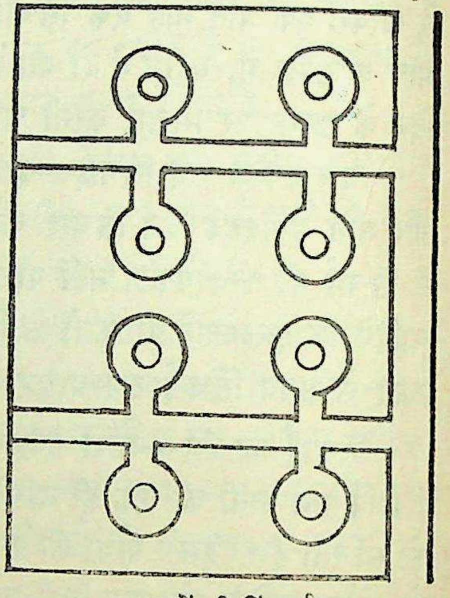
थालों की सिंचाई

दूसरी रीति——यह रीति समतल तथा दोमट, दोमट-मटियार भूमि के लिये अच्छी रहती है। भारी भूमि में नालियाँ चार-पाँच सौ फीट तक लम्बी हों, तो हानि नहीं है। यह अधिक चौड़ी और कम गहरी होनी चाहिये। पहले २-३ वर्ष तक पौधों के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दोनो ओर हल्की नालियाँ बना देनी चाहिये और जैसे-जैसे पौधे बढ़ते जायँ, नालियों की संख्या भी बढ़ती जाती है। ५-६ वर्ष के पौधों की पंक्तियों के मध्य में डेढ़ फीट चौड़ी ६-७ नालियाँ आवश्यक होती हैं, क्योंकि इस समय पौधों की जड़ें पानी की तलाश में दूर तक फैल जाती हैं। दस-पन्द्रह फीट की दूरी पर बोये जानेवाले पौधे के ४-५ फीट के हो जाने पर यह रीति सबसे अच्छी रहती है।

तीसरी रीति—यह रीति पौधों के ४-५ साल के हो जाने पर काम में लायी जानी चाहिये। पेड़ के फैलाव के बढ़ने के साथ, थाले की चौड़ाई भी बढ़ाते जाना चाहिये। फलस्वरूप पहले की नालियाँ आपस में मिल जाती हैं और उनकी जगह शतरंज के खानों का नकशा बन जाता है, जिसका कि प्रत्येक खाना पानी की नालियों से घिरा रहता है। पेड़ों को पानी इन्हीं नालियों द्वारा प्राप्त होता है। इसमें भूमि के ढाल को ध्यान में रखकर पानी छोड़ना चाहिये। साधारणतया नालियाँ दो-ढाई फीट चौड़ी और आधा या पाव फुट गहरी रखनी चाहिये। इससे सब वृक्षों को समान जल मिलता है और उनकी समान वृद्धि

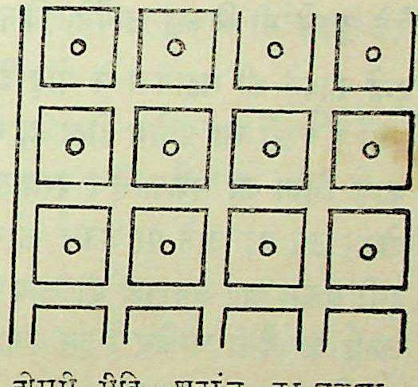

तीसरी रीति—शतरंज का नकशा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होती है। खुराक अधिक मिलती है और मिट्टी के यकायक सूखने का प्रभाव उन पर कम पड़ता है।

जुताई, निराई तथा गुड़ाई—हम पहले ही अध्याय में जुताई, निराई आदि के महत्व को बता चुके हैं। कम-से-कम ७ वर्ष में एक जुताई मिट्टी पलटनेवाले हल से कर देना आवश्यक है। यह केवल इतनी गहरी हो कि तमाम खर-पतवार की जड़ें दूर हो जायँ और कीड़े मर जायँ। यह जुताई इतनी गहरी न हो कि वृक्ष की जड़ों को कोई हानि पहुँचे। वृक्षों के कारण सारे बगीचे को एक ही सीध में जोत सकना कठिन है, अतएव दूसरे छोर पर दूसरी जुताई की जाय। इसी प्रकार बाग में कुछ ऐसे टुकड़े भी निकल आयेंगे, जिनकी जुताई नहीं हो सकती। इन्हें फावड़े की सहायता से गोड़ देना चाहिए। बड़े फार्मों में जहाँ ट्रैक्टरों का प्रयोग होता है, वहाँ डिस्कहैरो से जुताई का कार्य लिया जा सकता है। बरसात के पूर्व सनई की हरी खाद बोकर उसे बढ़ जाने पर जुताई करना विशेष लाभप्रद रहता है। इसी प्रकार जब-जब खाद दी जाय अथवा कीड़े अधिक हों, तुरंत जुताई कर देना चाहिए। इस प्रकार जुताई से, खर-पतवार जोकि पेड़ के खाद्यतत्व को खाया करता है, नष्ट होकर स्वयं खाद का काम देता है। इसी प्रकार जुताई व गुड़ाई से भूमि अधिक पानी सोखती है और मुलायम रहती है, भूमि के कीड़े मर जाते हैं और उसमें वायु का प्रवेश संभव हो जाता है। प्रत्येक सिंचाई के बाद ओठ आने पर निराई तथा गुड़ाई अवश्य कर देनी चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाले व कठिन धूप से रक्षा—मनुष्य का जलवायु पर किंचित् मात्र ही वश है; किन्तु कुछ सीमा तक वह उससे होने वाली हानि को रोक सकता है। बगीचों को सबसे अधिक हानि पाले व कठिन धूप से होती है।

पाला—हमारे यहाँ प्रायः दिसम्बर से फरवरी तक पाले का भय रहता है। अतएव इससे बचने के लिये निम्न तरीके काम में लाये जायँ:—

(१) पाला पड़ने का भय हो, तो शाम को सिंचाई की जाय।

(२) नवम्बर के अन्त में फूस की टट्टियाँ बनाकर पेड़ के तीन ओर लगा दें। पूर्व की ओर खुला रहने दिया जाय।

(३) पत्तियाँ तथा खर-पतवार इकट्ठा कर उसे जलाकर रात के समय धुआँ किया जाय।

तेज धूप—तेज धूप के साथ ही चलनेवाली लू पौधों को बड़ा नुकसान पहुँचाती है। इससे बचने के लिये कुछ तरीके नीचे दिये जाते हैं—

(१) छोटे पौधों के उत्तर व पश्चिम की ओर फूस की टट्टियाँ बनाकर लगा दें; यह ऊपर से ढकी होंगी। शेष भाग खुले रहने चाहिये।

(२) प्रति सप्ताह दो बार सिंचाई तथा ओठ आने पर गुड़ाई कर देना आवश्यक है और थालों में पत्ती तथा खर-पतवार बिछा दें जिससे नमी बनी रहे।

जंगली तनों से शाखें फूटना—चश्मा या पेवंद बँधे स्थान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के नीचे से यदि कोई शाख निकलती है, तो उसे तुरंत काट दें। पहले ३ साल तक पेड़ का २ फुट तना साफ रखें। इसके ऊपर से निकली हुई शाखों में ३-४ के अतिरिक्त शेष काट दें।

दीमक से बचाव—दीमक पौधों को बहुत ही हानि पहुँचाता है, इसलिए जैसे ही दीख पड़े, इसका विनाश कर डालन चाहिए। इससे पौधों की रक्षा के लिए पौधों के तनों पर तारकोल लगाना, हींग अथवा फिनाइल का पानी देना, तूतिया के घोल की सिंचाई, थालों की मिट्टी में महुआ अथवा नीम की खली मिलाना और हल्की भूमि में जल्दी-जल्दी सिंचाई करते रहना लाभदायक सिद्ध हुआ है। जिन स्थानों पर दीमक कायम हो वहाँ चार छटाँक क्रूड आयल इमलशन गढ़ा भरते समय चार टोकरी मिट्टी के साथ भली भाँति मिला कर गढ़े में डाल देना चाहिए। प्रत्येक थाले की मिट्टी में २ या ३ औंस पैराडिक्लोर बैन्जीन(Paradichlor-benzene) मिला देना और कार्बन-डाइ-सल्फाइड (Carbon-di-sulphide) की धूनी देनी चाहिए।

पेड़ों की छँटाई—उत्तम जाति तथा रोग-रहित रखने तथा अधिक फल या फूल उत्पन्न करने के उद्देश्य से ही पेड़ों की छँटाई की जाती है; किन्तु ऐसा बिना सावधानी न करना चाहिए। प्रायः सुन्दरता के लिए भी लोग पेड़ की छँटाई करते हैं। पेड़ों की छँटाई दो प्रकार की होती है:—(१) डालों की छँटाई और (२) जड़ों की छँटाई।

पेड़ों की छँटाई में बड़े ही अनुभव की आवश्यकता होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनजाने छँटाई करने से लाभ के स्थान पर हानि ही होती है।

डालों की छँटाई—कमजोर, रोगी, कीड़े लगी हुई अथवा सूखी हुई डालों की छँटाई कर देनी चाहिए। कुछ पेड़ों की शाखाएँ इतना बढ़ जाती हैं कि पेड़ों के मध्य का भाग अंधकार से भर जाता है और प्रकाश, धूप तथा हवा का प्रवेश रुक जाता है। इससे कीड़े और बीमारियाँ बढ़ती हैं। प्रायः कुछ पेड़ शीघ्र बढ़ कर दूसरे पेड़ों की बाढ़ रोक देते हैं। ऐसी परिस्थिति में छँटाई आवश्यक हो जाती है। नयी कोपलों वाली शाखों को कभी न छाँटना चाहिए। पेड़ को हानि पहुँचानेवाली अपेक्षाकृत पुरानी अथवा नीचे की ओर जाने वाली डालों की ही छँटाई करनी चाहिए। छँटाई करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि छँटाई केवल एक ही ओर न हो कि पेड़ देखने में भद्दा लगे। पेड़ों का फलना समाप्त होने के बाद दो माह तक सिंचाई कर दें। उसके बाद छँटाई करें। पानी देने से बड़ी तेजी से नयी-नयी शाखाएँ बढ़ना प्रारंभ कर देती हैं। छँटाई में पैने हथियार का ही उपयोग करना चाहिए।

जड़ों की छटाई—कुछ पेड़ बड़ी तेजी से बढ़ते और फैलते हैं; किन्तु वे प्रायः फलते ही नहीं और फलते भी हैं तो बहुत कम। ऐसे पेड़ों को फलशाली बनाने के उद्देश्य से जड़ों की छटाई की जाती है। जड़ों के अधिक फैलने से अन्य पौधों की खूराक मारी जाती है; साथ ही पेड़ अधिक जगह भी घेरता है। ठंढी जलवायुवाले (जैसे नासपाती, सेब, अंगूर आदि) की जड़ों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की छँटाई की अधिक आवश्यकता होती है, गर्म जलवायुवाले (आम, अमरूद,आदि) की कम। आम की जड़ों की छँटाई तो की ही नहीं जाती। छँटाई का सबसे उत्तम समय अक्तूबर से दिसम्बर तक रहता है। छँटाई का तरीका यह है कि पेड़ की शाखों के फैलाव के अनुसार लगभग पौन या एक गज नाली गहरी और इसकी आधी चौड़ी खोद ली जाती है। छोटे पौधों में यह नाप कम कर देनी चाहिये।

निकली हुई कुछ मिट्टी पेड़ के चारों ओर और कुछ बाहर फेंक दें। इतना करने पर छोटी-छोटी जड़ें तो खोदते समय ही कट जायँगी और शेष पैने चाकू से काट देनी चाहिए। इसमें यह ध्यान रहे कि अधिक मोटी जड़ें न कटने पावें। छँटाई का काम समाप्त कर, खाद मिलाकर, मिट्टी से जड़ें ढककर सिंचाई कर देनी चाहिए।

पुराने बगीचों का सुधार

हमारे गाँवों के पुराने बगीचों की दशा अत्यंत शोचनीय है। ८० प्रतिशत बागों से मालिक को फायदा नहीं होता। इन पेड़ों पर अधिक फल लाने के लिए निम्नलिखित उपाय करेंगे।

(१)पुराने बागों के पेड़ घने लगे होने के कारण पूरी-पूरी फैलने की जगह नहीं मिलती और लम्बे होते चले जाते हैं। इन बागों में हवा व धूप का प्रवेश भी कम होता है और इन पेड़ों पर फल कम लगते हैं। यदि बीच-बीच में से कुछ पेड़ निकाल लिये जायँ तो अधिक हवा, धूप व खूराक मिलने के कारण, पेड़ों पर अधिक फल लगेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) मई-जून के माह में बाग की ७–८ गहरी जुताई या गुड़ाई करेंगे और सितम्बर-अक्टूबर में पेड़ों के थाले बना कर उनमें गोबर की खाद व हड्डी का चूरा देंगे।

(३) फल आने के समय सिंचाई नहीं किया करेंगे।

(४) पतझाड़ वाले वृक्षों की यदि सालाना छँटाई न की जा रही हो तो आइन्दा से हर वर्ष छटाई करेंगे।

(५) बीमार व सूखी टहनियों को काट देंगे। यदि बड़ी डालों पर भी बीमारी लगी हो तो दवाई छिड़केंगे।

(६) फल आने के समय अवश्य पानी देंगे। बिना पानी पाये फल गिर जाते हैं या बढ़ते नहीं।

फलों का तोड़ना और उनकी बिक्री

एक चतुर बागबान का कार्य केवल अच्छी किस्म के फलों के उत्पादन से ही नहीं समाप्त हो जाता वरन् उसमें फलों की बिक्री की भी दक्षता होनी आवश्यक है, जिससे कि वह अधिक से अधिक लाभ उठा सके। हमारे देश में अधिकांश लोग अपनी आवश्यकता भर फल नहीं पाते; क्योंकि एक ओर उत्पादन की कमी है और दूसरी ओर वितरण में कुव्यवस्था। अतएव फलों के समुचित वितरण के लिए उनका अच्छी तरह उचित समय पर तोड़ना, बाहर भेजने योग्य फल छाँटना, उन्हें सुरक्षित रूप से बंद कर, बाहर भेजकर, थोक व फुटकर व्यापारियों के हाथ बेचना—इन सबका ज्ञान एक बागबान के लिये अनिवार्य है।

फलों का तोड़ना—यदि थोड़ी दूर की बाजार में फल भेजने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का विचार है, तो फल तोड़ने का समय और ढंग सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। कुछ फल ऐसे होते हैं कि जो पेड़ पर ही भली भाँति पक जाने पर तुरन्त खाने योग्य होते हैं और उन्हें पूर्णरूप से पक जाने पर बाजार भिजवाना बहुत कठिन है। इतनी देर में वे बिगड़ जायँगे और खाने योग्य नहीं रहेंगे। पेड़ पर ही पकने पर पक्षियों द्वारा भी हानि पहुंचती है, इसलिये उन्हें ऐसे समय (कड़ेपन में ही) तोड़ना चाहिए कि वे कुछ दिन रखने पर खराब न हों। संतरा आदि कुछ फल ऐसे भी हैं कि उन्हें पूर्ण रूप से पेड़ पर ही पकने पर तोड़ा जाय, तो कोई हानि नहीं होती। तथापि उन्हें अधपकी (गदर) दशा में ही तोड़कर बाजार में जल्दी भेजने पर अधिक मूल्य मिलता है। इसका यह तात्पर्य है कि वे पकने के केवल इतना पहले तोड़े जायँ कि उपभोक्ता के पास पहुंचने तक अच्छी दशा में रहें। बहुत पहले तोड़ने पर वे उतने स्वादिष्ट नहीं होते और बाद में उनकी बिक्री भी कम होती है।

फलों को इस ढंग से तोड़ना चाहिए कि उन्हें कोई क्षति न पहुँचे। इन्हें प्रायः हाथ से खींचकर, जिस डंठल में फल लगे हों, उसके सहित झोलीयुक्त हँसुली से तोड़ें; डंडे की सहायता से अथवा हिलाकर तोड़ना प्रायः उपयुक्त नहीं। हाथ से खींचकर तोड़ने में भी यह ध्यान रखना चाहिए कि अन्य फलों को कोई हानि न पहुँचे।

फलों की छँटाई—फलों के बाहर भेजने से पूर्व उनसे क्षत-विक्षत, सड़े-गले फल अलग कर देना आवश्यक है; क्योंकि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनके संपर्क से मार्ग में अच्छे फल भी खराब हो जाते हैं; ऐसे फल निकट ही बाजार में बेच देने चाहिए। अच्छे और बड़े फल अधिक मूल्य में बिकते हैं, इसलिए समान आकार व रंग-रूपवाले फलों को एक श्रेणी में छाँटकर, अलग-अलग कई श्रेणियों में बनाकर बेचना लाभदायक है। इनसे कच्चे और भद्दे फल छाँट कर एक अलग श्रेणी में कर दिये जायँ। सरकार ने इसको प्रोत्साहन देने के लिए '१६३७ का गार्डनिंग ऐण्ड मार्केटिंग ऐक्ट' पास कर, यह व्यवस्था कर दी है कि राजकीय कर्मचारियों को यह अधिकार है कि वे फलों की जाँच कर सकें और माल को यदि वे अच्छा समझें, तो भारत सरकार के मार्केटिंग सलाहकार की ओर से एगमार्क की छाप (माल पर प्रचारार्थ) डालने की आज्ञा लें। इसी उद्देश्य से भिन्न-भिन्न शहरों में उद्यान केन्द्र (गार्डनिंग स्टेशन) खोले गये हैं।

फलों की पैकिंग—मोटर, रेल अथवा अन्य किसी साधन से बाहर फल भेजने में सबसे बड़ी समस्या यह होती है कि उन्हें किस प्रकार सुरक्षित रूप से बंद कर बाहर भेजा जा सके। हमारे यहाँ फल प्रायः बाँस अथवा अरहर की झाबियों या टोकरियों में भरकर भेजे जाते हैं। इसमें दो डलियाँ लगती हैं, जिनमें से एक ढकन के काम आती है। इन टोकरियों में फल इतने सुरक्षित नहीं रहते कि मार्ग में रेल आदि में रखने, उठाने और धक्के लगने पर उन्हें कोई नुकसान न पहुँचे। यदि टोकरियों को ही काम में लाना है, तो उन्हें देवदार या चीड़ के चौकठों में बन्द

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर भेजना चाहिए। अंगूर, आड़ू और अन्जीर आदि नर्म फलों में तो यही रीति काम में लानी चाहिए। शेष के लिए चौकठे की पेंदी में पत्तियों की एक तह बिछा कर, एक तह फल की लगा दें। इसके बाद इसी क्रम से पत्तियों और फलों की तहें लगाते जायँ और जब बक्स भर जाय, तो फलों को पत्तों की मोटी तह से ढक दें। बक्स में छोटे छोटे छेद कर देने चाहिये, जिससे कि हवा पहुँचती रहे। आम, जामुन, लीची आदि को उन्हीं के हरे पत्तों में रखकर भेजना चाहिए।

फलों को पैक करने के पहले महीन कागजों में लपेट देना अच्छा रहता है। सेब आदि फल ऐसे ही भेजे जाते हैं। इस ढंग से स्वस्थ फल दूसरे सड़े व बीमार फलों के संपर्क से बचता है, उनमें गर्मी कम पैदा होती है, कागज उनकी नमी को सोखता रहता है, अतएव वे अधिक समय तक ठहरते हैं। वे देखने में सुन्दर लगते हैं और साथ ही कागज पर ट्रेडमार्क छपा लेने से उनका विज्ञापन भी सरलता से हो जाता है।

फलों का बाहर भेजना—फलों को प्रायः रेल और मोटर से बाहर भेजा जाता है। पूरे डिब्बे भर पैदावार न होने से अंत में फलों को अन्य पार्सलों के साथ भेजना पड़ता है। मार्ग में फलों के पार्सल अन्य पार्सलों से टकराते हैं और परिणाम यह होता है कि फलों को क्षति पहुँचती है मोटर-ठेलों से भेजने में बागबान को सरलता रहती है।

फलों का विक्रय—हमारे देश में प्रायः फलों के बाग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ठेकेदारों (यह प्रायः कुँजड़े होते हैं) के हाथ बेच दिये जाते हैं। वह मालिक से पूरी फसल का एक निश्चित मूल्य देकर फलों की बिक्री का ठेका ले लेते हैं। कभी-कभी यह फसल के अंत तक रुपया नहीं देते। इनका काम फलों को तोड़कर अधिक-से-अधिक मूल्य प्राप्त करना है। यह लोग न तो बाग की परवाह करते हैं और न पेड़ों की। फल तोड़ते समय इन्हें केवल अधिक से अधिक फल तोड़ने की धुन रहती है न कि पेड़ की रक्षा की।

छोटी-छोटी बाजारों में उत्पादक अथवा ठेकेदार स्वयं पेशेवर विक्रेताओं की सहायता से बेचते हैं और उसे थोड़ा-बहुत कमीशन दे देते हैं। अधिक माल होने पर अढ़तियों और दलालों के माध्यम से बिक्री करते हैं। उपरोक्त रीतियों से मालिक के पास पैदावार का बहुत कम मूल्य पहुंचता है।

उपरोक्त बुराई को दूर करने के लिये सन् १९३३ में उ० प्र० सरकार ने 'प्रांतीय फ्रूट डेवलपमेंट बोर्ड' की स्थापना की थी। पंजाब सरकार ने भी सहयोगी फल उत्पादक संघ की स्थापना कर ऐसा ही प्रयत्न किया था। इस प्रकार के सहयोगी संगठन, उत्पादकों और उपभोक्ताओं, दोनो को बहुत लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। हम इनकी चर्चा एक अलग अध्याय में करेंगे।

अमरूद

यह फल दस्तावर, क्षुधावर्धक और पेशाब को अधिक बढ़ानेवाला होता है। रक्तपित्त और वायु को शांत रखता है। वैसे यह भारी और देर में हजम होता है। अधिक बिक्री तथा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कम मूल्य के कारण यह बड़े महत्व का होता है। इसकी जन्म-भूमि दक्षिणी अमेरिका है। हमारे देश के प्रत्येक राज्य में यह बहुतायत से उत्पन्न होता है। इसकी कई जातियाँ हैं।

जातियाँ—भिन्न-भिन्न जातियों के फल के आकार, प्रकार एवं स्वाद के दृष्टिकोण से इसकी पाँच किस्में पायी जाती हैं--

(१) सफेद—चिकना छिलका, गोल आकार, सफेद गूदा एवं स्वाद में मीठा होता है। (२) चित्तीदार सफेदा—यह पहले के ही समान होता है। केवल छिलके पर लाल चित्तियाँ पड़ जाती हैं। (३) लम्बा (करेला)–आकार में लम्बा, सफेद गूदा तथा खुरदुरे छिलकेवाला होता है। स्वाद में मीठा होता है। (४) हफ्सी—इसका गूदा लाल होता है। आकार में गोल और चिकने छिलकेवाला होता है। (५) बेदाना–छोटे फल तथा कम बीजवाला होता है। फसल कम होती है। इलाहाबाद के सफेदा और करेला जाति के अमरूद बड़े स्वादिष्ट होते हैं। उत्तर प्रदेश में मिर्जापुर के आसपास होने वाले अमरूद भी बहुत मशहूर हैं।

जलवायु--अमरूद मैदानों में सब जगह होता है। पहाड़ी प्रदेशों में यह नहीं फलते। वैसे यह हर प्रकार की जलवायु में उत्पन्न होता है। गर्म और विशेषकर समशीतोष्ण प्रदेशों में इसकी फसल अच्छी होती है। अधिक पाला इसके लिये बहुत हानिकर होता है। उत्तर प्रदेश में यह बिना सिंचाई के भी होता है। पानी की अधिकता एवं कमी दोनो को ही बर्दाश्त करता है।

भूमि—अमरूद के लिये बलुआ दोमट भूमि सर्वोत्तम है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वैसे हल्की तथा भारी दोनों ही प्रकार की भूमि में होता है। जो भूमि सामान्यतया अन्य फलों की खेती के अयोग्य समझी जाती है, उनमें भी यह होता है। केवल पथरीली भूमि में यह नहीं होता।

पौधे तैयार करने की रीति—उन बीजों से, जो कि फरवरी अगस्त, सितम्बर में बोने पर, यदि ऋतु अनुकूल रही, तो तीन सप्ताह में जम आते हैं, पौधे तैयार किये जा सकते हैं। भेंट कलम से सबसे अच्छा पौधा तैयार होता है। इसे फरवरी से अगस्त तक किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त दाबा, गूँटी, चश्मा, कलम आदि से भी पौधे तैयार किये जा सकते हैं।

पौधे लगाने का समय तथा उसकी रीति—वर्षा का समय पौधे लगाने के लिये सर्वश्रेष्ठ होता है। वर्षा के प्रारम्भ या जाड़े के अन्त में लगभग दो साल की आयु के पौधे लगाना चाहिये। सामान्यतया पौधों का अन्तर १२ से १८ फीट तक रखा जाता है। अधिक से अधिक यह फासला २५ फीट तक रखा जा सकता है। गढ़े सामान्य नाप के ही हों।

खाद—यद्यपि इसमें अन्य रासायनिक खादों का भी प्रयोग किया जाता है, किन्तु गोबर की सड़ी हुई खाद सबसे अच्छी रहती है। मल की खाद कम्पोस्ट अथवा भेंड़-बकरी की खाद और अंडी की खली भी लाभदायक सिद्ध हुई है। लगाने के पूर्व गढ़ों में २५-३० सेर गोबर तथा लगभग २ सेर हड्डी का चूरा मिला कर भर देना चाहिये। फूल आने पर पौधों की जड़ें खोल कर सप्ताह भर तपने देना चाहिए। इसके बाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपरोक्त खादों का मिश्रण तैयार कर इन्हें पुनः ढक देना चाहिए। फल लगने तक प्रायः दो-तीन टोकरी खाद प्रति पौधा देनी चाहिए। फल आने पर मई मास में ३-४ सेर हड्डी का चूरा और मन सवा मन खाद प्रति एकड़ देना लाभदायक होता है। हरी खाद या अन्य खादों का प्रयोग करने से फिर खाद की कम ही आवश्यकता होती है।

जुताई, निराई तथा गुड़ाई—साधारणतया अमरूद की देख-रेख बहुत कम की जाती है। प्रायः लोग इसकी जुताई अथवा गुड़ाई को महत्व नहीं देते, किन्तु अन्य फलों के समान जुताई-गुड़ाई (कम-से-कम एक-एक बार) करने से लाभ होना निश्चित है। गुड़ाई, सिचाई के बाद ही की जाय।

सिचाई—पौधा लगाने के बाद प्रत्येक चौथे पाँचवें दिन आवश्यकतानुसार सिचाई करना आवश्यक है। महीने-डेढ़ महीने के बाद पंद्रहवें दिन तथा १ से ४ वर्ष तक एक या डेढ़ माह में एक बार सिचाई करते रहना चाहिए। वर्षा के बाद फसल पकने तक प्रति माह सिचाई करते रहना चाहिये।

छँटाई—पौधे की छोटी-छोटी शाखाएँ काट देने से फल अच्छे होते हैं। प्रारम्भ से ही नीचे शाखें छाँटते रहने से पौधे की लम्बाई अधिक हो जाती है। यह अधिक वर्षा वाले प्रदेशों में ठीक रहता है। छोटे पौधों को इस प्रकार बढ़ने देना चाहिये कि प्रत्येक धड़ पर ३-४ शाखायें और हर शाख पर तीन-चार उपशाखाओं तक काट-छाँट कर दी जाय। इससे फल अच्छे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होते हैं। पौधे के तने की चोटी के काट देने से नीचे की शाखों का अधिक विकास होता है। कम वर्षा वाले स्थानों में इसे किया जा सकता है। पुराने पौधों से फल न मिलने पर उनका तना भूमि से एक फीट की ऊँचाई से काट देना चाहिए। यदि फल अधिक लगें, तो बड़े फल लेने के लिए कुछ तोड़ लेने चाहिए।

फूल और फसल की तैयारी—चार वर्ष तक फूल तोड़ देने चाहिए। बीज पौधे ५ वर्ष और कलमी तीन-चार वर्ष में फल देने लगते हैं। इसका फूल साल में दो बार आता है—(१) फरवरी-मार्च में और (२) जून-जुलाई में। पहली फसल में फूल जुलाई से अक्तूबर तक और दूसरी में नवम्बर से फरवरी तक पक कर तैयार होता है। दूसरी फसल जाड़ों में तैयार होती है और इसके फल अधिक स्वादिष्ट होते हैं। जाड़े की फसल लेने के लिए फरवरी का फूल रोक देने से बरसात में अधिक फूल आता है। इसके लिए गर्मी में सिचाई रोक कर मई में जड़ों और शाखों की छँटाई-सफाई और जून में खाद दे कर सिचाई करनी चाहिए। पौधे से फल मिलने का समय पौधे की सेवा पर निर्भर करता है, तो भी ४ वर्ष से ३०-३५ वर्ष तक ठीक से देख-रेख करने पर बराबर फल प्राप्त किये जा सकते हैं। इलाहाबाद में एक पेड़ से लगभग १। से १॥ मन के करीब फल पाये जाते हैं और एक फल का वजन ६ औंस के लगभग होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विक्री—सस्ते और अल्प समय तक ही टिकाऊ रहने के कारण इसका चालान बहुत दूर तक नहीं होता। चालान घास के साथ बाँस की टोकरियों में भरकर होता है।

बीज तैयार करना—इसका अधिक पुराना बीज न बोना चाहिये। जाड़े में पके हुये फल से बीज निकालकर उन्हें भली भाँति धोकर तथा सुखाकर राख के साथ मिला लें और फिर नमी से रहित स्थान में रख देना चाहिये। इन्हें वर्षा के प्रारम्भ में लगा देना चाहिये।

अमरूद के शत्रु तथा रोग—अन्य फलों की अपेक्षा इसे कीड़ों और बीमारियों का कम भय रहता है। इसे एक तने में छेद करनेवाले कीड़े से बहुत हानि पहुँचती है। तारपीन का तेल छेदों में डालकर चिकनी मिट्टी से बन्द कर देने से उनसे बचा जा सकता है। आम के समान इसे भी सफेद मक्खी लगती है। माहू कोमल टहनियों पर लगती है। तम्बाकू का पानी छिड़कने से लाभ होता है। फंगस का असर होने पर एक ऐसा रोग हो जाता है, जिससे फल सड़ जाते हैं। प्रारम्भ से नीचे से पौधों की छँटाई करते रहने से यह कम होता है। फंगस की एक दूसरे प्रकार की बीमारी फैलने पर शाखों का वर्षा में सूखना प्रारंभ हो जाता है। यह छूत की बीमारी है। ऐसी शाखों को तुरंत अलग कर देना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनन्नास

अनन्नास की खेती बड़े महत्व की है। हमारे देश में आसाम, बंगाल, मालाबार के पश्चिमी छोर से लेकर गुजरात तक यह व्यापारिक दृष्टिकोण से बोया जाता है। मद्रास, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश के तराई प्रदेश में भी यह होता है। इसकी जन्म-भूमि ब्राजील मानी जाती है। यह पाचक, रुचिवर्धक, तृषा-नाशक, अम्ल-मधुर रस-विशिष्ट उत्तम फल है। पका हुआ फल अत्यंत सुगंधित होता है। उसके ऊपर का मोटा छिलका निकाल कर बीच का गूदा खाया जाता है। गर्भवती स्त्रियों के लिए इसका सेवन विशेष रूप से हानिकर बताया गया है।

जातियाँ—स्थान एवं गुणों की भिन्नता के अनुसार इसकी अनेक जातियाँ पायी जाती हैं। जान्सन ने ८०-९० जातियों के १२५ नाम दिये हैं। हमारे यहाँ पायी जाने वाली मुख्य किस्में निम्न हैं—

(१) देशी—यह छायादार स्थान में होती है और फल बड़ा किन्तु कम स्वादिष्ट होता है। (२) लंका (सीलोन)—इसका फल नारंगी के रंग का तथा बड़ा होता है। (३) ढाका—यह चिकने छिलके तथा सफेद आँख वाली जाति है। (४) सिलहट—इसका रंग पहले काला और पकने पर पीला पड़ जाता है। आकार में यह अपेक्षाकृत छोटा होता है। (५) क्वीन—यह दक्षिणी अफ्रीका और मलाया तथा अन्य इनके ही समान जल-वायु वाले स्थानों में होता है। इसकी एक जाति रिपले-क्वीन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
जावा तथा भारतवर्ष में बहुत उत्पन्न होती है। इसी प्रकार इसी वर्ग की भारत में होने वाली अन्य जातियों में लाल और हरे रिपले बहुत प्रसिद्ध हैं। कुइन नीले व हरे रंग की कांटेदार पत्तियों तथा पीले व अण्डाकार फल वाली जाति है। रिपले कुइन में फल कम आते हैं। (६) स्पेनी—पश्चिमी भारत में बहुत होती है। इसे क्यू और जाइन्ट क्यू के नामसे भी जाना जाता है। इसकी पत्तियाँ कांटेरहित होती हैं।

जलवायु—मध्यम अथवा समशीतोष्ण जलवायु इसके अनुकूल पड़ती है। वह स्थान, जहाँ का तापक्रम ६० से ९०डिग्री तक रहे, सर्वश्रेष्ठ रहता है। इसे धूप से बचाना चाहिये, किन्तु अधिक सघन छाया न हो जिससे कि इसे बिलकुल ही धूप न मिल सके। पानी की इसे अधिक आवश्यकता होती है। गर्म व खुश्क प्रदेशों में अधिक सिचाई, गुड़ाई तथा छाया में लगा कर तैयार किये जा सकते हैं। मैदानों के तरीदार वातावरण में यह अच्छा हो सकता है।

भूमि—बलुआ, दुमट भूमि सबसे अच्छी रहती है। पानी के निकास का ठीक प्रबन्ध होना आवश्यक है। अफ्रीका में भारी भूमि में उत्पन्न किया जाता है।

पौधे तैयार करने की रीति—अनन्नास के नये पौधे जमीन, फलों की डंडियों और फलों पर उगी हुई पुत्तियोंसे तैयार किये जाते हैं। ताजी एवं तन्दुरुस्त पुत्तियों को छाँटकर जड़ सहित पुराने पौधों से अलग कर, बिना नरसरी में तैयार किये हुये, सीधा बागों में लगा दिया जाता है। पौधों के बीच से निकलने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
वाली पुत्तियों को ही अधिकतर लगाया जाता है । बहुत मोटी पुत्तियाँ न चुननी चाहिये । प्रायः बागबान को अच्छी पुत्तियाँ आवश्यकता भर नहीं प्राप्त होतीं । ऐसी परिस्थिति में पुराने तने के आध इंच मोटे दो-तीन गाँठवाले गोल टुकड़े काटकर इन्हें पाँच-पाँच मिनट परमेगनेट आफ पोटाश में भिगोकर, नरसरी में लगा देना चाहिये । जब यह पौधे ६ से १२ इंच ऊँचे हो जायँ तो इन्हें होशियारी से बगीचे में लगा दें ।

पौधे लगाने का समय व रीति--पौधोंको जुलाई व अगस्त में लगाना चाहिये । अनन्नास को लगाने की कई रीतियाँ प्रचलित हैं, किन्तु दोहरी पंक्तियों में लगाना सबसे अच्छा ढंग है । प्रत्येक पाँच फुट के अन्तर पर दो-दो कतारें लगाना चाहिये। इन कतारों का अन्तर दो फीट और पौधे से पौधे की दूरी डेढ़ फीट रखनी चाहिये । पौधे ३-४ इंच की गहराई में लगाने चाहिये । पौधे के अन्दर मिट्टी न भरने पावे, नहीं तो कलियाँ खराब हो जाती हैं । भारतवर्ष में इसे प्रायः आम, कटहल अथवा नारियल के वृक्षों के मध्य लगाया जाता है । इसके पौधों की थोड़ी-थोड़ी संख्या प्रति वर्ष बढ़ानी चाहिये और हर तीसरी चौथी फसल लेने के बाद भूमि अवश्य बदल देनी चाहिये । यह लगाने के डेढ़ दो वर्ष बाद फलना शुरू होता है ।

खाद--अनन्नास के लिये सड़े हुये गोबर की खाद सब से अच्छी रहती है । जुताई के समय प्रति एकड़ ३०० मन गोबर की खाद में एक शतांश हड्डी का चूरा और उतनी ही राख मिला कर डालना चाहिये ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लगाने के बाद १ मन अमोनियम सल्फेट, २ मन सल्फेट आफ पोटाश और तीन मन सुपरफास्फेट प्रति एकड़ देना चाहिये। इनके अभाव में ४ मन नीम या अंडी की खली, ३ मन हड्डी की खाद का चूरा और ४ मन राख देनी चाहिये। खाद देने का सबसे अच्छा ढंग यह है कि इन सबको मिलाकर तीन बार में क्रमशः लगाने के डेढ़-दो माह बाद, ४ माह बाद और फूल आने के समय देना चाहिये। इसके लिये मछली की भी खाद दी जाती है।

जुताई—गर्मी के दिनों में तीन जुताई करना लाभदायक सिद्ध हुआ है। प्रत्येक जुताई के बाद हैरो का प्रयोग करना चाहिये।

सिचाई तथा गुड़ाई—हमारे देश में फरवरी से वर्षा के आरम्भ तक सिचाई की आवश्यकता पड़ती है। वर्षा कम होने पर सिचाई कुछ पहले ही प्रारम्भ कर देनी चाहिये। जबसे फल आने लगें तब से सिचाई अधिक करनी चाहिये। फरवरी में जड़ों के पास से मिट्टी हटाकर नई मिट्टी डाल देनी चाहिये और मध्य भाग की भूमि की निराई व गुड़ाई करते रहना चाहिये।

छँटाई—एक पेड़ में २ से अधिक पुत्तियाँ नहीं रहने देना चाहिये। इनकी अधिकता पौधे और फल के विकास को रोकती है, अतः समय-समय पर इन्हें काटकर अलग करते रहना चाहिये।

फूल और फसल की तैयारी—पौधा लगने के डेढ़ दो वर्ष बाद फल देता है। फूल फरवरी-मार्च में आते हैं। फल जुलाई और अगस्त में मिलने लगते हैं। फल में हल्का पीलापन आने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर तोड़ना चाहिये। पहली फसल में २ हजार, उसके बाद ४ वर्ष तक ४ हजार के लगभग फल मिलते हैं। इनका चालान टोकरियों में किया जाता है।

अनन्नास के शत्रु--इसकी खेती को सौभाग्य से हमारे देश में किसी भी अधिक हानिकारक बीमारी अथवा कीड़े का भय नहीं है।

आम

भारतवर्ष में आम बहुत प्राचीन काल से बोया जाता है और हमारे यहाँ का सर्वप्रिय फल है। यह बल-वीर्य-वर्द्धक, दस्तावर और शरीर के रंग को साफ करनेवाला होता है। दिल और दिमाग को भी ताकत पहुँचाता है, किन्तु देर में पचता है। यह रक्त शुद्ध करता और शुद्ध रक्त की वृद्धि करता है। विदेशों में इसकी बहुत खपत होती है। बीजू आम चूसकर और कलमी काटकर खाया जाता है। देशी आम के अमरस से तैयार किया हुआ अमावट बड़ा कीमती और स्वादिष्ट होता है। घी और शकर मिलाकर आम की बर्फी भी बनाई जाती है। कच्चे आम को भूनकर उसका पानी जीरा आदि डालकर तैयार किया जाता है। लू लगने पर बहुत फायदा करता है।

जातियाँ—आकार-प्रकार के अनुसार यह तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।

(१) चकैया या गोल (२)लम्बा (३)न लम्बा न गोल। मोटे रूप से इसे दो जातियों में बाँटा गया है—

(१) कलमी और (२)तुकमी, देशी या बीजू। फल पकने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के समय के अनुसार इसको तीन भागों में बाँटा जा सकता है; जिनमें भिन्न-भिन्न किस्में उत्पन्न होती हैं—

(१) जून—लंगड़ा, बनारसी लंगड़ा, मालदा, गोरखपुरी, बम्बइया हरा, बम्बइया पीला, लखनऊ का सफेदा, सफेदा नं० २ और एलफासो।

(२) जुलाई—मोहनभोग, गोपालभोग, मलिहाबादी सफेदा, हरदोई का लंगड़ा, दशहरी, गुलाबखास लाल (सेंदुरिया), खजरी (समरभिश्तचौसा)।

(३) अगस्त—भागलपुरी फजरी (भदइयाँ), फजरी गोला फजरी कलन, फजरी जाफरानी सफेदा नं० १, हाथीफूल और फकीरवाला। कलमी की उपरोक्त किस्मों के अतिरिक्त देशी आम में भी अनेक जातियाँ होती हैं, पर इनका अलग से लिखना कठिन है। इनका नामकरण भी एकसा नहीं है।

जलवायु—आम प्रायः सभी प्रकार की जलवायु में होता है; परन्तु इसके लिये तर एवं गर्म जलवायु सबसे अच्छी रहती के। फूल आने के समय पाला, वर्षा तथा बदली होने से इसकी फसल को बहुत हानि होती है। कठिन धूप तथा लू से भी इसको हानि होती है। अतः इससे भी बचाना आवश्यक है।

भूमि—बिलकुल चिकनी एवं बलुई तथा कँकरीली-पथरीली भूमि के अतिरिक्त प्रत्येक भूमि में उत्पन्न होता है। लोहे व चूने के कम-से-कम १० प्रतिशत अंश से युक्त भूमि इसके लिये अत्यंत अनुकूल पड़ती है। मिट्टी में गहराई तथा पानी का निकास अच्छा होना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौदा तैयार करने की रीति—देशी आम की ताजी गुठली बोकर देसी पौधा या स्टाक तैयार करते हैं। गुठली एक महीने से अधिक पुरानी न हो। कलम एक से दो वर्ष तक के पौधे पर ही करनी चाहिये। आम में अधिकतर इनारचिंग टंग ग्राफ्टिंग (कलम) ठीक रहती है। प्रायः कहीं-कहीं चश्मा (पैचबडिंग) में भी सफलता प्राप्त हो जाती है।*

पौदा लगाने का समय—साधारण नियम यह है कि पौधा उसी समय लगाना चाहिये, जब उसकी बाढ़ जोरों से हो रही हो। अतएव, मार्च अप्रैल और बरसात का समय सर्वोत्कृष्ट रहता है। अधिक वर्षावाले प्रदेशों में फरवरी अथवा अक्टूबर में लगाना चाहिये। भदर शीतकाल में कभी आम का पौधा न लगाना चाहिये।

पौदा लगाने की रीति—इसे पहले बताये हुये ढंग से गढ़े (तीन फुट लम्बे, चौड़े तथा गहरे) खोदकर तथा भरकर चौकोर तरीके से होने पर तीस-तीस फुट के अन्तर से बनी पंक्तियों में बोना चाहिये। पौधे से पौधे की दूरी भी ३० फुट हो। षट्कोणी रीति से बोने पर पंक्तियों का अन्तर २५ फुट कर देना चाहिये। इस प्रकार चौकोर रीति से ४८ तथा षटकोणी रीति से ५३ पौधे प्रति एकड़ बोये जा सकेंगे।

---

* Indian Farming, vol. 7, 1944 में पृष्ठ १२५ पर पूना के श्री गनेश रिवंड ने अपना अनुभव बताते हुये लिखा है कि चश्मे से ६० प्रतिशत सफलता होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाद—लगाते समय प्रति गढ़े में ५ टोकरी गोबर की सड़ी खाद, ४५ सेर हड्डी का चूरा, ३-४ टोकरी राख तथा लगभग ४-५ टोकरी अच्छी कमाई हुई मिट्टी में मिलाकर गढ़े में भली भाँति दबा-दबाकर भर दें, जिससे कि वर्षा में यह दबने न पावे।

लगाने के बाद तीन वर्ष तक खली और गोबर की सड़ी हुई खाद सबसे अच्छी रहती है। खली को कूटकर उसका घोल बनाने के पश्चात् ३-४ दिन बाद खाद के रूप में देना चाहिए। लगाने के बाद पहले साल प्रति पौधा १० सेर गोबर की खाद, ५ सेर राख, ढाई-तीन सेर हड्डी का चूरा अथवा सुपरफास्फेट देना चाहिए। इसके पश्चात् प्रतिवर्ष ५ सेर गोबर की सड़ी खाद बढ़ाते रहना चाहिए और अंत में इसकी मात्रा ५० सेर तक पहुँचा देनी चाहिए। इसी प्रकार प्रतिवर्ष अन्य खादों की मात्रा भी बढ़ा देनी चाहिए। हड्डी की खाद, आध सेर के हिसाब से, साढ़े सात या आठ सेर, राख १ सेर के हिसाब से १५ सेर बढ़ाकर देनी चाहिए। गोबर की खाद की अंशतः पूर्ति हरी खाद से की जा सकती है। उपर्युक्त मात्रा तक पहुँचने के बाद इसे और बढ़ाने की आवश्यकता नहीं रहती। इसके बाद इसी मात्रा में खाद देते रहना चाहिए।

खाद कम गहरी नालियों में पौधे के फैलाव के अनुसार दिया जाना चाहिए। पहिले तो यह नालियाँ पौधे के पास थाले के रूप में होंगी और बाद में बढ़कर पेड़ों के बीच लम्बी नालियों का रूप ले लेंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जुताई—प्रसिद्ध उद्यानशास्त्री श्री पी० के० सेन का मत है कि नियम से कम से कम वर्ष में एक बार जुताई करना नितांत आवश्यक है। यह जुताई मानसून के प्रारंभ में (अक्टूबर व नवम्बर में) होनी चाहिए।

सिंचाई तथा गुड़ाई—पौधा लगाने के बाद प्रत्येक चौथे-पाँचवें दिन आवश्यकतानुसार सिंचाई जरूरी है। महीने-डेढ़-महीने के बाद पन्द्रहवें दिन तथा १ वर्ष से ४ वर्ष तक एक-डेढ़ माह में एक बार और इसके बाद दस साल तक हर साल फूल आने के पूर्व दो बार सिंचाई कर देनी चाहिए। दस साल बाद २५ इंच वर्षा होने पर अधिक से अधिक सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। खाद देने के बाद सिंचाई आवश्यक है।

थालों की निराई-गुड़ाई आवश्यकतानुसार करते रहना चाहिए। घास-फूस न बढ़ने देना चाहिए।

छँटाई—साधारणतया आम को अधिक छँटाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। पौधों को प्रारंभ में ही काट-छाँटकर सुधार लेना चाहिए। वर्षा के अंत में पेड़ों की सूखी और रोग लगी हुई डालें किसी तेज औजार से बिना छाल छीले काटते रहना चाहिए। छँटाई का सबसे अच्छा समय मानसून के अंत का रहता है।

फूल और फल की तैयारी—कलम से तैयार पौधा ४–५ साल में फल देने लगता है। बीजू पौधे से प्रायः १० साल में फल मिलते हैं। कलमी आम ५० साल और बीजू प्रायः ८०–९०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सालतक अच्छी तरह फल देते रहते हैं। ४ साल तक कलमी के फूल तोड़ देना चाहिए। फूल हरसाल फरवरी-मार्च में आता है। बड़े पेड़ों में फुदकनेवाले कीड़े से बचने के लिए डी० डी०टी० का छिड़काव करने से लाभ होता है। कुछ आमों को छोड़कर प्रायः सभी आम दूसरे साल फलते हैं।

पहले बताई गई जातियों के अनुसार आम की फसलें जून-जुलाई और अगस्त में तैयार होती हैं। कुछ बारहमासी जातियाँ जाड़े में भी होती हैं। आम का फल बहुत सावधानी से तोड़ना चाहिये।

इसे टोकरियों में भेजा जा सकता है। कच्चे आम घास या पुवाल में रख कर पकाये जाते हैं।

बीजू पेड़ में १०-१० हजार तक फल देखे गये हैं। बीजू से कलमी आम कम होते हैं। यदि जलवायु ठीक हुई और फसल अच्छी रही तो ५०० से २००० तक फल एक पेड़ से निकलते हैं।

आम के शत्रु—आम को अनेक कीड़ों से हानि पहुँचती है। यहाँ इनका उल्लेख किया जायगा।

चूसने वाले कीड़े—सफेद और काले रंग के कीड़े इसकी पत्तियों एवं शाखों का रस चूस कर हानि पहुँचाते हैं। इनसे तम्बाकू का घोल छिड़क कर बचा जा सकता है। इसके अतिरिक्त १ पाव तूतिया, आध सेर बिरोजा और क्रियोजोट आधा तोला एक में मिला कर उबाल कर, मोटे-मोटे कपड़े पर लेप कर, तने पर बाँध देने से भी बचा जा सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आम की मक्खी—यह मक्खियाँ छोटी-छोटी टहनियों और फूलों का रस चूसती हैं और नयी कोपलों व फल के गूदे पर अण्डे देती हैं। इस प्रकार इनसे बड़ी हानि होती है। इससे बचने के लिए पेड़ के नीचे धुआँ कर देना लाभदायक होता है। सड़े हुए फलों को अलग कर देना चाहिए।

दीमक—इससे बचने के लिए खाद के साथ नीम की खली देनी चाहिए।

आम के वीविल—यह फल के अन्दर घुस कर उसे भीतर से सड़ाता है। ऐसी दशा में फलों को अलग कर देना चाहिए और किरोसिन के मिश्रण से पेड़ की धुलाई कर देनी चाहिए।

बाँदा—पेड़ में बाँदा लग कर जो पेड़ की खुराक को चूसता है, उसे तुरन्त तोड़ कर अलग कर देना चाहिए।

फंगस—इसका आक्रमण होने पर फूल काले हो कर सूख कर गिर जाते हैं। नयी शाखें सूख जाती हैं। बोर्डक्स मिक्स्चर के छिड़काव से लाभ होता है।

अनार

यह काश्मीर से मद्रास तक प्रायः सारे भारतवर्ष में होता है। रक्त को शुद्ध करता और नये रक्त की वृद्धि करता है। यह कब्ज को दूर करता है और तर होता है। कंधारी अनार, जिसका लाल दाना होता है, खाने में खटमिट्ठा होता है और विशेष बलदायक होता है। अनार का शर्बत बड़ा स्वादिष्ट होता है।

जातियाँ—स्थान आदि के भेद से इसकी कई किस्में होती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं—(१) देशी—इसमें रस कम होता है और बीज अधिक कड़ा होता है, (२)—काबुली या कंधारी—रस लाल व खटमिट्ठा होता है, (३) शामी—इसके बीज बहुत छोटे, ऊपर का भाग लाल और स्वाद मीठा होता है, (४) तुर्की—इसका दल बड़ा तथा सफेद होता है और (५) मिश्री—इसका ऊपरी छिलका हरा और स्वाद खट्टा होता है।

जलवायु—अनार को ठंडी और खुश्क जलवायु अनुकूल पड़ती है। हमारे देश में यद्यपि अनार सर्वत्र होता है किन्तु काबुली अनार का स्वाद उसमें नहीं आता।

भूमि—यह प्रत्येक किस्म की भूमि में उत्पन्न होता है किन्तु कछार भूमि विशेष अनुकूल पड़ती है। चूना अथवा रेही भूमि भी अच्छी रहती है। भूमि में पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए।

पौध तैयार करना—पौधे अधिकतर कलम से तैयार किये जाते हैं। यह कलमें १ वर्ष पुरानी प्रौढ़ शाख से ली जाती हैं। इनकी लम्बाई १० से १२ इंच तक होनी चाहिए। इन्हें वर्षा ऋतु में लगाना चाहिए, इनकी १ या २ गाँठें भूमि के बाहर निकली रहनी चाहिए। एक वर्ष बाद इन्हें उखाड़ कर बाग में लगा देना चाहिए। इसके अतिरिक्त बीज अथवा भेटकलम से भी पौधे तैयार किये जा सकते हैं, पर कलम से तैयार करने में अधिक सफलता प्राप्त होती है।

पौधे लगाना—पौधे ३×३×३ फीट के गढ़ों में १५ से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
२० फीट के अंतर पर लगाना चाहिए। पौधे लगाने का उपयुक्त समय जनवरी व फरवरी का है। कम वर्षा वाले प्रदेशों में बरसात में भी लगाये जा सकते हैं।

खाद—लगाते समय गढ़ों में गोबर की सड़ी हुई खाद के साथ सुर्खी व थोड़ा सा चूना देना चाहिए। गढ़ों में आधा मन गोबर की खाद, २ सेर हड्डी का चूरा और यदि आम्लदार मिट्टी हो तो उसमें १ सेर बुझाया हुआ चूना भर दें। बाद में प्रतिवर्ष दिसम्बर-जनवरी में पौधों की छँटाई समाप्त कर, पौधों की जड़ें खोल दी जायँ। इन्हें एक महीने तक खुला रख कर पुनः प्रति पौधा ८-१० सेर खाद गढ़ा के समान ही डाल कर ढक दिया जाय।

सिंचाई-गुड़ाई—गर्मी की ऋतु में सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। जनवरी से मई तक पाक्षिक सिंचाई करनी चाहिए और सिंचाई के बाद थालों की गुड़ाई कर देनी चाहिए। फलों के पकते समय पानी न देना चाहिए। नहीं तो सड़कर गिर पड़ते हैं।

छँटाई—फूल नयी टहनियों में ही आते हैं, अतएव फल लेने के बाद शाखों व टहनियों की छँटाई कर देनी चाहिए। दिसम्बर-जनवरी में जड़ों को खोलकर धूप में तपने देना और आवश्यकतानुसार छँटाई कर देनी चाहिए। पौधों की जड़ों पर प्रायः छोटे-छोटे पौधे उग आते हैं अतएव इन्हें काट डालना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फसल की तैयारी—पौधे रोपने के ४ वर्ष बाद फल आते हैं। इसमें फूल जनवरी जून और अक्टूबर में आता है और क्रमशः जून, नवम्बर, अप्रैल में तैयार होता है। इनमें से फल एक ही बार लेना चाहिए। बहुत से अनार पकने पर फट जाते हैं। कुछ हरे से लाल या सफेदी लिये हो जाते हैं। प्रति पेड़ ६०–७० अच्छे फल प्राप्त होते हैं। यह टोकरी, चटाई और क्रेट के बक्सों में भेजे जाते हैं।

अनार के शत्रु—एक प्रकार का कीड़ा फलों में घुसकर इन्हें नष्ट कर डालता है। फूल आने पर एक महीन मलमल की थैली उस पर बाँध दी जाय। बाँधते समय देख लेना चाहिए कि उसमें अंडे तो नहीं हैं। लेडआर्सिनेट का घोल छिड़ककर भी इनसे बचाया जा सकता है। इसे गिलहरियों से भी बड़ा नुकसान पहुँचता है।

अंजीर

अंजीर, गूलर, बरगद आदि एक ही जाति के पेड़ हैं। गूलर-बरगद आदि तो होते ही रहते हैं; पर अंजीर की खेती यत्रतत्र शौकिया ही होती है। उत्तरी अफ्रीका, दक्षिणी योरप और पश्चिमी एशिया में इसकी काश्त अधिक होती है। भारतवर्ष में पंजाब, उत्तरप्रदेश, बम्बई और बंगलोर आदि में भी यह होता है। शहरों के निकट इसकी खेती करके पर्याप्त लाभ उठाया जा सकता है। अंजीर के ताजे फलों को खाने के अलावा इसके सूखे फलों का सेवन दूध के साथ भी जाड़े में किया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
यह स्वास्थ्य के लिये उत्तम,हल्का, दस्तावर और खाँसी के लिये लाभप्रद होता है। इसका शरबत भी बनता है।

जातियाँ—इसकी दो किस्में होती हैं—(१) देशी और (२) विलायती। लखनऊ, बंगलौर,पूना और काबुल की देशी किस्में अधिक प्रसिद्ध हैं। हमारे देश में ब्लैकइस्चिका और ब्राउनटर्की विलायती किस्मों में से सरलता से हो जाती हैं।

जलवायु व भूमि--यह गर्म व खुश्क जलवायु चाहता है। अधिक वर्षा तथा पाले से हानि होती है। हमारे देश के प्रत्येक प्रदेश में थोड़ा-बहुत होता है; पर पंजाब और बम्बई में इसकी खेती अधिक होती है। इसके लिए चूना युक्त और कंकरीली एवं उपजाऊ भूमि अच्छी रहती है। भूमि में पानी के निकास के अच्छे प्रबंध की व्यवस्था होनी चाहिए।

पौधे तैयार करना—अंजीरके पौधे अधिकतर कलमों द्वारा तैयार किये जाते हैं। वैसे इन्हें दाब-कलम और डाली लगाकर दोनों ही प्रकार से तैयार किया जाता है। जनवरी व फरवरी में यह कलमें पुरानी लकड़ी से लेनी चाहिए। इनकी लम्बाई १ इंच और मोटाई आध से पौन इंच होनी चाहिए। पौधघर (नरसरी) में बोने से १ या १॥ वर्ष के उपरांत यह बगीचे लगाने योग्य हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त बरसात में गूँटी से और चश्मे अथवा भेंट-कलम से भी पौधे तैयार किये जाते हैं।*

---

* कलमों का चालान छोटे बक्सों में कोयले के चूर्ण में किया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौधे लगाना—पौधे लगाने का समय जाड़ तथा बरसात का है। पौधे ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में ११ से १५ फीट के अन्तर पर लगाने चाहिये। यह अन्तर पौधे के कद और छँटाई पर निर्भर करता है। इसे बड़े-बड़े पौधों के बीच भी लगाया जा सकता है।

खाद—इसके लिये मछली और गोबर की खाद सबसे अच्छी रहती है। लगाते समय गढ़ों में चूना भी दे देना चाहिये। प्रतिवर्ष मन-डेढ़-मन गोबर की सड़ी हुई खाद प्रति पौधे, पर्याप्त होती है।

सिंचाई--वर्षा के अन्त में पाक्षिक सिंचाई कर देनी चाहिये। फल आने और समाप्त होने तक साप्ताहिक सिंचाई करने से फल बड़े मिलते हैं।

ठंढे देशों में पत्ते अधिक निकल आते हैं। अतएव कुछ पत्ते तोड़ देना चाहिये। प्रतिवर्ष फल लेने के बाद पौधों की सुराही-नुमा छँटाई कर देनी चाहिये। इसके फल सदैव नयी टहनियों पर आते हैं। इसकी उपशाखायें इतनी ऊँची रखें कि पूरा पेड़ ६-७ फीट ऊँचा रहे।

फसल की तैयारी—यह नवम्बर-दिसम्बर में फूलता और फरवरी से जून तक फलता है। इसकी वर्ष में एक ही फसल लेनी चाहिये। बरसात में कभी-कभी मिलनेवाले फल अच्छे नहीं होते। इसका पौधा लगाने के प्रायः दो ढाई साल बाद फल आते हैं।

अंजीर सुखाना—बाहर से जो अंजीर आते हैं वे सुखाकर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
आते हैं। हमारे देश में इस दिशा में पूर्ण सफलता नहीं मिली है। ज्यों-ज्यों फल पकते जाते हैं, उन्हें चटाइयों पर सुखाकर दबा दिया जाता है। इन्हें तीन शतांश नमक के उबलते जल में उबालकर रखते हैं।

अंजीर के शत्रु—फंगस से होनेवाली बीमारियों से इसके फलों का सड़ना आरंभ हो जाता है। ऐसे फलों को तोड़कर अलग कर देना चाहिये। बोर्डेक्स मिक्स्चर का छिड़काव करना चाहिये। इसी प्रकार कभी कुछ शाखाओं की पत्तियों का सूखना आरम्भ हो जाता है। इन्हें भी तुरंत अलग कर देना चाहिये। गिरवी लगने पर पत्तियों पर लाल चित्तियाँ पड़ जाती हैं। इसमें भी बोर्डेक्स मिलाकर छिड़कना चाहिये। कभी-कभी शाखें स्थान स्थान पर फट जाती हैं। इन्हें भी काटकर अलग कर देना चाहिये। इसके अतिरिक्त प्रायः फलों का फटना आरम्भ हो जाता है। इसके लिये उन्नत किस्में ही बोनी चाहिये।

अखरोट

यह एक उत्तम मेवा है। अखरोट की खेती फारस, सीमाप्रांत और अफगानिस्तान में बहुत होती है। हमारे देश में कश्मीर और उत्तर प्रदेश में हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र में कहीं-कहीं इसकी खेती होती है। यह वीर्यवर्धक, कफकारक, भारी एवं गर्म होता है। इसमें ५०% तैल होता है। सूखे फलों को जाड़े में बड़े चाव से खाते हैं। हरे फलों का अचार बनता है।

भूमि व जलवायु—यह ठंढे प्रदेशों में होता है। बलुवा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दुमट भूमि इसकी खेती के लिये विशेषरूप से अनुकूल होती है।

पौधे तैयार करना—इसके बीज पहले बालू में लगाकर उन्हें ठंढे स्थान में रख दिया जाता है। यह ५-६ महीने में निकल आते हैं। जब यह निकल आवें तब एक फुट की दूरी पर पौधघर में लगाकर प्रत्येक दूसरे वर्ष स्थानांतरित करके चार पाँच साल की आयु का होने पर गढ़ों में लगाना चाहिये।

पौधे लगाना—इसके पौधे बरसात और जाड़े में लगाये जाते हैं। गढ़े २५-२५ फीट के अन्तर पर, तीन चार फीट व्यास के तीन गहरे गढ़े बनाने चाहिये।

खाद—गढ़ों में पौधे लगाने के पूर्व उनमें १ मन गोबर की सड़ी खाद और हड्डी का चूरा व पत्ती की खाद मिलाकर देना चाहिये। फिर बाद में भी हरसाल जड़ें खोल कर थोड़ी बहुत खाद दे दें।

सिंचाई और काटछांट—जब पत्ते झरने शुरू हो जायँ तब घनी और सूखी टहनियाँ छाँट दी जायँ। सिंचाई साधारण ही होती है।

फसल की तैयारी—इसके फल जैसे जैसे गिरते जाते हैं, सुखाकर रख लिये जाते हैं। इसके फल अगस्त से अक्टूबर तक मिलते रहते हैं। इसका चालान बोगों में जाता है।

आलूचा और आलूबुखारा

आलूचा और आलूबुखारा में केवल यह अंतर होता है कि आलूचा गोल और आलूबुखारा थोड़ा अंडाकर और अपेक्षाकृत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
अधिक फलता है। दार्जिलिंग के पर्वतों पर यत्रतत्र समतल भूभाग पर इसके पेड़ उगते और फलते हैं। इसके पके फल सुखाकर भी रखे जाते हैं। ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं किन्तु इनका उपयोग विशेषकर चटनी मुरब्बा आदि बनाने में होता है। इसके फल ठंढे, पाचक, और पित्तनाशक होते हैं। यह मैदानी भागों में भी होता है।

जातियाँ—छोटा और बड़ा आलूबुखारा, काला, लाल, और पीला आलूचा आदि देशी जातियाँ हैं। केल्से जापान सबसे जाति अच्छी है।

जलवायु व भूमि—यह आड़ू के समान ही जलवायु चाहती है। दूमट भूमि में यह अच्छा होता है। पानी के निकास का अच्छा प्रबंध अवश्य होना चाहिए।

पौधे तैयार करना, लगाना और सिंचाई आदि—इन सब चीजों में यह आड़ू के समान ही है। पेड़ के पत्ते गिर जाने पर नयी डालियों को हरसाल छाँट देना चाहिए। इसके फल छोटी-छोटी टहनियों पर आते हैं। इस छँटाई से नीचे नयी टहनियों की वृद्धि होती है। इसकी फसल आड़ू के साथ ही फूलती व तैयार होती है। पेड़ लगने के ४-५ साल में फल देते हैं।

आलूचा के शत्रु—आड़ू के समान फँगस व माई की बीमारियाँ इसे भी हानि पहुँचाती हैं। आड़ू के समान फलों का सड़ना भी आरंभ हो जाता है। बोर्डेक्स मिक्सचर छिड़कने से लाभ होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आड़ू, शफ़तालू

यह भारतवर्ष का मौलिक फल नहीं है। इसका फल खटमिट्ठा होता है और बीच में बादाम जैसा बीज होता है। शफतालू का छिलका आड़ू से अपेक्षाकृत चिकना होता है। पेशावर, क्वेटा आदि के आड़ू अधिक प्रसिद्ध हैं। पूसा, पंचगानी, बंगाल, सहारनपुर और आगरा आदि में यह भली भाँति होते हैं। यह पाचक गुणविशिष्ट कृमिनाशक पेट के दर्द को दूर करने वाला और स्वादिष्ट होता है।

जातियाँ—आड़ू की दो जातियाँ हैं—(१) देशी-आगरा की बड़ी, हरदोई और पेशावरी। (२) विलायती-इसकी जातियाँ ३ वर्गों में बाँटी जा सकती हैं—(अ) शीघ्र पकनेवाली—एलेक्जेंडर, (ब) मध्यम पकनेवाली—ड्यूक आफ यार्क और (स) देर में पकनेवाली—प्रिंस आफ वेल्स। जिन प्रदेशों में वर्षा पहले प्रारम्भ होती है, उनमें जल्द होने वाली जातियाँ बोनी चाहिये।

जलवायु व भूमि—यह कुछ ठंढी जलवायु चाहता है। गर्म हवा का यह अधिक सहन नहीं कर सकता। बलुवा दोमट भूमि में अच्छी उपज होती है, तथापि मटियार को छोड़कर प्रत्येक भूमि में, जिसमें कि पानी के निकास का प्रबंध हो, होता है।

पौधे तैयार करना व लगाना—पौधे बीज, भेंटकलम और चश्मे से तैयार किये जाते हैं। चश्मा आड़ू, आलूचा या बादाम के तने पर करते हैं। पौधे लगाने का समय दिसम्बर से जनवरी तक है। पौधे ३×३×३ फीट के व खाद दो फीटयुक्त गड्ढे में १५×१५ फीट के अन्तर पर लगाने चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाद—लगाते समय गढ़ों में सड़े हुए गोबर की ३०–४० सेर खाद, दो सेर हड्डी का चूरा और ४ सेर राख मिलाकर प्रति पौधा देनी चाहिए। बाद में १० सेर गोबर की सड़ी खाद, २ सेर हड्डी का चूरा और ४ सेर राख प्रति वर्ष प्रति पौधे को देते रहें। इसके देने के पूर्व नवम्बर-दिसम्बर में जड़ें खोलकर एक अठवारे तक तपने देना चाहिए।

सिंचाई-गुड़ाई—बसंत व गर्मी में पानी की अधिक आवश्यकता होती है। फलों की बाढ़ के समय अधिक और पकने के समय कम पानी देना चाहिये। कभी-कभी डालियाँ सूखने लग जाती हैं और गोंद जैसा द्रव निकलने लगता है। ऐसा होने पर सिंचाई न करें। दो वर्ष तक अधिक सिंचाई करनी पड़ती है।

कटाई-छँटाई—जड़ें खोलने के बाद शीघ्र ही सब सड़ी और कमजोर डालियाँ छाँट देनी चाहिए। प्रारंभिक २–३ वर्षों में पौधे को छाँटकर सुराहीनुमा बना देना चाहिए। फिर काट-छाँट ऐसी कर दें जिससे टहनियाँ ८–१० इंच ही लंबी रह जायँ।

फसल की तैयारी—यह फरवरी मार्च में फूलता और जुलाई व अगस्त में पकता है। पौधे तीसरे वर्ष फल देते हैं और १०–१२ वर्ष तक देते रहते हैं। पकने पर फल गुलाबी रंग के हो जाते हैं। एक पेड़ से ३०–३५ सेर फलों का औसत पड़ता है। इनका चालान टोकरियों में होता है।

इसके शत्रु—इसे माहू तथा फंगस की बीमारियों से बहुत हानि पहुँचती है। फंगस के असर से प्रायः शाख, पत्ती व फलों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर तमाम गोल धब्बे पड़ जाया करते हैं। कभी-कभी पत्तियाँ मोटी पड़कर सिकुड़ जाती हैं और बाद में उनका रंग लाल, पीला हो जाता है। इनसे बचने के लिए बोर्डेक्स मिक्चर का छिड़काव कर देना चाहिए। पानी की अधिकता होने से कभी शाखों का सूखना व गोंद निकलना आरम्भ हो जाता है। माहू का असर होने पर मिट्टी का तेल, इमलशन (यह मिट्टी के तेल साबुन व गर्म पानी को मिलाकर बनता है) छिड़कना चाहिए।

अंगूर

हमारे देश में अंगूर की खेती अत्यन्त प्राचीन काल से होती आ रही है। यह बल-वीर्यवर्धक एवं अति स्वादिष्ट होता है। यह खून को साफ करता और नये खून को पैदा करता है। हमारे यहाँ क्वेटा, काश्मीर, बम्बई और पंजाब में कुलू की घाटी के अंगूर प्रसिद्ध हैं। ताजा अंगूर खाया जाता है, सुखाकर मुनक्का और किशमिश तैयार किये जाते हैं और ताजे अंगूर से शराब तैयार की जाती है। छोटे बिना बीज वाले किस्मों को सुखाकर किशमिश और बड़े बीजदार किस्मों को सुखाकर मुनक्का तैयार किया जाता है।

जातियाँ—आकृति, स्थान, रंग, एवं रुचि के अनुसार इसकी अनेक जातियाँ हैं। परन्तु सामान्यतया इन्हें दो श्रेणियों में बाँटा जाता है (१) बीजू और (२) बिना बीज वाले। बिना बीज के अंगूर बहुधा हरे, मोतिया रंग के छोटे दाने वाले और गोल होते हैं। बीजू अंगूर हरे, मोतिया, काले व बैंगनी और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बड़े होते हैं। पंजाब, काश्मीर और बम्बई में बोई जाने वाली प्रमुख जातियाँ निम्न हैं:—

कंदहारी किशमिश (बिना बीज की छोटी किस्म), सहाबी (बिना बीज की किस्म है), फाकदी, भोकरी, काली, करधानी और जलालाबादी (खट्टी किस्म) (हुसेनी ह्वाइटपुर्तगाल) गुलाबदान। इनके अतिरिक्त मालगा, कांस्टेंशिया, बेदाना, मस्कतैल आदि विदेशी जातियाँ भी बोई जाने लगी हैं।

जलवायु—यह ठंडी और खुश्क जलवायु में होता है। तर जलवायुवाले प्रदेशों में पौधे बढ़ते तो अधिक हैं, किन्तु उनमें पैदावार कम होती है और स्वाद भी कम। तीव्र वायु के झोंके से फूल झड़ पड़ते हैं और टहनियों को क्षति पहुँचती है। ऐसे प्रदेशों (बलोचिस्तान आदि) में ७-८ फुट ऊँची मिट्टी की दीवार बना देते हैं।

भूमि—हल्की भूमि अनुकूल पड़ती है। दुमट में अंगूर होता है। पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध आवश्यक है। नासिक में साधारण काली मिट्टी, जिसमें कि ४-५ प्रतिशत चूना हो, काम में लाई जाती है। प्रत्येक दशा में खाद व गुड़ाई की अधिक व्यवस्था करनी चाहिए।

पौधे तैयार करना—चश्मा, कलम-दाबा व भेंट-कलम से इसके पौधे तैयार किये जाते हैं। आँखें या कलियाँ बालू में लगा कर तैयार की जाती हैं। इसके लिये एक वर्षीय हरी टहनी, जिसकी छाल का हरा रंग मिटकर भूरा हो गया हो, चुननी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहिये। डाली वर्षा में और गूँटी वर्षान्त में लगानी चाहिये। कलम से ढाई माह में पौधे तैयार हो जाते हैं।

पौधे लगाना--पौधे लगाने का समय जाड़े के अन्त में अथवा जनवरी या फरवरी में होता है। इसके लगाने के कई ढंग प्रचलित हैं। (१) बम्बई में १०×१० फीट के अन्तर पर बनी पंक्तियों में लगाकर लताओं को ढोलढाक (Erythrina) नामक जंगली पौधे पर चढ़ाते हैं। इस पौधे के बीज बोने पर पौधा ६ माह में काफी बढ़कर तैयार हो जाता है। इसे छतरीनुमा छाँटकर ऊपर बेल फैलायी जाती है। (२) जयपुर में पौधे को उपरोक्त अंतर पर लगाकर इस प्रकार काँट-छाँट देते हैं कि वह झाड़ीनुमा बन जाता है और भूमि पर फैलता रहता है। (३) तर उलवायु वाले स्थानों में १॥×१॥×१॥ इंच के गड्ढे बनाकर उनमें पौधे लगाते हैं और जालीदार टट्टियों में चढ़ाते हैं। उत्तर प्रदेश में यह ढंग अधिक प्रचलित है। क्वेटा में ५ फीट गहरी और २॥ इंच चौड़ी नालियों में डेढ़ या दो फीट के अन्तर पर दो पंक्तियों में पौधे लगाये जाते हैं और लताएँ बीच की भूमि में फैलती रहती हैं।

खाद—गर्मी में ४०० मन गोबर की खाद में ३ मन हड्डी का चूरा प्रति एकड़ के हिसाब से मिलाकर, खेत में डालकर, जुताई कर देनी चाहिये। अंगूर के लिये मछली की खाद भी बहुत अच्छी रहती है। लगाते समय दो टोकरी गोबर अथवा मलमूत्र की खाद और बाद में प्रतिवर्ष गोबर की एक टोकरी खाद,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चौथे वर्ष से फल-फूल बढ़ने के लिए चार सेर अंडी की खली, एक सेर हड्डी का चूरा और आध सेर सल्फेट आफ पोटाश, जनवरी के बाद, छँटाई के पश्चात् देनी चाहिए। मैगनीशियम सलफेट, अमोनियम सलफेट तथा आयरन सलफेट का मिश्रण तैयार कर प्रति पौधा एक पाव देने से फल मीठे तथा चमकीले हो जाते हैं।

सिंचाई, गुड़ाई—गर्म व खुश्क ऋतु में सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। पौधा लगाने के बाद एक, तथा वसन्त और गर्मी में पन्द्रहवें दिन सिचाई कर देनी चाहिए। जाड़े में दो सिंचाइयाँ पर्याप्त होती हैं। यह स्मरण रहे कि फूलने व पकने के समय सिंचाई करने से फूल झड़ जाते हैं और फलों में खटास पड़ जाती है। सिंचाई के बाद ओठ आने पर गुड़ाई कर देनी चाहिए।

छँटाई—बोआई के एक वर्ष बाद छँटाई की आवश्यकता पड़ती है। जब पौधा लग जाय तो बीच की फुनगी तोड़ दें ताकि नये कोपल फूट जायँ। लताओं की टहनियाँ छाँटकर केवल २ फीट रखनी चाहिए। इसकी लता में एक ही तना रखना चाहिए। इसे थूनी से १ फुट से अधिक ऊँचा न बढ़ने देना चाहिए। डालियों को तने के एक ही ओर न निकलने तथा पास-पास न उगने देना चाहिए। एक डाली में तीन-चार गुच्छे रखना चाहिए। जिस जगह फूल निकले हों, उससे १॥ फुट बाद फुनगी तोड़ देनी चाहिए। गर्मी में एक सप्ताह तक जड़ों को खोलकर बाद में खाद डालकर बन्द कर देना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फसल की तैयारी—फसल लगाने के तीन वर्ष बाद, लताएँ फलने लगती हैं और ४०–५० वर्ष तक भली भाँति फूलती रहती हैं। फूल आने पर ४–५ महीने में फल तैयार होते हैं। बम्बई में फूल सितम्बर-अक्टूबर में, उत्तर प्रदेश में मार्च-अप्रैल में, क्वेटा में अप्रैल-मई में आते हैं और क्रमशः जनवरी-फरवरी, जुलाई-अगस्त या सितम्बर में फल पैयार हो जाते हैं। बम्बई के प्रदेश में कुछ फूल मई में आते हैं और फल अगस्त में तैयार हो जाते हैं। इसकी पाँचवें साल अच्छी फसल होती है।

अंगूर का फल बड़ा मुलायम होता है, अतएव इसका चालान प्लाईवुड के बक्सों में ५--६ सेर महीन घास या सूखे पत्तों के साथ भरकर भेज देना चाहिये।

अंगूर के शत्रु—फंगस की बीमारी होने पर पत्ती पर भूरे रंग के धब्बे और नीचे की सतह पर रुई जैसी सफेदी आ जाती है। इसी प्रकार दूसरी बीमारी में तने, पत्ते व फली पर काले धब्बे पड़ जाते हैं। कभी-कभी फली पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं और फल सूखकर गिर पड़ते हैं। १० प्रतिशत गंधक के तेजाब का घोल बना कर छिड़काव कर बाद में बोर्डेक्स के मिश्रण का छिड़काव कर, इनसे बचा जा सकता है। तितली व कीड़ा नयी पत्ती को खाकर हानि पहुँचाता है। इन्हें चुनकर मार डालना चाहिये। अंगूर को पाले से बड़ी हानि पहुँचती है। छोटे पत्तों के बचाव के लिये उन पर घास की टट्टी, पत्तों की छाया या चटाई कर देनी चाहिये। बड़े पेड़ों की सुरक्षा, सिंचाई, धुवाँ या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गर्मी की जा सकती है। जिस दिन पाले की संभावना हो उस दिन सिंचाई कर दें और बगीचे के चारों ओर धुवाँ कर दें।

आँवला

हमारे देश में आँवला प्रायः जंगलों में पाया जाता है। कहीं-कहीं यह बगीचों में भी लगाया जाता है। यह फल देर में पकता है। कफ को दूर करता, मस्तिष्क की शक्ति और नेत्रों के प्रकाश को बढ़ाता है। वीर्यवर्धक और खूनी बवासीर को लाभ पहुँचाता है। विटामिन 'सी' की मात्रा सर्वाधिक होती है।

जातियाँ—छोटे-बड़े के भेद से आँवले प्रायः दो प्रकार के देखने में आते हैं। छोटी जाति का आँवला अचार, आयुर्वेदिक दवा-दारू तथा तैल बनाने, और बड़ा मुरब्बे के काम में लाया जाता है।

जलवायु व भूमि—यह भारतवर्ष में सभी जगह होता है, किन्तु हल्की भूमि अधिक अनुकूल है।

पौधा तैयार करने की रीति—इसके पौधे साधारणतया बीज से तैयार किये जाते हैं; किंतु बडिंग और कलम करके भी तैयार करना अच्छा रहता है। पके आँवले के बीज बरसात में बोये जाते हैं और एक साल बाद पौधा स्थायी स्थान पर लगा दिया जाता है।

पौधा लगाने का समय व रीति—इसे वर्षा अथवा बसंत ऋतु में पंक्तियों में अथवा बगीचे के चारों ओर आठ गज के अंतर से लगाना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाद, सिंचाई व गुड़ाई आदि—पौधा लगाते समय और उसके बाद थोड़ी गोबर की खाद देते रहने और फूलते व फलते समय सिंचाई व गुड़ाई की जरूरत है।

इमली

इमली भी हमारे यहाँ जंगली रूप में पायी जाती है। बाग में इसके प्रायः एक-आध पेड़ रोप दिये जाते हैं। इसका फल खट्टा होता है। यह दस्तावर और प्यास को दूर करनेवाली होती है। हैजे के रोगियों को लाभ पहुँचाती है; किन्तु इसका अधिक प्रयोग प्रमेह उत्पन्न करता है। इमली का प्रयोग मद्रास में बहुत होता है।

भूमि व जलवायु—यह गर्म जलवायु में अधिक होती है। मद्रास व बंगाल में इसकी खेती अधिक की जाती है। यह प्रायः प्रत्येक भूमि में उत्पन्न होती है।

पौधे तैयार करना व सिंचाई आदि—इसके पौधे अधिकतर बीज से तैयार किये जाते हैं। यदि कोई अच्छी मीठी इमली हो तो उसका पौधा गूँटी से भी तैयार किया जा सकता है। एक साल में पौधे लगाने योग्य हो जाते हैं। पहले कुछ साल, गर्मी में सिंचाई कर देना चाहिये। इसके लिए गोबर की खाद अच्छी होती है।

यह गर्मी में फूलती, जाड़े में फलती और गर्मी में पककर तैयार होती है। लगाने के १०–१२ साल बाद इमली का पेड़ फलने लगता है। एक पेड़ से ५–६ मन इमली मिल जाती है। बीमारियों व कीड़ों का इसे डर नहीं रहता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करौंदा

करौंदा अम्लरसयुक्त पाचक होता है। इसकी ६-७ हाथ ऊँची काँटेदार घनी झाड़ियाँ होती हैं। अतएव इसे बाग के चारों ओर रक्षार्थ भी लगाया जा सकता है।

जातियाँ—करौंदे दो प्रकार के होते हैं—(१) देशी—यह छोटे आकार का अधिक लालिमायुक्त होता है और (२) चीनिया यह बड़े आकार का सफेद और ऊपर के भाग में लाल लकीरों वाला होता है।

जलवायु व भूमि—गर्म व तर जलवायु वाले प्रदेशों (पूर्वी भारत विशेषकर बंगाल) में प्रत्येक भूमि में होता है।

पौधे तैयार करना व लगाना—बीज वर्षा में बोकर दूसरी बरसात या जाड़े में २॥×२॥×२॥ फीट के गढ़ों में १०-१५ फीट के अंतर से लगाना चाहिये।

फसल की तैयारी—करौंदा फरवरी में फूलता और अगस्त-सितम्बर में फल देता है। यह लगाने के ३-४ वर्षों में फलता है। १ पौधे से लगभग २०-२५ सेर फल मिलते हैं।

कटहल

कटहल का जन्म-स्थान भारतवर्ष ही है। कच्चे कटहल तरकारी के काम आते और पके कटहल के कोये खाये जाते हैं। यह कब्ज और वायु को बढ़ाता और दाह उत्पन्न करता है। साथ ही बलवीर्य-वर्धक और पित्त को शान्त करने वाला है।

जातियाँ—इसकी मुख्य दो जातियाँ हैं—(१) खुजा और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) गीला। पहले का फल सख्त व बड़ा, छिल्का हरा व चिकना तथा छोटे कोये वाला होता है। दूसरा छोटे फल, कम गूदा, खुरदुरे छिलके और बड़े कोये वाला होता है।

जलवायु—यह सम शीतोष्ण, गर्म व तर जलवायु में होता है। सिचाई का प्रबन्ध होने पर कम वर्षा वाले प्रदेशों में भी होता है।

भूमि—उपजाऊ दुमट व हलकी दुमट भूमि गहरी होनी चाहिये।

पौधे तैयार करने की रीति—भारतवर्ष तथा अन्य देशों में साधारणतया कटहल बीज से तैयार होता है। प्रायः लोग इसके बीज नरसरी में न बोकर बगीचे में स्थायी स्थान पर लगाते हैं। इसका ढंग यह है कि बगीचे में पेड़ लगाने के स्थान पर एक गढ़े में ४-५ बीज बोकर अन्त में केवल एक स्वस्थ पौधा रखते हैं। कुछ पुराने पेड़ों के तनों और जड़ों में भी फूल लगते हैं। ऐसे फल बड़े स्वादिष्ट होते हैं। जाड़े में फल लगने पर फल के आस-पास की भूमि फट जाती है और फल दिखाई पड़ने लगते हैं। ऐसे पौधे तैयार करने के लिये समूचे फल अथवा गूदे के सहित बीज को खादयुक्त गढ़ों में बो देते हैं। फिर तीन चार फीट लम्बे बाँस को बीच से चीर कर खोखला कर देते हैं और दोनों टुकड़ों को जोड़कर गढ़े में लगा देते हैं। जब कटहल का कोमल पौधा बाँस से होकर बाहर दिखाई पड़ता है तब टुकड़ों को हटाकर पौधे के तने को इस प्रकार मोड़कर भूमि में दबा देते हैं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
कि केवल चोटी ही दिखाई पड़े। कटहल के पौधे दाबा और कलम से भी तैयार किये जाते हैं।

पौधे लगाना—वर्षा का एक पानी गिरने के बाद बीजों को फल से निकाल कर तुरन्त ही बो देना चाहिये और पौधों को लगा देना चाहिये। इसे ४×४×४ फीट के गढ़ों में ३० फुट के अन्तर से लगाते हैं।

खाद—लगाते समय खादयुक्त गढ़ों में प्रति गड्ढे ढाई सेर के हिसाब से हड्डी का चूरा भी मिला देना चाहिये। बाद में हरसाल ४ टोकरी सड़ी हुई गोबर की खाद देते रहना चाहिये।

सिचाई, गुड़ाई—ऐसे स्थानों को छोड़कर जहाँ वर्ष भर वर्षा होती है, जाड़े तथा गर्मी में हल्की सिचाई व गुड़ाई करते रहना चाहिये।

फसल की तैयारी—पौधा लगाने के प्रायः आठवें वर्ष से फल लगने प्रारम्भ होते हैं। फल पहले पतली डाली में आना आरम्भ होता है। और बाद में मोटी शाखों और तने में भी लगते हैं। फल तैयार होने में ३-४ महीने के लगभग लगते हैं और मार्च से सितम्बर तक मिलते रहते हैं। कुछ ऐसे भी पौधे होते हैं जिनमें फल बारहों मास मिलते रहते हैं। कटहल के फल मन-मन भर के देखे गये हैं। एक पेड़ में ५० से ७५ तक फल मिलते हैं। आर्थिक दृष्टि से यह बहुत लाभदायक है।

कटहल के शत्रु—पानी का प्रबन्ध ठीक न होने पर कभी पूरा पौधा और कभी कुछ शाखें सूखने लगती हैं और फल कम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आते हैं। आम के समान तने में छेद करने वाला कीड़ा भी प्रायः हानि पहुँचाता है। ऐसा होने पर छेदों में तारपीन या कोलतार छेदों में डालकर चिकनी मिट्टी से बन्द कर देना चाहिये।

कमरख

हमारे देश के अधिकांश मैदानी भाग में कमरख होती है। इसका पेड़ ३० फीट तक ऊँचा व फल खटमिट्ठा होता है। लोग शकर के साथ इसका शरबत और मुरब्बा आदि बनाते हैं।

जातियाँ—कमरख दो प्रकार की होती है—(१) देशी और (२) चीनी। दोनों में अन्तर केवल यह होता है कि चीनी के फल देशी से अपेक्षाकृत कुछ छोटे होते हैं। देशी खट्टी और चीनी कुछ मीठी होती है।

जलवायु व भूमि—हमारे देश में पहाड़ों को छोड़ कर सर्वत्र होता है। यह मध्यम गर्म जलवायु का फल है और प्रत्येक किस्म की भूमि में होता है।

पौध तैयार करना व लगाना—देशी कमरख बीज से और भेटकलम या चश्मे द्वारा तैयार किया जाता है। इसका पौधा फरवरी या बरसात में ३×३×३ फीट के गढ़ों में २० फीट के अन्तर से पंक्तियों में लगाते हैं। लगाने के पूर्व गढ़ों में आधा मन प्रति गढ़े के हिसाब से गोबर की खाद और हड्डी का चूरा मिला कर भर दें। थोड़ी-बहुत हड्डी मिश्रित गोबर की खाद हरसाल देते रहना चाहिए। वर्षा के बाद पानी देना चाहिए। इसमें छँटाई जड़ों में फल लेने के बाद की जाती है। अधिक छँटाई न करनी चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फसल की तैयारी--हमारे देश में यह जून, सितम्बर और फरवरी में आता है और क्रमशः सितम्बर, जनवरी व जून से फल मिलते हैं।

कैथा

कैथा जंगली रूप में होता है। इसे बगीचे की रक्षा-पंक्ति में उगाना चाहिये। इसके फल से बड़ी सुन्दर चटनी बनती है।

भूमि व जलवायु—कैथा हमारे देश के अधिकांश प्रदेशों में प्रत्येक भूमि में होता है।

पौधे तैयार करना—इसके पौधे अधिकांश में बीज से ही, किन्तु कलम और दाबे से भी सफलता मिलती है। पौधे लगाने के ८-१० साल बाद फल लगते हैं।

खाद इत्यादि—इसे बहुत कम देख-रेख की आवश्यकता होती है। प्रतिवर्ष थोड़ी छँटाई अवश्य कर देना चाहिए।

केला

केले की गणना संसार के सर्वश्रेष्ठ फलों में होती है। यह रक्तपित्त, पेचिश आदि रोगों में लाभदायक है और रुचिकर भी होता है। यह वीर्यवर्धक किन्तु भारी होता है और इसमें लोह तथा अनेक विटामिन होते हैं। इसकी तरकारी भी बनती है।

जातियाँ—पौधे की ऊँचाई के अनुसार इसकी दो जातियाँ होती हैं—(१) ऊँचे पौधे और (२) नाटे पौधे। फलों के अनुसार भी इसकी कई किस्में होती हैं—(१) बंगाल व बिहार की कस्में—चम्पा, चीनी चम्पा, बर्दवान, हजारा, मोहनभोग और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) दक्षिणी भारत की किस्में—हरी छाल, लाल केला, सफेद व लाल एलची, सौनकेला और बसरई। मालभोग, चीनी, चम्पा, सौनकेला, राजेला, रसवाल केले की उत्तम जातियाँ मानी जाती हैं।

जलवायु-भूमि—केले के लिए नम तथा गर्म जलवायु अनुकूल पड़ती है। ४० इंच से अधिक वर्षा वाले स्थानों में यह अधिक होता है। जाड़े में इसे पाले से बचाना अत्यन्त आवश्यक है। गर्मियों में इसे गर्म हवाओं से भी हानि पहुँचती है। ऐसी ऋतु में इसे पानी अधिक देना चाहिए। हमारे देश में बंगाल, मद्रास, और बंबई की जलवायु में यह सबसे अधिक होता है। दूमट या मटियार भूमि सर्वश्रेष्ठ रहती है। इसके लिए भारी जमीन उत्तम मानी जाती है। यह नदी और तालाब के किनारे सबसे अच्छा होता है।

पौध तैयार करने की रीति—इसके नये पौधे इसकी जड़ के पास उगी हुई पुत्तियों द्वारा तैयार किये जाते हैं। इन्हें जड़ सहित उखाड़ कर लगा दिया जाता है। यह दो किस्म की होती हैं—(१) चौड़ी पत्ती वाली (२) सँकरी पत्ती वाली। सँकरी पत्ती वाली पुत्तियों के पौधे मजबूत होते और फल भी अधिक मिलते हैं। उखाड़ते समय पुत्तियाँ ४ फुट की होनी चाहिए। वे ऐसे पेड़ की न हों, जिसमें तब तक फल ही न आये हों। एक पेड़ के पास तीन-चार से अधिक पुत्तियाँ न उगने देना चाहिए।

पौधे लगाना नये पौधे लगाने के लिए वर्षा की ऋतु

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपयुक्त है। इसे २ फीट गहरी और डेढ़ फीट चौड़ी नालियों में अथवा २×२×२ फीट के गड़े बना कर पंक्तियों में लगाना चाहिए। एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति का और एक पौधे से दूसरे पौधे का अन्तर १० फीट रखना चाहिए। छोटी किस्में ५×५ फीट के अन्तर से लगाना चाहिए।

खाद—इसे खाद की अधिक आवश्यकता रहती है। पौधा लगाते समय गढ़ों में आधा मन गोबर की खाद, लकड़ी का बुरादा दस सेर, अण्डी की खली १ सेर अथवा १० सेर कंपोस्ट देनी चाहिए। लगाने के बाद पहले, दूसरे और तीसरे महीने में तीन बार दो सेर अण्डी की खली, अमोनियम सल्फेट आधा सेर, सल्फेट आफ पोटाश डेढ़ पाव, सुपर फास्फेट सात छटाँक प्रति पौधा देना चाहिये। इसके बजाय २० सेर पत्ती की खाद, १० सेर राख, १० सेर कम्पोस्ट अथवा १ सेर अण्डी की खली उसी क्रम से तीन माह में प्रति पौधा दी जा सकती है।

जुताई, सिंचाई तथा गुड़ाई—साल में एक या दो जुताई पर्याप्त हैं। प्रति सप्ताह सिंचाई के बाद गुड़ाई आवश्यक है।

छँटाई—पौधे में तीन कल्ले रखना चाहिये। एक तो पूरी बाढ़वाला जो फल देगा, दूसरा लगभग चार फीट का और तीसरा नवीन कल्ला। शेष को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिये, अन्यथा पौधे कमजोर पड़ जाते हैं। फल लेने के बाद पौधे को नीचे से काट देना चाहिये क्योंकि उसमें दुबारा फल नहीं मिलेंगे। नये कल्ले निरन्तर निकलते रहते हैं; उनमें एक आध अगली फसल के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
लिये रखकर तीसरे महीने छँटाई कर देनी चाहिये। जब फल के गुच्छे बन जायँ तो बढती हुई फूलवाली डंडी को तोड़ देना चाहिये। इससे फल उम्दा और बड़े होंगे।

फल और फसल की तैयारी—पौधे लगाने के लगभग सालभर के अन्दर फल आ जाता है और ४ महीने में फल प्रायः पककर तैयार हो जाते हैं। फलों की गौद को थूनी गाड़कर सहारा दे देना चाहिये। फल के पूरा बढ़ जाने पर कच्ची ही गौद सहित तोड़ लेना चाहिये और बाहर पकाना चाहिये। इससे मिठास अधिक आ जाती है। पकाने के निम्न तरीके हैं--

(१)केले के गौद को चूने से पोतकर अंधेरे में लटका दें। (२) अंडी की पत्तियों में गौद को रखकर। (३) बड़े घड़ों में अथवा भूमि खोदकर फलों के गुच्छों को उनमें रखकर ऊपर धुआँ पहुँचावें।

कच्चा फल काफी समय तक रखा अथवा दूर तक पहुंचाया जा सकता है। तोड़ते समय यदि धड़ के कटे हुये भाग पर मोम लगा दिया जाय तो फल अधिक समय तक बने रहते हैं। न तो वे काले पड़ते हैं और न गिरते ही हैं। इसकी एक गौद से लगभग १०० फली मिलती हैं। हजारा आदि तरकारीवाली जातियों से ५०० तक फलियाँ मिल जाती हैं।

केले के शत्रु--प्रायः इसके पौधों का सड़ना प्रारम्भ हो जाता है और बीमार पौधों में फल नहीं लगते। इस बीमारी को पनामा डिजीज कहते हैं। स्टेमबोरर, जो एक काली लूँडीदार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीटिल होती है, इसके तने में सूराख कर देती है। फलस्वरूप सड़न फैल जाती है और पौधे निर्बल होकर गिर जाते हैं। फ्रूट स्टाकराट का आक्रमण होने पर तने पर काले धब्बे पड़ जाते हैं और सड़ना आरंभ हो जाता है। इसका प्रारंभ कच्चे और पके हुए फलों पर होता है। उपरोक्त सभी प्रकार के पौधों को काटकर जला देना चाहिए। ब्लेक फ्रूटराट आक्रमण होने पर कच्चे और पक्के फलों का सड़ना प्रारंभ हो जाता है। अमोनियम कापर कार्बोनेट के घोल के हलके छिड़काव से इसे बचाया जा सकता है।

काजू

काजू के पके हुए फल खाये जाते हैं। इससे एक प्रकार की शराब भी बनती है। यह मालाबार, गोमांतक, कर्नाटक, बर्मा, बम्बई व मद्रास के कुछ भागों में और कोचिन में अधिक पैदा होता है।

भूमि व जलवायु--यह ठंढी जलवायु में होता है। पहाड़ी बलुवा व समुद्रतट की रेतीली भूमि में जहाँ पानी में खारापन हो।

पौधे तैयार करना व लगाना—वर्षा ऋतु में गमलों या क्यारियों में बीज बोया जाता है। ६ इंच का पौधा स्थायी स्थान पर २० फीट के अन्तर पर ठीक है।

खाद व सिंचाई आदि—गोबर व राख की खाद दें। पर्याप्त बड़ा होने तक पौधे को प्रति सप्ताह और बड़ा होने पर पंद्रहवें दिन सींचना चाहिये। यह जाड़े में फूलता है। मेवाओं में यह अति स्वादिष्ट होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खिन्नी

खिन्नी के पेड़ बहुत बड़े होते हैं। पहाड़ी स्थानों में इसके पेड़ नहीं होते। कहीं-कहीं इसकी खेती व्यावसायिक दृष्टि से होती तो है किन्तु इसके अधिकाधिक प्रचार की आवश्यकता है।

जलवायु व भूमि—हमारे देश में पहाड़ी स्थानों को छोड़कर सर्वत्र होती है। रेतीली अथवा हल्की दूमट भूमि सबसे अच्छी रहती है।

पौध तैयार करना व लगाना—अधिकतर इसके पके हुए फलों के ताजे पुष्ट बीज वर्षा में बोकर पेड़ उगाये जाते हैं। बीज १ महीने में अंकुरित होने पर स्थानान्तरित कर एक वर्ष तक पौधघर में बढ़ने देना चाहिए। इसके बाद ३॥×३॥×३॥ फीट के गढ़ों में २० फीट के अंतर से लगाते हैं। पौधा जबतक मजबूती से जम न जाय, पानी देते रहना चाहिये।

फसल की तैयारी—फूल नवम्बर व दिसम्बर में आता है और फल मई और जून में तैयार होता है। पोधा लगाने के १०–१२ वर्ष बाद फल देता है।

खजूर और ताड़खजूर

भारतवर्ष में खजूर की खेती विधिवत नहीं होती। रेगिस्तानों में होनेवाले अरब के खजूर खाने में अत्यंत स्वादिष्ट होते हैं। ताड़ के कच्चे फल का गूदा जिसे 'खाजा' कहते हैं, कुछ लोग खाते हैं। हमारे देश में खजूर व ताड़ का गुड़ और इनसे मिलने वाला 'नीरा' (वृक्ष का ताजा रस) लोगों के लिए हितकर होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मद्रास में ताड़ से मिश्री भी तैयार की जाती है। पत्तों से पंखे, छतरी, चटाई, टोपी, बास्केट, झाड़ू आदि तैयार होते हैं। पेड़ ७०-८० से १०० फीट तक ऊँचे होते हैं।

जातियाँ—फलों की दृष्टि से बसरा, अरब और मेसोपाटामिया की खजूर अधिक स्वादिष्ट होती है। बेक ताड़, भटेला आदि कुछ प्रसिद्ध जातियाँ हैं।

जलवायु व भूमि—यह उष्ण एवं शुष्क जलवायु में पैदा होते हैं। वैसे यह प्रत्येक भूमि में होते हैं, किन्तु हल्की और ऊसर भूमि अधिक अनुकूल पड़ती है।

पौधे तैयार करना व लगाना—खजूर के पौधे तने से निकलनेवाली ३-४ वर्ष की पुत्तियों से तैयार किये जाते हैं। बीज से भी पौधे तैयार किये जाते हैं, किन्तु इनमें आधे नर निकल जाते हैं। पौधे लगाने का समय फरवरी, मार्च या सितम्बर का है।

ताड़ के पककर सूख जाने पर, फल फट जाते हैं। इन्हें नरसरी में लगा दें। भूमि सदैव गीली रखने पर ८-९ महीने में अंकुर निकल आता है और दो वर्ष का पौधा उस स्थान से हटाकर दूसरी जगह खादयुक्त गढ़ों में लगा दिया जाय।

खाद, सिंचाई व छँटाई—प्रतिवर्ष प्रत्येक पौधे को थोड़ी खाद देना और सधारण सिंचाई करते रहना चाहिये। पौधों को नीचे से छाँटकर काँटों और पुत्तियों को अलग करते रहना चाहिये।

फसल की तैयारी—इसके फल बरसात से जाड़े तक मिलते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहते हैं; किन्तु फल लेने के दृष्टिकोण से इसे तैयार करना व्यर्थ है। शाम को इसके पेड़ पर चढ़कर तने में ऊपर की ओर एक नश्तर लगा देते हैं और एक साफ हाँडी बाँध देते हैं। प्रातः इससे निकले हुये श्वेत तरल नीरा से हाँडी भर जाती है। इसीसे गुड़ भी तैयार किया जाता है।

शत्रु—इसके पौधों में तने में छेद करनेवाला कीड़ा लगता है। छेदों में तारपीन का तेल डालकर चिकनी मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।

खैर

इसका पेड़ ३० से ४० फीट तक ऊँचा होता है। इसकी छाल के रस से कत्था तैयार करते हैं। इसे बगीचे के चारों ओर रक्षापंक्ति के रूप में भी लगाया जा सकता है। मध्यप्रदेश में कटनी का कत्था बहुत प्रसिद्ध है। दोमट व हल्की दोमट भूमि सबसे अच्छी रहती है। पौधे बीज बोकर तैयार करते हैं। सिंचाई, खाद आदि की साधारण आवश्यकता होती है। गोबर की खाद थोड़ी-बहुत दे देना चाहिए। यह गर्मी में फूलता है। मध्यप्रदेश उड़ीसा में इसकी खेती बहुत होती है।

खुबानी, जरदालू

खुबानी की खेती उत्तर प्रदेश और पंजाब में ठंढे स्थानों में होती है। इसका पेड़ आड़ू या आलूबुखारे के पेड़ पर चश्मा चढ़ाकर तैयार किया जाता है। इसका ऊपरी सूखा मीठा भाग खाया जाता है। गुठली के भीतर निकलने वाली मींगी में बादाम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का स्वाद होता है। इसके ताजे फल भी खाये जाते हैं। इसके फलों से मुरब्बा भी तैयार किया जाता है। यह दस्तावर किन्तु बलवर्धक होता है।

भूमि व खाद आदि—जलवायु के दृष्टिकोण से इसे ठंढे स्थानों में लगाना चाहिये। मटियार और बलुई भूमि को छोड़ कर हर प्रकार की मिट्टी में यह होता है।* बड़े-बड़े पेड़ों की जड़ें जाड़े में खोदकर उनमें खाद दे देनी चाहिये।

पौधे तैयार करना—इसके चश्मे अप्रैल-मई में तैयार किये जाते हैं। यह आड़ू या आलूबुखारे पर चढ़ाकर तैयार किये जाते हैं।

सिचाई कटाई आदि—आड़ू की फसल की भाँति।

फसल की तैयारी—प्रायः पेड़ लगाने के ८ वर्ष बाद फल देने लगते हैं। आधे जून से सितम्बर तक फल मिलते हैं।

गूलर

यह अंजीर की जंगली जाति है, जो भारतवर्ष के गाँवों में बहुतायत से पायी जाती है। कच्चे गूलर के फल को आलू के समान उबालकर उसका छिल्का निकालकर फिर उसे घी या तेल में भूनकर खाते हैं। फल के अन्दर भुनगे होते हैं। पकने पर गूलर का फल बड़ा स्वादिष्ट होता है। प्रमेह के रोगियों के लिए यह अत्यंत लाभप्रद होता है।

जलवायु व भूमि—यह अंजीर के समान ही जलवायु

---

* गढ़े और खाद आदि सेब के समान ही है। अतएव सेब की खेती के अनुसार इसमें भी करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहता है और प्रायः प्रत्येक भूमि में होता है। यह अधिकतर जंगली अवस्था में ही पाया जाता है।

गुलाबजामुन

यह हमारे देश का मौलिक फल है। अच्छे फल में वस्तुतः गुलाब के फल के समान हल्की सुगंध होती है। इसके फल कुछ गुलाबी रंग के, गोलाकार, खट्टे मीठे एवं स्वादिष्ट होते हैं। इसका पेड़ आठ-दस हाथ ऊँचा होता है।

जलवायु व भूमि—यह गर्मतर जलवायु वाले प्रदेशों में गहरी एवं नम भूमि में अधिकता से होता है। इसकी खेती अधिकतर बंगाल में होती है। उत्तर प्रदेश व बिहार आदि में धनी लोग शौकिया लगाते हैं।

पौधे तैयार करना, लगाना और खाद—इसके पौधे बीज व दाबे से तैयार किये जाते हैं। पौधों को वर्षा ऋतु में २०×२० फीट के अंतर पर ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में लगाते हैं। गोबर की खाद अच्छी रहती है। जाड़े के आरंभ में जड़ें खोलकर सप्ताह भर धूप दिखाकर खाद डालकर बंद कर देना चाहिए।

सिंचाई व गुड़ाई—इसे पानी की अधिक आवश्यकता होती है। पेड़ में फल लगने पर दो-तीन सिचाई कर देना ठीक है। सिचाई के बाद थालों की गुड़ाई कर देनी चाहिये।

फसल की तैयारी—यह १२-१३ साल के बाद फल देना प्रारम्भ करता है। यह फरवरी में फूलती हैं तथा फल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्षा और जाड़े के आरम्भ में मिलते हैं। फलों का चालान छोटे बक्सों में होता है।

जामुन

जामुन का चलन शहरों व देहातों में समान रूप से है। यह हमारे देश का मौलिक फल है। अम्लमधुर रसयुक्त एवं पाचक होता है। धूम्रपान करनेवाले के कंठ से फेफड़े तक जमे हुये धुएँ को इसका तीक्ष्ण रस काटकर गला देता है। यह प्रमेह व जिगर के रोगियों की एक उत्तम औषधि है। इसका सिरका महँगा बिकता है। मसूढ़े फूलने पर इसकी छाल के काढ़े से कुल्ली करने से लाभ होता है।

जातियाँ—इसकी दो जातियाँ मिलती हैं—(१) खट्टी (कठुई), जो छोटी और खट्टी होती है, (२) फरेंदा, जो बड़ा तथा मीठा और अपेक्षाकृत अधिक स्वादिष्ट होता है। कठुई जामुन अधिक लाभदायक होती है। उसका सिरका बनता है।

जलवायु व भूमि—यह गर्मतर जलवायु वाले प्रदेशों में प्रत्येक किस्म की भूमि में और मैदानों में सभी जगह पाया जाता है।

पौधे तैयार करना व लगाना—बीजू पौधों के दो वर्ष का हो जाने पर ४×४×४ फीट के खादयुक्त गढ़ों में बरसात में इसे लगाते हैं। इसे अधिकतर बाग के चारों ओर और मार्ग के दोनों ओर लगाते हैं।

तैन्दू

इसका फल छोटी सेब के आकार का मीठा होता है। फलों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का मुरब्बा भी बनता है। मुलायम फल खाये भी जाते हैं। यह पहाड़ों पर और मैदानों में दोनों ही जगह होता है।

भूमि व खाद आदि—यह प्रत्येक प्रकार की उपजाऊ भूमि में उत्पन्न होता है। ढाई फीट गहरे गढ़े २० फीट के अन्तर पर बनाकर उनमें ढाई सेर हड्डी का चूरा और १ मन गोबर मिलाकर प्रति गढ़े के हिसाब से भर देना चाहिये। जब यह फलने लगे तो जनवरी-फरवरी में जड़ें खोदकर खाद देनी चाहिये।

पौधे तयार करना—इसके पौधे बीज से या भेंट-कलम से तैयार किये जाते हैं। इसकी कलम बरसात में सजातीय पौधे से बाँधी जाती है। पौधे जाड़े में या बरसात में लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई व छँटाई—खाद देने के बाद और गर्मी के दिनों में सिंचाई कर देनी चाहिये। फलों के पकते समय पानी कम देना चाहिये। जनवरी-फरवरी में सूखी टहनियों की छँटाई करदें।

फसल की तैयारी—पेड़ लगाये जाने के प्रायः ४ वर्ष बाद फल देते हैं और अक्टूबर नवम्बर के महीने में फलते हैं। इन्हें छोटी-छोटी टोकरियों में भेजा जाता है।

नारियल

हमारे देश में नारियल का बड़ा महत्व है। अनेक प्रकार से इसके उपयोग के साथ विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों में भी यह व्यवहृत होता है। इसके पेड़ की ऊँचाई ५० से १०० फीट तक होती है। इसकी खेती मद्रास, बंगाल, मालाबार और कोनकन आदि में अधिक होती है। हरे नारियल का डाभ पिया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाता है। सूखे नारियल से निकली गरी एक उत्तम मेवा होती है। नारियल का गूदा बलवर्धक, पित्तनाशक, भारी और दाह को नष्ट करने वाला होता है।

जलवायु और भूमि—समुद्रतट से २०० मील की सीमा में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। यह ऐसे प्रदेशों में होता है जहाँ अधिक वर्षा होने के साथ ही सर्दी अथवा गर्मी का अधिक प्रकोप नहीं होता है। बलुवा या बलुवा-दुमट भूमि अच्छी रहती है।

पौधा तैयार करना—यह एकदलीय फल है, अतएव इसके पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। इसके लिये रेतीली, भुरभुरी और जोरदार भूमि चाहिये। काली और रेतीली समुद्र के किनारे की तटवर्ती भूमि अधिक अनुकूल होती है। बीज के लिए मोटे, भारी और मीठे फलवाले और अधिक बाढ़वाले पेड़ चुनने चाहिये। नारियल के पक जाने पर बरसात में नरसरी में खाद देकर उसे डेढ़ दो फीट के अन्तर पर बोकर पौधे तैयार करते हैं। पूर्ण बाढ़ पाये नारियल, जो कोपल फेंक देते हैं, वे ही लगाये जाते हैं।

पौधे लगाना—बरसात के प्रारंभ में इसके पौधे ६ मास से १ साल के हो जाने पर २०×२० फुट के अंतर पर बने हुए तीन फुट गहरे खादयुक्त गढ़ों में लगाये जाते हैं* ।

खाद—पौधे लगाने के पूर्व उनमें १ सेर हड्डी का चूरा, आधा मन राख और एक मन गोबर की खाद मिलाकर भर देनी

* मध्यवर्ती भूमि में अनन्नास, केला, पपीता, मूंगफली, पपैया, अमरूद और तरकारियाँ तैयार की जा सकती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चाहिये। नारियल के प्रत्येक वृक्ष को प्रति वर्ष ७-८ सेर मछली की खाद या हड्डी का चूरा व कुछ राख देनी चाहिये। कहीं-कहीं चैत्र में पौधे को घास की राख और नमक भी दिया जाता है। मछली के समान गोबर की सड़ी हुई खाद भी लाभप्रद है।

सिंचाई व छँटाई—उन प्रदेशों में, जहाँ वर्ष भर निरंतर वर्षा नहीं होती, इसकी सिंचाई करते रहना चाहिए, जिससे कि भूमि तर रहे। छँटाई की कोई आवश्यकता नहीं होती।

फसल की तैयारी—बोने के लगभग ५-६ वर्ष बाद पौधा फलने लगता है और ५० से ८० वर्ष तक फलता रहता है। बरसात से जाड़े तक फल मिलते रहते हैं। औसतन प्रति पौधे में ५० से ७५ तक फल आते हैं। फलों का चालान बोरों में किया जाता है।

शत्रु—इसे दो प्रकार के कीड़े अधिक हानि पहुँचाते हैं। एक प्रकार के कीड़े तने में छेदकर भीतर घुस जाते हैं। इनमें तारपीन का तेल डालकर चिकनी मिट्टी से बंद कर देना चाहिए। एक दूसरा कीड़ा वृक्ष की चोटी पर कोमल भाग में अंडे देता है। रात के समय नारियल के सड़े पानी को चौड़े बर्तन में भरकर उसके बीच में लालटेन या दीपक रखना चाहिए। इससे पूरी बाढ़ को प्राप्त हुआ कीड़ा प्रकाश की ओर आकर्षित हो पानी में गिरकर मर जाता है।

नासपाती

नासपाती की खेती बहुत-कुछ सेब के समान ही होती है। देशी और चीनी नासपाती भारतवर्ष में आमतौर से होती है। इसका पेड़ सीधा होता है। बहुत अधिक स्थान नहीं घेरता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जातियाँ—देशी और चीनी नासपाती एक ही जाति की हैं। यह छोटी और कड़ी होती है। विलायती जातियों में विक्टोरिया और व्यूरी अच्छी होती हैं। देशी और विलायती जातियों के मेल से तैयार हुई किस्में 'हाईब्रिड' कहलाती हैं। हमारे देश में इसकी स्मिथ हाईब्रिड जाति भली भाँति होती है।

जलवायु व भूमि—इसे सेब से कम ठंढी जलवायु चाहिए। गहरी बलुई दोमट भूमि, जिसमें पानी के निकास की समुचित व्यवस्था हो, इसके लिए सर्वश्रेष्ठ है।

पौधे तैयार करना व लगाना व खाद, सिंचाई और छँटाई, बीमारी आदि के लिये सेब का वर्णन देखें।

निंबु जातीय फल

निंबु या सिट्रस जातीय फलों की जन्मभूमि और उनकी जातियों के सम्बन्ध में विद्वानों और तद्विषयक विशेषज्ञों में बड़ा मतभेद है। इस जाति के फलों में नारंगी, संतरा, माल्टा, मोसम्बी, नींबू तथा अमृतफल आदि हैं। यहाँ हम निम्न वर्गीकरण के अनुसार इस जाति के फलों का वर्णन करेंगे।

(१) नारंगी—नारंगी, संतरा, माल्टा और मोसम्बी (२) नींबू, (३) चकोतरा, (४) अमृतफल।

नारंगी

[नारंगी, संतरा, माल्टा, मोसम्बी]

नारंगी व संतरा आदि सिट्रस जाति के फल हैं। इनकी खेती बम्बई, मद्रास, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बरार, आसाम, कुर्ग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और पंजाब में अधिक होता है। इनकी एक जाति मोसम्बी बीमारों के लिये लिये बहुत लाभदायक होती है। आयुर्वेद के अनुसार संतरा अम्लमधुर बल-वीर्यवर्धक, पाचक, अग्निदीपक और कृमि-नाशक होता है। नारंगी ठंडी होती है और मस्तिष्क को तरावट पहुंचाती है।

जातियाँ—(१) कड़े छिल्केवाली—माल्टा, मोसम्बी आदि। (२) ढीले छिल्केवाली—संतरा नागपुर सिलहटी व मंदारिन आदि बुटवल और हजारा नारंगी। (३) चीनी हजारा नारंगी। इनके अतिरिक्त भी अनेक अनेक जातियाँ होती हैं, प्रसंगानुसार दी जायँगी।

जलवायु—नारंगी और इसकी जाति के अन्य फल अधिकतर शीतोष्ण तथा ऊष्ण प्रदेशों में कम गर्म स्थानों में पाये जाते हैं। अधिकतर स्वादिष्ट और रसीले फल शीतोष्ण प्रदेश में होते हैं।

गर्म प्रदेशों के लिये संतरा—१. कौंडनेरम, २. मामूली संतरा या रंगतरा (दिल्लीवाला), ३. मंदाग्नि इम्परर और ४. केवला। इनमें केवला यद्यपि बहुत मीठा नहीं होता, परन्तु यह फलता बहुत है।

माल्टा—१. माल्टा २. मोसम्बी ३. जाफा ४ खूनी (Bloody) माल्टा और ५. रुबी।

तराई के ठंढे प्रदेशों के लिये संतरा—१. श्रीनगर (यह जाति कुमायूँ से आयी है, काश्मीर से नहीं) २. कौंडानेरम, ३. रंगतरा, ४. बुटवल- ५. किश्यू इसका गूदा लाल होता है, अतएव इसे खूनी संतरा भी कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

माल्टा—१. मीठा (मांडोनियन स्वीट), २. बोयेला, ३. जाफा, ४. विनैली, ५. डलसिस, ३. टारडिफ। रुबी और विनैली बढ़िया किस्म की नारंगियाँ हैं। यह दोनों गुजरानवाले की प्रसिद्ध खूनी रंग की नारंगियों से कहीं बढ़कर हैं। उत्तरप्रदेश में माल्टा से संतरा ज्यादा चलता है, परन्तु पंजाब में माल्टा की अधिक मांग है।

भूमि—उपजाऊ दोमट और हल्की भूमि चूने के अधिक अंश वाली, पानी के निकास का प्रबन्ध अत्यन्त आवश्यक है। भूमि में ५ फीट की गहराई तक कंकड़, पत्थर अथवा मटियार मिट्टी न हो। जहाँ तक हो इसकी खेती के लिये कुछ ऊँची और बरसाती जगहों में ढालू भूमि चुनना चाहिये।

पौधे तैयार करना—इसके पौधे अधिकतर चश्मा चढ़ाकर ही तैयार किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त बीज से, कलम से, अंटा बाँधकर भी तैयार किये जाते हैं। इसमें चश्मा करना सबसे अच्छा रहता है।

पौधे लगाने का समय व रीति—मई के महीने में ३×३×३ फुट की नाप के खादयुक्त गढ़े तैयार कर वर्षा के प्रारम्भ में अथवा बाद में अक्तूबर व फरवरी में पौधे रोप देने चाहिये। माल्टा के पौधे १६ से १८ फीट और संतरे १८ से २० फीट के अन्तर से लगाये जाने चाहिये।

खाद—पौधे लगाते समय गढ़ों में सड़े हुये गोबर की खाद २ मन, राख १ सेर, अच्छी कमाई हुई मिट्टी में मिलाकर दें। ५-६ सेरा चूना और ८-१० सेर पिसा हुआ कंकड़ देना भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लाभदायक सिद्ध हुआ है। इससे फफूँदी की बीमारियाँ नहीं लगतीं। एक वर्ष के बाद गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट २० सेर, ५ सेर राख, ३ सेर हड्डी का चूरा दें और इसके बाद ८ वर्ष तक उपरोक्त मात्रा को बढ़ाकर प्रतिवर्ष गोबर की खाद १५ सेर, राख ६ सेर, हड्डी का चूरा ३ सेर देते रहना चाहिये। इसके लिये सनई की हरी खाद भी बहुत अच्छी रहती है। आठ वर्ष के बाद उक्त बढ़ी हुई मात्रा को कम कर देना चाहिये।

जुताई, सिंचाई और गुड़ाई—बगीचे की साल में एक बार गहरी जुताई अथवा गुड़ाई आश्यक है। हमारे देश की जलवायु में इसकी सिंचाई अत्यन्त आवश्यक है। सिंचाई पौधे के फैलाव के अनुसार थाले बनाकर नालियों में ही करनी चाहिये। ४-५ साल के पौधों की प्रतिवर्ष ५-६ सिंचाई करनी पड़ती हैं। जब ३-४ इंच गहरी मिट्टी सूख जाय तब सिचाई कर देनी चाहिये।

छँटाई—पौधे लगाने के बाद डेढ़ दो फुट की ऊँचाई पर केवल ३-४ शाखाएँ रखनी चाहिये। चश्मे के नीचे प्रायः शाखाएँ बहुत जल्दी बढ़ती हैं। इसके साथ सूखी और बीमार, पेड़ के नीचे की महीन और पतली शाखें, जो कि बड़ी संख्या में निकल आती हैं, अलग करते रहना चाहिये। अम्बियाबहार लेने के लिये फूल आने से एक माह पूर्व सिंचाई रोककर जड़ों को एक सप्ताह खुला रखकर, महीन शाखों व जड़ों की छँटाई कर थालों में पुनः खाद मिलाकर भर देनी चाहिये। दक्षिणी भारत में मृग बहार में अधिक फल लेने के लिए मई के महीने में सिचाई रोककर उपरोक्त रीति से जून में जड़ों को खोलना और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
फिर छँटाई कर देना चाहिये। उत्तर प्रदेश में मृग बहार की छँटाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह दक्षिणी भारत में आवश्यक है।

फसल की तैयारी—पेड़ लगाने के ४-५ साल बाद फल मिलने लगते हैं। यह साल में दो बार ही फलती हैं। अम्बिया-बहार में फल नवम्बर-दिसम्बर में और मृग बहार में फल मार्च अप्रैल में पकते हैं। साल में एक पौधे से एक ही फसल लेनी चाहिये। इन फसलों में कौन सी फसल चुननी चाहिये यह (१) स्थानीय जलवायु, (२) पौधे की जाति और (३) बाजार की माँग पर निर्भर है। संतरे की प्रति एकड़ पैदावार २०० मन और माल्टे की १५० मन के लगभग होती है। तोड़ते समय छिलके को चोट न पहुँचनी चाहिये। इसका चालान चीड़ के बक्सों में और झल्लियों में होता है।

नारंगी के शत्रु—भूमि के दोष से या पानी अधिक रुकने से जड़ों का बढ़ना रुक जाता है। इससे पत्तियाँ पीली होकर गिर जाती हैं और शाखों की फुनगी सूखने लगती हैं, जो नीचे तक सूखती चली आती हैं। यह बीमारी शुरू में तो नहीं, पर जब जड़ें ज्यादा गीले हिस्से में पहुँच जाती हैं, तो दिखाई देने लगती है। मटियार जमीन में यह बीमारी ज्यादा होती है। शुरू-शुरू में इसकी पहिचान यह है कि बरसात में पत्ती पीली होनी शुरू हो जाती है। इसका ठीक इलाज एक ही है—पानी का पूरी तौर से निकास। देखा गया है कि यदि मटियार भूमि में पेड़ों की पत्तियों के बीच-बीच में तीन से साढ़े तीन फीट तक गहरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
नाली खोदकर पानी पूरे तौर पर निकाल दिया जाय, तो पेड़ों को बहुत फायदा होता है। कभी-कभी यह बीमारी मामूली थालों के तरीक़े से सिंचाई करने से और कभी फासफेट और पोटाश की कमी से भी हो जाती है। यदि पानी का निकास अच्छा हो तो इन्हीं दोनों चीजों के पेड़ों में दे देने से बीमारी अच्छी हो जाती है। कभी-कभी यह देखा जाता है कि यद्यपि पेड़ देखने में तन्दुरुस्त है फिर भी नहीं फलते। यह बात ज्यादा पानी से हो जाती है। यद्यपि यह पानी इतना ज्यादा नहीं होता कि पेड़ में स्कैब लग जाय, फिर भी पेड़ को आराम व खुश्की नहीं मिल पाती। ज्यादा खाद की, खासकर फासफेट और पोटश के मुकाबिले नाइट्रोजन की, अधिकता से भी यह बात हो जाती है।

कभी-कभी तने के नीचे के हिस्से में गलन शुरू हो जाती है। उससे भी फलना कम हो जाता है। यह बात तभी होती है, जब थाले में पानी भरा रह जाता है, विशेषकर जब जमीन मटियार हो; क्योंकि उसमें पानी जज्ब होने में देर होती है। उ० प्र० की मिट्टी में चूने की कमी से भी फसल कम हो जाती है। पुरानी इमारतों से निकला हुआ चूना, पिसा हुआ कंकड़, या बुझा हुआ चूना मिला देने से यह दोष जाता रहता है।

यदि शुरू में पेड़ खूब अच्छी तरह बढ़ें, पर फल आते ही मरने लगें, तो समझ लेना चाहिये कि ४ या ५ फीट नीचे, या तो पत्थर है, या ऐसी मिट्टी जिसमें जड़ें घुस नहीं सकतीं। बाग लगाने से पहले नीचे की मिट्टी की जाँच करा लेनी चाहिये।

यदि पेड़ बहुत करीब-करीब लगा दिये गये हैं, तो भी फसल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कम होगी, क्योंकि उसमें ठीक सिंचाई वगैरह नहीं हो सकती। यदि पुराने हो गये हो, तो फिर इसका कोई इलाज नहीं है।

इसे एक बीमारी, जिसे स्केब (Scab) कहते हैं, बहुत लगती है। यह बीमारी कागजी नीबू में सबसे ज्यादा लगती है। इसका इलाज यही है कि बीमार शाखें काटकर जला दी जायँ और पेड़ बोर्डो मिक्सचर (Bordeau Mixture) का छिड़काव कर दिया जाय।

एक और बीमारी इनमें लगती है, जिसमें पेड़ के तने से गोंद निकलने लगता है। यदि बाग में ज्यादा पानी लगता हो, या तने का कुछ हिस्सा पानी में डूबा रहता हो, तो इस बीमारी के लगने की सम्भावना अधिक रहती है। जब इस बीमारी का ठीक पता लग जाय, तो जख्म से आध इंच चारों तरफ का बकल एक तेज चाकू से काटकर अलग कर देना चाहिये, जिसमें भीतर की लकड़ी साफ खुल जाय। फिर उस पर या तो बोर्डो क्रूड कारबोलिक (Crude Carbolic) और पानी बराबर-बराबर मिलाकर फेंटकर लगा देना चाहिये और जब यह सूख जाय तब हलका-हलका तारकोल पोत दें।

कीड़े बीमारियों की अपेक्षा पेड़ के हर भाग को नुकसान पहुँचाते हुये पाये जाते हैं। एक कीड़ा, जो नींबू की पत्तियों को खाता है, बहुत पाया जाता है। यह अन्य पेड़ों की अपेक्षा कागजी नींबू पर ज्यादा होता है। इसका उपाय यही है कि जहाँ दिखाई दे, पकड़कर मार दिया जाय और अगर ज्यादा हों, तो लेड आरसनेट (Lead Arsinate) के पानी से इसपर छिड़काव कर दिया जाय।

एक और भी कीड़ा इन पर लगता है, जिसका नाम हरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मक्खी (Green Fly) है। नयी शाखों के निकलते ही उन पर झुंड-के-झुंड काले या पीले छोटे-छोटे कीड़े लग जाते हैं। पेड़ रोगी जैसा मालूम होते लगता है और उसकी ताकत बहुत कम हो जाती है। कीड़े अधिकतर जाड़े की ऋतु में लगते हैं और इनका इलाज मिट्टी का तेल या क्रूड आयल इमलसन (Crude Oil Emulsion) का छिड़काव है।

एक दो किस्म के पतिंगे भी रात में फल को नुकसान करते हैं। ये फल में छेद करके उसका रस पीते हैं। फल यह होता है कि या तो वह फल गिर जाता है या अगर ठहर भी गया तो बेकार हो जाता है। उनसे बचाव जरा कठिन है। रात को तेज रोशनी के द्वारा और जाली से पकड़ने से थोड़ा-बहुत बचाव हो सकता है। चूंकि यह बरसात में लगता है, जबकि फल काफी बड़े हो जाते हैं, इसलिए अगर फसल में ऐसे उपाय कर दिये जायँ कि उन दिनों फूल आकर फल फरवरी या मार्च में आवें, तो बचाव ज्यादा हो सकता है।

पुराने पेड़ों में तने के भीतर छेद करनेवाले कीड़े पाये जाते हैं। गौर से छेद के मुँह को साफ कर मिट्टी का तेल पिचकारी से भरकर मुँह को मोम से बंद कर देना चाहिये।

नींबू

नींबू भी सिट्रस जाति का फल है। भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में नींबू बोया जाता है। यह ठंढा और हाजिम होता है। पित्त-नाशक, वमन को रोकनेवाला, और हृदय को शक्ति प्रदान करने वाला होता व वैद्यक की अनेक दवाओं में इसका पुट दिया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जातियाँ—वैसे तो इसकी अनेक जातियाँ होती हैं, परंतु इन्हें तीन वर्गों में बाँटा जाता है। (१) तुरंज—इसका फल बड़ा, छिल्का मोटा और खुरदुरा होता है। (२) लेमन नींबू—इसका पेड़ १० से २० फीट ऊँचा होता है। फल गोल या लम्बे दोनों तरफ नुकीले होते हैं; जैसे, माल्टा, कागजी, बेदाना, आदि। (३) खट्टा नींबू—इसका पौधा ५ से १० फीट ऊँचा झाड़ीनुमा होता है। फल एक से दो इंचवाले चिकने व खुरदरे होते हैं; जैसे—जमीरी, गलगल, कागजी कलन, बारहमासी व करना, आदि। (४) मीठा नींबू—इसका फल बड़ा, पतला व चिकना छिल्का और रस मीठा होता है। शेष बातों में खट्टे नींबू के समान ही होता है। स्वीट गलगल और स्वीट चकना प्रसिद्ध हैं।

जलवायु भूमि व खाद आदि—सब में यह नारंगी के समान है।

पौधे तैयार करना—पौधे बीज से आसानी से और कम खर्च में तैयार हो जाते हैं। अधिकतर कागजी और लेमन बीज द्वारा ही तैयार किये जाते हैं। चश्मे, कलम व दाबे से और अंटा बाँधकर भी तैयार किये जाते हैं। चश्मे से पौधे तैयार करना सबसे अच्छा रहता है। मीठे या खट्टे नींबू के बीज सितम्बर-अक्टूबर में बोकर स्टाक तैयार करना चाहिए।

पौधे लगाना व छटाई, रोग व फसल की तैयारी—नारंगी के समान है। प्रति एकड़ औसत पैदावार १२५ मन है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चकोतरा

यह भी नींबू की ही जाति का एक फल है। इस जाति के फलों में यह सबसे बड़ा होता है। १० सेर वजन तक के फल पाये गये हैं। यह पाचक गुणविशिष्ट होने से यकृत के रोगियों के लिए विशेष लाभकारी होता है।

जातियाँ—प्रमुख तीन किस्में हैं—(१) चकैंया, जो चपटी और लाल गूदेवाली जाति है, (२) गिल्स ज्योली कोट, जो बड़ा और गुलाबी गूदेवाली जाति है (३) बड़ी किस्म, जो सफेद और गूदेवाली होती है। गर्म व ठंढे दोनों ही देशों के लिए सबसे अच्छी किस्में हैं। शेष सब बातों में नीबू के समान है।

अमृतफल

यह भी सिट्रस जाति का ही एक फल है। इसकी अधिक खपत विदेशों में ही है। अंग्रेजी में 'ग्रेपफ्रूट' कहते हैं। इसकी सबसे अच्छी किस्में सहारनपुर स्पेशल परनेम्बिको और मार्श (Marsh) हैं। उपरोक्त दोनों जातियाँ गर्म और ठंढे दोनों ही देशों में होती हैं। सब बातों में यह नारंगी और नींबू के समान है।

पिश्ता

पिश्ता रक्तशोधक, बलवर्धक एवं कफ नाशक होता है। इसमें ६०% तैल होता है। पिश्ते की खेती अफगानिस्तान, फारस, आदि में होती है। अभी तक भारतवर्ष में अफगानिस्तान की ओर से पिश्ते आते हैं। सीमाप्रांत और बिलोचिस्तान की तरफ पिश्ता बहुत होता है। कृषिविशेषज्ञों का अनुमान है कि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पिश्ते की खेती भारतवर्ष के पहाड़ों पर हो सकती है किंतु अभी तक कोई कथनीय सफलता नहीं मिली है। चूँकि पिश्ते की खेती हमारे देश में अभी सफलतापूर्वक नहीं हो सकी है, अतएव यहाँ उसपर विस्तृत प्रकाश डालना अनावश्यक है*।

पनियाला

इसे स्थान-भेद से पनियाला और पन्प्याला दोनों ही नामों से पुकारा जाता है। यह पाचक एवं पुष्टिकारक होता है। इसके फल गोल, भूरे रंग के होते हैं। पकने पर इसका स्वाद कुछ खटमिट्ठा होता है। इसके काँटेदार पौधों की ऊँचाई १५ हाथ के लगभग होती है।

जलवायु व भूमि—हमारे देश में प्रायः यह सब प्रदेशों में हो सकता है। गर्मतर जलवायु इसके अनुकूल पड़ती है। प्रत्येक किस्म की भूमि में होता है।

पौधे तैयार करना व लगाना—इसके बीज या पौधे वर्षा में अथवा फरवरी में ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में १५–१६ फीट के अंतर से लगाते हैं। खाद की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

फसल की तैयारी—इसका पौधा सितम्बर-अक्टूबर में फलता है। प्रति पेड़ से १०० मन के लगभग फल मिलते हैं।

---

* विस्तृत जानकारी के लिये देखें—Agriculture and Live Stock In India vol. VIII Part I, 1930 पृष्ठ ५६-६१

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पपीता

पपीते की खेती सारे भारतवर्ष में होती है। यह कच्चे और पके दोनों ही रूप में खाने के काम आते हैं। कच्चे पपीते की तरकारी, अचार और चटनी बहुत गुणकारी होती है। पके हुए फल बहुत मीठे होते हैं। यह पाचन शक्ति को बढ़ाता है, रक्त को शान्त रखता है और पुष्टिकारक होता है। बवासीर, तिल्ली और अजीर्ण के रोगियों के लिए अत्यन्त लाभदायक होता है।

जातियाँ—पपीते के पौधे तीन प्रकार के होते हैं—(१) नर पौधे* जिनमें फल आते ही नहीं, (२) मादा पौधे, जो फलते हैं और (३) नर-मादा पौधे, जिनमें छोटे-छोटे फल लम्बी-लम्बी डालियों में लगते हैं। पौधे की ऊँचाई के अनुसार दो किस्में हैं—(१) नाटे पौधे, जो ६ से १० फ़ीट ऊँचे होते हैं और (२) ऊँचे पौधे, जो २० से २५ फीट लम्बे होते हैं। फलों के अनुसार भी इसकी कई किस्में हैं, जिनमें जायन्ट, हनीड्यू, सीलोन, राँची, वाशिंगटन और फिलीपीन प्रमुख हैं। वाशिंगटन और मधुविन्दु जातियाँ स्वादिष्ट और अच्छी रहती हैं।

जलवायु—सूखी और तर। अधिक ठंढक और पाले से इसका बचाव आवश्यक है। पानी के निकास का सदैव ध्यान रखना पड़ता है।

---

* पौधों में जब तक फूल नहीं आते, नर और मादा की पहिचान करना कठिन है। नर पौधे अधिक स्वस्थ होते हैं और शीघ्र बढ़ते हैं। नर पौधों की पत्तियाँ गहरे रंग और मादा पौधों की हल्के रंग की होती हैं। एक नर पौधा ५० मादा पौधों के लिए काफी हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमि—सभी प्रकार की भूमि में इसकी खेती की जा सकती है। पानी न रुकने वाली हल्की दोमट भूमि अधिक अनुकूल पड़ती है।

पौधे तैयार करने की रीति—पपीते के पौधे अधिकतर बीज से ही तैयार किये जाते हैं। बीज लेने के लिए फलों को हाथ से पौलिनेशन करके तैयार करना अच्छा रहता है * बीज को फरवरी से अप्रैल तक नरसरी में बोकर पौधे तैयार होने पर वर्षा के आरंभ में खेत में लगाते हैं। बीज बोने के बाद हजारे से पानी देना चाहिए। जब पौधे तीन पत्तीवाले हो जावें, तो उन्हें लगाने योग्य समझना चाहिए। कभी-कभी तने से निकलनेवाली पतली शाखों से कलम तैयार करके लगाते हैं। इन्हें अप्रैल से जुलाई तक नरसरी में लगाते हैं।

पौधे लगाने का समय व रीति–अप्रैल में ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में तैयार कर वर्षा के आरंभ में नरसरी से लाकर पौधे लगा देने चाहिए। जब तक फूल नहीं आते तब तक नर और मादा की पहिचान नहीं होती, अतएव प्रत्येक गढ़े में कम से कम दो पौधे लगाना चाहिए। पूरे खेत में लगाने पर १०×१० फीट की दूरी पर लगाना चाहिए। इस ढंग से ४१० पौधे प्रति एकड़ लगेंगे।

खाद—गढ़ों में गोबर की खाद के स्थान पर घोड़े की सड़ी

---

* पौलिनेशन क्रिया करने में फलों को खिलने के पूर्व ही थैलियों के अन्दर बाँध दिया जाता है। जिन फलों से बीज लेना हो, उन्हें जहाँ तक हो सके, हाथ से पौलिनेशन कर तैयार करना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुई लीद भरनी चाहिए। लगाने के बाद प्रति पेड़ एक टोकरी खाद वर्षा के आरंभ में और एक अक्तूबर में देनी चाहिए। सितम्बर, अक्तूबर में २ सेर राख और ढाई सेर हड्डी का चूरा देने से फल बड़े और स्वादिष्ट होते हैं। प्रत्येक तिमाही खाद दे देना उत्तम रहता है।

जुताई—अन्य पेड़ों के समान जुताई करना अच्छा रहता है किन्तु यह ध्यान रहे कि हल जड़ों से दूर रहे और जुताई हल्की हो।

सिंचाई तथा गुड़ाई—पपीते की सिंचाई बड़ी सावधानी से करनी चाहिए। पौधे के चारों ओर पानी के लिए छिछला गढ़ा होना चाहिए। वृक्षों की जड़ों में पानी लगना हानिकारक होता है। सतह की दो-तीन इंच मिट्टी सूखने पर सिंचाई करना आवश्यक है। सिंचाई, निराई व गुड़ाई जाड़ों में हर बीसवें दिन और गर्मियों में हर दसवें दिन करते रहना चाहिए।

छँटाई—बड़े फल प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि जब कोई बड़ी शाख निकल आवे तो उसकी छँटाई कर दें। शाखें बढ़ने से फल अधिक किंतु छोटे निकलते हैं। दो तीन शाखायें बढ़ने देकर बीच का धड़ काटकर ऊपर कलमी मिट्टी लगा दें। हर चौथे साल भूमि से पपीते की फसल बदल देना बहुत आवश्यक है। ऐसा न करने पर फल आना बंद हो जाता है और एक आध वर्ष में पेड़ ही मर जाता है।

फसल की तैयारी—अगस्त में रोपे हुए पौधों में ९–१० महीने और फरवरी को रोपे पौधों में ६–७ महीने के बाद फूल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आ जाते हैं। अधिकतर फल फरवरी से जून तक पकते हैं। कुछ जातियाँ सितम्बर से नवम्बर तक पकती हैं। अधिक समय तक फल पाते रहने के लिए दोनों तरह की किस्में बोनी चाहिए। पूरी बाढ़ होते ही फल तोड़कर पकने के लिए भूसे में गाड़ देना चाहिए। इसका पौधा ७-८ साल तक रहता है। एक साल में एक पौधे से लगभग २५ फल प्राप्त होते हैं। बड़े फल लेने के लिये अधिक फल होने पर कुछ तोड़कर अलग कर देने चाहिए।

पपीते के शत्रु—कभी कभी पानी की अधिकता हो जाने पर भूमि के निकट तना सड़ जाता है। सड़न होते ही सड़े हिस्से को छीलकर क्रूडकार्बोलिक के ४ प्रतिशत घोल से धोकर तारकोल लगा देना चाहिए। आम व कटहल के समान इसमें भी तने में छेद करनेवाला कीड़ा लगता है। कभी-कभी फंगस का असर होने पर फल सड़ जाते हैं। ऐसे फलों को पेड़ से अलग कर बरगंडी मिक्सचर का छिड़काव करना चाहिए।

फालसा

फालसा भारत का ही फल है। बैंगनी आभायुक्त अम्ल-मधुर स्वादविशिष्ट और अग्निदीपक होता है। पके हुए फलों का शर्बत बहुत अच्छा होता है। देश के प्रायः सभी भागों में होता है। अहमदाबादी फालसे अधिक प्रसिद्ध हैं।

जलवायु व भूमि—प्रत्येक जलवायु और भूमि में होता है, किन्तु बलुवा भूमि ठीक नहीं रहती।

पौधे तैयार करना—इसके पौधे मई और जून में बीज बोकर तैयार किये जाते हैं। पौधे दस दिन में उग आते हैं और अगले

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जनवरी या फरवरी में पौधे लगाने योग्य तैयार हो जाते हैं। इन्हें इसी समय या बरसात में २×२×२ फीट के खादयुक्त गढ़ों में १०×१० फीट के अंतर से लगाना चाहिए। भूमि की उर्वराशक्ति कम होने पर यह अंतर और कम कर देना चाहिये।

खाद और सिंचाई—बीज व पेड़ लगाने के पूर्व गढ़ों में खाद दे देनी चाहिये। प्रतिवर्ष फरवरी के आरंभ में १० सेर गोबर की सड़ी खाद देनी चाहिए। पेड़ के फूलने-फलने के समय जनवरी से मई तक २-३ पानी दे देने चाहिये।

छँटाई—अधिक फल प्राप्ति के लिये फालसे की छँटाई करना अत्यंत आवश्यक है। प्रतिवर्ष ढाई तीन फीट पेड़ छोड़कर शेष सब छाँट देना चाहिए। छँटाई का उत्तम समय बसंत ऋतु है।

फसल की तैयारी—पेड़ प्रायः तीन साल के बाद फलना आरंभ होते हैं। यह जाड़े में फूलता और फल गर्मी में तैयार होता है। फल छोटे होते और धीरे-धीरे पकते हैं। फल अधिक समय तक नहीं रुकता, अतएव तोड़ने के २४ घंटे के अंदर बेच देना चाहिए। पंजाब में ४ साल के पौधे से प्रतिवर्ष १० सेर तक पैदावार होती है।

शत्रु—इसे छेद करनेवाला कीड़ा बहुत लगता है। यह कीड़ा फल को तो कम हानि पहुँचाता है किन्तु साथ में लगे हुये पेड़ों में लग जाने से बड़ी हानि होती है। इसे चुन-चुनकर मार डालना चाहिये।

बड़हल

हमारे देश में इसकी खेती अधिकतर बंगाल में होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसका फल कोई बहुत अच्छा तो नहीं माना जाता, परंतु पके हुये पीले रंग के फल सुहावने और खाने में बुरे नहीं होते।

यह गर्मतर जलवायु में प्रत्येक किस्म की भूमि में होता है। इसके पौधे वर्षा में बीज बोकर ही तैयार किये जाते हैं। इसे ४×४×४ फीट की नाप के गढ़ों में ३० से ४० फीट के अंतर से लगाना चाहिए। यह दिसम्बर से मार्च तक फूलता और गर्मी व वर्षा में फल मिलते हैं। एक पेड़ से १०–१२ मन के औसत से फल प्राप्त होते हैं।

कीड़े व बीमारियों का भय अधिक नहीं होता।

बादाम

बादाम प्रत्येक चीज में आड़ू के ही समान है। हमारे देश में इसकी खेती काश्मीर और पंजाब के कुछ भागों में सहज ही होती है। यह बल, वीर्य एवं नेत्र-ज्योतिवर्धक एवं मानसिक शक्ति को बढ़ाता है।

जातियाँ—इसकी मीठी और कड़वी दो किस्में होती हैं। पहली किस्म खाने और दूसरी तेल बनाने के काम आती है। मीठी किस्म में तीन जातियाँ होती हैं—(१) कागजी अर्थात् पतले छिलकेवाली, (२) मोटे छिलके वाली, (३) कठिया।

जलवायु व भूमि—यह मध्यम व खुश्क जलवायु का पौधा है। गर्म व तर जलवायु वाले प्रदेशों में पौधा तो बढ़ता है पर फल नहीं लगते। पाले से विशेष हानि होती है। जोरदार, चूने-वाली और पानी के निकासवाली भूमि में ही इसे बोना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पौधे तैयार करना—इसके पौधे प्रायः बीज अथवा भेंट-कलम से तैयार किये जाते हैं। नम भूमि में आड़ू के स्टाक पर और खुश्क भूमि में बादाम के स्टाक पर भेंट-कलम की जाती है। कहीं-कहीं आड़ू पर बादाम का चश्मा चढ़ाया जाता है। बोने के पूर्व ही बादाम को फोड़ देना चाहिए; परंतु मींगी कदापि बाहर न निकालनी चाहिए।

पौधे लगाना—इसे जाड़े के दिनों में ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में २०×२० फीट के अंतर पर बोना चाहिए।

खाद, सिंचाई और छँटाई आदि—खाद, सिंचाई और गुड़ाई आदि आड़ू के समान ही करनी चाहिए। घनी, सूखी और रोगी शाखों को छाँटकर अलग कर देना चाहिए।

फसल की तैयारी और शत्रु—इसकी फसल आड़ू के साथ ही तैयार होती है। अधिक नमी होने पर फंगस का प्रभाव बढ़ता है और प्रायः पत्तियों पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं।

बेर

हमारे देश के प्रायः सभी भागों में बेर पाया जाता है। कहीं-कहीं यह जंगली दशा में भी पाया जाता है। बड़ौदा, अहमदाबाद, नागपुर, लखनऊ और काशी आदि कुछ स्थान बेर के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। इसका फल सुपच होता है, परन्तु अधिक खाने से खाँसी और कफ की शिकायत पैदा हो जाती है।

जातियाँ—इसकी मुख्य दो जातियाँ होती हैं—(१) पेवँदी बेर (२) गोल बेर। पहले का फल अंडाकार और दूसरा गोल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होता है। वैसे फलों के स्वाद, आकार आदि के अनुसार इसकी अनेक जातियाँ पायी जाती हैं। पेवँदी बेर अधिक मोटा, मीठा और अच्छा होता है। जंगली बेर मोटे छिल्के का खट्टा होता है।

जलवायु और भूमि—यह प्रत्येक जलवायु और भूमि में होता है किन्तु बलुवा भूमि अनुकूल नहीं होती। एक झाड़ी वाली जाति बालू में ही अच्छी होती है।

पौधे तैयार करना—भेंट कलम, दाबा और चश्मे से इसके पौधे तैयार किये जाते हैं। पुराने पेड़ों पर भेंट-कलम की रीति से खूंटी मारकर भी पौधे तैयार किये जाते हैं। चश्मा बाँधना और दाबा दोनों क्रियाएँ, जून से दिसम्बर तक ही करनी चाहिए। जिस डाली से चश्मा लें उसे पानी में कुछ देर छोड़ देने से छाल जल्दी छूटती है। फरवरी में बीज बोकर बीजू पौधे तैयार होते हैं।

पौधे लगाना—इसके पौधे गर्मी अथवा बरसात में ३॥×३॥×३॥ फीट के खादयुक्त गढ़ों में २५×२५ फीट के अंतर पर लगाना चाहिए।

खाद—बेर का पेंड़ लगाते समय गढ़ों में २॥ सेर हड्डी का चूरा, आधा मन गोबर और कुछ राख मिलाकर प्रति गढ़े में भर दें। प्रति वर्ष वर्षा में थोड़ी गोबर की खाद दे देनी चाहिए। खाद देने के पूर्व कुछ समय के लिये जड़े खोल दें। लगाते समय प्रति बीघा १०-१२ छटांक नमक देने से अधिक लाभ होता है।

सिंचाई—पौधों के जम जाने पर पानी की आवश्यकता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कम पड़ती है। प्रति वर्ष जाड़े के दिनों में एक पानी दे देना पर्याप्त है।

छँटाई--इसका पौधा बहुत जल्द बढ़ता है। फल तोड़ने के बाद मनुष्य की कलाई के बराबर मुटाई वाली सब डालियाँ छाँट दें। शाखायें बहुत जल्दी नये कल्ले फेंक देंगी।

फसल की तैयारी--बरसात के बाद फूलना आरम्भ होता और जाड़े में फूलता है। कलमी बेर का पौधा ६ वर्ष बाद और बीजू १०-११ साल बाद फल देता है। इससे फल जनवरी से मार्च तक प्राप्त होते हैं। एक पेड़ से ६ मन फलों का औसत माना जाता है। कहीं-कहीं अच्छे पेड़ से १० मन तक फल मिलते हैं।

शत्रु--फलों में एक जाति के कीड़े लगने से वे काने पड़ जाते हैं। फल बढ़ते समय 'लेड आर्सिनेट' (Lead Arsenate) का घोल छिड़कने से लाभ होता है। तने में छेद करनेवाला कीड़ा लगने पर छेदों में तारपीन का तेल डालकर चिकनी मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।

बिही

हमारे देश में बिही की खेती काश्मीर, पंजाब, पूना, सतारा और पहाड़ी स्थानों में होती है। इसके प्रयोग करनेवाले अधिक न होने के कारण, बाजार में इसकी खपत कम है। वैसे, यह हल्का और बलदायी है। मुरब्बा अच्छा होता है।

जातियाँ—(१) देशी, (२) चैम्पियन और (३) आस्ट्रेलिया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की जातियाँ। इसके पौधों पर सेब और नासपाती के समान चश्मा बिठाया जाता है। पौधों को ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में १५ फीट के अन्तर से लगाना चाहिए। इसके पौधे अधिक बड़े नहीं होते। पौधा लगाने के ८ वर्ष बाद फलता है।

फसल की तैयारी--यह फरवरी-मार्च में फूलती और चार माह बाद फसल तैयार होती है।

अन्य--शेष सब चीजों में यह सेब के समान है, अतएव सेब का अध्याय देखें।

बेल या श्रीफल

यह हमारे यहाँ अधिकतर जंगली दशा में पाया जाता है। इसका आदि स्थान भारतवर्ष ही है। यह एक अत्यंत पौष्टिक फल है। यकृत दोषवाले रोगियों और उदर रोगों से पीड़ितों को पके बेल का सेवन सर्वथा लाभप्रद है। कच्ची बेलगिरी बड़े काम में आती है।

जातियाँ—इसकी प्रमुख दो जातियाँ होती हैं—

(१) कागजी बेल—इसके फल बड़े, छिलका पतला, बीज कम, और गूदा स्वादिष्ट और सुगन्धयुक्त होता है। (२) छोटा बेल—यह कैथे के आकार का होता है। यह निम्न कोटि के और छोटे होते हैं।

जलवायु व भूमि—समशीतोष्ण जलवायु में विशेष होता है। वैसे पहाड़ी प्रदेशों को छोड़कर प्रत्येक जलवायु में तथा प्रत्येक भूमि में यह होता है।

पौधे तैयार करना—इसे साधारणतया बीज से तैजार किया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाता है। कलम व दाबा लगाकर भी यह सफलतापूर्वक तैयार किया जाता है। इस रीति से फल जल्दी मिलते हैं। बीजू पौधा ६ से ८ साल तक में फल देता है।

पौधे लगाना व खाद—वर्षा और जाड़े में २५ से ३० फीट के अन्तर से लगाना चाहिए। इसका पेड़ ३०-३५ हाथ तक ऊँचा होता है। खाद की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती।

सिंचाई, गुड़ाई व छँटाई—नये पेड़ों की परिचर्या अधिक करनी पड़ती है। छोटे पौधों की सिंचाई व गुड़ाई यदा-कदा कर देनी चाहिए। दूसरे पौधों को हानि पहुँचाने वाली शाखों की छँटाई कर देनी चाहिए। बेलपत्र पूजा के काम आते हैं।

फसल की तैयारी—जाड़े के अन्तिम दिनों में फूलता है और अप्रैल से जून तक फल मिलते हैं। प्रति पेड़ से लगभग ढाई-तीन सौ फल मिलते हैं।

महुआ

यह मनुष्यों और पशुओं सभी के उपयोग में आता है। इसकी शराब भी बनती है। गरीब लोग इसे भून कर खाते हैं।

जलवायु व भूमि—मध्यम जलवायु और हल्की दोमट भूमि अधिक अनुकूल पड़ती है।

पौधा तैयार करना—पौधे बीज बोकर तैयार किये जाते हैं। यह गर्मी में फूलता और फलता है। इसे बीमारियों व कीड़ों से कोई विशेष हानि नहीं होती है।

ब्लैक बेरी, रास्प बेरी तथा ड्यू बेरी

ब्लैकबेरी के फल खाये जाते हैं और उसका मुरब्बा भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बनता है। यह और भी कई प्रकार की होती है जैसे रास्प बेरी, ड्यू बेरी आदि। इन सबकी खेती ब्लैक बेरी के समान होती है। इसके पौधे बीज से अथवा टोंटे (Offset) द्वारा तैयार किये जाते हैं।

भूमि व खाद—दूमट भूमि इसके लिये अनुकूल पड़ती हैं। इसके गढ़ों में पौधे लगाने के पूर्व ढाई तीन सेर प्रति गढ़े के हिसाब से गोबर की खाद देना चाहिये।

पौधे तैयार करना व लगाना—हम ऊपर बता चुके हैं कि इसके पौधे बीज या टोटे से तैयार किये जा सकते हैं। इन्हें एक फुट गहरा बनायें। गढ़े से गढ़े की दूरी तीन फीट हो। गढ़े पंक्तियों में हों जिनकी आपस में दूरी चार फीट की हो तो अच्छा है।

सिचाई, छँटाई आदि—सिचाई ऋतु के अनुसार आवश्यकतानुसार करते रहें। फल लेने के बाद जाड़े के शुरू में उन शाखों को छाँट दें जिनसे फूल प्राप्त हो चुके हों।

फसल की तैयारी—पौधे लगाने के दूसरे वर्ष फल देने लगते हैं। फल अप्रैल व मई के महीने में मिलते हैं।

लीची

लीची भारतवर्ष और अन्य गर्म व तर जलवायु वाले देशों के लिये चीन की एक अनुपम भेंट है। हमारे देश में मुजफ्फरपुर, हुगली, सहारनपुर, भागलपुर, देहरादून, दरभंगा और पूसा की लीची अधिक प्रसिद्ध है।

जातियाँ—कलकतिया लीची प्रसिद्ध है। फसल के तैयार होने के अनुसार इसे दो वर्गों में बाँटा जाता है। (क) शीघ्र तैयार होनेवाली और (ख) देर में तैयार होनेवाली।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जलवायु—गर्म और तर जलवायु विशेष रूप से अनुकूल पड़ती है। पाले से इसकी रक्षा आवश्यक है।

भूमि—चूने के अधिक अंशवाली दोमट भूमि इसके लिये सबसे अच्छी रहती है। बिहार और देहरादून की अधिक उपज का यही कारण है।

पौधा तैयार करना—इसके पौधे बीज, दाबा, गूँटी, भेंट कलम, कलम और चश्मे से तैयार किये जाते हैं। अप्रैल और मई में गूँटी बाँधकर, पौधे तैयार करना अधिक प्रचलित है, किन्तु पानी का समुचित प्रबन्ध न होने पर वर्षा आरम्भ होने परही गूँटी बाँधी जाती है। इसका बीज सुरक्षित रखने पर भी दो माह से अधिक नहीं रखा जा सकता है। बीज से पौधे ८ से १२ वर्ष में तैयार होते हैं। उत्तर प्रदेश में दाबे से भी अप्रैल व मई में पौधे तैयार किये जाते हैं।

पौधे लगाना—इसके पौधे २ वर्ष के होने पर आम के समान लगाये जाते हैं। इसे वर्षा के आरम्भ में या अंत(अक्तूबर) में लगाया जाता है।

खाद—इसके लिये पत्तियों की खाद, सड़े हुये गोबर की खाद, हड्डियों का चूरा और राख का मिश्रण अत्युत्तम है। खाद दिसम्बर में देनी चाहिये। मात्रा आम के ही समान है। बिहार में खाद बहुत कम दी जाती है।

सिंचाई-गुड़ाई—पानी की अधिक आवश्यकता दिसम्बर से जून के आरम्भ तक फूलने और फलने के समय होती है। निराई व गुड़ाई आवश्यकतानुसार करते रहना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

छँटाई—इसके फल टहनियों के साथ ही तोड़े जाते हैं, अतएव छँटाई की विशेष आवश्यकता होती है। प्रारम्भ में छँटाई, विशेषकर सौंदर्य के लिये और अधिक आयु के होने पर जब लीची के पेड़ नहीं फलते तो सभी छोटी-छोटी शाखाओं की छँटाई करदें।

फसल की तैयारी—इसके फूल चार सालतक तोड़ देने चाहिये। शीघ्र तैयार होनेवाली जातियाँ जून के आरम्भ में और देर में तैयार होनेवाली आधे जून तक पककर तैयार हो जाती हैं। ठंडे स्थानों में जुलाई के अंत तक फल मिलते हैं। इसके पौधों से ४०-५० साल तक फल मिलते रहते हैं।

लीची के शत्रु—आम के समान तने में छेद करने वाले कीड़े से इसकी भी रक्षा करनी चाहिए। इसे मकड़ियों से अधिक हानि होती है। इससे पत्तियाँ सिकुड़कर गिर पड़ती हैं। ऐसी पत्तियों को शाख से अलग कर जला देना चाहिए। तने पर कोलतार पोत देने से यह पेड़ पर चढ़ नहीं पातीं। क्रूड आयल एमलशन या दो मन पानी में पाव भर गंधक का चूरा और ढाई सेर साबुन का घोल तैयार कर, छिड़काव करने से लाभ होता है।

लुकाट

यह जापान और चीन का फल है। भारतवर्ष में भी इसकी खेती जहाँ-तहाँ होने लगी है। उत्तरी भारत में इसकी खेती अधिक की जाती है। लखनऊ, सहारनपुर व आगरा के फल प्रसिद्ध हैं। यह मीठा, स्वादिष्ट और हल्की खटास लिए हुए होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जातियाँ—रंग, आकार और पकने के समय के भेद से कई जातियाँ हैं—(१) शीघ्र पकनेवाली—गोल्डेन यलो और टेम्सप्राइड, (२) मध्यम पकनेवाली—जापान-पेल-यलो और देशी पेल-यलो, (३) देर में पकनेवाली—आगरे की बड़ी जापानी-टनाका और कैलिफोनिया।

जलवायु—मध्यम जलवायु इसके अनुकूल पड़ती है। अधिक गर्मी, ठण्ढक व पाले से हानि होती है। इसे प्रायः २० से ४५ इंच वार्षिक वर्षावाले स्थानों में लगाते हैं।

भूमि—दूमट व बलुई दूमट भूमि अच्छी रहती है, पानी के निकास तथा सिंचाई का उपयुक्त प्रबन्ध आवश्यक है।

पौधे तैयार करना—इसके पौधे बीज, भेंटकलम (इनार-चिंग पद्धति से) चश्मे और दाबे से तैयार किये जाते हैं। हमारे यहाँ भेंटकलम सबसे अच्छी रहती है। बाज अप्रैल-मई में बोये जाते हैं और दो महीने में उग आते हैं।

पौधे लगाना—पौधे वर्षा के आदि या अन्त और सिंचाई की उपयुक्त व्यवस्था होने पर फरवरी में भी लगाये जा सकते हैं। पौधों को ३×३×३ फीट की नाप के खादयुक्त गढ़ों में २५ फीट के अन्तर पर बनी पंक्तियों में लगाना चाहिए। पौधों की आपस में दूरी १८ से २० फुट रखनी चाहिए।

खाद—गढ़ों में गोबर या मैले की खाद देनी चाहिए। अक्टूबर के तीसरे सप्ताह में जड़ों को खोल दें और एक सप्ताह बाद खूब सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाकर बंद कर दें। प्रति एकड़ डेढ़-दो मन गोबर की खाद पर्याप्त होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सिंचाई, निराई व गुड़ाई—फल आने व फल लगने के समय (अक्टूबर से मार्च तक) सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। फलों के पकने तक सप्ताह-डेढ़ सप्ताह बाद सिंचाई आवश्यक है। सिंचाई नालियों द्वारा की जानी चाहिए। फल तोड़ने के पश्चात् सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं होती। आवश्यकतानुसार गुड़ाई करते रहना चाहिए।

छँटाई—इसकी अधिक आवश्यकता नहीं होती।

फूल और फसल की तैयारी—पौधा लगाने के ४-५ साल बाद फल देने लगता है। भारतवर्ष में जुलाई और अगस्त से फूल जनवरी तक आते रहते हैं। अगस्त में फूल तो झड़ जाते हैं पर उनसे फल नहीं मिलते। नवम्बर के अंत में गुच्छों में आने वाले फूलों से ही फल मिलते हैं। इसका फल मार्च-अप्रैल में तैयार होता है। प्रति पौधे से मन डेढ़ मन के लगभग फल मिलते हैं।

इसके शत्रु—सौभाग्य से भारतवर्ष में लुकाट को कोई हानिकारक बीमारियों अथवा कीड़ों का अधिक भय नहीं है। तने में लगनेवाले कीड़ों, मक्खियों और अन्य छोटे-छोटे कीड़ों से थोड़ी-बहुत हानि अवश्य पहुँचती है। बोर्डेक्स मिक्सचर का छिड़काव और तने आदि पर तारकोल का लेप या बोर्डेक्स पेस्ट लगाकर इनसे बचा जा सकता है।

शहतूत

यह चीन का पौधा है। हमारे देश में आसाम, बंगाल, पंजाब और काश्मीर में इसकी खेती की जाती है। इसके फल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहुत स्वादिष्ट होते हैं। इससे तृषा शान्त होती है। इसकी पत्तियाँ रेशम के कीड़ों की एक श्रेष्ठ खूराक है।

जातियाँ—इसकी मुख्य तीन जातियाँ हैं (१) काली (२) हरी और (३) लाल। पहली दो रेशम के कीड़ों के लिए उत्तम हैं। तीसरी भारतीय है। काली सबसे अच्छी होती है।

जलवायु और भूमि—यह समशीतोष्ण जलवायु चाहता है। यह प्रायः सभी भूमियों में होते हैं और अधिक देखरेख की आवश्यकता नहीं होती।

पौधे तैयार करना और लगाना—बीज की अपेक्षा कलम से पौधे तैयार करना अधिक अच्छा होता है। चश्मा और इनारचिंग से भी तैयार किये जा सकते हैं। पौधे जाड़े या बरसात में जन्मस्थली से हटाकर ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में २५×५ फीट के अंतर पर रक्खा जाता है।

खाद, सिचाई और छँटाई—कभी-कभी गोबर, भेड़ की मेंगनी और तालाब की मिट्टी दे देनी चाहिए। छोटे पौधों को सातवें-आठवें दिन पानी देते रहना चाहिए। फलने के बाद बरसात में छँटाई कर देनी चाहिए। रेशम के कीड़ों के लिये अधिक छँटाई की जाती है ताकि पत्ते जल्द आवें।

फसल की तैयारी—यह फरवरी-मार्च में फूलता और मई जून के लगभग पकता है। कलमी पौधे से तीसरे साल फल मिलते हैं।

शत्रु—इसे फंगस की बीमारियों से बहुत हानि होती है। बीमार हिस्सों को अलग कर देना चाहिए और आवश्यकता से अधिक पानी न दें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शरीफा

शहर के लोगों में इसका अधिक प्रचलन है। हमारे देश में बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश और दक्षिणी भारत में भली भाँति होता है। हैदराबाद के शरीफे अधिक प्रसिद्ध हैं। इसकी कोई विशेष जातियाँ नहीं होती हैं।

जलवायु और भूमि—अधिक ठंडी जलवायुवाले स्थानों को छोड़कर सर्वत्र होता है। फूलने और फलने के समय खुश्क जलवायु की आवश्यकता होती है। चूने के अंश से युक्त प्रत्येक भूमि में, जिसमें कि पानी के निकास का समुचित प्रबंध हो, इसकी खेती की जा सकती है।

पौधे तैयार करना और लगाना—बीज, चश्मा, गूँटी और भेंटकलम सभी रीतियों से इसके पौधे तैयार किये जाते हैं। बीज फरवरी या वर्षा ऋतु में बोये जाते हैं। यह एक माह में उगते और लगभग ५ वर्ष बाद फल देते हैं। इसके पौधे बड़े पेड़ों के मध्य भी लगाये जा सकते हैं। पौधे १२-१२ फीट के अंतर पर बने हुए ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में लगाये जाते हैं।

खाद—इसे चूना मिली हुई थोड़ी गोबर की खाद प्रतिवर्ष जाड़े में दें।

सिंचाई, निराई और छँटाई—प्रति वर्ष गर्मी में फलने और बढ़ने के समय दो सिंचाई पर्याप्त होती हैं। अधिक फल लेने के लिए थोड़ी छँटाई भी कर देनी चाहिए।

फसल की तैयारी—जल्दी आये हुए फल भली-भाँति पक जाते हैं; वैसे यह मार्च से जून तक फलता और अगस्त-सितम्बर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तक पकता है । प्रति पौधा डेढ़ सौ फल का औसत पड़ता है।

शत्रु—फलों को पूरा गलने से पूर्व ही तोड़ लें । बीमारियों से डर कम है, किन्तु पशु-पक्षियों से रक्षा आवश्यक है।

स्ट्राबेरी

स्ट्राबेरी की खेती बड़ी ही महत्व की है और एक निश्चित पहाड़ी और मैदानी क्षेत्र में इसकी खेती होती है। प्रत्येक स्थान में थोड़े-बहुत फल मिल जाते हैं ।

जातियाँ—हमारे देश में—१. जेम्स वैच, २. गैरिबाल्डी और ३. किन्स सीडलिंग नामक जातियाँ अधिक बोयी जाती हैं। इनमें से तीसरी सर्वश्रेष्ठ है ।

जलवायु—इसके लिए मध्यम जलवायु की आवश्यकता है। पहाड़ों पर यह अच्छी तरह पैदा होती है । पाला और गर्मी से हानि होती है । इसे मैदानी गर्म जिलों में भी काफी व्यय करने पर तैयार किया जा सकता है; परन्तु इससे आर्थिक लाभ नहीं होता । उत्तरप्रदेश के कुछ क्षेत्रों में विशेषकर मेरठ, मुजफ्फरपुर, सहारनपुर और नैनीताल के जिलों में यह एक प्रधान व्यवसाय हो चला है। कानपुर, इलाहाबाद और लखनऊ आदि प्रमुख शहरों के निकट भी इसके उगाने का प्रयत्न किया जा रहा है। बंगलौर आदि बम्बई के पहाड़ी भागों में और पंजाब के भी कुछ भागों में इसकी खेती होती है ।

भूमि—स्ट्राबेरी चिकनी भूमि से लेकर हल्की बलुई भूमि तक में हो सकती है; किन्तु भारी दुमट भूमि, जिस पर सूर्य का सीधा प्रकाश दिन भर पड़ता हो, सर्वश्रेष्ठ रहती है। भूमि उर्वरा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व नम हो, तो अच्छा रहता है। इसकी खेती के लिए चुनी हुई भूमि शहर के निकट होनी चाहिए, क्योंकि इसका फल अधिक समय तक नहीं टिकता।

भूमि की तैयारी—पौधे लगाने के पूर्व वर्षा में कम-से-कम सात-आठ बार जोतकर गर्मी में वैसे ही छोड़ देना चाहिए। इसके बाद गोड़ाई करते और पाटा देते रहना चाहिए।

पौधे तैयार करना—यदि इसके पौधे को निर्विघ्न बढ़ने दें, तो प्रत्येक पौधे से एक बेल निकलती है, जिसको रनर (Runner) कहते हैं। इसमें स्थान-स्थान पर गाँठें होती हैं और प्रत्येक गाँठ पर एक नया पेड़ पैदा हो जाता है। इसके पौधे इन्हीं टुकड़ों (रनर्स) को लगाकर तैयार करते हैं। एक पेड़ में केवल ४ से ८ ही बेलें और प्रत्येक बेल से एक ही पेड़ लेना चाहिए।

पौधे लगाना--स्ट्राबेरी के पौधों के लगाने का सबसे अच्छा समय अक्टूबर से नवम्बर का है। नये पौधे जिनमें फल न आये हों, वे ही लगाने में सर्वश्रेष्ठ रहते हैं। पौधे लगाने के पूर्व खेत को १२ फीट चौड़ी क्यारियों में बाँट देते हैं और प्रत्येक क्यारी में तीन-तीन इंच ऊँची मेंड़ों को दो फीट के अन्तर पर बनाते हैं। मेड़ों पर पौधे १ फीट की दूरी पर रोप दिये जाते हैं। यदि मेंड़ों की लम्बाई उत्तर-दक्षिण हो तो पौधों को सूर्य का प्रकाश सदैव मिलता रहेगा।

खाद—स्ट्राबेरी को खाद की प्रारंभ में अधिक आवश्यकता होती है; क्योंकि—(१) यह खाद्य पदार्थों को अधिक मात्रा में प्राप्त कर लेती है और (२) बाद को गोबर की खाद, निकलते हुए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कल्लों को हानि पहुंचाती है। क्यारियाँ बनाने के पूर्व ३०-४० गाड़ी सड़े हुए गोबर की अथवा कम्पोस्ट खादें दे देनी चाहिए। पौधों के फूलने के समय भेंड़ की लेंड़ी की खाद भी थोड़ी मात्रा में दे देनी चाहिए। दिसम्बर के अंत में ७५ सेर प्रति एकड़ के हिसाब से हड्डी के चूरे का हल्का छिड़काव कर देने से फल बड़े और स्वादिष्ट होते हैं।

सिंचाई व गुड़ाई—पौधे लगाने के पश्चात् बढ़ने, फूल आने और फलने के समय प्रति सप्ताह सिंचाई कर देनी चाहिए। फल पकने के समय पानी न देना चाहिये, नहीं तो मिठास कम पड़ जाती है। मेंड़ों के बीच की मिट्टी की और मेंड़ों की गुड़ाई करते रहना चाहिए, जिससे कि मिट्टी सदैव भुरभुरी रहे। इससे रनर्स जड़ें भी नहीं पकड़ पातीं।

छँटाई—वर्षा के दिनों में पौधों को ऊँचे स्थान पर लगाना आवश्यक है। इसकी छँटाई की आवश्यकता बहुत कम होती है। पीली तथा सूखी पत्तियाँ अधिक होने पर रनर्स को भी अलग करते रहना चाहिये।

फसल की तैयारी—उसके फूल फरवरी में आते हैं और फसल मार्च से मई तक तैयार होती है। सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि फल तेज धूप होने के पूर्व प्रातःकाल ही तोड़ लेना चाहिये। फल जमीन से न लगने पायें। अतएव सूखी घास पुआल अथवा खपड़ों के टुकड़े नीचे रख देते हैं। इसके फल दूर नहीं भेजे जाते; क्योंकि अधिक नहीं टिकते। एक एकड़ में २०० से ३०० सेर तक पैदावार होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्ट्राबेरी के शत्रु--फंगस की बीमारियों से पत्तियों पर धब्बे पड़ जाते हैं व कभी-कभी फल सड़ भी जाते हैं। अतः इसे अलग कर देना चाहिए।

सपोटा

यह दक्षिणी अमेरिका के सबसे अच्छे फलों में से है। इसे सपोडिला (Sapodilla), चीकू (Chikku) और सपाटा आदि अनेक नामों से जाना जाता है। हमारे देश में इसे प्रायः सपोटा और बम्बई में चीकू कहते हैं। यह पित्त तथा ज्वरनाशक होता है।

जातियाँ—आकार-प्रकार की दृष्टि से दो तरह के होते हैं—(१) लम्बे और (२) गोल।

जलवायु—यह गर्म व तर जलवायु वाले प्रदेशों में समुद्री किनारों पर भली भाँति होता है। तेज हवा और पाले से इसे हानि पहुँचती है। यदि इनसे रक्षा की जाय, तो उत्तर प्रदेश में भी इसकी खेती की जा सकती है। हमारे देश में इसकी खेती अधिकतर बंगाल, मद्रास व बम्बई के प्रदेशों में तथा मध्यप्रदेश व उत्तरप्रदेश की तराई के भागों में होती है।

भूमि--गहरी बलुई अथवा बलुई दोमट भूमि, जिसमें चूने का अंश अधिक हो, अच्छी रहती है। दूसरी जमीनों में खूब खाद देकर व जुताई-गुड़ाई कर इसकी खेती की जा सकती है। पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिये।

पौधे तैयार करना—इसके पौधे बीज, दाबे, गूँटी, चश्मा और भेंटकलम से तैयार किये जा सकते हैं। खिन्नी महुवा या सपोटा के तने पर तैयार किये हुये भेंटकलम सबसे अच्छे रहते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं। बीजू पौधे आठ वर्ष, कलमी चार वर्ष और भेंटकलम ६ माह में तैयार होते हैं।

पौधे लगाना—पौधे फरवरी-मार्च तथा वर्षा ऋतु में ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में १५ से २५ फीट के अन्तर पर लगाना चाहिये। बीजू के लिये अन्तर अधिक और अन्य के लिये कम रखना चाहिये। इसके पौधे धीरे बढ़ते हैं।

खाद—गोबर की खाद सबसे अच्छी रहती है। प्रतिवर्ष जुलाई व फरवरी में आधा-आधा मन खाद देनी चाहिये और फल कम अथवा न मिलने पर आम के समान खादें देनी चाहिये।

सिंचाई, गुड़ाई व छँटाई—गर्मी में सिचाई व थालों की गुड़ाई कर देनी चाहिये। पेड़की वे शाखें जो दूसरे पौधों को हानि पहुँचावें छाँट देना चाहिये।

फसल की तैयारी—पौधे लगाने के ४-५ साल में फलने लगते हैं और प्रायः २५ वर्ष तक फल देते रहते हैं। यह बारहमास फूलता और फलता है, परन्तु फरवरी से जुलाई के मध्य तक विशेष रूप से फूलता और मार्च से अक्तूबर तक फलता है। फलों को घुलने के पूर्व तोड़ लेना ठीक रहता है।

सपोटे के शत्रु--आम के समान तने में छेद करनेवाला और पत्ती खानेवाला कीड़ा इसे भी हानि पहुँचाता है। पानी अधिक होने पर पौधा सूखने भी लगता है।

सेब

सेब मधुर रसविशिष्ट एक उपादेयफल है। यह क्षुधावर्धक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वीर्यवर्धक और मस्तिष्क को शक्ति प्रदान करनेवाला होता है। इसमें ए, बी और सी तीनों ही विटामिन होते हैं; किन्तु प्रायः महँगा होने के कारण अधिकतर भारतवासी इसका उपयुक्त सेवन नहीं कर पाते।

जातियाँ--हमारे देश में भली भाँति होने वाली किस्मों में समरगेलेन, अर्ली सनबेरी और पिपिन, शीघ्र तैयार होनेवाली-आरेंज, किंग आफ पिपिन्स, मध्यम तैयार होनेवाली-स्टरमर पिपिन, बिस्मार्क, रोम ब्यूटी और देशी गिस्में, देर में तैयार होने वाली जातियाँ हैं।

जलवायु--यह शीतप्रधान पहाड़ी प्रदेशों में अधिक होता है। देशी किस्में मैदानी प्रदेशों में भी होती हैं। पाले से इसे विशेष हानि होती है। हिमालय व उसके निकटवर्ती प्रदेश, दक्षिण में ऊटकमंड एवं बंगलौर में तथा उत्तरप्रदेश में कुमायूँ में होता है। सहारनपुर, देहरादून आदि में भी देशी किस्में पैदा की जाती हैं।

भूमि--इसके लिये ऊँची दुमट या दोमट-मटियार भूमि अच्छी रहती है। पानी के निकास का समुचित प्रबन्ध आवश्यक है।

पौधे तैयार करना व लगाना--पौधे बाँध-कलम अथवा चश्मा दोनों ही से तैयार किये जा सकते हैं। बीही, नासपाती, या सेब के बीजू पौधे पर मार्च-अप्रैल में चश्मा चढ़ाया जाता है। अच्छी जातियों को देशी के स्टाक पर बसन्त में बाँधना अच्छा रहता है। पौधे दिसम्बर से फरवरी तक २०×२ फीट के अंतर पर ३×३×३ फीट के खादयुक्त गढ़ों में लगाना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाद—प्रति वर्ष सड़े हुये गोबर की खाद दस सेर में ४ सेर राख और २ सेर हड्डी का चूरा मिलाकर प्रति पौधे को दे देना चाहिए ।

सिंचाई, गुड़ाई व छँटाई—गर्मी में व पतझड़ के बाद सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है । लगाने के बाद दो-तीन वर्ष तक पानी की अधिक आवश्यकता होती है । सिंचाई के बाद थालों की गुड़ाई अधिक कर देनी चाहिए । फल पकने लगें तो पानी कम देना चाहिए । इससे फलों का स्वाद अच्छा बना रहेगा । गर्मी में छँटाई अवश्य करनी चाहिए । पौधों को ३-४ साल में काट-छाँटकर ठीक सुन्दर रूप दे देना चाहिए । अधिक फल आ जायँ तो कुछ फलों को उसी समय तोड़ दें जब आँवले के समान हों ।

फसल की तैयारी—यह फरवरी-मार्च में फलता और अगस्त-सितम्बर में फल देता है। इसका पौधा १५ साल तक फल देता है।

सेब के शत्रु—फंगस के असर से प्रायः इसके फल सड़ने लगते हैं; अथवा काले दाग पड़ जाते हैं । पत्ती खाने वाले और चूसने वाले कीड़े भी इसे हानि पहुँचाते हैं। इन्हें चुन-चुन कर समाप्त कर देना चाहिए और चूना व गन्धक के घोल का छिड़काव पतझड़ के बाद करना चाहिए । फंगस की बीमारियों में बोर्डेक्स मिक्सचर छिड़कना चाहिये ।

——:)❀(:——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बाग लगाने में सरकारी सुविधाएँ

यह स्पष्ट है कि हमारे किसानों को, जो कि अनेक वर्षों से केवल खेती के लिये ही भूमि का इस्तेमाल करते आ रहे हैं, पेड़ लगाने, उनकी देखभाल करने और विशेषकर किसी विशेष भूमि के लिये उपयुक्त पेड़ चुनने में कठिनाई होगी। इस काम के लिये सरकार ने उद्यान-विभाग के अधिकारियों को गश्ती सूचनायें दे दी हैं कि वे अधिक वृक्ष लगाने, विशेषकर फल के वृक्ष, के लिये आन्दोलन शुरू करें और इसके लिए निम्नलिखित सुविधायें देने का निश्चय किया गया है—

१. बाग लगाने के स्थान के समीप के रेलवे स्टेशन अथवा मुख्य सड़क तक मुफ्त पौधे ले जाने की सुविधा दी जाती है।

२. नये बाग लगाने तथा पुराने बागों को पुनर्जीवित करने की वैज्ञानिक सलाह भी मुफ्त दी जाती है।

३. पौधे सस्ते भाव पर दिये जाते हैं और कांटेदार तार, खाद तथा विलायती खाद देने का प्रबन्ध किया जाता है।

४. फलदार वृक्षों को कीड़ों तथा बीमारियों से बचाने के लिये दवायें नाममात्र के मूल्य पर दी जाती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

५. उद्यान-विभाग द्वारा बागबानी में प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) की व्यवस्था की जाती है और ट्रेनिंग लेनेवालों को मैदानों में १० रुपया प्रतिमास और पहाड़ों पर २५ रुपया प्रतिमास वजीफा दिया जाता है।

६. विश्वसनीय पौधे और बीज देने के लिये सुविधाजनक स्थानों पर पौधशालायें खोली गयी हैं।

पेड़ तथा बाग लगाने के लिये प्रोत्साहनके रूप में ऊपर लिखी सुविधाओं से कहीं अधिक महत्वपूर्ण सुविधा तो स्वयं जमींदारी-विनाश तथा भूमि-व्यवस्था अधिनियम की योजना में ही निहित है। इस अधिनियम के अनुसार कोई भी स्वस्थ शरीर वाला व्यक्ति, जिसका दिमाग भी दुरुस्त हो, यद्यपि साझीदार रख सकता है, किन्तु किसी आदमी को अपनी भूमि पट्टे या लगान पर नहीं दे सकता। इस नियम के उल्लंघन पर उसकी जमीन जब्त कर ली जायगी। यदि खेती नहीं करना चाहता और भूमिधर है, तो उसे बेच सकता है, या अगर वह सीरदार है, तो उसे यह जमीन गाँव-समाज के हवाले करनी पड़ेगी। परन्तु इस कानून में एक सुविधा जरूर है और वह यह कि यदि वह इस भूमि में बाग लगा दे, तो खेती न करते हुये भी वह भूमि उसी की रहेगी। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यदि वह इमारती लकड़ी का पेड़ लगाता है या ऐसे पेड़ लगाता है,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जो बहुत कीमती फल नहीं देते, तो उसे भूमि की मालगुजारी भी नहीं देनी पड़ेगी। इसका यह अर्थ हुआ कि सब वकील, डाक्टर, शिक्षक, राजकर्मचारी या अन्य जन-सेवक तथा वे दूसरे लोग जो कि अपने धंधे के कारण गाँव में नहीं रह सकते, किंतु फिर भी अपनी पैतृक भूमि को अपने तथा अपने बालबच्चों के लिये बचाकर रखना चाहते हैं, ज्यों-ज्यों उन्हें जमींदारी विनाश तथा भूमि-व्यवस्था अधिनियम की बातें और उनके लाभ मालूम होते जायेंगे, अपनी खेती की भूमि में पेड़ और बाग लगा देंगे।

——————

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फलों की खेती की जंत्री

सिंचाई--पौधे के जड़ पकड़ने तक ही सिंचाई की जरूरत है। फल पड़ने पर जाड़ों में ही एक या दो सिंचाई काफी होती हैं।

छँटाई—अति आवश्यक और फायदेमन्द है। पौधा जल्दी बढ़ता है और शाखाएँ लम्बी और कमजोर हो जाती हैं। इसलिए पौधे को मजबूती देने के लिए छोटी कमजोर शाखों को मोटी शाखों तक छाँट देते हैं। अच्छी फसल लेने के लिए सालाना छँटाई आवश्यक है।

फूल-फल--सितम्बर-अक्तूबर में फूल आकर, जनवरी-फरवरी तक फल पक जाता है।

जनवरी—१ अमरूद, लुकाट, सेब और आड़ू में कलम बाँधी जाय और लुकाट, सेब, बेर, आड़ू और नासपाती में बडिंग की जाय। २. आड़ू के पौधे गढ़ों में लगाये जायँ। ३. अमरूद, नींबू, संतरा, बेर, आँवला, कमरख, केला और पपीता की चुनाई की जाय। ४. आम, कटहल, लीची, लुकाट, शहतूत आदि के पौधों में थाले बना दिये जायँ और सूखी डालों को छाँट दिया जाय। ५. जो पौधे बाग में लगवाना हो, उनकी माँग मालूम कर ली जाय और मँगाने की व्यवस्था करें।

फरवरी—१. लुकाट, आड़ू, आलूचा व लीची की फल लगने के बाद सिंचाई करें। २. अनन्नास पर मिट्टी चढ़ावें व सिंचाई करें। ३. आम अमरूद, नारंगी, लीची, पपीता, केला, लुकाट, आँवला, माल्टा, कमरख

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और नासपाती के पौधे गढ़ों में लगावें। ४. आम, अमरूद, लुकाट, सेब, शरीफा आड़ू, और नासपाती में ग्राफ्टिंग की जाय। ५. संतरा, लुकाट, सेब, बेर, माल्टा और आड़ू में बडिंग करें। ६. शरीफा, पपीता और नींबू के पौधे तैयार करने के लिए नरसरी में बीज बोये जायँ। ७. बेर, अमरूद, पपीता, संतरा व नींबू की चुनाई की जाय।

मार्च—१. चिड़ियों, तोतों और कौत्रों से फलों की रक्षा करें। २. लुकाट संतरा, आम और आड़ूचा की सिचाई करें। ३. केले की पुत्तियाँ निकालें और खाद देकर पानी दें। ४. आम और शरीफा में ग्राफ्टिंग की जाय। ५. संतरा और माल्टा में बडिंग की जाय। ६. नींबू में लेयरिंग और गूँटी की जाय। ७. संतरा, कटहल, सपोटा, लुकाट की चुनाई की जाय। ८. जो पौधे बाग में लगाये गये हों, उनकी गुड़ाई व सिचाई की जाय। ९. आम के पेड़ों पर ग्रीस बैण्ड लगा दिये जायँ।

अप्रैल—१. नये लगाये गये पौधों की गुड़ाई व सिंचाई की जाय। लू से बचाने के लिये छप्पर या टट्टियों की व्यवस्था की जाय। २. लुकाट, अंजीर, फालसा और शहतूत की चुनाई की जाय। ३. पौधे लगाने के लिये गढ़े खोद दिये जायँ।

मई—१. अनन्नास तथा अन्य फलों की लगातार सिंचाई की जाय। २. नरसरी में काफी पानी दें। ३. पौधे लगाने के लिये गढ़े खोद दिये जायँ। ४. लीची, आम, कटहल, पपीता और फालसा की चुनाई की जाय। ५. फलों की रखवाली की समुचित व्यवस्था की जाय। ६. नये लगाये हुये पौधों को लू से बचाने का उपाय किया जाय।

जून—१. आम की गुठलियाँ स्टाक तैयार करने के लिए बोई जायँ। २. बागों में थालों की निराई, बाग की जुताई और सफाई की जाय। ३. नए लगाए हुए बागों में हरी खाद के लिए सनई बो दी जाय। ४. पानी के निकास की व्यवस्था की जाय। ५. आम, कटहल, लीची, अंगूर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अंजीर और शहतूत की चुनाई की जाय। ६. पपीता, आँवला, और फालसा के पौधे बीज से तैयार किए जायँ। ७. अंजीर के पौधे कलम तथा दाबा द्वारा तैयार किए जायँ। ८. पौधों की माँग मालूम करें और उनको मँगाने की व्यवस्था करें।

जुलाई—१. नए-नए पौधे लगाए जायँ। २. थालों की सफाई की जाय और हरी खाद के लिए सनई की जुताई कर दी जाय। ३. अनन्नास की पत्तियों को फलों से तोड़कर बालू में लगा दिया जाय। ४. आम, कटहल, नींबू अमरूद, नासपाती, आड़ू की फली की चुनाई की जाय। ५. आम, अमरूद, लुकाट में ग्राफ्टिंग तथा नींबू, लीची और अंजीर की गूँटी बाँधी जाय। ६. नए बाग लगाने के लिए किनारे पर टट्टियाँ लगा दी जायँ। खेतों की मेंड़-बन्दी कर दी जाय। ७. पौधों की माँग मालूम करें और उनको मंगाने की व्यवस्था करें।

अगस्त—१. आड़ू आलूचा, नींबू और संतरा में चश्मा बाँधा जाय। २. नींबू की कलम लगायी जाय। ३. नींबू, अनन्नास को गढ़ों में लगाया जाय। ४. नींबू, केला, सेब, नासपाती, आड़ू, कटहरी और अमरूद की चुनाई की जाय। ५. गूँटी, ग्राफ्टिंग को धीरे-धीरे काटा जाय। ६. हरी खाद के लिए बोई हुई सनई की पलटाई कर दी जाय।

सितम्बर—१. स्टाक तैयार करने के लिए आड़ू की गुठलियाँ बोयी जायें। २. कटहल के बीज पौधे तैयार करने के लिए बोए जायें। ३. पपीता, सेब, कमरख, नींबू, नासपाती की चुनाई की जाय। ४. नए लगाए हुए बागों में रबी की तरकारियाँ लगाने का प्रबन्ध किया जाय।

अक्तूबर—१. शरीफा, अमरूद, नींबू, खिरनी, लीची, आड़ू, आलूचा, चकोतरा के बीज पौधे तैयार करने के लिए बोए जायँ। २. कलमों की देखभाल करते रहें। ३. आम, लीची, संतरा, नींबू, अमरूद, आँवला, बेल आदि के बाग लगाएँ। ४. सपोटा, पपीता, शरीफा,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कमरख, नींबू, नासपाती की चुनाई। ५. नए बागों में खाली जमीन में रबी की तरकारियाँ बोयी जायँ और बोई हुई तरकारियों की निकाई, गुड़ाई की जाय।

नवम्बर—१. अक्तूबर में लगाए हुए पौधों की सिंचाई की जाय और निराई, गुड़ाई भी करते रहें। २. अंगूर, नींबू और शहतूत के टुकड़े (कटिंग) पौधे तैयार करने के लिए लगाए जायँ। ३. नये बागों की सिंचाई, निकाई और गुड़ाई की जाय और जिनमें फूल आ गये हों उनके थाले बनाकर सिंचाई की जाय। ४. छोटे पौधों को पाले से सुरक्षित रखने के लिये व्यवस्था की जाय। ५. संतरा, पपीता, शरीफा, चकोतरा, नासपाती, अमरूद, नींबू की चुनाई की जाय।

दिसम्बर—१. आम, लीची, फालसा, कटहल, लुकाट, सपोटा, अंजीर, बेर, शहतूत की डालों तथा जड़ों की छँटाई करके थाले बना दिये जायँ। २. छोटे पौधों को पाले से बचाने की व्यवस्था करें। ३. शरीफा, कमरख, अमरूद, नींबू, संतरा की चुनाई करें। ४. नये बागों की सिंचाई, निकाई और गुड़ाई करें।

——:*:——

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुष्प वाटिका

हमने आरम्भ में फलों के साथ पुष्पवाटिका और मिश्रबाग का जिक्र किया था। आजकल फूलों की खेती का शौक दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। लोग बँगलों और घरों के आसपास फूल आदि के वृक्ष लगाकर निवास-स्थान की शोभा बढ़ाते हैं। फलों के बाग में भी मुख्य-द्वार पर, इधर-उधर दोनों बाजुओं पर और यत्र-तत्र छोटे-छोटे प्लाट बनाकर फूलों के पौधे रोपते हैं। इन्हें मिश्रबाग की संज्ञा दी जाती है। हम जो पुष्पवाटिका का संक्षेप में वर्णन करेंगे, उसी से मिश्रबाग लगानेवाले भी पूरा लाभ उठा सकते हैं।

पुष्प-वाटिका लगाने में सुविधा, मेल, निरालापन, सादगी, और विचित्रता का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक क्यारी में पानी सरलता से पहुँच सके, मुख्य मार्ग सीधे और चौड़े हों, जिससे कि पानी जाने में कठिनाई न हो। मुख्य द्वार शहर व स्टेशन की ओर हों। यह बातें ऐसी हैं, जिनकी सुविधा का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है।

फूलों के पेड़ लगाते समय उनके रंगों के मेल का ध्यान रखें और यह भी ध्यान रखें कि वे समान ऊँचाई के हों। अपनी फुलवारी में एक मौलिकता लाने का प्रयत्न करें। क्यारियों के नक्शे आदि सीधे हों, जिससे क्यारी में कठिनाई न हो। भिन्न भिन्न रंग के व ऊँचाई के फूलों के पौधे लगाने के लिये कई प्रकार की क्यारियों के नक्शे तैयार करें। कहने का तात्पर्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह है कि उपरोक्त सभी चीजों में एक सुन्दर सामंजस्य रखकर ही पुष्पवाटिका लगायें।

पुष्प-वाटिका, (क) बनावटी और (ख) प्राकृतिक, दोनों ही ढंग से लगाई जाती हैं। प्राकृतिक ढंग में नदी, झरने आदि के दृश्य रखकर वाटिका तैयार की जाती है; किन्तु पहला ढंग ही सर्वसाधारण के वश का है।

मुख्यद्वार—इसे बनाने के कई ढंग हैं। कोठी मुख्यद्वार से न दिखनी चाहिये, अतएव यह आवश्यक है कि या तो सड़क कुछ घूमकर जाय या मुख्यद्वार के आस-पास ऐसे पेड़ लगें कि वह कुछ छिप जाय।

हरियाली (लान)—प्रत्येक बगीचे में हरियाली होने से, गर्मी में जब चारों ओर धूल उड़ती है, यह हृदय व नेत्रों को शान्ति प्रदान करती है, बगीचे की शोभा बढ़ाती है और बैठक आदि के लिये बड़ा अच्छा रहता है।

हरियाली या लान बड़े पेड़ों के अधिक निकट न हों। इससे जाड़े में घास को धूप बहुत कम मिलती है। उसके चारों ओर १५-२० फीट ऊँची क्यारियाँ लगा सकते हैं। भूमि कुछ ऊँची हो जिससे पानी न रुके।

हमारे देश में प्रायः दूब के ही लान काम में लाये जाते हैं। यह इस काम के लिये है भी अच्छी। दूब लगाने का सबसे अच्छा और सरल ढंग यह है कि नदी, तालाब आदि जलाशयों के किनारे से जहाँ दूब हो, दूब के छोटे टुकड़े मिट्टी सहित खोद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर ले आयें। पुनः लान की भूमि को पानी से तर कर टुकड़े फर्श के पत्थरों के समान जमा दें। लकड़ी के डंडे से पीटकर अथवा हल्का बेलन चलाकर दूब को मजबूत जमा दें। इसके बाद सिंचाई करते रहें। दूब दो तीन इंच से अधिक न होने पावे, इसलिये महीने में दो बार मशीन से दूब काटते रहें।

अन्य घासें लगाने के लिये २-३ फीट गहरी गुड़ाई कर मिट्टी को भुरभुरी कर लें। खोदते समय सड़ा हुआ गोबर घोड़े की लीद और कूड़ा-करकट की ६ इंच मोटी तह बिछा दें। वर्षा होते ही भूमि को पुनः हल्का गोड़कर समतल करलें। इसके बाद जुताई कर सड़े हुये गोबर की खाद भली-भाँति देकर पाटा दे दें। पहाड़ों पर घास का बीज मार्च व अप्रैल या वर्षा के आरम्भ में बोते हैं। एक एकड़ हरियाली के हेतु २५ सेर बीज चाहिये। इसे भी ५-६ इंच बढ़ जाने पर हँसिया, तलवार या कटाई मशीन चलाकर काट दें। चारों ओर पानी पहुंचाने के लिये जस्ता या रबर के नल काम में लाये जाते हैं। प्रति वर्ष वर्षा ऋतु में कुछ सड़ी हुई घोड़े की लीद देनी चाहिये। नवम्बर से मार्च तक ३ पौंड सुपर फास्फेट और १ पौंड अमोनियम सल्फेट प्रति ४० वर्ग गज के हिसाब से देकर सिंचाई कर दें। वर्षा ऋतु में बहुधा केचुए मिट्टी खोदते हैं। अमोनियम कार्बोनेट का घोल छिड़कने से यह मर जाते हैं।

फूल की क्यारियों के नक्शे—कहा जा चुका है कि फूलों की क्यारियों के नक्शे सुन्दर और सादे होने चाहिए। चौकोर,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोल और आयताकार नक्शे सुन्दर भी होते हैं और सादे भी। यह यदि लान मध्य में रखकर लगाये जायँ, तो शोभा और भी बढ़ जाती है। ऊँचे पौधों (सूर्यमुखी, कैना व जिनिया आदि) के नक्शे के मध्य और पटरी में सबसे पीछे लगाने चाहिए। यह ध्यान रहे कि छोटे पौधों का दृश्य न छिपने पावे। मौसमी फूलों की क्यारियाँ व नक्शे फुलवाड़ी के उत्तर व पूर्व की ओर हों, जिससे धूप अधिक मिल सके।

झाड़ियाँ—वाटिका की सुन्दरता और सुरक्षा दोनों ही दृष्टि-कोण से झाड़ियाँ अत्यन्त उपयोगी हैं। हर क्यारी और खेत की सीमाबन्दी में और एकान्त स्थान के चारों ओर बाड़ लगाए जाते हैं। बाड़े के दोनों ओर ५-६ फीट भूमि छोड़कर पौधे लगाये जायँ; क्योंकि इनसे निकटवाले पौधे कमजोर पड़ जाते हैं। झाड़ियों में प्रायः कीड़े और बीमारियाँ हो जाती हैं, अतएव अधिक बढ़ने पर छँटाई कर देनी चाहिए। इन झाड़ियों को अपनी पसंद के अनुसार काट-छाँटकर, भिन्न-भिन्न आकृतियों का बनाया जा सकता है। दोनों ओर और ऊपर बराबर छाँटकर दीवार सी बना देना अच्छा रहता है। यह ढंग सरल भी है और सुन्दर भी है।

सजावट—बगीचे को लतायें चढ़ाकर महराब, दरवाजे, मंडप या मंडवे, नल, फौवारे, हौज या कुण्ड और मूर्तियों आदि से सजाया जा सकता है। कुर्सियाँ आदि कंकरीट की बनाई जायँ तो अधिक सुविधा रहती है। मंडवे बनाने से शोभा दुगुनी हो जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फूलों की खेती के सम्बन्ध में आवश्यक बातें—भूमि तथा खाद इत्यादि का समुचित प्रबन्ध होना अत्यन्त आवश्यक है। मिट्टी भुरभुरी हो और क्यारियों में घास आदि न उगने पावे। समय पर सिंचाई करते रहें जिससे पौधे सूखने न पावें। गोबर की सड़ी हुई खाद सब के लिये उपयोगी है। वैसे, थोड़ी-थोड़ी सभी खादें दी जा सकती हैं।

ऊँचे पेड़

यहाँ हमारे देश में सर्वप्रिय कुछ ऐसे पेड़ों का वर्णन किया जायगा जो अपने पुष्पों अथवा शोभा और उपयोगिता के कारण अति प्रसिद्ध हैं। निम्न वृक्ष ३० फीट से अधिक ऊँचे होते हैं और उनके पौधे गर्मी में फूलते हैं। यह बीज बोकर तैयार किये जाते हैं।

बरगद—यह सदा हरा और बहुत छायादार होता है।

पीपल—जाड़े में पत्ते झड़ जाते हैं।

पुन्नाग या सुरंगी—इसे लाल नागकेसर और लाल नाग-चंपा भी कहते हैं। इसके सुगंधित फूल की बहार माह-फागुन में रहती है। इसके फूल सुगन्धित होते हैं। पेड़ लगाने के बाद ५-६ वर्ष बाद फूलता है। सुरंगी के रंग से लाल रेशम रंगा जाता है। इससे इत्र भी निकलता है। बीज या कलम से इसका पौधा तैयार किया जाता है। भूमि में पानी का निकास अच्छा हो।

बकुल या मौलसिरी—फूल हरापन लिये पीले और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुगन्धित होते हैं। बोने के ५-६ वर्ष बाद फूलता है। फूल सुगंधित, छोटे और चक्राकार होते हैं। पानी मिलने पर बारहो मास फूलता है। फूलों का इत्र बनता है।

यूक्लिप्टस—पेड़ देखने में बहुत सुन्दर और पत्तियाँ सुगन्धित होती हैं।

गुलमोहर—फूललाल व पीले होते हैं। पेड़ ३०फीट-५० फीट होता है।

अशोक—फूल नारंगी व लाल रंग के गुच्छों में होतेहैं।

कदम—फूल गोल, पीले व सुगन्धित होते हैं।

नागचम्पा—फूलकी आकृति नाग के फन के समान होती है। पेड़ लगाने के बाद ७-८ वर्ष में फूलता है। फूलने का समय मार्गशीर्ष और पौष का है। बीज़ पौधेबरसात में लगते हैं।

सुल्ताना चम्पा—फूल सफेद व सुगन्धित होते हैं।

रुद्राक्ष—फूल सफेद। इसके बीजों से माला बनती है।

गोरख इमली--फूल सफेद होता है।

चन्दन--इसकी लकड़ी बहुत शीतल व सुगन्धित होती है। पूजा आदि तथा अन्य अवसरों पर इसकी लकड़ीका बड़ा उपयोग है। प्राचीन भारतीय साहित्य में श्रीखण्ड सफेद,पीत और रक्त चन्दन की तीन जातियों का उल्लेख है। मलयागिरि,गुलाबी और कुंकुमागुरु नाम की कई जातियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। इसकी लकड़ी बड़ी महँगी होती है।

ताजे फल सुखाकर सुरक्षित स्थान पर रख दें और वर्ष के आरम्भ में बीज बोये जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गर्मी में फूलनेवाले पौधे--निम्न पौधे गर्मी में फूलते हैं। यह १५ से ३० फीट के मध्य में होते हैं। इन्हें बीज बोकर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिये।

अमलतास--पुष्प पीले और कली औषधि के काम आती है।

कचनार—फूल सफेद, पीले, बैंगनी व गुलाबी होते हैं। यह गर्मी व जाड़े दोनों में फूलता है।

फुलई—फूल सफेद व सुगन्धित होते हैं।

बबूल—फूल हल्के पीले रंग के होते हैं।

हिमचम्पा—फूल सफेद व सुगन्धित होते हैं।

निम्न पौधे वर्ष भर फूलते हैं। वृक्ष २० से ३० फीट के मध्य में होते हैं। पौधे बीज से तैयार करते हैं—

स्वर्ण चम्पा—यह अधिकतर फागुन और चैत में फूलता है। आसाम में इसके पत्तों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। फूल सुगंधित व पीले होते हैं। पौधा लगाने के पांचवें वर्ष फूलता है। एक वर्ष का पौधा लगाया जाता है। दो वर्ष तक धूप से बचाने के लिये दोपहर को नये पौधे पर साया कर देना चाहिये।

सदाबहार पौधे—निम्नलिखित पौधे सदा हरे रहते हैं और दाबा लगाकर तैयार किये जाते हैं। यह ३०–३५ फीट से अधिक ऊँचे होते है—

फाइकस बेनजामिना, फाइकस एक्सबरगाई, फाइकस मइक्रोफाइला।

निम्न पौधे सदा हरे, २० से ४० फीट के मध्य होते हैं और बीज बोकर तैयार किये जाते हैं—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आर्टोकार्पस हिसुटा (जंगली कटहल), नफेलियम लौंगेनम, आर्टोकार्पस कौनम, मेलिया एजीडरच, फिलीसियम डैसीप्युअस, थैस पेसिया पापुलिनिया।

जाड़ों में फूलने वाले पौधे—निम्न पौधे जाड़े में फूलते हैं। इनके बीज बोते हैं। यह १५ से २५ फीट तक ऊँचे होते हैं—

विलायती बबूल—इसकी झाड़ी लगाते हैं। फूल पीले व सुगंधित होते हैं। फ्रांस में इसका इत्र भी निकाला जाता है।

लटकन—फूल सफेद व गुलाबी रंग के होते हैं। इसके बीज से ऐनेटो रंग बनता है।

विलायती मेंहदी—इसे दाबे से तैयार करते हैं। फूल सफेद व गुलाबी रंग के होते हैं। यह जाड़े में फूलती है।

बरसात में फूलने वाले पौधे—निम्न पौधे बरसात में फूलते हैं। इसके बीज बोते हैं। पौधे २० फीट के लगभग होते हैं—

चिल्ला—फूल सुगंधित, सफेद और बड़े होते हैं। फल हरा एवं खट्टा होता है।

सागौन—सफेद फूल होते हैं। इसकी लकड़ी बड़ी कीमती होती है।

बहेड़ा—फल दवा के काम आता है। फूल भी अच्छा दिखता है।

सुन्दर पौधे तथा झाड़ियाँ

यहाँ प्रमुख पौधों एवं झाड़ियों पर संक्षेप में प्रकाश डाला जायगा, जो पेड़ों के समान बहुत बड़े नहीं होते।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुलशब्बो—इसे रजनीगंधा भी कहते हैं। फूल अत्यंत मोहक व सुगन्धियुक्त होता है। यह रात को फूलता है। बीज से तैयार होता है। यह वर्ष भर फूलता है। फूल सफेद व सुगन्धित होता है।

कामता—तने की कलम लगाते हैं। फूल सफेद होते हैं और वर्ष भर फूलते हैं।

काली मूसली—पौधा गाँठ व बीज से तैयार होता है। पत्तियाँ बहुत सुन्दर होती हैं।

थूहड़—तने की कलम तैयार करते हैं। इसकी झाड़ी लगायी जाती है।

गुलाबास—इसका फूल कई रंग का (सफेद,लाल-पीले) लम्बा और नाजुक होता है। बीज व गाँठें लगायी जाती हैं।

छबीला—इसे गमलों में लगाते हैं। पत्तियाँ रंग-बिरंगी बड़ी सुन्दर होती हैं। पौधे कलम से तैयार करते हैं।

नीलकाँटा—फूल लाल, नीले रंग के होते हैं और वर्षा भर मिलते हैं। पौधा कलम से तैयार होता है।

रात की रानी—फूल हरे, पीले तथा छोटे होते और रात को सुगंध देते हैं। दिन को यह महक बिल्कुल नहीं रहती। पौधे दाबे व पुत्तियों से तैयार किये जाते हैं। वर्ष भर फूलता है।

कनेर—(पीला) फूल पीला होता है। पौधे बीज व कलम से होते हैं। बारहो मास फूलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाँदनी—फूल सफेद होते हैं और रात को महकते हैं। दिन को फूलों में सुगंध नहीं होती। पौधे दाबे व कलम से तैयार होते हैं। साल भर फूलती है।

सदाबहार—फूल सफेद, बैंगनी और गुलाबी होते हैं। शेष कनेर के समान।

कनेर--(सफेद, गुलाबी व लाल) फूलों के रंग के अनुसार तीन प्रकार का होता है। पौधे दाबा व कलम से तैयार होते हैं।

नीली चमेली–इसकी महक अत्यंत मोहक होती है। फूल नीले, सफेद और लाल होते हैं। पौधे कलम से तैयार होते हैं। वर्ष भर फूलती है।

रुकमिनी—फूल पीले, लाल व गुलाबी होते हैं। पौधे कलम व दाबे से तैयार होते हैं।

हेमेलिया—पत्तियाँ सुन्दर और फूल नारंगी होते हैं। कलम से तैयार होते हैं।

गंधराज—फल सफेद व सुगंधित होते हैं। पौधे बीज व कलम से तैयार होते हैं। गर्मी में फूलता है और कलम बरसात में लगाना चाहिए।

गुलमेंहदी--इसके फूल अनेक रंग के होते हैं। मई से जनवरी के मध्य यदि १५–१५ इंच के अंतर पर बीज बोये जायँ, तो फूल चौमासे के अन्त तक रहते हैं। फूल सफेद, लाल, बैंगनी, चितकबरे, रंगबिरंगे होते हैं। पत्तियाँ पीसकर हाथ में लगायी जाती हैं। पौधे बीज व कलम से तैयार होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

छुईमुई—इसकी पत्तियाँ छूने से मुरझा जाती हैं। पौधा बड़ा सुन्दर होता है। बीज बोते हैं।

गुड़हल—फूल छोटे-बड़े, सफेद, गुलाबी, पीले, नारंगी, और लाल, कई तरह के होते हैं। पौधे कलम से तैयार होते हैं। देसी लाल फूल औषधि के लिये बड़े काम की चीज है।

कामिनी—फूल सफेद होते हैं। पौधे दाबे व कलम से तैयार होते हैं। साल भर फूलती है।

हंसराज—इसकी पत्तियाँ बड़ी सुन्दर होती हैं। पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं।

गर्मी में फूलनेवाले पौधे—

निम्न फूलों के पौधे कलम से तैयार किये जाते हैं—

केतकी—फूल सुगंधित होते हैं।

अमतुल—इसकी पत्तियाँ बहुत सुन्दर होती हैं।

गंधराज—फूल छोटे, बड़े, सभी तरह के, सफेद व सुगंधित होते हैं।

निम्न पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं—

रेलिया—फूल हल्के पीले होते हैं। खुश्क जलवायु अनुकूल होती है।

गुलअनार—इसे बीज से भी तैयार करते हैं। फूल लाल रंग के होते हैं। प्रति साल छँटाई कर दें।

कमल—फूल गुलाबी, लाल, पीला, नीला, कई तरह का होता है। कमलगट्टा की तरकारी और भुने हुए बीज का मखाना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खाते हैं। बोते समय, बीज मिट्टी में लपेटकर पानी में फेंक देते हैं।

कुमुद (कोकाबेली)—कमल के समान यह भी जलाशयों में होता है। यह शीतकाल में फूलता है और कमल के ही समान बोया जाता है।

गर्मी व बरसात में फूलनेवाले पौधे—

निम्न पौधे दाबे से तैयार किये जाते हैं—

बेला—फूल सफेद होते हैं। इसके फूलों की सुगन्ध दूर-दूर तक फैलती है। सुगन्ध बहुत मस्त होती है।

निम्न फूलों के पौधे कलम से तैयार होते हैं—

जुगनू—फूल नारंजी, पंखुड़ी सफेद होती है।

सावनी—फूल सफेद, बैंगनी और गुलाबी होते हैं। इसे बीज से भी तैयार करते हैं।

बरसात में होनेवाले पौधे—

केतकी (केवड़ा)—यह संसार का सबसे अधिक सुगंधित फूल है। बरसात में कलमें लगाते हैं। नरजाति के पौधे में ही मीठी महक होती है।

सुदर्शन—फूल सफेद एवं सुन्दर होते हैं। मार्च में गाँठें लगाते हैं। रात को इसकी सुगंध खूब फैलती है।

चीताफूल—फूल लाल चित्तीदार होता है। शेष सुदर्शन के समान।

भुंइचम्पा—फूल पेड़ की डालियों में न लगकर माघ,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फागुन में पौधे के सूखने पर भूमि से बाहर निकलते हैं। उनका रंग पीला होता है। शेष सुदर्शन के समान।

इलायची—फूल पीले रंग का होता है। गाँठ के अतिरिक्त बीज भी बोया जाता है।

दुलालचम्पा—फूल सफेद, पीले और सुगन्धित होते हैं। शेष सब इलायची के समान।

कटहरीचम्पा—फूल पीले और हरे रंग के सुगन्धित होते हैं। बीज व कलम से लगाते हैं।

चुन्दरी—फूल लाल चित्तीदार नारंजी रंग के होते हैं। गाँठें लगाते हैं।

जाड़े में होनेवाले पौधे—

सलविया—फूल लाल, नीले और अन्य रंग के भी होते हैं। बीज या कलम लगाते हैं। यह गर्मी में भी फूलता है।

हरसिंगार—इसे पारिजात भी कहते हैं। यह जाड़े के आरंभ में फूलता है। फूल की डंडी पीली तथा पंखुड़ी सफेद तथा सुगन्धित एवं सुकुमार होती है। पौधे बीज से तैयार होते हैं। फूल सायंकाल खिलते हैं और प्रातः झड़ जाते हैं। पास से फूलों की महक कम जान पड़ती है, किन्तु वायु के साथ बहुत दूर तक फैलती है।

जंगली चम्पा--फूल लाल, श्वेत व सुगन्धित होते हैं। पौधे कलम से तैयार होते हैं।

बसन्ती--फूल पीले होते हैं। पौधे विभाजित करके लगाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

झुमका—फूल नारंजी रंग के झुमके के समान होते हैं। पौधे बीज व कलम से तैयार करते हैं।

गुलखैरा—इसकी बहार दिसम्बर से फरवरी तक रहती है। खाद का घोल देने से पौधों की खूब बाढ़ होती है।

गेंदा—इसकी दो प्रमुख जातियाँ होती हैं—१. फिरकीदार और २. हजारा। हजारा गेंदे का फूल बहुत बड़ा होता है और देखने में अत्यंत सुन्दर लगता है। पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं।

गुलाब

गुलाब फूलों का राजा कहा जाता है। यह हमारे देश का सर्वप्रिय पुष्प है। हमारे देश के सभी प्रदेशों में, जहाँ अधिक वर्षा न होती हो, वहाँ यह हो सकता है। पानी के निकास की व्यवस्था होने पर सब जगह होता है। फूलों से इत्र व गुलाबजल बनता है। इसकी अनेक जातियाँ हैं। ओल्ड कैबेज, डामस्कस, फ्रेंच रोज, बंगाल बोरबन और चायना आदि विदेशी जातियाँ हमारे देश में अधिक बोई जाने लगी हैं। अन्तिम तीन हमारे देश में बारहो मास फूलती हैं।

भूमि—उत्तम दोमट भूमि अच्छी होती है। पानी के निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिये।

पौधे तैयार करने की रीति—किसी छाँहदार बलुई भूमि में पकी डालियों के ८-१० इंच लम्बे टुकड़े तीन इंच गाड़ दिये जाते हैं। पानी केवल मिट्टी को नम रखने भर को दिया जाय। दाब कलमें अक्तूबर और फरवरी में लगाई जायँ, तो अधिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अच्छा रहता है, वैसे ये साल भर लगाई जाती हैं। उत्तरी प्रदेशों में गुलाब पर अच्छी नस्लों का चश्मा फरवरी में बाँधते हैं। बंगाल में नवम्बर में भेंटकलम से पेवंद चढ़ता है।

पौधे लगाना--पौधा जब एक फुट का हो जाय, तो उसे स्थायी स्थान पर लगा दें। पौधों को प्रति दूसरे साल स्थानांतरित कर देना अच्छा रहता है।

खाद—खाद का घोल इसके लिए सबसे अच्छा रहता है। आग से जलाई हुई भूमि में यह अच्छा रहता है।

पौधे यदि स्थानांतरित न किये जायँ तो साल के बाद उनकी जड़ें खोल कर एक अठवारे तक धूप में छोड़ दें। इसके बाद सड़े हुए गोबर की खाद, भेड़ की लेंड़ी (मेंगनी) या मैले की खाद और मिट्टी से ढँक दें। दिसम्बर व जनवरी में ताजे गोबर का घोल लाभदायक सिद्ध हुआ है।

छँटाई—प्रतिसाल आवश्यक है। सड़ी, कमजोर, खराब डालियाँ तथा वे शाखें, जिनसे फूल मिल चुके हों, छाँट दें। वर्षाकाल में छँटाई अच्छी रहती है। वर्षा के उपरांत जड़ें खोलना न भूलें।

शत्रु—तने में छेद करनेवाला कीड़ा हानि पहुँचाता है। छेद में क्रूड आयल इमलशन या फिनाइल डालने से वह मर जाता है।

गुलाब बेल—हमारे देश में क्रिमजन और कलस्टर नामक गुलाब की बेलें अधिक बोयी जाती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लताएँ

चाबुक छड़ी--यह गर्मी या बरसात में खूब फैलती है। इसे मंडप के ऊपर चढ़ाना चाहिए। इसकी डाली काट कर लगायी जाती है।

चाँद बेल—लटकते हुये गमलों में यह बेल अत्यन्त मनोहर दिखती है। किसी गमले में ५-७ बीज बो देते हैं, और अंकुरित होने पर कमरे या बरामदे में लटका दिये जाते हैं।

मालती--वर्षा ऋतु में यह अधिक फैलती है। यह पेड़ों की चोटी तक चढ़ जाती है, जाड़े में पौधे में बीज आते हैं। इसके पौधे बीज, दाबा या कलम से तैयार किये जाते हैं।

लाल चमेली—(रंगूनबेल) इसमें विशेषतायह है किइसकी आयु के साथदूसरा रंग भी बदलता जाता है। पौधे कलम या दाबे से तैयार किये जाते हैं।

मधुमालती—इसके सुगंधित पुष्प में ४ पंखुड़ियाँ सफेद और एक सुनहरी होती है। पौधे बीज और दाब कलम से तैयार किये जाते हैं। फूलों की बहार अगस्त से जनवरी तक रहती है।

चमेली—फूलों की महक अत्यन्त मोहक एवं भीनी होती है। सावन के लगभग यह फूलती है। बेल खूब बढ़ती है। पौधे दाबकलम या डाली लगाकर तैयार किये जाते हैं।

कुन्द—इसके फूलों की मादक सुगन्ध सूखने पर भी बनी रहती है। बेल को किसी लकड़ी का सहारा दे देने से कलाई के समान मोटी हो जाती है।

जुही--इसके फूल चमेली के फूल से अपेक्षाकृत बड़े होते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं। फूल की बहार आषाढ़ के लगभग होती है। पौधे कलम और दाबे से तैयार किये जाते हैं।

जाही—फूल छोटा होता है। डाली लगाने के एक वर्ष बाद फूलती है। इसका मंडप बड़ा सुहावना लगता है।

मोगरा, मदनबान और रेवती—यह तीनों एक ही जाति के हैं। मदनबान, मोगरे से बड़ा और रेवती से छोटा होता है। मोगरे की कई जातियाँ हैं। एक २-३ फुट से ऊँचा नहीं होता और दूसरे की बेल चलती है। पौधे बसंत से गर्मी तक फूलते हैं। पौधे दाबकलम और डाली काटकर तैयार किये जाते हैं।

मोतिया—यह गर्मी व बरसात में फूलती है, शेष सब मोगरे के समान। इसकी बेलें अधिक बड़ी नहीं होतीं।

मौसमी फूल

जाड़े में फूलनेवाले पौधे—अक्टूबर में बीज बोकर तैयार किये जाते हैं। एलोनसोआ, फूल लाल होते हैं। स्वीट एलिसम फूल सफेद व सुगंधित होते हैं। एनेगेलिस फूल गहरे नीले होते हैं। एनीमोन फूल कई रंग के होते हैं। एन्टी राहिनम फूल सफेद, लाल, पीले, नारंजी आदि कई रंग के होते हैं। बेसीकोम फूल सफेद, पीले व नीले होते हैं। बेवेलिया फूल सफेद व नीले होते हैं। कलेनडाला फूल पीले व नारंजी होते है। कैम्पेनूला फूल कई रंगों के घंटे के आकार के होते हैं। ऐबरिज कैन्डीफ्ट फूल सफेद व गुलाबी होते हैं। कारनेशन फूल सफेद, पीले, गुलाबी व लाल कई रंग के होते हैं। क्लार्किया फूल कई रंग के होते हैं। कलबलबुलस फूल सफेद, नीले व बड़े होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रातःकाल खिलते हैं। इन्हें लताओं में चढ़ाना चाहिए। कासमस फूल गुलाबी, लाल व सफेद होते हैं। डायन्थस छोटे-बड़े कई रंग के फूल होते हैं। गाडेसिया फूल सफेद व गुलाबी होते हैं। सनफ्लावर फूल पीले होते हैं। मिग्नोनीट फूल सफेद, पीले व सुगन्धित होते हैं। अग्जेलिस फूल छोटे, पीले गार्डेनपयी व गुलाबी, पैंजीफूल तितली के समान कई रंग के व फूल कई रंग के होते हैं।

गर्मी व वर्षा में फूलनेवाले पौधे—इन्हें भी बीज बोकर तैयार करते हैं। इन्हें जून से अगस्त तक बोया जाता है।

बालसम फूल लाल, सफेद, गुलाबी, पीले और अन्य रंगों के होते हैं। सेलोसिया फूल लाल, पीले और बैंगनी होते हैं। वर्षा से जाड़े तक फूलता है। कौक्सकूम्ब फूल पीले, सुनहरे, सफेद होते हैं। वर्षा से जाड़े तक फूलता है। कौक्सकम्ब फूल पीले, सुनहरे सफेद होते हैं। वर्षा से जाड़ेतक फूलता है। डेटूरा फूल सफेद व पीले होते हैं। गौम्फीना फूल लाल, गुलाबी सफेद व नारंजी होते हैं। मेरीगोल्ड पीले, नारंजी और सुनहरे व मार्गिग्लोरी नीले, बैंगनी व लाल होते हैं। लताएँ चढ़ती हैं।

यहाँ बरसात और गर्मी में फूलने वाले कुछ मौसमी फूलों का विवरण दिया जाता है। इन्हें जनवरी से जून तक बोते हैं।

गिलार्डिया कई रंग के सनफ्लावर पीले, लाल और नारंजी रंग के, वरबेसिना फूल गहरे पीले होते हैं।

——:)❀(:——

रामायण कृत्तिवास हिन्दी में

CC-0. Arya Nidam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत)

श्री गोस्वामी तुलसीदासजी से कई सौ वर्ष पूर्व बंग की पुनीत भूमि में भक्त-शिरोमणि महासंत कृत्तिवास की मंजुल वाणी से प्रवाहित सलिल मुग्धकारी काव्य 'रामायण-कृत्तिवास' का हिन्दी में सरल दोहा-चौपाई में उत्कृष्ट नूतन रूपांतर हिन्दी-साहित्य के लिए एक अद्भुत नई निधि है। कृत्तिवास रामायण में सन्त ने बाल्मीकीय, भागवत, योगवाशिष्ठ, अध्यात्म, आनन्द, महारामायण आदि अनेक रामायणों के आधार पर कुतूहल उत्पन्न करनेवाले नाना कथा-प्रसंगों का वर्णन किया है। अनेक नई कथाओं की भरमार है। पाठकों को प्राचीन साहित्य के एक अद्भुत नवीन ग्रन्थ का आनन्द प्राप्त होगा। आ. का.— मू० ६), डाक-खर्च १)

स्वामी रामतीर्थ-साहित्य

१. यथार्थ समाजवाद २)
२. गृहस्थ-धर्म २)
३. व्यावहारिक वेदान्त २)
४. विश्व-धर्म २)
५. राष्ट्रीय-धर्म २)
६. सफलता-सोपान २)
७. नक़द-धर्म २)
८. विज्ञान-रहस्य (प्रेसमें) २)
९. विश्व-बन्धुत्व ,, २)
१०. स्वामी राम के पत्र ,, २)

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टेक्निकल-साहित्य (सचित्र)

भारतीय कृषि विज्ञान—चार खण्ड सम्पूर्ण, कृषि-संबंधी यन्त्रों, प्रक्रियाओं एवं तालिकाओं के विस्तृत वैज्ञानिक वर्णन, अगणित चित्रों से युक्त अपूर्व ग्रन्थ। लेखक—श्री चन्द्रनाथ मिश्र। मूल्य ७॥)

वैज्ञानिक पशुपालन व चिकित्सा(सचित्र)—गाय-बैल, भैंस, भेड़, बकरी, घोड़ा, ऊँट, कुत्ता, हाथी आदि पालतू पशुओं की पालन-विधि, रोगों के निदान और चिकित्सा-सूत्र के साथ आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक एवं एलोपैथिक औषधियों के अनुभूत नुस्खे सरल भाषा में अधिकारी विद्वानों द्वारा, इस नवीन पुस्तक में संग्रह किये गये हैं। मू० तीन रुपये मात्र।

हमारा भोजन—उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा पुरस्कृत। लेखक डा० ज्ञानेन्द्रनाथ शुक्ल, मूल्य १॥)

लोहारी शिक्षक—पचासों चित्रों से युक्त। लेखक—मास्टर बाबूलाल विश्वकर्मा, मू० १।)

मिट्टी का शिल्प—कुम्हारी-विद्या पर, बहुसंख्यक चित्रों सहित, नवीन पुस्तक। लेखक—श्री चन्द्रिकाप्रसाद जिज्ञासु, मूल्य १॥)

बाँस-बेत-पत्तों का काम—श्री राजेश दीक्षित द्वारा कुटीर-उद्योग पर लिखित, यह सचित्र पुस्तक अपूर्व है। मू० १।)

कागज के हुनर—(सचित्र) कला-अध्यापक श्री राजकुमार सैगल द्वारा लिखित यह पुस्तक अत्यन्त सरल एवं बेजोड़ है। मू० १॥)

काष्ठकला (सचित्र)—ले० काष्ठकला-अध्यापक श्री गुबरैला, कक्षा ६ मू० ॥|); कक्षा ७ मू० १); कक्षा ८ मू० १।)

सा-रे-ग-म—संगीत-शास्त्र पर अनूठी पुस्तक। मूल्य २॥)

कत्थक-नटवरी-नृत्य—नृत्य एवं भाव-मुद्राओं के विविध चित्रों से युक्त अपूर्व पुस्तक, मूल्य ३॥)

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरब एक संक्षिप्त इतिहास—प्रो० हिट्टी मू० ८)

मुहम्मद साहब से पूर्व और पश्चात् अरब की सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक स्थिति, इस्लाम का उदय, एशिया, योरोप और अफ्रीका के सुदूर अधिकांश भूखण्डों तक उसका चरमोत्कर्ष और फिर विलासिता व घरेलू युद्धों और नृशंस रक्तपात में पड़कर विस्तृत अरब साम्राज्य और खलीफाओं का पतन और पराभव—इन सब का जीता-जागता चित्र, प्रोफेसर हिट्टी के अँग्रेजी में प्रकाशित "शार्ट हिस्ट्री आफ़ अरब" के इस हिन्दी अनुवाद में पाठकों को प्राप्त होगा। हिन्दी जगत् में इतिहास का यह अध्याय अब तक अप्राप्य था।

एशिया भूखण्ड की सभ्यता और संस्कृति एवं प्राचीन इतिहास के विद्यार्थियों के लिए तो यह एक अनिवार्य पठनीय ग्रंथ प्रकाशित हुआ है। मूल्य ८) मात्र, डा० खर्च पृथक् १)

—: हिन्दी में 'इस्लामी साहित्य' :—

तर्जुमा कुरान शरीफ़ हिन्दी मू० ८)

विश्व के एक बड़े जन-समुदाय का सर्वमान्य ईश्वरीय धर्मग्रन्थ। आज से १४०० वर्ष पूर्व, अरब मरुस्थल की अपौरुषेय क्रान्ति, तत्कालीन समाज का जीता-जागता चित्र, रूढ़ियों को हटाकर सुधार की ओर प्रगति आदि, सभी मुस्लिमों तथा गैर-मुस्लिमों के पढ़ने-देखने योग्य संपूर्ण नागरी अनुवाद। मूल्य आठ रुपया मात्र। डाक-व्यय अलग।

संक्षिप्त जीवन-चरित्र

हजरत अबूबकर	०.३७ न० पै०	हजरत उमर	०.३७ न० पै०
,, उस्मान	०.३७ न० पै०	,, अली	०.३७ न० पै०

पारह अम्म (अरबी-मूल देवनागरी अक्षरों में) ०.३७ न० पै०

कुरान पर एक दृष्टि ०.३१ न० पै०

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संपूर्ण बंकिम-साहित्य

अनुवादक तथा संपादक—साहित्यमनीषी स्व० पं० रूपनारायण पाण्डेय

आनन्दमठ २)	देवी चौधरानी २)	विषवृक्ष २)
मृणालिनी २)	नवाबनंदिनी ३॥)	राजमोहन की स्त्री २)
चन्द्रशेखर २)	दुर्गेशनंदिनी २)	युगलांगुरीय ॥)
मृण्मयी ३)	लोक-रहस्य २)	इन्दिरा २)
रजनी २)	कपालकुण्डला २)	राजसिंह २॥)
कमलाकांत का पोथा २)		राधारानी ॥)
बंगशार्दूल सीताराम २)	कृष्णकांत का वसीयतनामा २)	

सम्राट् नीरो—सामन्तवादी युग के रोमन साम्राज्य के अत्याचारों का रोमाञ्चकारी उपन्यास 'को-वाडिस' का हिन्दी रूपान्तर। मू० ४॥)

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

हमेशा नये टाइप में पुस्तकें छपाइये !

अक्सर देखा गया है कि जिनके निजी प्रेस नहीं है, वे अन्य प्रेसों में पुस्तक छपाने के लिए देकर फिर अपने अवसर पर पुस्तक नहीं पाते; और समय निकल जाने पर भद्दी व अशुद्ध छपाई ही उनके हाथ लगती है।

हमारी टाइप फाउण्ड्री में सुन्दर व स्पष्ट लिखी हुई पाण्डुलिपि देकर निश्चिंत घर बैठे ठीक समय पर सुन्दर नए टाइप में छपी-छपाई पुस्तक प्राप्त कीजिये। प्रूफ़ की यहाँ बहुत सुन्दर व्यवस्था होने से पुस्तक शुद्ध और आकर्षक सेटिंग में छपेगी। परीक्षा कीजिये।

(सभी प्रकार के हिन्दी अँग्रेजी टाइप व बार्डर का स्टाक सदा तैयार रहता है—)

वर्णमाला टाइप फाउण्ड्री

रानीकटरा, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रभाकर जंत्री

ज्योतिषाचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद त्रिपाठी के संपादकत्व में प्रत्येक वर्ष लखनऊ से प्रकाशित गणित-फलित का सच्चा पथ-प्रदर्शक विशुद्ध पंचांग। तेजी-मंदी के खुलासा योग तथा मनमाने प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए नेपोलियन बोनापार्ट का प्रश्नचक्र-तंत्र इस जंत्री की विशेषता है। मू० ||=) डा० ख० अलग

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

नव-साक्षर-साहित्य बड़े अक्षरों में

टाम काका की कुटिया—अफ्रीकी गुलाम-व्यापार की दर्दनाक कहानी। मूल्य १||)

हरिश्चन्द्र—टीका-सहित सचित्र पद्य-आख्यान। मू० १)

हमारा समाज—व्यंग्यात्मक नाटक (स्त्री-पात्र-रहित); मू० |||)

सचित्र बाल-साहित्य—चण्ट-चौकड़ी |-) डायन राजरानी |-) मायावी सपेरा |-) महाराज कपालफोड़ |-)

अलबेले खेल भारती—(सचित्र) प्राइमरी एवं जूनियर स्कूलों में व्यायाम, बुद्धि कौशल तथा मनोरंजन के लिए समान उपयोगी। मू० १|)

रमणी रत्नावली (सचित्र)

गार्गी ||=) गढ़मण्डल की रानी ||=) राज्यश्री ||=)

बाल हिन्दी व्याकरण मू० ||-)

किशोर हिन्दी व्याकरण मू० १)

हिन्दी में व्याकरण की पुस्तकें प्रायः संस्कृत या अंग्रेजी व्याकरण के अनुकरण पर ही हैं। प्राइमरी तथा जूनियर के छात्रों के लिये यह सेट हिन्दी भाषा के मौलिक आधार पर पाठ्य क्रम के अनुसार तयार किया गया है।

श्री प्रभाकर साहित्यालोक, २३, श्रीराम रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.